बी.ए. तृतीय वर्ष
भूगोल, प्रथम प्रश्नपत्र

भारत का भूगोल

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY-BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Kusum Mathur
   Professor,
   S.N. Girls Autonomous (PG) College, Bhopal.
2. Dr. Neerja Bhardwaj
   Professor,
   Govt. Hamidia College, Bhopal.
3. Dr. Manisha Dubey
   Professor,
   MLB College, Bhopal.

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor,
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal.
2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar,
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal.
3. Dr. L.P. Jharia
   Director Student Support,
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal.
4. Dr . Kusum Mathur
   Professor,
   S.N. Girls Autonomous (PG) College,
   Bhopal.
5. Dr. Neerja Bhardwaj
   Professor,
   Govt. Hamidia College, Bhopal.
6. Dr. Manisha Dubey
   Professor,
   MLB College, Bhopal.

COURSE WRITER

Dr. Ajay Tiwari, Faculty Member of Geography, Govt. Mankunwar Bai Arts and Commerce College for Women Napier Town, Jabalpur-482001.

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. (Developed by Himalaya Publishing House Pvt. Ltd.) and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020



Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

भारत का भूगोल

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 स्थितिजन्य विशेषताएँः भौतिक स्वरुप, संरचना, धरातलीय बनावट, अपवाह-तंत्र एवं जलवायु।	**इकाई 1** : स्थितिजन्य विशेषताएँ **(पृष्ठ 3–108)**
इकाई–2 प्राकृतिक संसाधनः जल संसाधन, खनिज संसाधन– तांबा, लोहा एवं बॉक्साइट। वन संसाधन प्रकार एवं विवरण। शक्ति संसाधन कोयला, पेट्रोलियम प्राकृतिक गैस, अपरम्परागत ऊर्जा स्रोत।	**इकाई 2** : प्राकृतिक संसाधन **(पृष्ठ 109–208)**
इकाई–3 भारत का सांस्कृतिक भू – दृश्यः जनसंख्या एवं इसकी विशेषताएँ, भारतीय अर्थव्यवस्था – कृषि विशेषता, प्रमुख फसलें, गेहूँ चावल, कपास, रबड़, तथा गन्ना। औद्योगिक विकास – लोहा इस्पात एवं सूती वस्त्र उद्योग– अवस्थिति एवं उत्पादन। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।	**इकाई 3** : भारत का सांस्कृतिक भू – दृश्य **(पृष्ठ 209–304)**
इकाई–4 मध्य प्रदेशः स्थिति, संरचना, भौतिक विभाग, अपवाह, जलवायु, मृदा, प्राकृतिक वनस्पति, कृषि, खनिज, उद्योग एवं व्यापार।	**इकाई 4** : मध्य प्रदेश – भौतिक स्थिति **(पृष्ठ 305–346)**
इकाई–5 मध्य प्रदेशः जनसंख्या संरचना, वितरण, घनत्व, वृद्धि, लिंगानुपात, साक्षरता, ग्रामीण एवं नगरीय प्रवास, जनजातियां एवं पर्यटन।	**इकाई 5** : मध्य प्रदेश – जनसंख्या **(पृष्ठ 347–384)**

विषय–सूची

परिचय **1**

इकाई 1 स्थितिजन्य विशेषताएँ **3–108**

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 स्थितिजन्य विशेषताएँ
1.2.1 आकृति एवं विस्तार
1.2.2 तटरेखा और द्वीप
1.2.3 भारत विभिन्नताओं का देश
1.3 भौतिक स्वरुप एवं धरातलीय बनावट
1.3.1 भारत के भौतिक भाग
1.4 अपवाह-तंत्र
1.5 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
1.6 सारांश
1.7 मुख्य शब्दावली
1.8 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 प्राकृतिक संसाधन **109–208**

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 जल संसाधन
2.3 खनिज संसाधन
2.3.1 लौह अयस्क
2.3.2 तांबा अयस्क
2.3.3 बॉक्साइट
2.4 वन संसाधन
2.5 शक्ति संसाधन
2.5.1 कोयला
2.5.2 पेट्रोलियम (खनिज तेल)
2.5.3 प्राकृतिक गैस
2.6 अपरम्परागत ऊर्जा स्रोत
2.7 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
2.8 सारांश
2.9 मुख्य शब्दावली
2.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.11 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 भारत का सांस्कृतिक भू – दृश्य **209–304**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 जनसंख्या
3.3 भारतीय अर्थव्यवस्था – कृषि विशेषताएँ
3.3.1 गेहूँ
3.3.2 चावल
3.3.3 कपास
3.3.4 रबड़
3.3.5 गन्ना
3.4 औद्योगिक विकास
3.4.1 लोहा एवं इस्पात उद्योग
3.4.2 वस्त्र उद्योग
3.5 अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार
3.6 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
3.7 सारांश
3.8 मुख्य शब्दावली
3.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 मध्य प्रदेश – भौतिक स्थिति **305–346**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 भौतिक विभाग एवं संरचना
4.3 अपवाह तन्त्र
4.4 जलवायु
4.5 मृदा
4.6 वनस्पति
4.7 कृषि
4.8 खनिज
4.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
4.10 सारांश
4.11 मुख्य शब्दावली
4.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.13 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 मध्य प्रदेश – जनसंख्या **347–384**

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 जनसंख्या संरचना
5.3 लिंगानुपात
5.4 साक्षरता
5.5 ग्रामीण एवं नगरीय प्रवास
5.6 जनजातियाँ
5.7 पर्यटन
5.8 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
5.9 सारांश
5.10 मुख्य शब्दावली
5.11 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.12 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

भारत का भूगोल, की अनेक पुस्तकें हैं, तथापि ऐसी पुस्तक की आवश्यकता बनी हुई है जिसमें समसामयिक भौगोलिक–आर्थिक भारतीय दशाओं के अन्तर्सम्बंधों तथा इनके बदलते प्रतिरुप की विवेचना हो। भारत का भूगोल मध्य प्रदेश के सन्दर्भ में इस पुस्तक के लेखन का यही उद्देश्य है। इसके लिए भोज विश्वविद्यालय के मॉडल पाठ्यक्रम के हित को ध्यान में रखकर विषयवस्तु को पाँच इकाइयों में विभक्त किया गया है।

विकास के क्षेत्रीय स्वरूप तथा भौगोलिक आधार का घनिष्ट सम्बन्ध है। मोटे तौर पर संसाधन सम्पन्न क्षेत्रों में विकास की सम्भावनाएँ अधिक होती हैं। इसलिए विकास को समझने के लिए भौतिक–स्वरूप एवं प्राकृतिक संसाधनों का ज्ञान आवश्यक है। विभिन्न भागों में मानव अपने पर्यावरण से विभिन्न तरह के तालमेल बनाता है। इसके परिणाम स्वरूप देश के विभिन्न भागों में सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक विविधता ने जन्म लिया है। प्रस्तुत पुस्तक में देश के विभिन्न भागों में इस तालमेल तथा तज्जनित विविधता को उजागर किया गया है। इस विविधता को स्पष्ट करने के लिए क्षेत्रों की आन्तरिक समानता के आधार पर विभिन्न तत्वगत प्रदेश भी निर्धारित किए गए हैं। भूगोल में एक महत्वपूर्ण विचारधारा है कि इसमें अध्ययन अपने आसपास के पर्यावरण से प्राप्त किया जाना चाहिए और क्रमशः बाहरी दुनिया की ओर बढ़ना चाहिए। इस उद्देश्य से मध्य प्रदेश का सूक्ष्म भौगोलिक विवरण भी दिया गया है। भाषा और शैली को रोचक और सरल बनाने का यथा सम्भव प्रयास किया गया है क्योंकि हमारा विश्वास है कि पाठ्यपुस्तक की उपादेयता उसकी शीघ्रग्राह्यता में निहित होती है। हमें पूर्ण विश्वास है कि विद्यार्थी एवं पाठक इस पुस्तक से लाभान्वित होंगे।

प्रस्तुत पुस्तक की रचना में जिन विद्वानों के ग्रन्थों से सहायता ली गई है लेखक उन सभी के प्रति कृतज्ञ है। अनेक संस्थाओं की रिपोर्ट एवं अभिलेखों से भी सहायता ली गई है जिनके प्रति लेखक आभार प्रकट करता है।

मैं उन सभी सहयोगियों एवं शुभचिंतकों के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ जिनके उत्साह एवं सुझाव से पुस्तक साकार हो सकी। लेखक उन सभी परामर्शों एवं सुझावों का स्वागत करता हैं जिससे पुस्तक को अधिक उपादेय बनाने में सहायता मिलती हैं।

डॉ. अजय तिवारी
जबलपूर (मध्य प्रदेश)

इकाई 1 स्थितिजन्य विशेषताएँ (Locational Characteristics)

टिप्पणी

संरचना (Structure)

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 स्थितिजन्य विशेषताएँ
  1.2.1 आकृति एवं विस्तार
  1.2.2 तटरेखा और द्वीप
  1.2.3 भारत विभिन्नताओं का देश
1.3 भौतिक स्वरुप एवं धरातलीय बनावट
  1.3.1 भारत के भौतिक भाग
1.4 अपवाह–तंत्र
1.5 अपनी प्रगती जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
1.6 सारांश
1.7 मुख्य शब्दावली
1.8 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय (Introduction)

हमारा देश भारत एक महान, सुसम्पन्न एवं सुसंस्कृत देश है। अपनी संस्कृति एवं परम्पराओं के लिए यह जगद्गुरु है। महामानव **'भरत'** के नाम पर ही इस महादेश का नामकरण **'भारत'** हुआ। सिन्धु नदी के तटीय निवासियों को हिन्दू एवं इस भू–भाग को हिन्दुस्तान की संज्ञा ईरानियों की देन है। बाद में रोमवासियों ने सिन्धु नदी को इण्डस तथा देश को इण्डिया कहा।

1.1 उद्देश्य (Objectives)

इकाई का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को भारत की वास्तविक भौगोलिक स्थिती विस्तार एवं विशेषताओं से परिचय कराना है।

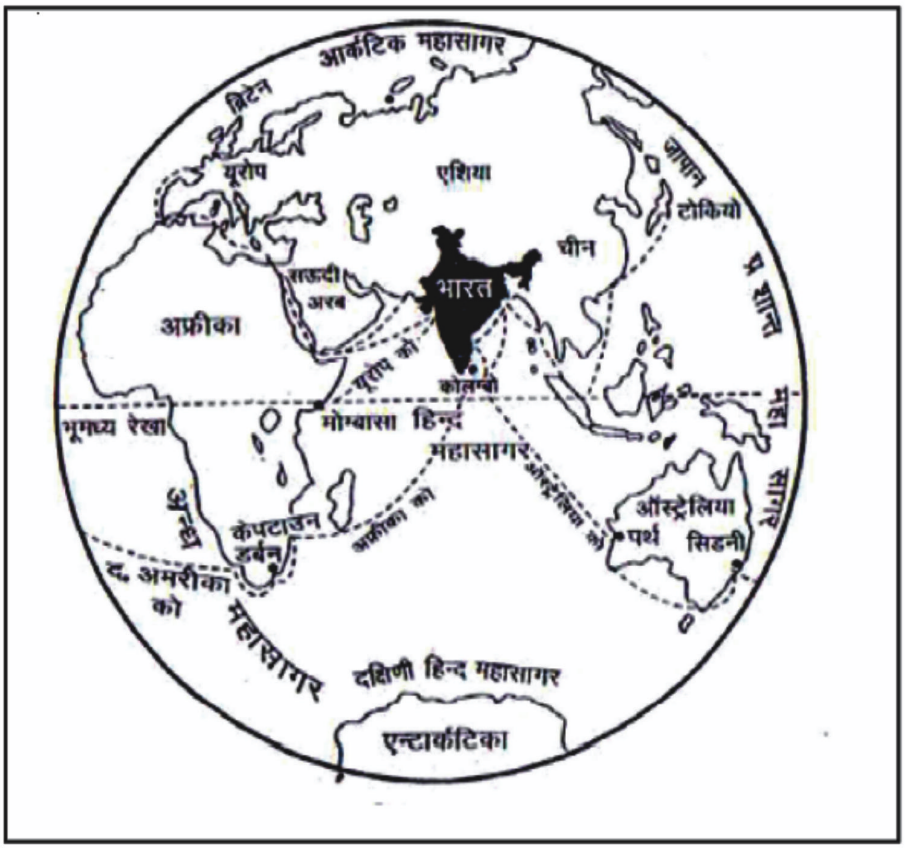
1.2 स्थितिजन्य विशेषताएँ (Locational Characteristics)

भारत की इस पावन भूमि ने अनेक महापुरुषों को जन्म दिया। महात्मा बुद्ध ने एशिया को शान्ति का सन्देश दिया और सम्राट अशोक ने विदेशों में भारत की कीर्तिध्वजा फहरायी। विदेशियों की दृष्टि में यह सोने की चिड़िया बन गया, फलतः मध्य युग में इस पर अनेक आक्रमण हुए। भयंकर राजनीतिक झँकोरे हैं। अनेक विदेशी सांस्कृतिक धाराएँ इसमें आत्मसात् हैं। इसकी वैदिक संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। इसके व्यक्तित्व रचना में भौतिक मानवीय तत्वों का भरपूर योगदान है।

टिप्पणी

1.2.1 आकृति एवं विस्तार (Shape and Extent)

भारतवर्ष की आकृति पूर्ण रूप से एक त्रिभुजाकार न होकर चतुष्कोणीय है। प्रकृति द्वारा उत्तर एवं दक्षिण में इतनी अच्छी तरह परिसीमित है जितना सम्भवतः विश्व का कोई अन्य देश नहीं है। भूगोलवेत्ता स्ट्रेबो ने भारतवर्ष की आकृति पतंग जैसी बताई है। अण्डमान निकोबार द्वीप समूह का दक्षिणी किनारे पर स्थित इन्दिरा प्वाइण्ट 6°–30'



चित्र क्र. 1.1: भारत – आकृती एवं विस्तार

उत्तरी अक्षांश तक विस्तृत है तथा मुख्य भूमि का दक्षिणी भाग विषुवत रेखा से 876 किलोमीटर दूर है, परन्तु अण्डमान, निकोबार तथा लक्षद्वीप को मिलाकर भारतवर्ष की तटरेखा 7,516.6 किलोमीटर लम्बी हैं। 23½° उत्तरी अक्षांश (कर्करेखा) भारतवर्ष के मध्य से होकर गुजरती है और देश को दो भागों–उत्तरी भारत अथवा महाद्वीपीय भारत एवं दक्षिणी भारत अथवा कटिबन्धीय भारत में विभाजित करती है। इस प्रकार 82½° पूर्वी देशान्तर रेखा भी देश के मध्य से होकर गुजरती है तथा देश का प्रामाणिक समय (Standard Time) निर्धारित करती है।

इसका क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किलोमीटर है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह विश्व का सातवाँ बड़ा देश हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, ब्राजील, रूस, चीन और ऑस्ट्रेलिया इससे बड़े हैं।

स्थिति एवं महत्व – यह महान देश 8°–4' उत्तरी अक्षांश से 37°–6' उत्तरी अक्षांश तक 68°–7' पूर्वी देशान्तर से 97°–25' पूर्वी देशान्तर तक विस्तृत है। पूर्व से पश्चिम तक इसकी लम्बाई 2,933 किमी एवं उत्तर से दक्षिण तक 3,214 किमी. है। इसकी स्थलीय सीमा 15,200 किमी. तथा तटरेखा कुल 75,16.6 किमी. है। उत्तरी और

पूर्वी गोलार्द्ध में स्थित भारतवर्ष हिन्द महासागर के उत्तरी सिरे पर इस प्रकार स्थित है कि यूरोप और अमेरिका के पश्चिमी भागों से समान दूरी पर स्थित है। पूर्वी देशों से पश्चिमी देशों एवं पश्चिमी देशों से सुदूर पूर्वी देशों की और जाने वाले व्यापारिक मार्ग भारत होकर जाते हैं। भारत से पूर्व की ओर चीन और जापान, दक्षिण–पूर्व की ओर ब्रिटेन एवं पश्चिमी यूरोप को व्यापारिक जहाज जाते हैं।

टिप्पणी

स्वेज नहर के बन जाने से भारत की स्थिति का महत्व और भी बढ़ गया है, क्योंकि पश्चिमी यूरोपीय देशों और भारत के पश्चिमी बन्दरगाहों के बीच लगभग 4,800 किलोमीटर दूरी कम हो गयी है।

इस प्रकार भारत पश्चिमी औद्योगिक देशों एवं पूर्वी विकासशील देशों को मिलाने में एक श्रृंखला का काम करता है।

सीमाएँ

भारतवर्ष की सीमाएँ दो प्रकार की हैं – (1) प्राकृतिक एवं (2) कृत्रिम।

(1) **प्राकृतिक सीमाएँ** – भारत की प्राकृतिक सीमाएँ दो प्रकार की हैं – (अ) स्थलीय (ब) जलीय। उत्तर में हिमालय पर्वत श्रेणी, दक्षिण–पश्चिम में अरब सागर, दक्षिण–पूर्व में बंगाल की खाड़ी एवं धुर दक्षिण में हिन्द महासागर इसकी प्राकृतिक सीमाएँ बनाते हैं। भारत, उत्तर, उत्तर–पूर्व एवं उत्तर–पश्चिम में हिमालय पर्वत से घिरा हुआ है। उत्तर में हिमालय की महान श्रृंखला भारत को रूस और मध्य एशिया के अनेक देशों से पृथक् करता है। यहाँ जोजीला, काराकोरम, जैपल्ला, चारडिंगला, इमिसला आदि दर्रे हैं, जो अधिक ऊँचाई के कारण बर्फ से ढके रहते हैं। अतः भारत का मध्य एशिया के देशों से व्यापार स्थल की ओर नगण्य है। केवल उत्तर–पश्चिमी भाग में, जो अब पाकिस्तान में है, जहाँ खैबर, बोलन और गोमल आदि मुख्य दर्रे हैं, जिनमें से होकर प्राचीन काल में आक्रमणकारी जातियाँ आर्य, मंगोल एवं तुर्क लोग भारतवर्ष में प्रवेश कर गये और स्थायी रूप से बस गये। पूर्व की ओर हिमालय की श्रेणियाँ नीची हैं, किन्तु सघन वनों, गहरी तंग घाटियों एवं तेज बहने वाली नदियों के कारण भारत और म्यांमार के बीच स्थल मार्गों द्वारा अधिक आवागमन नहीं होता है। अरुणाचल प्रदेश की ओर त्सेला, तुंग तथा तोग्यम दर्रे, तिब्बत की ओर नाभ्री, डिफू, कुमजांग, म्यांमार की चोकान दर्रे महत्वपूर्ण हैं।

   यदि भारत में आक्रमणकारी लोग उत्तर–पश्चिम से आये तो उपनिवेशकारी देशों के लोग समुद्र के मार्गों से आये। 17 वीं. शताब्दी में अंग्रेज, डच, फ्रांसीसी एवं पुर्तगाली व्यापारी इन्हीं सागरों से होकर भारतवर्ष में आये और कोलकत्ता, मुम्बई, कोचीन, मरमागोआ, वास्कोडिगामा, दमन, दीव एवं पाण्डिचेरी में अपनी कोठियाँ स्थापित कीं।

(2) **कृत्रिम सीमाएँ** – भारत की स्थलीय सीमा पर उत्तर में नेपाल, भूटान, तिब्बत (चीन), पूर्व में बांग्लादेश एवं म्यानमार, पश्चिम में पाकिस्तान, काश्मीर की उत्तर–पश्चिमी सीमा पर अफगानिस्तान की सीमाएँ भी भारत को छूती हैं। भारतवर्ष की उत्तर–पश्चिम में 1,120 किलोमीटर लम्बी भारत–पाकिस्तान की सीमा जो राजस्थान राज्य की अन्तिम परिधि है, कृत्रिम सीमा है।

1.2.2 तटरेखा और द्वीप (Coast Line and Islands)

टिप्पणी

भौगोलिक दृष्टि से किसी भी देश की तटरेखा का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। आधुनिक व्यापारिक युग में तो इसके अध्ययन का महत्व और भी बढ़ गया है। समुद्री मार्गों पर पत्तनों का होना आवश्यक है और पत्तन का तटरेखा से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। तटरेखा के एक ओर स्थलमार्ग तथा दूसरी ओर जलमार्ग होता है। यदि तटरेखा पर ऐसे स्थान सुलभ होते है जहाँ से उस देश के सामान विदेशों को भेजे जा सकें और देश की आवश्यकतानुसार विदेशों से सामान मँगाये जा सकें तो उसकी व्यापारिक स्थिति अच्छी होती है। प्राचीनकाल में पृथ्वी पर अनेक परिवर्तन हुए हैं। भूगर्भीय हलचलों ने भौतिक रूपों में अनेक परिवर्तन किये हैं। तटीय रेखाओं पर भी इनका प्रभाव पड़ा है। आज जैसी तटरेखा हम अपने देश में देखते है, अति प्राचीनकाल में यह ऐसी नहीं थीं। हमारे समुद्र–तट कभी जलमग्न हुए हैं, तो कभी उन्मग्न। इसके साथ ही साथ इन पर समतल स्थापक शक्तियों का भी व्यापक प्रभाव पड़ा है। भारतीय तटरेखा का भू–वैज्ञानिक अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि पश्चिमी तट पर पूर्वी तट की अपेक्षा उपर्युक्त क्रियाएँ अधिक हुई हैं। पश्चिमी तट पर उन्मज्जन (Emergence) के प्रमाण मिलते हैं। काठियावाड़ तट के समीप 356 मीटर ऊँची चोटीला पर मिलियोलाइट (Miliolite) नामक चूने की प्राप्ति इस तथ्य को प्रकाश में लाती है। यह मिलियोला नाम के जलजीवों से बनता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कभी कठियावाड़ का यह भाग समुद्र की गोद में था। इसके तट पर समुद्र तल से काफी ऊँचाई पर स्थित भागों में जो जीवावशेष आदि मिलते हैं, वे भी इस बात की सत्यता प्रमाणित करते हैं। कच्छ प्रदेश का उत्क्षेपण तो अभी हाल ही की घटना है। कच्छ का रन ऊपर उठा और अब यह एक भूभाग के रूप में है। मालाबार तट पर भी उत्क्षेपण के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। इस तट पर अनेक अनूप झीलें मिलती है जो बालू की भित्तियों द्वारा समुद्र से अलग हो गयी हैं। इन अनूपों की गहराई भी निरन्तर कम हो रही है और उनमें से अनेक एथली होकर स्थलरूप में परिवर्तित होने की दशा में पहुँच गयी हैं। पश्चिमी तट के कुछ भाग जलमग्न भी हुए हैं। सन 1878 तथा 1910 में क्रमशः मुम्बई के प्रिन्सेस डॉक तथा अलेकजेण्ड्रा डॉक की खुदाई हुई जिसमें 10 मीटर से 12 मीटर की गहराई में वन–भाग मिले। इससे यह बात निःसन्देह स्पष्ट हो जाती है कि मुम्बई के आसपास का क्षेत्र कभी समुद्र के ऊपर था, पर भूगर्भिक हलचलों के कारण वह समुद्र की गोद में चला गया।

पूर्वी तट पर भी उन्मज्जन और निमज्जन के प्रमाण मिलते है। यहाँ 30 मीटर की ऊँचाई तक छोटे–छोटे जल–जीवों के जीवावशेष मिलते हैं। इससे स्पष्ट है कि या तो समुद्र पीछे हटा और नहीं तो ये भाग ऊपर उठे। इस तट पर महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदियों द्वारा लायी हुई मिट्टी भी जमा होती रही है, फलस्वरूप तटरेखा समुद्र की ओर बढ़ती गयी। कावेरीपुरम्, कलिंगपटणम जो कभी समुद्र तट पर स्थित थे, आज उससे बहुत दूर हैं। ऐसी निर्माणकारी शक्तियाँ तटरेखा को समतल बना देती हैं जिससे वक्रता न होने के कारण खाड़ियों का अभाव होता है। तिरुनेलवेली के निकट जलमग्न भाग मिलता है। पाण्डेचरी के निकट पीट कोयले के भण्डार समुद्री भाग में भी विस्तृत हैं जिससे यह ज्ञात होता है कि वहाँ कभी भू–भाग रहा होगा जो जलमग्न हो गया।

टिप्पणी

भारतीय तटरेखा केवल 6,100 (अण्डमान, निकोबार, लक्षद्वीप को छोड़कर) किमी लम्बी है। 32.8 लाख वर्ग किमी. क्षेत्र में विस्तृत इस विशाल देश को देखते हुए तटरेखा बहुत ही कम लम्बी है। तटरेखा की लम्बाई तो कम है ही, साथ ही साथ यह सपाट भी है। सपाट तटरेखा पर अच्छे पोताश्रय नहीं मिल पाते हैं। यहाँ के निवासी अच्छे नाविक नहीं होते हैं। तटरेखा का प्रभाव व्यापार एवं निवासियों के चरित्र पर पड़ता है। तटीय निवासी प्रगतिशील, सभ्य, शान्तिप्रिय, निर्भीक, उत्साही तथा विश्वबन्धुत्व में विश्वासी होते हैं। भारतीय तटरेखा के समीप छोटे–छोटे द्वीप भी नाममात्र को हैं। मुम्बई पोताश्रय द्वीप से सुरक्षित होने के कारण ही उन्नति कर सका है। भारतीय तटरेखा को दो भागों में बाँटा गया है– (1) पूर्वी तट, (2) पश्चिमी तट।

(i) पूर्वी तट

पूर्वी तट के भी दो भाग किये गये हैं। (1) उत्तरी सरकार तट, (2) कोरोमण्डल तट।

(1) **उत्तरी सरकार तट** – यह कृष्णा नदी के डेल्टा से लेकर गंगा नदी के डेल्टा तक विस्तृत है। नदियों द्वारा लायी हुई मिट्टी के जमा हो जाने के कारण समुद्रतट उथला है। कोलकाता के समीप हुगली नदी प्रतिवर्ष कीचड़ जमा कर देती है, जिसे समय समय पर साफ करना अत्यन्त अनिवार्य हो जाता है अन्यथा जहाजों का प्रवेश रुक जायेगा। इस कार्य में बहुत धन व्यय होता है। महानदी के डेल्टे पर कोई अच्छा पत्तन नही है। पुरी के समीप का समुद्रतट यात्रियों के लिए आकर्षण का केन्द्र है। चेन्नई और कोलकाता के बीच लगभग 1600 किमी. लम्बे समुद्रतट पर पहले कोई पत्तन नहीं था। विशाखापट्टनम तथा पाराद्वीप के विकास से यह कमी पूरी हो गयी है। व्यापारिक दृष्टिकोण से इनकी स्थिति अच्छी है। समुद्र शान्त रहता है तथा पोताश्रयों में बड़े–बड़े जहाजों को ठहराने के लिए स्थान भी है। काकीनाड और मछलीपट्टनम् पत्तन भी इस तट पर हैं।

(2) **कोरोमण्डल तट** – पूर्वी तट के दक्षिणी भाग को कोरोमण्डल तट की संज्ञा दी गयी है। यह कुमारी अन्तरीप से कृष्णा नदी के डेल्टा तक विस्तृत एक सपाट तट है। चेन्नई के समीप समुद्र छिछला तथा बलुआ है। यहाँ एक कृत्रिम पोताश्रय का निर्माण किया गया है। समुद्र में दो ओर से कंकरीट की दीवार बनाकर लगभग 80 हेक्टेयर क्षेत्र को घेर दिया गया है। अन्य छोटे पत्तनों में पाण्डिचेरी, गुंडलुरु, नागापट्टनम, धनुष्कोडी तथा तूतुकुड़ी है। सेतुबन्ध रामेश्वरम् तीर्थयात्रियों के लिए मुख्य आकर्षण है जो इसी तट पर है।

(ii) पश्चिमी तट

पश्चिमी तट को पुनः तीन भागों में बाँटा जा सकता है –

(1) मालाबार तट, (2) कोंकण तट तथा (3) गुजरात तट।

(1) **मालाबार तट** – इसका विस्तार गोवा से कन्याकुमारी अन्तरीप तक है। तटरेखा कटी–फटी होने के कारण प्राकृतिक पोताश्रय है किन्तु हवा के अधिक तेज चलने के कारण तट के सहारे बालू एकत्र हो जाती है। अनूप झील इस तट की विशेषता है। मंगलूर, कोचिन, अलेप्पे और कोल्लम इस तट के पत्तन हैं। कोच्चिन समीप समुद्र–तट के समानान्तर पृष्ठ–जल की सुविधा है।

टिप्पणी

(2) कोंकण तट – पश्चिमी तट पर सूरत से गोवा तक फैला हुआ भाग कोंकण तट कहलाता है। यह एक संकरी मैदानी पट्टी है जिसमें एक ओर अरब सागर तथा दूसरी ओर पश्चिमी घाट पर्वत है। इस तट के प्रमुख पत्तन मुम्बई तथा सूरत है। मुम्बई में एक नया पत्तन न्हावा शेवा विकसित किया गया है। इसे जवाहरलाल नेहरू बन्दरगाह भी कहते हैं। मुम्बई पोताश्रय के सामने 9 मीटर से 12 मीटर तक गहरा समुद्र–जल सदैव प्राप्त है। द्वीप व पश्चिमी तट के स्थलीय भाग से घिरा होने के कारण यह मानसूनी तूफानों से सदैव सुरक्षित है।

(3) गुजरात तट – यह सूरत से कच्छ तक फैला हुआ है। इसी तट पर खम्भात व कच्छ खाड़ियाँ हैं। यह तट कटा–फटा है। पोरबन्दर, बोरीबन्दर, ओखा पोर्ट तथा कांदला पत्तन उल्लेखनीय हैं। विभाजन के फलस्वरूप कराची के निकल जाने से पश्चिमी समुद्रतट पर एक अच्छे पत्तन की आवश्यकता थी जिससे पंजाब, राजस्थान एवं हरियाणा राज्यों को व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त हो सकें। इस कमी की पूर्ति के लिए कांदला का विकास किया गया है। कांदला के तटीय समुद्र में पानी की गहराई लगभग 9 मीटर रहती है। तट के निकट द्वीपों का भी विशेष महत्व होता है। भारतीय तट पर द्वीपों का भी अभाव हैं। कच्छ तथा खम्भात की खाड़ी में कुछ छोटे–छोटे द्वीप मिलते हैं। ये द्वीप मछुओं के शरण–स्थल हैं। मुम्बई साल्सेट नामक द्वीप पर बसा है। इसके निकट ही एलीफेण्टा नामक द्वीप है जो बड़ा ही रमणीय है।

पश्चिमी तट के द्वीप – पश्चिमी तट के द्वीप निम्नलिखित हैं–

(1) लक्ष द्वीप – यह लगभग 10° से 12° उत्तरी और 72° पूर्वी देशान्तर पर मालाबार तट से 288 किमी. दूरी पर फैला हुआ है। ये सभी प्रवाल द्वीप हैं।

(2) ट्रॉम्बे द्वीप – यह मुम्बई नगर के समीप स्थित है। हमारी सरकार ने यहाँ अणुशक्ति उत्पादन एवं तेलशोधक केन्द्र बनाया है।

(3) पूर्वी तट के द्वीप – पूर्वी तट के द्वीप निम्नलिखित है–

(1) हेयर द्वीप – तूतुक्कुडि से 4 किमी. दूर स्थित है, यह खरगोशों की अधिकता तथा उनके शिकार के लिए प्रसिद्ध है।

(2) पामबन द्वीप – यह आदम के पुल का ही अंग है। अति प्राचीनकाल में इसके अतिरिक्त अन्य छोटे–छोटे द्वीपों द्वारा भारत और श्रीलंका का सम्बन्ध रहा होगा। रामेश्वरम एक द्वीप पर स्थित है। अब कुछ द्वीप जलमग्न हो गये हैं। बचे हुए द्वीपों मे पामबन द्वीप मुख्य है। यह द्वीप 10 किमी. तथा 18 किमी. लम्बे क्षेत्र में विस्तृत है।

(3) श्री हरीकोटा द्वीप – यह रेत का मुंडेर है जो पुलीकट झील को बंगाल की खाड़ी से अलग करता है। यह 90 किमी. लम्बा तथा 13 किमी. चौडा द्वीप है। यह अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध है।

कृष्णा नदी के डेल्टा के समीप भी कुछ छोटे द्वीप बन गये हैं। चिलका झील तथा समुद्र के मध्य कुछ द्वीप मिलते हैं जो लगभग 30 किमी. लम्बे हैं। गंगा के डेल्टा पर वनाच्छादित छोटे–छोटे द्वीप मिलते हैं।

बंगाल की खाड़ी के द्वीप – बंगाल की खाड़ी के द्वीप निम्नलिखित हैं–

(1) **अण्डमान द्वीपसमूह** – 204 द्वीपों का यह समूह बंगाल की खाड़ी में 10° – 30° और 13°–30' उत्तरी अक्षांशों तथा 92° पूर्वी 93° –30' पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है। कोलकाता से इनकी दूरी 1250 किमी. है। इन द्वीपों की आबादी 63 हजार है। स्वतंत्रता प्राप्ती के पूर्व स्वतंत्रता सेनानियों को यहाँ निर्वासित किया जाता था और इस क्षेत्र को कालापानी कहकर पुकारा जाता था। भू–गर्भशास्त्री के मतानुसार ये बंगाल की खाड़ी में प्रविष्ट अराकानयोमा की ही निम्न श्रेणियाँ है। यहाँ टर्शरी युग की शैलें पायी जाती हैं। कहीं–कहीं पर अवदासी शैलें पायी जाती हैं। इन द्वीपों का अधिक क्षेत्र वनों से ढका हुआ है जिनमें सदाबहार चौड़ी पत्ती वाले वन मिलते हैं। यहाँ नारियल, रबड़ तथा रेशेदार पदार्थ पैदा किये जाते हैं। धान यहाँ की मुख्य पैदावार है। पोर्ट ब्लेयर आर्थिक उद्योगों का सबसे बड़ा केन्द है। इन द्वीपों के आदिवासी नेग्रीटो जाति के हैं। ये लोग भूत–प्रेतों में विश्वास करते हैं। द्वीपों को उन्नत अवस्था में पहुँचाने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। इन द्वीपों के कल्याण के लिए कई योजनाएँ कार्यान्वित की गयी हैं। पोर्ट ब्लेयर तथा पोर्ट–कार्नवालिस प्राकृतिक सुरक्षित पोताश्रय हैं जिनकी गणना विश्व के उत्तम पोताश्रयों की पंक्ति में है।

(2) **निकोबार द्वीपसमूह** – निकोबार द्वीपसमूह अण्डमान द्वीपसमूह के दक्षिण में स्थित है। यह 21 द्वीपों का समूह है। इसके उत्तर में 'कार' निकोबार, मध्य में कोमोरटा एवं नानकावरी और दक्षिण में विशाल निकोबार है। यहाँ भी अराकानयोमा की टर्शरी युग की शैलें हैं। केमोरटा और निकोबार के बीच स्थित नानकावरी प्रसिद्ध पत्तन है।

टिप्पणी

1.2.3 भारत विभिन्नताओं का देश (India a Land of Diversity)

भारत को अनेक विभिन्नताओं का देश कहा जाता है। यह कथन निम्न तथ्यों से प्रमाणित हो जाता है। भारत का क्षेत्रफल विश्व के क्षेत्रफल का लगभग 2.4% मात्र है जबकि यहाँ विश्व की लगभग 16% जनसंख्या निवास करती है। चीन को छोड़कर भारत विश्व का सबसे घनी जनंसख्या वाला देश है। 2001 की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष की जनसंख्या 102.70 करोड़ है।

भारत के क्षेत्रफल के विषय में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि देश के लगभग सम्पूर्ण भूभाग का (चाहे वह मैदान हो, पहाड़ हो, पठार हो या तटवर्ती भाग हो) उपयोग देशवासियों द्वारा किया जाता है जबकि विश्व के अन्य देशों में प्रायः ऐसा नहीं है। विश्व के कुछ देश (कनाडा और रूस) लगातार हिमाच्छादित रहते हैं तो कुछ (ऑस्ट्रेलिया एवं अफ्रिका के देश) गर्म मरुस्थलीय हैं। ब्राजील के बहुत बड़े भाग में घने जंगल हैं। यही स्थिति प्रायः चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका और जपान की है परन्तु भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जहाँ क्षेत्रफल का लगभग 90% भाग मनुष्य द्वारा उपयोग में लाया जाता है (केवल उत्तरी हिमाचल के कुछ भाग को छोड़कर)।

भू–वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी भारतवर्ष में बहुत विभिन्नताएँ मिलती हैं। उदाहरण के लिए हिमालय विश्व के नवीनतम मोड़दार पर्वत हैं जहाँ कि अधिकांश शैलों में जीवांश पाये जाते हैं जो इस बात का प्रमाण है कि यह क्षेत्र कभी समुद्र में डुबे हुए थे।

टिप्पणी

इस भाग में पाई जाने वाली शैलें नवीन कल्प से लेकर आग्नेय कल्प तक की हैं। इसी के दक्षिण में गंगा–ब्रह्मपुत्रा का उपजाऊ मैदान है जिसकी रचना हिमालय से निकलने वाली नदियों द्वारा बहाकर लाये गये अवसादों के जमा होने से हुई है। इस मैदानी भाग में खनिज पदार्थों का पूर्णतया अभाव है। दक्षिण का प्रायद्वीपीय पठार विश्व की प्राचीनतम कठोर शैलों द्वारा निर्मित हैं जो खनिज सम्पत्ति में धनी है।

यही नहीं उत्तर से दक्षिण तक अधिक विस्तार के कारण धरातलीय विषमताएँ भी मिलती हैं। यदि उत्तर में गगनचुम्बी पर्वत हैं जो अधिकांशतया हिम से ढके रहते हैं तो कहीं नदियों के द्वारा निर्मित गहरी और उपजाऊ घाटियाँ हैं। यह घाटियाँ बहुत बड़े भाग में फैली हुई हैं। कहीं पठार लहराते हुए खेत हैं तो कहीं मरुस्थलीय रेत है।

सम्पूर्ण भारत विषुवत् रेखा के उत्तर में स्थित है। इसका आधा भाग लगभग समशीतोष्ण जलवायु का प्रदेश है तो दक्षिणावृत्त भाग उष्णकटिबंध में स्थित है फिर भी भारत सामान्यतः एक उष्ण मानसूनी जलवायु वाला देश है। यद्यपि संपूर्ण देश में ऋतुओं का क्रम एकसा है क्योंकि भारत की जलवायु उत्तर से हिमालय और दक्षिण में हिन्द महासागर से पूर्णतया प्रभावित है। हिन्द महासागर की ओर से आने वाली पवनें भारत को उष्ण मानसूनी जलवायु प्रदान करती हैं। यहाँ जलवायु सम्बन्धी विभिन्नताएँ भी मिलती हैं। मेघालय में चेरापूँजी के निकट मानिसराम स्थान अत्याधिक वर्षा वाला (1395 सेमी) स्थान है जबकि इसके विपरीत राजस्थान जैसे शुष्क मरुस्थलीय प्रदेश में वर्षा की मात्रा बहुत कम (12 सेमी. के आस–पास) है। पश्विमी बंगाल की तट भूमि, पंजाब का अर्द्ध–शुष्क बलुई मैदान, पश्चिमी घाट के अधिक वर्षा वाले तटीय क्षेत्र तथा दक्कन की वृष्टिछाया के आन्तरिक भाग जलवायु सम्बन्धी विषमता के अन्य उदाहरण हैं। यही नहीं पश्चिमी राजस्थान में श्रीगंगानगर में ग्रीष्म ऋतु में तपमान 52° सें. तक पहुँच जाता है तो शीतकाल में लद्दाख, लेह में तापमान शीत ऋतु में –45° सें. तक पहुँच जाता है।

कृषि क्षेत्र में भी भारतवर्ष में विभिन्न ऋतुओं में विभिन्न उपजें पैदा की जाती हैं। यदि कपास, जूट, तंबाकू और चावल के उत्पादन में भारत का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान है तो यहाँ चाय, तिलहन और गन्ना भी पैदा किया जाता है। एक ओर यदि चावल और जूट जैसी अधिक जल वाली उपजें पैदा होती हैं तो दूसरी ओर ज्वार, बाजरा और मक्का जैसी कम जल वाली उपजें भी पैदा होती हैं।

यहाँ के वनों में लगभग 4200 से अधिक किस्म की लकड़ियाँ मिलती हैं। भारत के पश्चिमी तट पर सदाहरित वन मिलते हैं तो राजस्थान में शुष्क कँटीली झाड़ियाँ तो नदी तटों पर ज्वारीय वन मिलते हैं।

यहाँ विभिन्न प्रकार के खनिज प्राप्त होते हैं। अभ्रक, मैंगनीज और कच्चे लोहे के उत्पादन में तो भारत की स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण है। यद्यपि कृषि भारत का मुख्य धंधा है फिर भी खनिज प्राप्त करना, मछलियाँ पकड़ना, बृहद उद्योगों में कार्य करना भी उल्लेखनीय है। अणु संम्बन्धी एवं जल विद्युत शक्ति की भी सम्भावित सम्भावनाएँ हैं।

यहाँ अनेक धर्म और जातियों के लोग निवास करते हैं। यहाँ हिन्दू, मुस्लिम, सिख, इसाई, यहूदी, जैन, पारसी लोग रहते हैं। ऐसा कहा जाता है कि यहाँ प्रति 40 किलोमीटर के अन्तर पर बोली, रहन–सहन और रीति–रिवाजों में अन्तर हो जाता है। देश में 225 बोलियाँ बोली जाती हैं। इनमें 18 भाषाएँ मुख्य हैं। मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर, छतरियाँ, गुरुद्वारे असंख्य हैं। भारत की वैदिक संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है।

विश्व के सुन्दरतम् भवन के नमूने भी भारत में मिलते हैं। आगरा का ताजमहल, कर्नाटक में गोमतेश्वर की मूर्ति, खजुराहो, कोणार्क, मदुराई, मीनाक्षी और कांजीपुरम् के मन्दिर, रामेश्वरम् का सबसे लम्बा मन्दिर दालान (1200 मीटर), सोमनाथ का विशाल मन्दिर, सोनपुर का सबसे बड़ा प्लेटॅफार्म और बीजापुर इसके प्रमुख उदाहरण है।

टिप्पणी

उपरोक्त भिन्नताओं अथवा विशेषताओं के कारण ही पाश्चात्य विद्वानों ने भारत को एक उपमहाद्वीप की संज्ञा दी है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. बंगाल नीस में निम्नलिखित में से कौनसा खनिज नहीं मिलता है?
   (अ) एपीटाईट (ब) मेग्नेटाइट
   (स) लिमोनाईट (द) इल्मेनाईट
2. धारवाड़ समूह की शैलें निम्नलिखित में से किस स्थान पर नहीं मिलती है?
   (अ) कर्नाटक (ब) झारखंड
   (स) उत्तर प्रेदश (द) उत्तर गुजरात
3. द्रविड़ महाकल्प की शैलों को कितने वर्गों में बाँटा गया है?
   (अ) तीन (ब) चार
   (स) पाँच (द) छः
4. भारत में कोयले के सुरक्षित भण्डार निम्न में से किस समूह की शैलों में मिलते हैं?
   (अ) कडप्पा (ब) धारवाड़
   (स) विन्ध्यन (द) गोंडवाना
5. दक्कन ट्रेप को कितने भागों में बाँटा गया है?
   (अ) तीन (ब) दो
   (स) चार (द) पाँच

1.3 भौतिक स्वरुप एवं धरातलीय बनावट (Physical Features and Physical Texture)

भारत की प्राकृतिक दशा पर विचार करते हुए भिन्न भिन्न भूगोल विचारकों ने विभिन्न सम्मतियाँ प्रकट की हैं। कुछ लोगों ने इसके तीन भाग किये हैं –

(1) उत्तरी पर्वतमालाएँ।

(2) दक्षिणी पठार।

(3) सतलज–गंगा का मैदान।

कुछ लोगों के विचार से इसके चार प्रमुख भाग किये जा सकते हैं। चौथा भाग तटीय मैदानों का है। कुछ लोगों ने तटीय भाग को दक्षिणी पठार के साथ रखा है और थार के रेगिस्तान को चौथा भाग बताया है। अतः भारत के धरातल का भली–भाँति

टिप्पणी

अध्ययन करने के लिए इसे चार मुख्य भागों में ही बाँटना उपयुक्त होगा। भारत का 10.7% पर्वत, 18.6% पहाड़ी भूमि (2134 मीटर ऊँचा), 27.7% पठार (305 मीटर से 914 मीटर ऊँचा) और 43% मैदान है। विश्व की 12% भूमि पर पर्वत, 14% पहाड़ी भूमि, 33% पठार तथा 41% मैदान है।

1.3.1 भारत के भौतिक भाग (Physiographic Divisions of India)

(1) उत्तरी पर्वतमालाएँ

(अ) पश्चिमी हिमालय

(ब) मध्य हिमालय

(क) पूर्वी हिमालय

(द) पूर्वांचल तथा मेघालय पर्वत।

(2) वृहद् उत्तरी मैदान

(अ) पश्चिमी मैदान

(ब) मध्य मैदान

(क) पूर्वी मैदान।

(3) प्रायद्वीपीय उच्च प्रदेश

(अ) मध्यवर्ती उच्च भूमि,

(ब) प्रायद्वीपीय पठार

(i) सहयाद्रि या पश्चिमी घाट

(ii) पूर्वी घाट

(iii) दक्षिण का पठार,

(iv) पूर्वी पठार या उत्तर–पूर्वी उच्च भूमि।

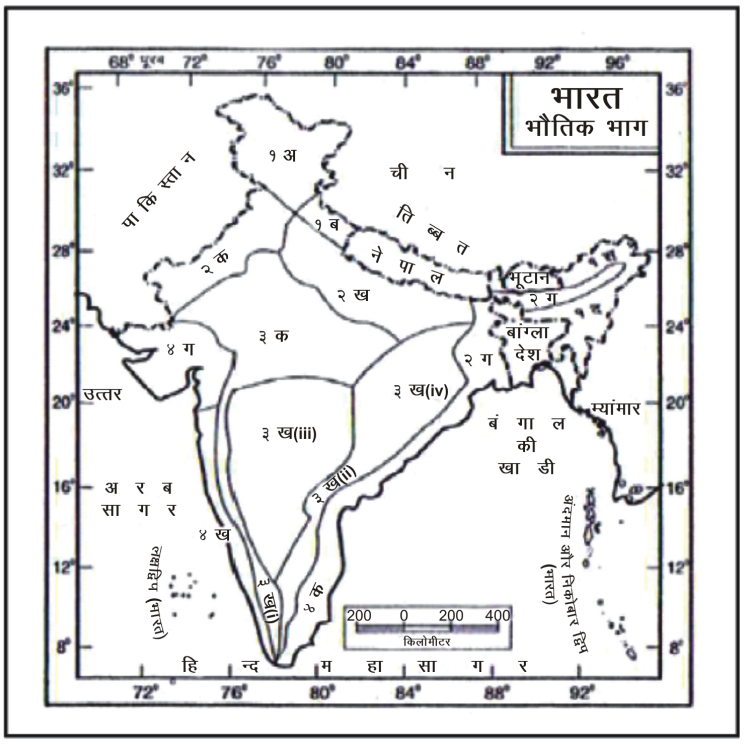
(4) तटीय मैदान एवं टापू

(अ) पूर्वी तटीय मैदान एवं टापू,

(ब) पश्चिमी तटीय मैदान एवं टापू

(क) गुजरात का मैदान

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.2: भारत के भौतिक भाग

(1) उत्तरी पर्वतमालाएँ (Northern Mountains)

यह पर्वतमाला 5 लाख वर्ग किमी. में विस्तृत है (यह भू–भाग 60 करोड़ वर्ष पूर्व समुद्र था, कोई 7 करोड़ वर्ष पहले प्रारम्भ हुए पर्वत घटन गति के क्रम में तलछट एवं शैलों के तले विभिन्न आकारों में ऊँचे उठ गये। अभी तक हिमालय की उत्पत्ति एक करोड़ वर्ष पूर्व बतायी जाती थी, किन्तु जर्मनी के विद्वानों ने 2 करोड़ वर्ष पूर्व बताई है। उन पर घटकों ने प्रभाव डाला, जिससे दिख रहा उभार अस्तित्व में आया यह सिन्धु और ब्रह्मपुत्र नदियों द्वारा तीन भागों मे बँट जाती है–

(अ) हिमालय

(ब) हिमालय के दक्षिण–पूर्व के पर्वत।

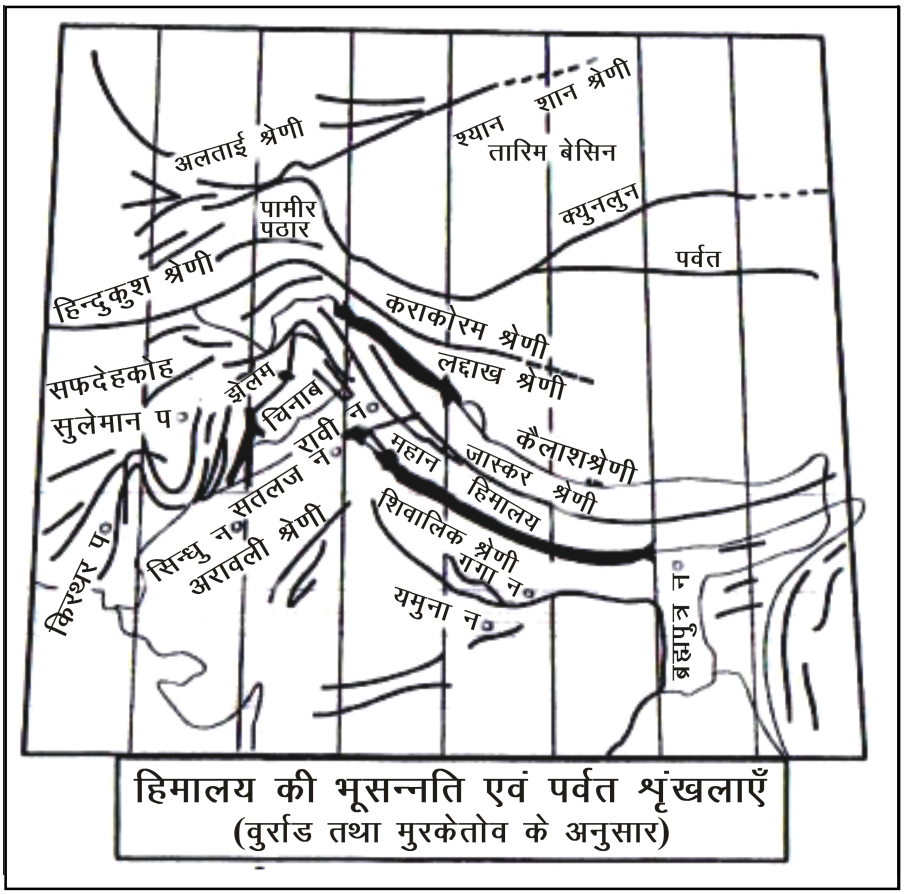
(क) हिमालय के उत्तर–पश्चिम के पर्वत।

(अ) हिमालय

हिमालय को संसार का सर्वोच्च पर्वत होने का श्रेय प्राप्त है। भारत और पाकिस्तान एशिया के अन्य भागों से हिमालय द्वारा ही अलग हैं। हिमालय पर्वत पामीर की गुत्थी से दक्षिण–पूरब दिशा में क्रमबद्ध श्रृंखलाओं में तलवार की भाँति फैला हुआ है। कभी–कभी इसकी तुलना धनुष की डोरी से की जाती है।

इसकी लंबाई लगभग 2,414 किमी. है जबकि चौड़ाई 240 से लेकर 320 किमी. तक है। पूरब से पश्चिम को इसकी चौड़ाई बढ़ती जाती है। इस पर्वत की विभिन्न ऊँचाई की श्रेणियाँ समान्तर रूप में चली गयी हैं। इन श्रेणियों के मध्य पठार तथा घाटियाँ मिलती हैं। इन श्रेणियों की ढाल भारत की ओर तीव्र तथा तिब्बत की ओर मन्द है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.3: हिमालय की भूसन्नति एवं पर्वत श्रृंखलाएँ

(ब) हिमालय के दक्षिण–पूर्व के पर्वत।

हिमालय उत्तर प्रदेश में अवध के मैदान तथा पश्चिम बंगाल के मैदान से एकदम उठे हुए हैं। इसी कारण एवरेस्ट तथा कंचनजंगा की चोटियाँ उत्तर भारत के मैदान से कम ही दूरी पर दृष्टिगोचर होती हैं क्योंकि इन मैदानों एवं महान् हिमालय पर्वत के बीच अवरोध करने वाली कोई श्रेणी नहीं है। इसके विपरीत पश्चिम हिमालय के पर्वत मैदान से शनैः–शनैः ऊपर उठे हैं, जिससे ऊँची चोटियों तथा मैदानों के मध्य कई श्रेणियाँ मिलती है। इन मध्यवर्ती पर्वतीय श्रेणियों के कारण नंगा पर्वत, बद्रीनाथ, नन्दादेवी आदि उच्च चोटियाँ मैदान से नहीं दिखायी देती हैं और मैदान से काफी दूर हो गयी हैं।

हिमालय के पश्चिमी भाग में हिमरेखा 5,700 मीटर पर है और पूर्वी भाग में 4,200 मीटर पर इस पर्वत पर अल्पाइन हिमनद मिलते हैं, जो अनुदैर्ध्य तथा अनुप्रस्थ हैं। अनुदैर्ध्य हिमनद मिलाम बाल्टोरो (कराकोरम) तथा रिमो (पंजाब हिमालय) हैं जो क्रमशः 19 किमी. 58 किमी, तथा 40 किमी. लम्बे हैं। अनुप्रस्थ हिमनद गंगोत्री एवं केदारनाथ (उत्तरांचल) हैं, जो क्रमशः 25 किमी. एवं 14 किमी. लम्बे हैं। इन हिमनदों में नदियों का स्त्रोत मिलता है, परन्तु यह हिमनद अब पिछले हिमयुग के अवशेष रह गये हैं। आजकल हिमालय को मिलने वाला वाष्पीकरण इतना कम है कि इन हिमनदों का अस्तित्व ही समाप्त होता नजर आ रहा है। अपने पोषण की कमी के कारण यह हिमनद अब पीछे खिसक रहे हैं।

हिमालय के भौगोलिक वर्गीकरण – हिमालय को भौगोलिक दृष्टि से तीन देशान्तरीय भागों मे बाँटा जा सकता है।

टिप्पणी

(क) विशाल या महान् हिमालय (The Greater Himalayas) – यह सबसे ऊँची श्रेणी है जिसकी औसत ऊँचाई 6,000 मीटर तक है। विभिन्न चोटियों की औसत ऊँचाई समुद्र–सतह से 6,100 मीटर से अधिक है। 100 से अधिक चोटियाँ इस ऊँचाई को पार कर गयी हैं, जो सदा हिमाच्छादित रहती हैं। एशिया महाद्वीप की 7 हजार मीटर से अधिक ऊँची 94 चोटियों में 92 चोटियाँ हिमालय पर्वत में हैं। सबसे ऊँची चोटी एवरेस्ट (8,848 मीटर) इसी भाग में है। यह चोटी पहले चोमोलुँगमा के नाम से ज्ञात थी। चोमोलुँगमा तिब्बती भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'पर्वतों की रानी'। इसे गौरीशंकर भी कहा जाता है। सर्वेक्षण विभाग के राधाकृष्ण सिकन्दर ने इस ऊँचे शिखर का पहले–पहले पता दिया था। उस समय सर्वेक्षण विभाग के अध्यक्ष एवरेस्ट महोदय थे। उन्हीं के नाम पर इस शिखर का नाम माउण्ट एवरेस्ट रखा गया। सन 1921 में कर्नल हावर्ड बरी ने एवरेस्ट पर प्रथम बार चढ़ाई की। सन् 1924 के अभियान में मैलोरी और इरबाइन नामक दो साहसी नवयुवकों की मृत्यु हो गयी। 29 मई, 1953 कर्नल जॉन हण्ट के नेतृत्व में शेरपा तेनसिंह और न्यूजीलैण्ड के एडमण्ड हिलेरी को यह सम्मान प्राप्त हुआ कि सर्वप्रथम वे संसार के सबसे ऊँचे शिखर पर पैर रख सके। माउण्ट एवरेस्ट के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रसिद्ध शिखरों के नाम निम्न प्रकार हैं।

सारणी क्र. 1.1

	शिखर	ऊँचाई
1.	नंगापर्वत	8122 मीटर
2.	कंचनजंगा	8598 मीटर
3.	धवलागिरी	8585 मीटर
4.	अन्नपूर्णा	8078 मीटर
5.	गोसाईंथान	8013 मीटर
6.	नन्दादेवी	7817 मीटर
7.	त्रिशूल	7210 मीटर
8.	बद्रिनाथ	7138 मीटर
9.	केदारनाथ	6945 मीटर
10.	नीलकण्ठ	7073 मीटर
11.	गंगोत्री	6619 मीटर

एवरेस्ट, कंचनजंगा और धवलागिरी नेपाल देश में हैं। गौरीशंकर नेपाल और तिब्बत की सीमा पर स्थित है। हिमालय के पश्चिमी भाग में यमुनोत्री की कम ऊँची श्रेणी एक लम्बी श्वेत पतली रेखा की भाँति फैली है। इसके पूरब में बन्दरपूँछ (6,315 मीटर) है जिसके उपरान्त भारतीय खूँट (6,582 मीटर), केदारनाथ 6448 मीटर तथा बिना नाम की (6,617 मीटर) दो शिखरें हैं। पास में एक खड्ड है, जो गंगोत्री हिमनदी या भागीरथी का उद्गम है। गंगोत्री घाट के पूरब में बद्रिनाथ और चौखम्भा (7,138 मीटर) शिखर है। बद्रिनाथ की गहरी घाटी में अलकनन्दा नदी का उद्गम है। नर और

टिप्पणी

नारायण पर्वतों की गोद में बसी हुई बद्रीनाथ पुरी बड़ी ही आकर्षक लगती है। नीलकण्ठ शिखर के पूरब में नारायण माना 7,275 मीटर, कामेत पर्वत 6,182 मीटर और नन्दाकना 6492 मीटर ऊँचा है जो भूरे रंग के पिरामिड के आकार का है। यह पर्वत रानीखेत से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। नन्दादेवी पर्वत पर पश्चिम की ओर से आरोहण के कई प्रयत्न हो चुके हैं। पोलैण्ड के दो पर्वतारोहियों कारपन्स तथा ब्रनाउस का 6,100 मीटर चढ़ने के बाद कुछ पता न चल सका। इस पर्वत के चारों ओर बड़े बड़े हिमनद हैं, जिनमें प्रवेश करना बड़ा दुष्कर है। त्रिशूल शिखर के ही अक्षांश पर नन्दाकोट 6,867 मीटर ऊँची है जो त्रिशूल से लगभग 32 किमी. दूर है। नन्दाकोट को 'टैण्ट माउण्ट' या बनकटा भी कहते हैं क्योंकि पहाड़ी में यह कुल्हाडी की भाँति है। नन्दादेवी के निकट उसी से मिली एक और ऊँची श्रेणी है जो नन्दाखाट (7,439 मीटर) के नाम से पुकारी जाती है। पूर्वी नन्दादेवी की समाप्ति एक गहरी घाटी में होती है। यही पिंडारी हिमनद है। नन्दाकोट या बनकटा के पश्चात पंखशृली पर्वत श्रेणी है। पंचशूली नाम इसके पंचपार्श्वीय होने या इसके निकट की अन्य चार श्रेणियों के कारण ही है। पंचशूली के उपरान्त धैाली गंगा की घाटी है और यहीं भारत की सीमा समाप्त होती है। विशाल हिमालय की ये सभी श्रेणियाँ भारत के प्राचीन प्रहरियों की भाँति लाखों वर्षों से खड़ी हैं। 7,710 मीटर से 8,848 मीटर के मध्य की ऊँचाई वाली विश्व की 14 शिखरें इसी पर्वत पर हैं । इनकी तुलना में संसार के ऊँचे पर्वत के शिखर राकी पर्वत का मैकिनले 6,045 मीटर, ऐण्डीज का एकान्कगुआ 7,041 मीटर तथा आल्प्स का ब्लॉक 4,710 मीटर कम ऊँचे हैं।

इस श्रेणी के उच्च शिखरों से कुछ दूर पर तिब्बत की ओर जास्कर एवं लद्दाख श्रेणी और भारत के मैदान की ओर पीरपंजाल श्रेणी है। इन श्रेणियों की शाखाएँ चतुर्दिक प्रसारित हैं जिनमें घाटियाँ भी मिलती हैं। इस प्रकार इस क्षेत्र मे पर्वत और घाटियों का अस्त–व्यस्त क्रम मिलता है। महान् हिमालय और श्रेणियों के मध्य दो प्रमुख घाटियाँ है – काठमाण्डू की घाटी नेपाल में और कश्मीर की घाटी भारत में। इन घाटियों की रचना झीलों के निक्षेपित होने से हुई है। कश्मीर की डल और बूलर झीलों के अवशेष भाग इसके प्रमाण हैं।

(ख) लघु हिमालय (The Lesser Himalayas) – इसके अन्तर्गत वृहद् हिमालय के दक्षिण की वे श्रेणियाँ आ जाती हैं जिनकी ऊँचाई 3,050 से 4,575 मीटर तक है। इसकी चौड़ाई 80 किमी है। इस भाग की बनावट बड़ी विचित्र है। इसमें अनेक ग्रीवा खण्ड या नापेज (Nappes) मिलते हैं। शयान मोड़ फ्रेंच भाषा में 'नापे' के नाम से पुकारे जाते हैं। इनकी आकृति एक लिखने वाली 'डैस्क' के समान है अर्थात् इनके तेज ढाल दक्षिण अथवा बाह्य हिमालय की ओर है और धीमे ढाल उत्तर अथवा महान् हिमालय की ओर है। पीरपंजाल और धौलाधार इस हिमालय की मुख्य चोटियाँ हैं। पीरपंजाल श्रेणी ही दक्षिण एवं दक्षिण–पूर्व में शिमला, डलहौजी एवं धर्मशाला में धौलाधार श्रेणी के नाम से जानी जाती हैं। हिमालय का यह क्षेत्र वनस्पति में घनी हैं। यहाँ अच्छी एवं बहुमूल्य जड़ी–बूटियाँ मिलती हैं। पूर्व में यह महान् हिमालय के अति निकट आती है। कश्मीर की पीरपंजाल श्रेणी इसी क्रम में है। इस पर्वत श्रेणी ढालों पर घास के मैदान मिलते हैं जिन्हें कश्मीर में मर्ग तथा उत्तरांचल में बुग्याल एवं पयार कहते हैं। इस श्रृंखला में अधिकांश नदियाँ 1,000 मीटर की गहराई पर बहती हैं।

टिप्पणी

(ग) बाह्य या उप–हिमालय (The Outer or Sub-Himalayas) – इस भाग के पहाड़ कम ऊँचाई के हैं जिनकी श्रेणियाँ सिन्धु नदी से ब्रह्मपुत्र तक हैं। वास्तव में पोटवार बेसिन से प्रारम्भ होकर पूरब में कोसी बेकसन तक इसका विस्तार है। यह भाग उत्तरी तराई प्रदेश तथा मध्य हिमालय के बीच में पड़ता है। इसकी औसत ऊँचाई 1,500 मीटर है। बाह्य हिमालय 8 से 48 किमी तक चौड़ा है। इसके पश्चिमी भाग को शिवालिक श्रेणी के नाम से पुकारते हैं। शिवालिक सम्भवतः सवालाख का अपभ्रंश है और अनेक चोटियों के होने के कारण रखा गया है। कुछ लोग इस नाम को इस प्रकार भी तोड़ते हैं – शिवालिक = शिव + अलक, अर्थात् भगवान शिव की भौहें। प्राचीन भूगोलशास्त्री इसे मैनाक पर्वत कहते थे। शिवालिक को विभिन्न भागों में विभिन्न नाम दिये गये हैं। बहराइच में इन्हें डुडवा तथा पूरब में इसे चूड़ियाँ श्रेणी के नाम से पुकारते हैं। इसकी ऊँचाई अधिक से अधिक 1,000 मीटर है। इनकी रचना हिमालय से प्राप्त नदी–अवसादों से हुई है। इसीलिए इनमें मिट्टी की बहुलता मिलती है। शिवालिक पहाड़ियाँ मानसूनी वर्षा के कारण कई स्थानों पर नदियों द्वारा खण्डित है। इनकी रचना बालू, कंकड़ तथा पत्थर आदि के द्वारा हुई है। शिवालिक से होकर बहने वाली नदियाँ खड्ड बनाती हैं। बड़ी–बड़ी नदियाँ इन खड्डों के बीच से भी बहती हैं। हरिद्वार के पास गंगा नदी का खड्ड दर्शनीय है। शिवालिक पहाड़ियाँ असम्बद्ध है। शिवालिक और मध्य हिमालय के बीच स्थित कुछ घाटियों को 'दून' के नाम से पुकारा जाता है। इसी से देहरादून (उत्तरांचल) नाम पड़ा। इन पर बलुई दोमट मिट्टी का अवसाद मिलता है।

हिमालय के अनुप्रस्थ या प्रादेशिक वर्गीकरण – इस पर्वतमाला के विभिन्न भागों की दृश्य–भूमि (Landscape) में विविधता मिलती है। इस प्रकार के तीन भाग और पर्वत माला के चार भाग किये जाते हैं।

(अ) पश्चिमी हिमालय – सिन्धु से काली नदी के बीच का पर्वतीय प्रदेश पश्चिमी हिमालय है। पूरब–पश्चिम इसकी लम्बाई 700 किमी. और उत्तर–दक्षिण चौड़ाई 400 किमी. है हिमालय का यही भाग अधिकतम चौड़ा है। इसमें उत्तरी एवं दक्षिणी कश्मीर हिमालय तथा हिमाचल सम्मिलित है। उत्तरी कश्मीर हिमालय में काराकोरम एवं लद्दाख पर्वत हैं जो बहुत ऊँचे तथा उजाड़ हैं। इस भाग में हिममण्डित शिखर बिखरे पड़े हैं जिनमें हिडेन शिखर, ब्रॉड शिखर, ग्रेशरब्रम द्वितीय आदि प्रमुख हैं। इस भाग में रिमों, बाल्टारो प्रमुख हिमनद है। इसके उत्तर–पूर्वी भाग में लद्दाख का प्रमुख पठार है जो 5,400 मीटर ऊँचा है। इस पठार पर आक्साई चीन एवं सोडा मैदान है जो अति शुष्क एवं उजाड़ है। उत्तरी कश्मीर हिमालय की नदियाँ सिन्धु तथा उसकी मुख्य सहायक श्योक, जास्कर तथा द्रास है।

कश्मीर, हिमालय –

कश्मीर हिमालय में नंगा पर्वत, जास्कर श्रेणी तथा पीरपंजाल श्रेणी प्रमुख हैं। इस भाग में हिमालय की तीनों प्रमुख श्रेणियाँ मिलती हैं। इस भाग की औसत ऊँचाई 6 हजार मीटर है। जास्कर श्रेणी में जोजीला दर्रा (3,529 मीटर), पीरपंजाल श्रेणी में पीरपंजाल दर्रा (3,494 मीटर) तथा बेकनहाल दर्रा (2,832 मीटर) प्रमुख हैं। पीरपंजाल एवं महान हिमालय के मध्य प्रसिद्ध कश्मीर घाटी है जो सागर तल से 1,700 मीटर ऊँचाई पर स्थित है। इस घाटी में बुलर एवं डल झीलें हैं। दक्षिणी भाग में जम्मू एवं पूँछ की

टिप्पणी

पहाड़ियाँ है जो शिवालिक पर्वत के क्रम में हैं। इस प्रदेश की प्रमुख नदियाँ झेलम, चिनाब तथा रावी है। इसका क्षेत्रफल 3.5 लाख वर्ग किमी. है। कश्मीर हिमालय की संरचना को वाडिया ने तीन मेखलाओं में प्रस्तुत किया है–

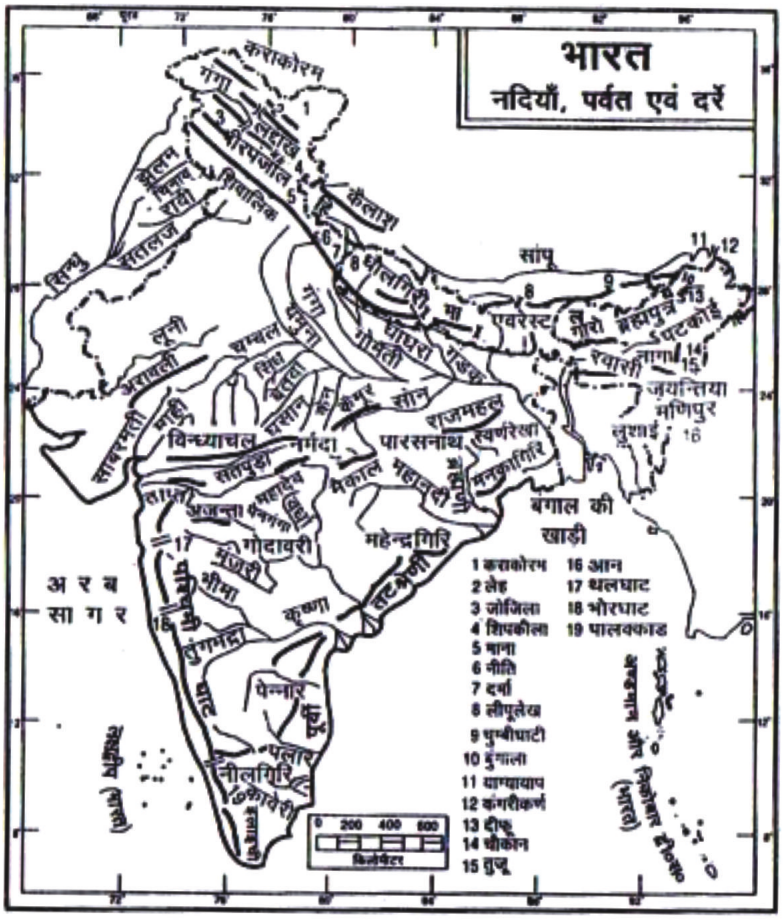
(1) अग्रभूमि (Foreland) – इसके अन्तर्गत टर्शरी अवसाद द्वारा निर्मित अधिकांश सीमित भूमि है। इसमें मुरी स्तर आता है।

(2) स्वस्थानिक मेखला (Antochthonous Belt) – इसमें कार्बोनीफरस कल्प से आदि नूतन युग की शैलें स्थित हैं। इसने अग्रभूमि के ऊपर वलित होकर मुरीक्रम को ढक लिया हैं। इस प्रकार यहाँ शयान वलन दीखती है।

(3) नापे (Nappe) – यहाँ पूर्व कैम्ब्रियन की सलखाक्रम की डोगरा स्लेट द्वारा ढक जाने की घटना हुई है। इसको **डॉ. वाडिया** ने पुराना स्लेट मण्डल, रवेदार शैल मण्डल तथा तिब्बत मण्डल में विभाजित किया है।

हिमाचल हिमालय

इसमें भी हिमालय की तीनों श्रेणियाँ मिलती हैं। इसमें जास्कर, पीरपंजाल तथा धौलाधर प्रधान पर्वत हैं। चन्द्रभागा, रावी तथा सतलज प्रमुख नदियाँ है। धौलाधर पर्वत के दक्षिण में व्यास नदी की कांगडा घाटी एवं कुल्लू घाटी और पीरपंजाल तथा जास्कर श्रेणियों के मध्य लाहुल एवं स्पीति घाटियाँ स्थित हैं। जास्कर श्रेणी का दर्रा तथा पीरपंजाल श्रेणी के रोहतांग एवं लाहुल दर्रे महत्वपूर्ण हैं।



चित्र क्र. 1.4: भारत के पर्वत, नदियाँ एवं दर्रे

हिमाचल प्रदेश में **देवाब्बा** 6,001 मीटर तथा **इन्द्रासन** 6,200 मीटर उच्च शिखर हैं। शिपकाली मुख्य दर्रा है। इस भाग का क्षेत्रफल 45 हजार वर्ग किमी. है।

हिमाचल हिमालय का विधिवत् अध्ययन **पिलाग्राम** सन् 1928 **डॉ. वेस्ट** (सन् 1939) ने किया है। यहाँ क्राल, गिरी, चैल तथा **जुतोग** क्रम शयान वलनों में मिलते हैं जिनमें कार्बोनीफरस कल्प से गिरिकल्प की शैलें मिलती हैं। अधिकांश शिखरों पर शिष्ट प्राप्त हैं। सम्पीडन के फलस्वरूप क्राल एवं गढ़वाल नामक दो नापे टर्शरी हिमालय के स्वस्थानिक वलन पर चढ़े हैं।

टिप्पणी

(ब) नेपाल या मध्य हिमालय – मध्य हिमालय का विस्तार काली नदी से तिस्ता नदी की घाटी तक 800 किमी. लम्बाई में है। इसका अधिकांश भाग नेपाल राज्य में पड़ता हैं। अतः इसको 'नेपाल हिमालय' भी कहते हैं। केवल शिवालिक पर्वत की पहाड़ियाँ भारतीय सीमा में पड़ती हैं। मध्य हिमालय के प्रमुख शिखर एवरेस्ट, **कंचनजंगा,** मकालू (8,481 मीटर), धवलागिरी (8,172 मीटर), गोसाईथान (8,013 मीटर) तथा अन्नपूर्णा (8,078 मीटर) है। मध्य हिमालय का विस्तार 117 हजार वर्ग किमी है। काली नदी पर मार्कशांग दर्रा है।

उत्तरांचल या कुमायूँ हिमालय

हिमालय पर्वतमाला का उत्तरांचल में स्थित भाग **कुमायूँ हिमालय** कहलाता है। इसका विस्तार 38 हजार वर्ग किमी. है। इनकी औसत ऊँचाई 7,500 मीटर है। इसके बड़े **हिममण्डित** भाग में गंगोत्री, केदारनाथ, मिलाम तथा पिंडारी हिमनद मिलते हैं। गंगोत्री हिमक्षेत्र में **बद्रिनाथ, केदारनाथ, श्रीकंठ** (6,272 मीटर), **त्रिशूल** तथा **गंगोत्री** शिखर है। कुमायूँ हिमालय का सर्वोच्च शिखर **नन्दादेवी** है। लघु हिमालय तथा शिवालिक पर्वतों के मध्य देहरादून की घाटी है। नैनीताल के निकट नैनीताल, भीमताल, सात ताल आदि झीलें हैं। इस भाग की प्रमुख नदियाँ गंगा एवं यमुना हैं। माना एवं नीति दर्रों द्वारा यह भाग तिब्बत से सम्बन्धित है।

गढ़वाल या कुमायूँ हिमालय का अध्ययन **मिडिलमिस** (सन् 1887), **ग्रोसबेक** (सन् 1891) **मेडलीकाटन** सन् (1894) तथा **आइन** सन् 1939 ने किया है। आइन ने 6 श्रृंखलाओं में अपना अध्ययन प्रस्तुत किया है।

(1) **स्वस्थानिक मेखला** – यह दून घाटियों में हिमालय में 50 किमी. उत्तर तक फैला है। इस पर चूना शैल तथा शिवालिक अवसाद विस्तृत है। इस भाग में वलन एवं भ्रंशन अधिक नहीं है।

(2) **क्राल नापे – रंगाराव** (सन् 1963) के विचार में यह स्वस्थानिक श्रृंखला का ही भाग है। चकराता के पूरब में यह क्रम संनति में स्थित है। मंसूरी पहाड़ी इस संनति में एक शिखर है।

(3) **गढ़वाल नापे** – यह **क्राल** नापे पर ही निक्षेपित है। इसकी आधार मेखला हिमालय में स्थित है जिसमें रवेदार शैलें हैं।

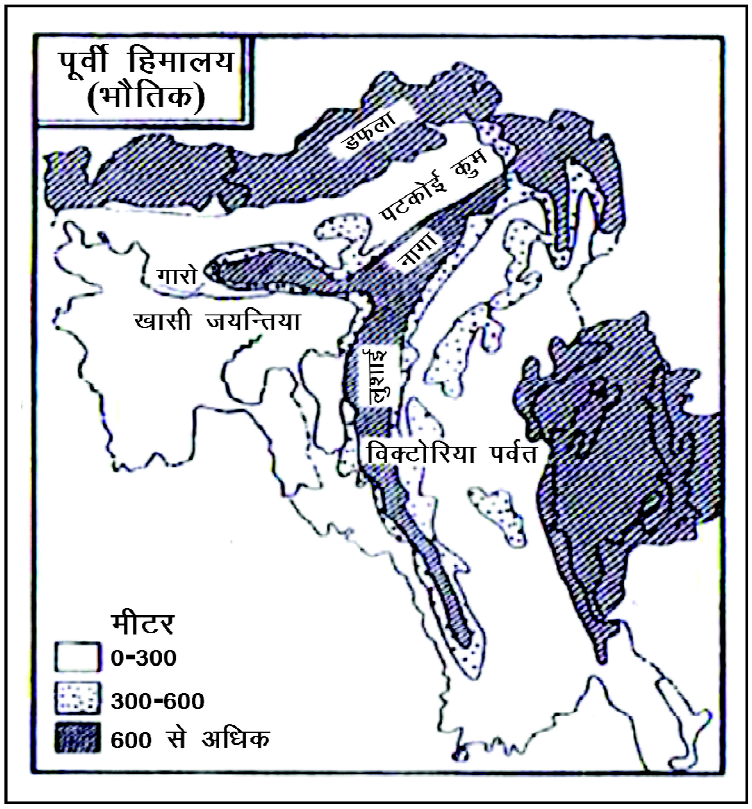
(4) **मुख्य हिमालय श्रृंखला** – यह गढ़वाल नापे की आधारशिला है। इसमें पेरा–नाइस एवं शिष्ट शैलें मिलती हैं।

(5) **मध्य स्वस्थानिक श्रृंखला** – इसका निर्माण ग्रेनाइट शैलों से हुआ है जिसमें पेरा–नाइस एवं शिष्ट शैलें निक्षेपित हैं।

(6) **तिब्बत मेखला** – इस मेखला में प्राचीन जीवाश्म के अवसाद मिलते हैं।

टिप्पणी

(स) पूर्वी हिमालय – यह तिस्ता नदी से ब्रह्मपुत्र नदी (नामचावरवा श्रेणी) तक 720 किमी. की लम्बाई में विस्तृत है। इसका पश्चिमी भाग सिक्किम एवं भूटान हिमालय है जिनके उच्च शिखरों पर हिम पड़ती रहती है। इसमें **डोगंक्या** श्रेणी है, जिसमें नाथूला तथा जेलेप्पा नामक दर्रे हैं, जो भारत चीन संघर्ष में अपने सामरिक महत्व के कारण बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं। यह भूस्खलन एवं भूकम्प का अंग है।



चित्र क्र. 1.5: पूर्वी हिमालय की भौतिक रचना

(i) सिक्किम हिमालय– दार्जिलिंग हिमालय तराई से एकदम ऊँचा हो गया है। इसमें तिस्ता तथा महानन्दा प्रमुख सरिताएँ बहती हैं। दार्जिलिंग तथा सिक्किम हिमालय में शिवालिक श्रेणी अन्तर्धान हो जाती हैं यह कटा–फटा प्रदेश है।

(ii) भूटान हिमालय– भूटान हिमालय में हिमालय की तीनों श्रेणियाँ मिलती हैं। थिम्पू श्रेणी तथा मसांग क्युंगडु श्रेणी मुख्य हैं। महान् हिमालय में **लिगशी** तथा **चोमो लहरी** 6899 मीटर शिखर है। थिम्पू श्रेणी के युले तथा लिंगशी दर्रे तिब्बत की चुम्बी घाटी के मार्ग हैं। इसमें **तोर्सा, यू** तथा **मनसा** नदियाँ हैं।

सिक्किम तथा भूटान हिमालय का अध्ययन **हूकर, मैलेट, हीम** तथा **ग्रैसर** ने प्रस्तुत किया है। इस भाग में गोंडवाना संरचना का विशेष स्थान है, जिसमें नाइस एवं शिष्ट शैलों की प्रधानता है। इसमें दक्षिण से उत्तर को क्रमशः शिवलिक मुख्य सीमान्त भ्रंश, गोंडवाना तथा दार्जिलिंग क्रम मिलते हैं।

(iii) असम हिमालय– हिमालय का पूर्वी भाग असम हिमालय कहलाता है जिसके पूर्वी छोर पर **नामचा बरवा** शिखर (7,756 मीटर) है। इस भाग की प्रमुख नदियाँ दिहांग, लोहित, सुबनश्री तथा ब्रह्मपुत्र है। यह भाग अधिक प्रपाती है। ये पर्वत मैदान

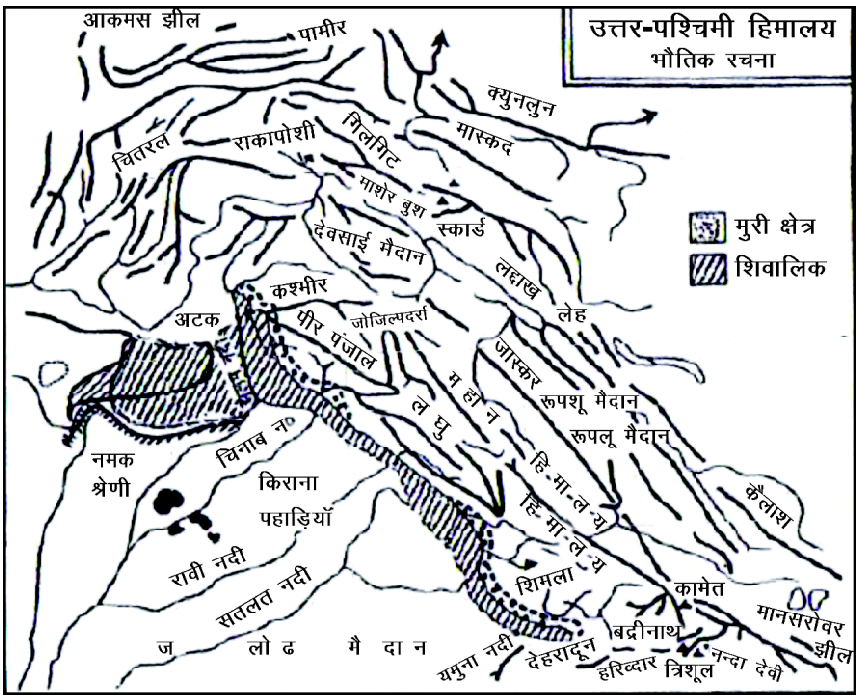
टिप्पणी

से अकस्मात् ऊपर उठ गये हैं। इस भाग में कई हिमनदियाँ हैं। **धनसिरी** एवं **पकराई** नदियों के मध्य आका पहाड़ी भयरेली एवं रंगनाद नदियों के मध्य दफला पहाड़ी, सुबनश्री नदी के पश्चिम में गिरि पहाड़ी, सिआंग एवं सुबनश्री के मध्य अबो पहाड़ी और दिवांग एवं दिहांग के मध्य मिशमी पहाड़ी स्थित है।

पूर्वांचल तथा मेघालय पर्वत – हिमालय की श्रेणियाँ पूर्व में दक्षिण की ओर मुड़कर विभिन्न पहाड़ियों के रूप में फैली हैं। इसमें मिशमी पहाड़ी, पटकोई श्रेणी, नागाश्रेणी मनीपुर, कछार पहाडी, जिमो पहाड़ी तथा त्रिपुरा पहाड़ी है। मिशमी पहाड़ी का शिखर **डाफाबम** (4,578), नागा श्रेणी का **सारामती** शिखर (3,826 मीटर) तथा **कोहिमा** पहाड़ी का **जापवो** शिखर (2,995 मीटर) है। यह एक जटिल प्रदेश है, जिसमें पर्वतीय शिखरों से नदियाँ निकलती हैं। नागा श्रेणी से तेजू नदी, मनीपुर पहाड़ी से मनीपुर नदी, कोहिमा पहाड़ी से बराक नदी तथा त्रिपुरा पहाड़ी से गोमती नदी निकलती है। मेघालय की पहाड़ियाँ **गारो,** खासी, जयन्तिया को बरेल श्रेणी मिलाती हैं। ये पहाड़ियाँ भू–रचना की दृष्टि से दक्षिण पठार की शैलों से मिलती–जुलती हैं। इनमें शिलांग पठार है। इसकी प्रमुख नदी सुरमा है। इस क्षेत्र की ऊँचाई 1,000 से 2,000 मीटर है। गारो का शिखर **नोकरेक** 1,412 मीटर ऊँचा है तथा खासी पहाड़ी का सर्वोच्च शिखर शिलांग नागा के निकट 1,961 मीटर ऊँचा है। अन्य पहाड़ियाँ डाका, मिरि तथा अबोर हैं।

(क) हिमालय के उत्तर–पश्चिम के पर्वत

इस भाग में काराकोरम श्रेणी प्रमुख है। इसकी चोटील **गाडविन आस्टिन** (K_2) ऊँचाई 8,611 मीटर है। ऊँचाई में इसका स्थान विश्व में द्वितीय है।



चित्र क्र. 1.6: उत्तर–पश्चिमी हिमाचल की भौतिक रचना

टिप्पणी

काराकोरम गिरिद्वार अन्तर्राष्टीय मार्ग पर पड़ता है। प्राचीन भूगोलशस्त्री काराकोरम को **कृष्णगिरि** कहते हैं।

हिमालय का भूवैज्ञानिक विभाजन – हिमालय के भूवैज्ञानिक आधार पर निम्नलिखित क्षेत्र हैं–

(1) **तिब्बती क्षेत्र** – इसको पार हिमालय क्षेत्र भी कहते हैं। इन शैलों में जीवांश प्राप्त नहीं होता है। यहाँ कायान्तरित शैलों की बहुलता है। ये शैलें अधिक कठोर हैं।

(2) **हिमालय क्षेत्र** – यह सबसे ऊँचा क्षेत्र है। इसमें कायान्तरित शैलों की अधिकता है। इस क्षेत्र में वलन एवं दरारों के स्पष्ट दृश्य हैं।

(3) **उप–हिमालय के क्षेत्र** – यह हिमालय की अन्तिम क्रिया का फल है। ये नवीनतम शैलें हैं जिनमें समुद्री तरंगों के चिन्ह मिलते हैं। यह क्षेत्र अस्थिर स्थिति में है तथा भूकम्प से प्रभावित होता रहता हैं।

हिमालय पर्वत के दर्रे – हिमालय पर्वत और उससे सम्बद्ध श्रेणियों में दर्रे हैं जो इन श्रेणियों को पार करने में सहायक सिद्ध होते हैं। निम्नलिखित दर्रे विशेष प्रसिद्ध हैं – जम्मू एवं कश्मीर में **मालकन्द** (1902 मीटर), **बुर्जिल** (3750 मीटर), **जोजिला** 3445 मीटर तथा **काराकोरम** (5425 मीटर) दर्रे हैं जिनसे विदेशों को मार्ग जाते हैं। हिमालय प्रदेश में **शिपकी** एवं **बड़ा लापचा** दर्रे; उत्तरांचल में **माना** (5611 मीटर), **नीति** (5068 मीटर), **लीपू** तथा **थोगला** दर्रे; सिक्किम में **नाथूला** एवं **जेलेप्पा** दर्रे और पूर्वी सीमा के पर्वतों में **यांग्याप, कांगेरी, दीफू, चौकान, तांगुए,** तुजु तथा **आन** दर्रे हैं। हिमालय पर्वत के दर्रों की औसत ऊँचाई 4880 मीटर से 5490 मीटर के मध्य है।

हिमालय की उत्पत्ति – प्राचीनम पैंजिया (Pangea) महाद्वीप के विदीर्ण हो जाने पर अंगारालैण्ड तथा गोंडवाना लैण्ड नामक महाद्वीपों के मध्य एक विशाल समुद्र का निर्माण हुआ जो जिब्राल्टर से सुदूर–पूर्व तक विस्तृत था। इसको **टेथिस** (Tethys) की संज्ञा प्रदान की गयी। इसमें दो अन्तरीप थे–कश्मीर एवं असम। इस सागर की चौड़ाई मानव भूगोलबिंदू **डी टेरा** (De Terra) महोदय के अनुसार 3200 किमी. से कम नहीं थी तथा इसका मध्य भाग 1528 किमी. गहरा था। इसमें लाखों वर्ष तक पदार्थों का निक्षेप एकत्र होता रहा जिससे 6000 मीटर से भी मोटी पर्त जम गयी। इस निर्बल एवं लचकदार क्षेत्र को भूगर्भीय शक्तियों ने मोड़ा, झुकाया एवं उठाया जिससे अनेक मोड़ (Overfolds), क्षेप भ्रंश (Thrust Faults), शयान वलन (Recumbent Folds) तथा ग्रीवा खण्ड या नापे (Nappes) बन गये। भूगर्भशास्त्री **सुइस** के अनुसार, प्राचीन नवजीव महाकल्प (Tertiary Era) में मध्य एशिया का कठोर अंगारालैण्ड का स्थल पिण्ड उत्तर महासागर की तली के दबाव के कारण दक्षिण की ओर खिसका जिसके बाव से टेथिस की जलछट ऊपर उठ गयी और विश्व के प्रमुख पर्वत हिमालय की रचना होने लगी। आदि नूतन युग में वर्तमान झुकाव बन गया। इस क्रम के जारी रहने से हिमालय की विभिन्न श्रेणियों की उत्पत्ति हुईं। ये प्राचीन नवजीव महाकल्प की घटनाएँ हैं। सी. एस. **पिचामुथु** के मतानुसार बृहद् पर्वतीय श्रेणियाँ एक गतिशील पेटी है जो कैम्बियन युग से एक भू–अभिनति में एकत्रित अवसाद के ढेर से निर्मित हैं।

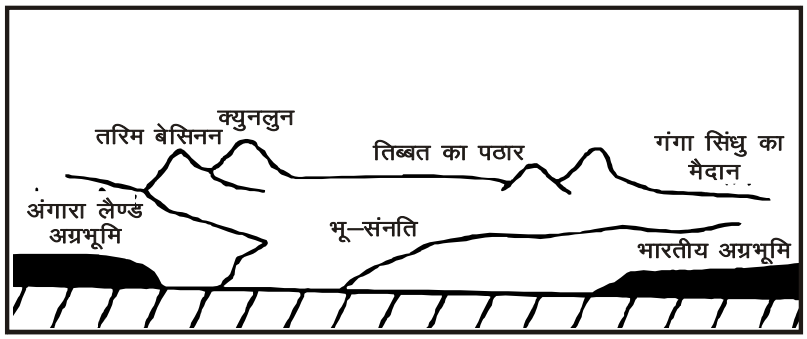
स्विट्जरलैण्ड के भू–गर्भ–विज्ञानी **आरगण्ड** के अनुसार दबाव गोंडवानालैण्ड के उत्तर की ओर सरकने के फलस्वरूप दक्षिण दिशा से हुआ जब अंगारालैण्ड अपनी

जगह स्थिर था और टेथिस का अवसाद मुड़कर हिमालय पर्वत के रूप में परिवर्तित हो गया।

हिमालय का पर्वतन

टिप्पणी

भू–वैज्ञानिकों के मतानुसार हिमालय की रचना में पांच भू–संचलनों का विशेष प्रभाव पड़ा हैं। यह भूभाग लगभग 60 करोड़ वर्षों तक समुद्र था। पहली हलचल **खटी कल्प** (Cretaceous Period) के प्रारम्भ काल में 10 करोड़ वर्ष पूर्व हुई जिसमें टेथिस सागर का उथला भाग समानान्तर मोड़ो का कारण बना। इसी समय कुछ स्थानों पर टेथिस अधिक गहरा भी हो गया।

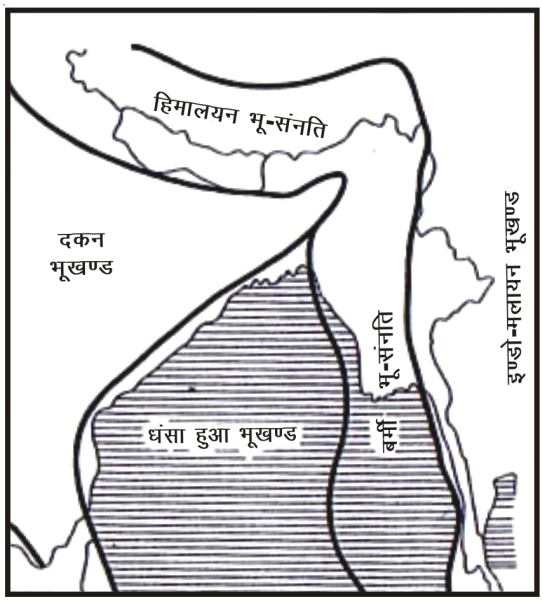


चित्र क्र. 1.7: हिमालय का विकास

द्वितीय हलचल आदि **नूतन युग** (Eocene Epoch) के प्रारम्भ में 6 करोड़ वर्ष पूर्व हुई। इसी में नारी, गज एवं मुरी परतों का निक्षेप हुआ। **तृतीय हलचल**, जो भीषणतम थी, मध्य **नूतन युग** (Miocene Period) के मध्य में ढाई करोड़ वर्ष पूर्व हुई जिसमें टेथिस का लोप एवं हिमालय की ऊँचाई उपलब्ध हुई। समान्तर श्रेणियों की रचना हुई जिनके मध्य में नदियों की घाटियाँ एवं दलदल थे। इसमें मध्य हिमालय की रचना हुई। इस समय भारतीय प्रायद्वीप के उत्तर में एक गहरी अभिनति बनी रह गयी, जिसमें उत्तरी पर्वत एवं दक्षिण प्रायद्वीप से तलछट का निक्षेप होता रहा, जिससे शिवालिक की उत्पत्ति हुई। काश्मीर के पोटबार अभिनति से कोशी तक 87° पूर्व में विस्तृत है।

चौथी हलचल अति **नूतन युग** (Plistocene Epoch) के अन्त में 10 लाख वर्ष पूर्व हुई, जिसके पश्चात् अत्यन्त **नूतन युग** (Plistocene Epoch) का अवतरण हुआ।

इसी के अन्तिम चरण में पृथ्वी की **पाँचवी हलचल** हुई जिसने हिमालय को पूर्णरूप प्रदान किया। इस संचलन के पूर्व मनुष्य पृथ्वी पर अवतरित हो चुका था।

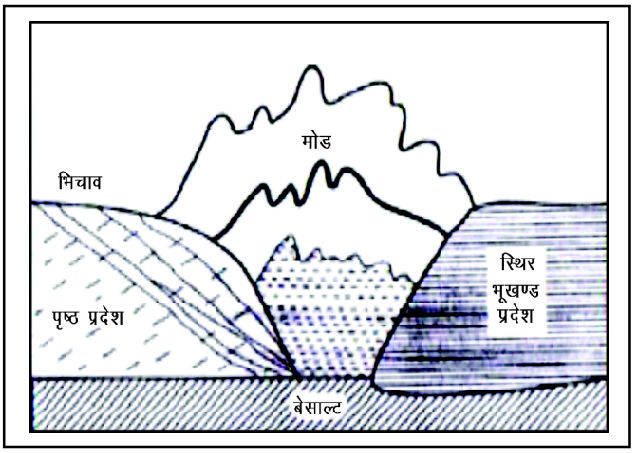


चित्र क्र. 1.8: हिमालय भूसन्नति का विस्तार

टिप्पणी

कुछ विद्वानों के विचार से हिमालय आज भी **निर्माणावस्था** में है। स्विस **भू–वैज्ञानिक हीम** महोदय के मतानुसार हिमालय पर्वत अभी और ऊँचा उठ रहा है। इसका प्रमाण असम में घटित होने वाले भूकम्पों की तीव्रता से मिलता है। तिब्बत तथा निकटवर्ती क्षेत्रों की विलुप्त होने वाली झीलें भी इस तथ्य को प्रमाणित करती हैं। इन झीलों के समीप पाये जाने वाले बालू एवं कंकड़ 900 मीटर ऊँचाई पर मिलते हैं। भारतीय सर्वेक्षण के भू–गणितीय एवं अनुसन्धान विभाग के निदेशक **डॉ. आर.एस. चुघ** ने बताया है कि हिमालय पर्वत श्रेणी एक सौ वर्ष में 20 सेण्टीमीटर तथा शिवालिक श्रेणी 10 से. मीटर की दर से ऊपर उठ रही है। उन्होंने बताया है कि **केदारनाथ** एवं **बद्रीनाथ** तीर्थस्थल 1.6 मीटर उठ गये हैं। भारत क्षैतिज रूप से प्रतिवर्ष 5 सेंमी फैल रहा है किन्तु सतह की गति नियमित दर पर बनी हुई है।

ये पर्वतीय भाग अनेक बार समुद्र के भीतर रह चुके हैं, अतः इनमें सभी क्रमों की शैलें मिलती है। इनकी भौतिक विशेषताएँ अनेक रूपात्मक हैं। इनकी नदियों की ऊर्ध्व अपरदन शक्ति अधिक है। इनकी घाटियाँ 'वी' (V) आकार की हैं। इनमें गहरी घाटियाँ एव सँकरा पथ मिलता है।



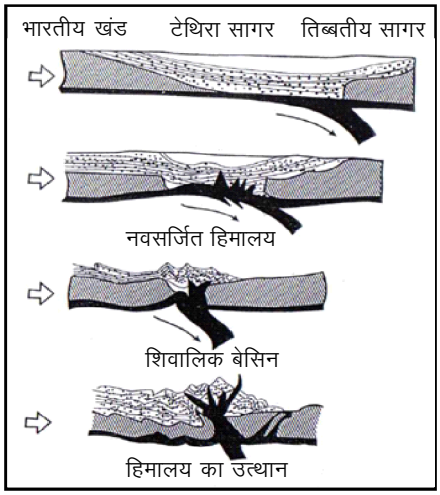
चित्र क्र. 1.9: हिमालय पर्वत निर्माण

बुरार्ड का मत

ब्रिटिश भू–वैज्ञानिक बुरार्ड एवं अमरीकी भू–आकृति विज्ञानि **हेडेन** (Burard and Hayden) ने हिमालय की संरचना की व्याख्या प्रदान की है। उनके अनुसार महान् हिमालय ऊँची चोटियों का पर्वत है जो ग्रेनाईट, नाइस एवं शिष्ट शैलों से निर्मित है। मध्य या लघु हिमालय ग्रेनाइट एवं रवेदार शैलों से बना है। बाह्य हिमालय या शिवालिक पर्वत की रचना में स्लेट, क्वार्टजाइट एवं चूने के पत्थर की बहुलता है। लघु एवं बाह्य हिमालय में वृहद् सीमान्त भ्रंश (Great Boundary Fault) है। लघु हिमालय तथा पीरपंजाल पर अत्यन्त नूतन युग के प्रमाण मिलते हैं। इनकी रचना के समय मानव का अवतार हो चुका था।

भू–विज्ञानी **बुरार्ड** के मतानुसार (सन् 1912) पृथ्वी की ऊपरी पर्पटी के नीचे एक पर्पटी है जो क्रमशः शीतल हो रही है। शीतल होने के साथ उसमें संकुचन के साथ दरारें हो रही हैं। ये दरारें अवसादों से पट जाती हैं। ये अवसाद तनाव के फलस्वरूप वलित पर्वत बन जाते हैं। उपर्युक्त अवस्था में हिमालय पर्वत की उत्पत्ति हुई। यह सिद्धान्त मान्य नहीं है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.10: हिमालय का उत्थान

फाक्स तथा वेडेल

इंगलिश भू–वैज्ञानिक **फाक्स तथा वेडेल** के अनुसार तिब्बत के पठार के पीछे से दबाव आया फलतः वलन हुआ। धरातल के उत्थान के साथ नदियों का **पुनर्युवन** हुआ और घाटियाँ गहरी हो गयीं जो कालान्तर में भरती गयीं। भू–सन्तुलन के प्रभाव से पुनः वलन पैदा हुआ और हिमालय की उच्च चोटियाँ क्रमशः बन गयीं। इस विचार की विशेषता यह है कि यदि हिमालय की गहरी घाटियाँ न बनी होतीं तो इसकी चोटियाँ भी अधिक ऊँची न उठ पातीं। इसकी पुष्टी में इन्होंने अरुण नदी की सहायक जकरचू की सोपानाकार घाटी को प्रस्तुत किया है। नवीनतम विचार समस्थिति पर आधारित है जिसमें दबाव दक्षिण से कल्पित है। कठोर अडिग स्थल पिण्ड अंगारालैण्ड माना गया है, न कि गोंडवानालैण्ड। वास्तव में संपीड़न की दिशा विवादास्पद है।

प्लेट विवर्तनिकि के सिद्धान्त के अनुसार

डॉ. हेस के मत में प्रायद्वीप भारत की प्लेट का सरकाव उत्तर की ओर हो रहा है। भू–अभिनति भी उत्तर की ओर सरकती रही है। फलतः प्रायद्वीपीय खण्ड एवं एशियाई खण्ड के टकराव की हलचल से अवसाद मुड़ने लगा और हलचलों में हिमालय बना। हिमालय में विकट मोड या अक्षसन्धि (Syntax) मिलते हैं। इसका कारण पंजाब नाईस एवं बंगाल नाईस के खण्ड हैं जो क्रमशः पंजाब एवं बंगाल के नीचे दबे हैं और जिनसे ये विकट मोड़ बन बये हैं।

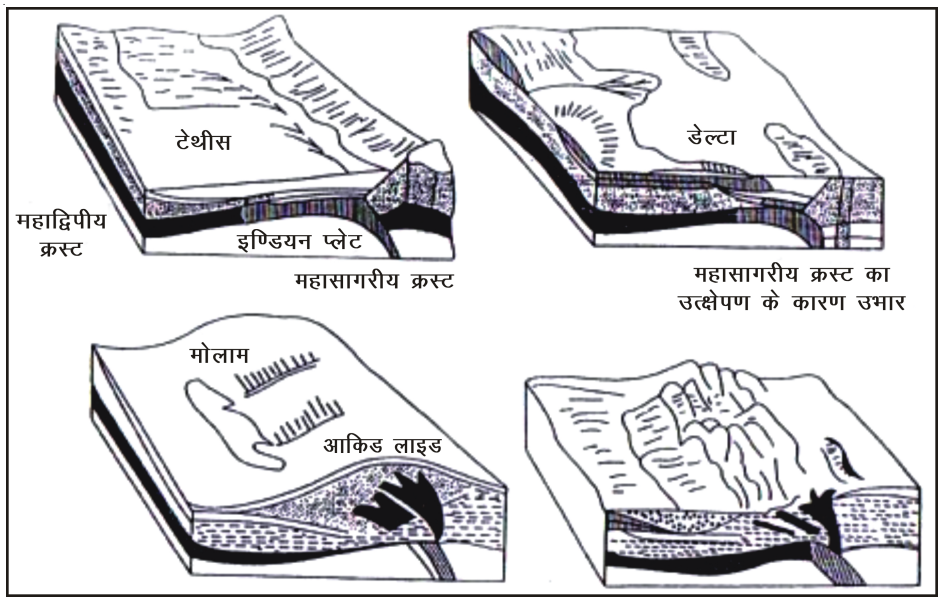
हिमालय के वलन क्रम में ही नदियों के निक्षेप भी वलित हो गये जिनसे हिमालय के गिरिपाद शिवालिक की रचना हो गयी।

शिवालिक निर्माण के सम्बन्ध में तीन मत प्रतिपादित किये गये हैं। प्रथम मत यह है कि इसका निर्माण प्राचीन शिवालिक या इण्डोब्रह्म नदी के तटबन्धों से हुआ जो सम्पीडन के फलस्वरूप मोड़ में बदलकर वर्तमान रूप को प्राप्त हो गया। दूसरा मत है कि इनका निर्माण विस्तृत जलोढ़ पंखों से हुआ जिनमें भू–हलचल से वलन पड़ गयी और शिवालिक श्रेणियों का निर्माण हुआ। तीसरा मत है कि टैथिस की असंख्य छोटी–छोटी झीलों में निक्षेप भरता गया और नूतन युग में अचानक संचलन के फलस्वरूप वलित होकर मुड़ गया जिससे शिवालिक की असम्बद्ध श्रेणियों का निर्माण हुआ।

जब तक कोई निश्चित मत का प्रतिपादन नहीं होता है तब तक यही माना जायेगा कि शिवालिक पेटी के पेटे ऊपर उठने तथा उसके वलित होने के कारण शिवालिक श्रेणियों का निर्माण हुआ।

टिप्पणी

कश्मीर का करेवा पठार – कश्मीरी भाषा में इस क्षेत्र में पाये जाने वाले पठारों को करेवा (Karewas) कहते हैं। ये बालू तथा मिट्टी से बने हैं। ये दो प्रकार के हैं। (1) सपाट चेाटी के करेवा, (2) ढालुवाँ करेवा। सपाट चोटी के करेवा श्रीनगर से 8 किमी. दूर स्थित पाम्पोर के समीपवर्ती क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होते हैं। ये झेलम नदी की सतह से 45.4 मीटर ऊँचे हैं जो शुष्क व वनस्पति विहिन हैं। दक्षिण में पयाच (Payach) के करेवा हैं जो त्रिभुजाकार हैं। ढालुवाँ करेवा कश्मीर घाटी के दक्षिण–पश्चिमी भाग में शोपियाँ (Shopiyan) के समीप पाये जाते हैं। पहले करेवा की उत्पत्ति झीलों से सम्बन्धित बतायी जाती थी, किन्तु बाद के अध्ययन से यह स्पष्ट हो गया है कि इनके निर्माण में नदियों का विशेष हाथ रहा है। इनकी रचना अत्यन्त नूतन युग की है। करेवा आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। पीट कोयला इनमें ही पाया जाता है।



चित्र क्र 1.11: प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त के अनुसार हिमालय की उत्पत्ति

हिमालय की नवीन उत्पत्ति के प्रमाण –

(1) हिमालय को अतिनूतन कल्प (Pliocene Epoch) तथा अत्यन्त नूतन कल्प (Peistocene Epoch) में पूर्णरूप प्राप्त हुआ। पीरपंजाल श्रेणी के किनारे पर 1800 मीटर ऊँचाई पर काश्मीर की झीलों के अवसाद मिलते हैं।

(2) हिमालय पर्वत के तटीय भागों में टरशियरी युग के बाद के स्तनधारियों के जीवाश्म मिलते हैं।

(3) सम्पन्न आदि मानव के अद्भुत पत्थर के औजार की उपस्थिति नदी घाटियों में मिलती है।

(4) वर्तमान समय में भी हिमालय के खिसकने के प्रमाण मिलते हैं।

(5) हिमालय तथा इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में भूकम्प भी इसके द्योतक हैं।

हिमालय पर्वत से लाभ – हिमालय पर्वत से निम्नलिखित लाभ हैं।

टिप्पणी

(1) उत्तरी स्थली सीमा पर हिमालय पर्वत दीवारों की भाँति खड़ा होकर प्रहरी का कार्य करता है। इसे पार करना दुष्कर है। इसीलिए प्राचीन काल में पश्चिम के दर्रों से आक्रमण सम्भव हुए।

(2) दक्षिणी मानसूनी हवाएँ इसमें टकराकर घोर जल–वृष्टि करती हैं।

(3) उत्तर की ओर से आने वाली ठण्डी हवाएँ हिमालय श्रेणियों द्वारा रोक दी जाती हैं जिससे शीत ऋतु में भारत का तापमान अधिक नीचे नहीं गिरने पाता है।

(4) ये श्रेणियाँ वनों का अगाध भण्डार हैं जिनसे प्राप्त कच्चे पदार्थो पर अनेक उद्योग–धन्धे आधारित हैं। ईंधन के लिए भी पर्याप्त लकड़ी इन पर्वतों से प्राप्त हो जाती है।

(5) इन श्रेणियों में प्राकृतिक झरने हैं जिनसे जलविद्युत शक्ति का विकास किया गया है और किया जायेगा।

(6) मनोरम प्राकृतिक दृश्यों से सौन्दर्य भावना जागृत करने वाला यह पर्वत सैलानियों का मुख्य आकर्षण है। यहाँ के रमणीय दृश्यों को देखने के लिए अधिक संख्या में विदेशी भी आते हैं।

(7) शिमला, मसूरी, नैनीताल, दार्जिलिंग अनेक स्वास्थवर्द्धक स्थान हिमालय के आंचल में ही हैं। **कैलाश, अमरनाथ, केदारनाथ, बद्रीनाथ, देवप्रयाग** आदि तीर्थस्थान हिमालय में हैं।

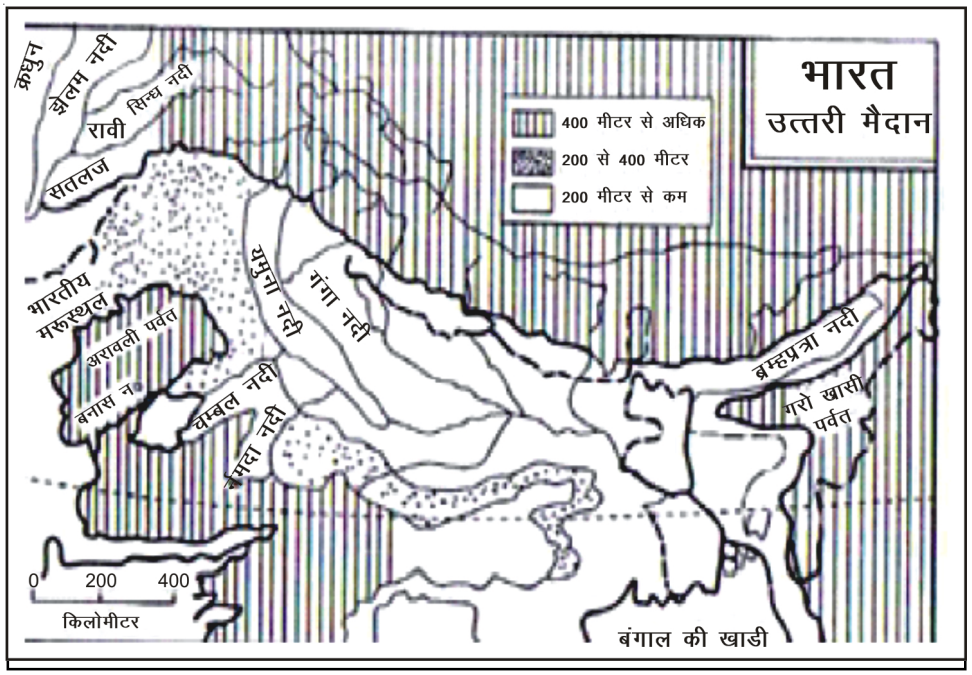
(8) हिमालय पर्वत खनिज सम्पत्तियों जैसे ताँबा, सीसा, लोहा आदि का भी भण्डार है।

(2) वृहद् उत्तरी मैदान (Great Northern Plains)

उत्तरी पर्वतमालाओं और प्रायद्वीपीय पठार के बीच स्थित यह विशाल मैदान भारत के विभाजन से पूर्व गंगा और सिन्धु के मैदान के नाम से पुकारा जाता था। इसमें हिमालय प्रदेश के दक्षिणी किनारे तथा प्रायद्वीपीय भारत के उत्तरी किनारे दबे हुए हैं जिसका विस्तार **ब्रह्मपुत्र** घाटी से सिन्धु घाटी तक था। गंगा और सिन्धु के मैदान का पश्चिमी भाग जिसमें सिन्धु अपनी सहायक नदियों – झेलम, चिनाब और रावी के साथ बहती हैं, पाकिस्तान में चला गया और शेष भाग जो भारतीय क्षेत्र में है, इसे **सतलज–गंगा का मैदान** कहते हैं। यह मैदान सतलज, गंगा ब्रह्मपुत्र तथा इनकी सहायक नदियों द्वारा लायी गयी मिट्टी से बना है। प्रति वर्ष बाढ़ के समय नयी मिट्टी की परतें जमती रहती हैं, इसलिए मैदान की गहराई बहुत अधिक है। कहीं–कहीं तो यह 400 मीटर तक है। यह उपजाऊ मैदान लगभग 3200 किमी. लम्बा और 150 किमी. से लेकर 320 किमी. तक चौड़ा है। इस मैदान का क्षेत्रफल लगभग 7,68,000 वर्ग किमी. है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई लगभग 183 मीटर है। इसका सम्पूर्ण भाग समतल है ये सपाट जलोढ़क (Alluvium) के विश्व के सबसे विस्तृत क्षेत्रों में गिने जाते हैं। कहीं–कहीं अवसादी परत की मोटाई 6 हजार मीटर तक है। दिल्ली के आसपास का क्षेत्र (अम्बाला, सहारनपुर तथा लुधियाना जनपद) सबसे ऊँचा है जो इस मैदान में जल–विभाजन का कार्य करता है, क्योंकि इससे पूरब की ओर की नदियाँ बंगाल की

टिप्पणी

खाड़ी में गिरती हैं तथा इसके पश्चिम की ओर की नदियाँ अरब सागर में गिरती हैं। इस मैदान का ढाल भी बहुत कम है। दिल्ली से बंगाल की खाड़ी तक 1600 किमी. की दूरी में ढाल केवल 200 मीटर हैं। वाराणसी से गंगा के मुहाने तक ढाल केवल 10 सेमी. प्रति किमी. है। इस मैदान के उन भागों को **बांगर** कहते हैं, जहाँ नदियों क्षरा कछार के प्राचीनतम संग्रहीत पुरानी मिट्टी के ऊँचे मैदान बन गये हैं और जहाँ नदियों की बाढ़ का पानी नहीं पहुँच पाता है। नये कछार जो निचले मैदान हैं और जहाँ बाढ़ का पानी प्रति–वर्ष पहुँच कर मिट्टी की पर्त जमा कर देता है, **'खादर'** के नाम से पुकारे जाते हैं। कहीं–कहीं नदियों के पास ऊँचे किनारे विस्तृत उपघाटियों में परिवर्तित हो गये हैं। नदियों की धाराओं से मैदान छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित हो गये हैं। इसको दोआब की संज्ञा दी गयी है।



चित्र क्र. 1.12: उत्तरी भारत का मैदान

(i) पश्चिमी शुष्क मैदान – यह मरुस्थल अरावली पर्वत के उत्तर व पश्चिम सिन्धु के मैदान तक फैला है। यह 640 किमी. तथा 160 किमी. चौड़ा है। बनावट की दृष्टि से यह उत्तरी पर्वतमाला एवं सतलज–गंगा के मैदान से भिन्न है। प्राप्त जीवावशेषों की आकृतियों से यह अनुमान लगाया जाता है कि चतुर्थ महाकल्प के अन्त तक इस भाग का निर्माण हुआ है। भूगोलशास्त्रियों का मत है कि पहले यह एक बहुत ही उपजाऊ भाग था, जहाँ बड़ी–बड़ी नदियाँ बहती थीं। प्राचीनकाल में इस क्षेत्र से बहकर कच्छ की खाड़ी में गिरने वाली नदियों के चिन्ह अब भी यहाँ पाये जाते हैं। ऐसा अनुमान है कि आज से लगभग 3000 वर्ष पूर्व इसके कुछ भाग वनों से आच्छादित थे। इस भाग के उठ जाने से इसमें बहने वाली नदियाँ या तो गंगा में मिल गयीं या सिन्धु नदी में। अत्यन्त नूतन युग से अभिनव युग के मध्य तक इस मरुस्थल की रचना हुई। अत्यन्त नूतन युग में खम्भात–थार क्षेत्र से समुद्र के लोप हो जाने से हिमालय के अन्तिम उत्थापन तथा शिवालिक नदी के लुप्त हो जाने के कारण मानसून का विक्षेपण हुआ। अतः यह भाग ऊजड़ बन गया। स्थानीय शैलों के टूटने तथा कच्छ की खाड़ी से उड़कर आने वाले बालू से मरुस्थल की रचना हुई। कालान्तर में मरुस्थली वातावरण

टिप्पणी

हो जाने के कारण प्राचीन शैलें रेत से ढक गयीं। इसका उत्तरी भाग अब भी उठ रहा है और इस मरुस्थल के उत्तर प्रदेश की ओर विस्तृत होने की सम्भावना चिन्ता का विषय बन गया है। भारत सरकार इस बढ़ते हुए मरुस्थल को वन लगाकर तथा अन्य साधनों से रोकने के लिए सचेष्ट हैं।

थार का मरुस्थल नीची भूमि का प्रदेश है। यह सागर तल से 150 से 380 मीटर तक ऊँचा है। इसका दक्षिणी भाग अपेक्षाकृत नीचा है। इसमें कहीं–कहीं नीची शैलें तथा शुष्क घाटियाँ मिलती हैं। तेज हवाएँ बालुका स्तूपों की श्रेणियों का निर्माण करती हैं। यह बलुआ बंजर है जहाँ रेत के टिब्बे बिखरे मिलते हैं। ये टिब्बे कई किमी. लम्बे तथा 25 मीटर तक ऊँचे होते हैं। इनको **भूड़** कहा जाता है। इस रेत के समुद्र में छोटी–छोटी अल्पकालीन झीलें मिलती हैं। डीडवाना, साँभर (नागोर), पंचपाद (बाड़मेर) तथा लूनकरनसर (बीकानेर) प्रमुख झीलें हैं। आधुनिक अनुसन्धानों से ज्ञात होता है कि **मरुस्थल** स्थायी है।

(ii) मरुस्थली क्षेत्र दो भाग बड़ा मरुस्थल तथा लघु मरुस्थल है। पहला, रन ऑफ कच्छ से लूनी नदी तक विस्तृत है जिसमें राजस्थान–सिन्ध का पूरा सीमान्त पड़ता है। दूसरा, लूनी नदी से उत्तरी भाग तक विस्तृत है। दन दोनों मरुस्थली भागों के मध्य पूर्णतः बंजर भूमि है जो चट्टानी तथा चूने की कटकों से पूर्ण है। इसका क्षेत्रफल 144 हजार वर्ग किमी. है। इसका मुख्य नगर **बीकानेर** है।

(iii) सतलज का मैदान – यह 240 मीटर ऊँचा है। यह चौरस मैदान है जिसका ढाल दक्षिण एवं दक्षिण–पश्चिम को है। इस मैदान की मुख्य नदियाँ व्यास और सतलज है। बारी दोआब, बिस्त तथा हरियाणा मैदान प्रसिद्ध हैं। यह बांगर एवं खादर भूमि का उपजाऊ मैदान है।

(iv) गंगा का ऊपरी मैदान – यह यमुना, गंगा, शारदा, चम्बल के अवसाद से निर्मित है। यह 100 से 225 मीटर ऊँचा है। इसका ढाल कम है। इसका प्रमुख भाग गंगा–यमुना दोआब है। यह दिल्ली से इलाहाबाद तक फैला हुआ है। इसमें मटियार, जलोढ, ऊसर तथा रेह की मिट्टियाँ मिलती हैं। इसके मुख्य नगर मथुरा तथा इलाहाबाद हैं।

(v) गंगा का मध्य मैदान – यह इलाहाबाद से भागलपुर (बिहार) तक विस्तृत है। इसमें गंगा की सहायक नदियाँ, गोमती, घाघरा, गण्डक, कोसी, टोंस तथा सोन बहती हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार के मैदान इस भाग में स्थित हैं। मार्ग–परिवहन के कारण इन नदियों द्वारा विनाशलीला उपस्थित हो जाती है। यहाँ दोमट एवं जलोढ़ मिट्टी का बाहुल्य है। इसके मुख्य नगर वाराणसी तथा भागलपुर हैं।

(vi) गंगा का पूर्वी मैदान – गंगा नदी का डेल्टा बड़ा विस्तृत है। इसका क्षेत्रफल 79700 वर्ग किमी. है। इसका अधिकांश भाग बांग्लादेश में पड़ गया है। इस भाग में मार्ग–परिवर्तन के कारण गड्ढे पाये जाते हैं जिन्हे **बील** (Bill) कहते हैं और नदी के किनारो को **चर** (Chir) कहते हैं। डेल्टा प्रदेश में जलोढ़ मिट्टी की प्रधानता रहती है। ऊपरी भागों में दुमट तथा बालू मिलता है। मुख्य नदियाँ दामोदर, रूपना, ममूराक्षी, तिस्ता, तोरसा तथा जलढाका हैं। इस मैदान की ऊँचाई दक्षिण से उत्तर 16 से 50 मीटर है। यह संसार का सबसे बड़ा डेल्टा है। इसके मुख्य नगर **आसनसोल** तथा **कोलकाता** हैं।

टिप्पणी

हिमालय तथा शिवालिक पर्वतों के दक्षिण में स्थित गंगा नदी के पूर्वी मैदान में ब्रह्मपुत्र मैदान भी सम्मिलित हैं। यह धुबरी से संदिया तक विस्तृत है। इसकी लम्बाई 600 किमी. चौड़ाई 60 से 90 किमी तथा ऊँचाई 160 मीटर हैं। सहायक दिवांग, लोहित, सुवनश्री, कामिली एवं जानस नदियों के अवसाद से यह मैदान बना है। इसका मुख्य नगर **गुवाहाटी** है।

(vii) तराई एवं भाबर का मैदान – हिमालय पर्वत के बाहरी ढाल पर कंकरीली बलुई मिट्टी का निक्षेप मिलता है जिसे **भाबर** का मैदान नाम दिया गया है। इसका वास्तविक विस्तार राम–गंगा से तिस्ता नदी तक है। शिवालिक को पार करने वाली नदियाँ इस निक्षेप को डालती हैं और इसी में ग्रीष्म काल में लुप्त हो जाती हैं जिससे इनकी दशा भूमिगत जल की हो जाती है। केवल बड़ी नदियाँ भाबर क्षेत्र में धरातल पर बहती हैं। भाबर 10 से 15 किमी. चौड़ा है। कालान्तार में इसके ऊपर की सतह पर्याप्त दृढ़ हो जाती है और उस पर घास उग आती है।

भाबर के पश्चात् दलदल या तराई का भाग मिलता हैं जिसमें जल – **अपवाह** बहुत हेाता है और जो वनाच्छादित होता है। यह दलदल उस जल से बन जाता है। जो भाबर के बाद मैदान में निकलकर एकत्र हो जाता है। इसका विस्तार उत्तर प्रदेश से असम तक है। उत्तर प्रदेश में इसकी औसत चौड़ाई 100 किमी. है। इसका निर्माण रेत एवं कोमल मिट्टी से हुआ हैं। यह भूमि बहुत उपजाऊ है। पूर्वी भाग में तराई अधिक विस्तृत है। इस भाग के मुख्य नगर बहराइच, चम्पारन तथा दरभंगा हैं।

इस विशाल मैदान के तीन उपविभाग हैं – पश्चिमी मैदान, मध्य मैदान तथा पूर्वी मैदान। यह विश्व का वृहत्तम् जनसंकुल, उर्वर तथा कृषि–आर्थिक प्रदेश है।

उत्तरी विशाल मैदान की उत्पत्ति – भू–गर्भशास्त्र की दृष्टी से यह भाग भी कम मनोरंजक नहीं है। विभिन्न विद्वानों में इसके निर्माण के सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है। आस्ट्रियन भू–वैज्ञानिक **एडवर्ड सुइस** महोदय के मतानुसार हिमालय की रचना के पश्चात् हिमालय और दक्षिणी प्रायद्वीप के मध्य एक खड्ड की रचना हुई क्योंकि हिमालय की परत–लहरें अपने दक्षिणी बढ़ाव में प्रायद्वीपीय कठोर ठोस पिण्ड से रुक गयीं जिसको अग्र अगाध (Fore Deep) की संज्ञा प्रदान की गयी। प्रारम्भ में यह जलमग्न था। और भरते–भरते मैदान बन गया। **ओ.एच. के स्पेट** के मतानुसार सिन्धु–गंगा का अर्द्धचन्द्राकार मैदानी प्रदेश स्थिर गोंडवाना प्रदेश तथा हिमालय पर्वत के मध्य एक संकुचित अग्र अगाध के भराव को प्रकट करता है। भारतीय सर्वेक्षण अधिकारी **सर सिडनी बुरार्ड** ने इसको एक विभ्रंश घाटी (Rift Valley) कहा जो हिमालय के किनारे 3200 किमी. लम्बाई तथा 480 किमी. से 150 किमी. चौड़ाई में विस्तृत थी। अमरीकी भू–विज्ञानी **हैडन** एवं ब्रिटिश भू–विज्ञानी **ओल्डहम** महोदय इस विचार के विरोधी हैं। **ब्लैनफोर्ड** के मतानुसार आदि नूतन युग में असम से इरावदी तथा ईरान से बलूचिस्तान होते हुए लद्दाख –पंजाब तक समुद्र था। मध्य नूतन युग में हिमालय के उत्थान के साथ यह समुद्र सिकुड़ने लगा और नदियों के निक्षेप से मैदान बन गया। इस खड्ड की उत्पत्ति विवादास्पद है, किन्तु इतना निश्चित है कि कालान्तर में गंगा, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र आदि नदियों के निक्षेप से यह मैदान बना है। ई.एच. पैस्को (E.H. Pascoe) तथा जी.ई. पिलग्रिम (G.E. Pilgrim) ने भी 1919 से उत्तरी विशाल मैदान के निर्माण का इतिहास प्रस्तुत किया है। इनके विचारों को स्वीकार करने में अनेक कठिनाइयाँ है, किन्तु इतना अवश्य है कि इनके द्वारा प्रस्तुत तथ्यों से नदियों के

टिप्पणी

प्रवाह–पथ के विकास की रूपरेखा प्राप्त हो जाती है जिससे हमारा ज्ञानवर्द्धन होता है। जो भी विवाद हो, इतना अवश्य है कि यह भाग समुद्र था जो टैथिस के नाम से चीन के दक्षिण–पश्चिम तक विस्तृत था। इसी से महान हिमालय की उत्पत्ति हुई है। पहले गंगा–सिन्धु तथा ब्रह्मपुत्र का एक ही क्रम था। कालान्तर में यह अपवाह–तंत्र बिगड गया और गंगा, सिन्धु तथा ब्रह्मपुत्रा नदियों की अपवाह प्रणालियाँ निर्मित हो गयीं। इस खड्ड की गहराई सर्वत्र एक सी नहीं थी। राजमहल की पहाड़ियों तथा दिल्ली के मध्य इसकी गहराई सर्वाधिक थी।

आधुनिक विचारधाराओं में एम.एस. कृष्णन् के मत को अधिक लोकप्रियता प्राप्त है। उत्तर दिशा में भारतीय प्रायद्वीप के स्थानान्तरण के फलस्वरूप टेथिस का मुलायम अवसाद मुड़ गया। ऊपर का उठा भाग पर्वत क्रम बना और धँसा भाग झील (Sag) बना।

इस मैदान की ऊँचाई 21 मीटर है। अम्बाला तथा सहारनपुर के मध्य 310 मीटर ऊँचाई है जो मैदान का जल विभाजक का कार्य सम्पन्न करती है। इस मैदान में मिट्टी की गहराई अथाह है। कहीं–कहीं अवसाद की मोटाई 6 मीटर तक है। केवल पंजाब, दक्षिण पठार की शाखाएँ किरात, दिल्ली तथा शिलांग पठार के नीचे डूबी हुई हैं।

मैदान का आर्थिक महत्व

(1) यह मैदान भारतवासियों का जीवन रक्त (Life blood of Indians) है।

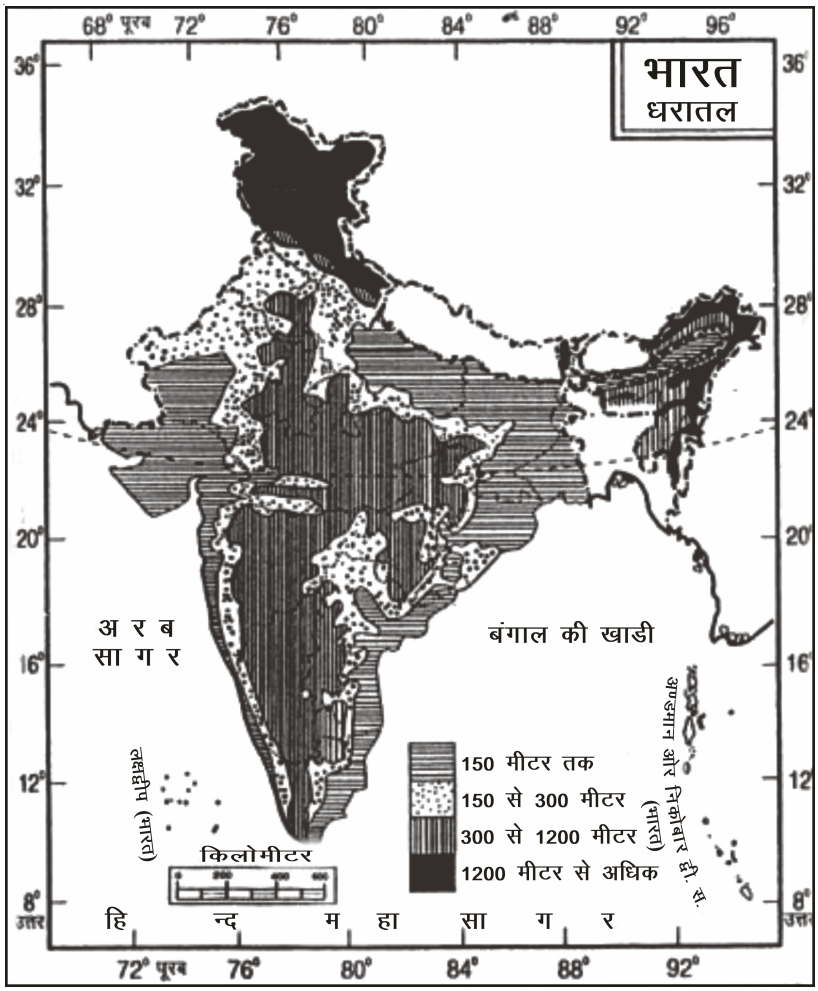
(2) यह भूमिगत जल का अक्षय भण्डार है जिससे पीने एवं सिंचाई के निमित्त जल प्राप्त होता है।

(3) यह मैदान भारत का खाद्य भण्डार (Granary of India) है।

(4) चौरस एवं समतल धरातल के फलस्वरूप परिवहन मार्गों का सर्वाधिक विकास हुआ है जिससे उद्योग एवं व्यापार में तीव्र उन्नति हुई है।

(5) यह मैदान संस्कृति एवं सभ्यता का केन्द्र है जो राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास को गति प्रदान करता है। यह आदिकाल से ही आर्थिक, सामाजिक, तथा अन्य गतिविधियों का केन्द्र रहा है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.13: भारत का उच्चावचन

(3) प्रायद्वीपीय उच्च प्रदेश (Peninsular High Land)

यह अति प्राचीन भू–भाग है जिसका विस्तार 16 लाख वर्ग किमी. है। इसकी समुद्र की सतह से औसत ऊँचाई लगभग 610 मीटर है। इस पठार के पर्वतीय भाग पठारी भूमि के ही उठे हुए भाग हैं जो वर्षा की मौसम क्षरण की क्रिया से बहुत कम प्रभावित हुए हैं। ऐसे पर्वत अवशिष्ट कहे जाते हैं। यह भाग कई छोटे–छोटे पठारों में विभाजित–हो गया है। इसका विभाजन पहाड़ियों द्वारा हुआ है जो प्राचीन पर्वतों के अवशिष्ट भाग हैं। नर्मदा नदी की विभ्रंश घाटी द्वारा दो विशिष्ट भाग मध्यवर्ती अग्रभूमि तथा प्रायद्वीपीय पठार हो जाते हैं।

(अ) मध्यवर्ती अग्रभूमि (Central Foreland) – नर्मदा–सोन खड्ड के उत्तर से गंगा नदी की ओर पर्वत, पठार नदी–घाटियों की एक अग्रभूमी है। इसका विस्तार 6 लाख वर्ग किमी. है। इसके मुख्य विभाग अरावली श्रेणी, पूर्वी राजस्थान की उच्चभूमि, बघेलखण्ड बुन्देलखण्ड उच्चभूमि, मालवा पठार, विन्ध्याचल श्रेणी, विन्ध्यकगार तथा नर्मदा घाटी हैं।

(i) अरावली श्रेणी – पश्चिम एवं उत्तर–पश्चिमी में **अरावली** पर्वत श्रेणियाँ है जो उत्तर–पूर्व की ओर सँकरी होती हुई दिल्ली के पास जाकर समाप्त हो जाती हैं।

टिप्पणी

मुख्यतः अरावली श्रेणी का विस्तार लगभग 800 किलोमीटर की लम्बाई में दिल्ली से अहमदाबाद तक है। दिल्ली के पास इसकी ऊँचाई 404 मीटर तथा दक्षिण में 1500 मीटर है। अनेक बरसाती नदियाँ अरावली श्रेणी के आर–पार बहती है। इनमें से माही व **लूनी** अरब सागर में गिरती हैं, जबकि **बनास** नदी चम्बल नदी से मिलकर गंगा के मैदान में पहुँचती है। अरावली पर्वत एक प्राचीन वलित पर्वत श्रेणी है जो कई स्थानों पर केवल शैलों के समूहों में दिखायी देती हैं। भूगर्भशास्त्रियों के विचार से ये पर्वत भारत के अति प्राचीन व सबसे उच्च पर्वतों के विस्तृत भाग हैं, जो विन्ध्यन युग में वलित पर्वत के रूप में उठे। इसका सबसे ऊँचा भाग दक्षिण–पश्चिम में हैं जहाँ **आबू पहाड़** का गुरुशिखर चोटी समुद्र की सतह से 1723 मीटर ऊँची है। इस पठार का घरातल केवल कुछ शैलों के समूह को छोड़कर शेष समतल है। राजस्थान में अरावली के निकट पत्थरों से मण्डित भू–भाग मिलते हैं जो अरावली के दीर्धकालीन अपरदन को प्रकट करते हैं। स्मरण रखना चाहिए कि भारत के प्राचीनतम पर्वतक्रम का अवशिष्ट अरावली पर्वत है।

अरावली पर्वत उदयपुर के निकट 1223 मीटर ऊँची जरगा पहाडियाँ, अलवर के निकट 670 मीटर तक ऊँची हर्षनाथ पहाड़ियाँ तथा दिल्ली के निकट दिल्ली पहाड़ियाँ कहलाते हैं।

(ii) पूर्वी राजस्थान की उच्च भूमि – पूर्वी राजस्थान की उच्च भूमि ऊबड़ खाबड़ विषम् स्वरूप की उच्च भूमि है जिस पर चम्बल तथा बनास नदियाँ बहती हैं। समुद्रतल से इसकी ऊँचाई 250 मीटर है। उदयपुर–ग्वालियर पठार पथरीला है जो चम्बल तथा इसकी सहायक काली सिन्धु तथा पार्वती नदियों से विच्छिन्न है। इसमें यत्र–तत्र जलोढ़ मिट्टी मिलती है। इसकी ऊँचाई 300 से 600 मीटर है।

(iii) बुन्देलखण्ड उच्च भूमि – ग्वालियर पठार तथा विन्ध्य कगार के मध्य यमुना नदी में बुन्देलखण्ड की पठारी उच्च भूमि है जो प्राचीनतम बुन्देलखण्ड नाइस से निर्मित है। इस पर सोपानी वेदिकाएँ मिलती हैं। यत्र–तत्र ग्रेनाइट तथा बालू पत्थर के टिब्बे एवं पहाड़ियाँ मिलती हैं। इसकी ऊँचाई 300 से 600 मीटर है। इस पर बहने वाली बेतवा एवं केन नदियाँ है। यह खण्डित उच्च भूमि है जिसमें खड्ड (Revines) की बहुलता है।

(iv) मालवा पठार – लावा से निर्मित मालवा पठार का समप्राय मैदान बन गया है। यहाँ उर्मिल मैदान (Rolling Plains) मिलते हैं जिनमें कहीं–कहीं चपटी पहाड़ियाँ स्थित हैं। इसका ढाल उत्तर को तीव्र है। इस पर बेतवा, पार्वती काली, सिन्धु, माही तथा चम्बल नदियाँ बहती हैं। यह खड्डमय बीहड़ क्षेत्र है। इसकी ऊँचाई 250 मीटर है।

(v) विन्ध्य कगार – बुन्देलखण्ड की उच्च भूमि तथा विन्ध्याचल श्रेणी के मध्य भाग में एक कगारी भूमि स्थित है। इसमें मन्दर पठार, रीवा पठार तथा विन्ध्याचल पठार हैं जो कगारों द्वारा एक–दूसरे से अलग हैं। पठार ऊबड–खाबड़ तथा कटे–फटे हैं। इसमें कठोर बलुआ पत्थर की बहुलता है। इसकी ऊपरी सतह चौरस हैं।

(vi) विन्ध्याचल श्रेणी – भारतीय इतिहास में विन्ध्याचल पर्वत की बड़ी चर्चा है। यह पश्चिम से पूर्वी भाग तक चला गया है। यह गुजरात से सासाराम (बिहार) तक

टिप्पणी

फैला हुआ है। विन्ध्याचल पर्वत अवसादी शैलों से निर्मित है जिसमें लाल बलुआ पत्थरों की प्रधानता है। इसकी औसत ऊँचाई 760 से 1200 मीटर है। विन्ध्याचल पहाड़ियों की चोटियाँ नुकीली न होकर चपटी हैं। कई भागों में कगारें एवं भूगुएँ बड़ी आकर्षक हैं। पश्चिमी भाग में गोमानपुर शिखर 554 मीटर ऊँची है। भूगर्भवेत्ताओं के अनुसार, नर्मदा नदी की विभ्रंश घाटी का कगाार विन्ध्याचल पर्वत तथा सोन नदी का कैमूर पर्वत बताया जाता है। विन्ध्याचल एवं कैमूर श्रेणियों में दर्रे कम हैं। इसका ढाल दक्षिण में तीव्र तथा उत्तर में मन्द है।

(vii) नर्मदा घाटी – विन्ध्याचल तथा सतपुड़ा पर्वतों के मध्य में नर्मदा नदी की घाटी है। यह नदी सँकरे, चौड़े एवं प्रपाती मार्गों से बहती हुई राजपीपला पहाड़ी तक पहुँचती है और उसके बाद पश्चिमी तटीय मैदान में उतर जाती है। इस घाटी में कमली धारा, सहस्र धारा तथा धुआँधार प्रपात दर्शनीय है। यह नदी विभ्रंश घाटी में स्थित होने के कारण मध्य के सामान्य अपवाह के विपरीत पूरब से पश्चिम को बहती है।

(viii) सतपुडा पहाडी क्षेत्र – इस पहाडी की सर्वोच्च चोटी **धूपगड़** (1350 मीटर) और महादेव पर्वत पर 1037 मीटर की ऊँचाई पर **पंचमढ़ी** स्थित है जो **भारत** की **जिनेवा** कही जाती है। पंचमढ़ी नाम पाँच गाढ़ियों का द्योतक है जो पहाड़ी काटकर बनायी गयी है और जो महाभारत काल के पाँचों पाँडवों से सम्बन्धित बतायीं जाती है। झरनों, प्रपातों, गिरिशिखरों एवं देवस्थलों के रूप में यहाँ अनेक दर्शनीय स्थान हैं जहाँ प्रकृति अपना सौन्दर्य प्रकट करती है। सतपुड़ा पर्वतीय क्षेत्र की नदियों में झरने भी हैं जिनमें से **धुआँधार** प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र में नाइस एवं बेसाल्ट शैलें विशेष रूप से मिलती हैं।

(ब) प्रायद्वीपीय पठार – भारत के सबसे प्राचीन इस भाग का विस्तार 7 लाख वर्ग किमी. है। यह त्रिभुजाकार है जिसकी भुजाएँ सतपुड़ा सह्याद्रि तथा पूर्वी घाट के पर्वत हैं। इसकी औसत ऊँचाई 600 मीटर है। इसके प्रमुख भाग सह्याद्रि (पश्चिमी घाट) पूर्वी घाट, दक्षिणी पठार तथा पूर्वी पठार हैं।

(i) पश्चिमी घाट – दक्कन के पठार के पश्चिम में पश्चिमी घाट या सह्याद्रि के पर्वत है जो अरब सागर की ओर दीवार की भाँति खड़े 1600 किमी. लम्बे हैं। इनका विस्तार **ताप्ती** नदी की घाटी से कुमारी अन्तरीप तक है। उत्तरी भाग लावा से ढका है और दक्षिणी भाग नाइस, शिस्ट तथा चारनोकाइट शैलों द्वारा निर्मित है। इसकी औसत ऊँचाई 915 से 1220 मीटर है। पश्चिमी घाट दक्षिण में नीलगिरि पर्वत पर पूर्वी घाट के पहाड़ों से मिल गये हैं। **नीलगिरि** पर्वत की सबसे ऊँची चोटी **दोदाबेटा** है जो 2637 मीटर ऊँची है। उत्तरी, मध्य तथा दक्षिणी सह्याद्रि इनके मुख्य भाग है।

गोवा से सतपुड़ा पर्वत तक उत्तरी सह्याद्रि पर्वत है। इसका पश्चिमी ढाल तीव्र तथा पूर्वी ढाल वेदिकायुक्त है। इसको गोदावरी नदी थाल घाट तथा भीमा नदी भोर घाट पर काटती है। भोर घाट में एक चोटी है जो 'डयूक की नाक' कहलाती है। इसके प्रमुख शिखर **कलसुबाई** 1646 मीटर तथा **महाबलेश्वर** 1438 मीटर है। इसकी औसत ऊँचाई 900 से 1220 मीटर है। कहीं–कहीं 2440 मीटर तक की ऊँचाई है।

गोवा से नीलगिरि तक मध्य सह्याद्रि है। इसकी मुख्य नदियाँ तुंगभद्रा, कृष्णा, कोयना, कावेरी तथा शरबती हैं। पश्चिम की ओर अरब सागर में जाने वाली नदियों में

शरबती प्रसिद्ध है, क्योंकि इसका **जेसप्पा** प्रपात 1239 मीटर अति सुन्दर एवं आकर्षक है। मध्य सह्याद्रि का सबसे ऊँचा 2339 मीटर शिखर **वाबुल माल** है।

टिप्पणी

नीलगिरि से कुमारी अन्तरीप तक दक्षिणी सह्याद्रि है। मध्य तथा दक्षिणी सह्याद्रि पालक्काड के दर्रे से अलग होते हैं। पालक्काड एक विभ्रंश घाटी है जो सागर तट से 144 मीटर ऊँची तथा 22 किमी. चौड़ी है। इस सह्याद्री की उंचाई 2000 मीटर है। सर्वोच्च शिखर अनायगुंडी (2695 मी) है जो अनामलाई श्रेणी, इलायची श्रेणी तथा पालनी श्रेणी का संगम है। इस भाग में ताम्रपाणि नदी, पेरियार नदी तथा बैगाई नदी बहती है। पालनी श्रेणी के ऊपर 2195 मीटर की ऊँचाई पर कोदाई कैनल पर्यटक स्थल है। कावेरी नदी पर शिवसमुद्रम नदी कर्नाटक पर शोकन, पादूकरा नदी तथा महाबलेश्वर पर पन्ना प्रपात है।

(ii) पूर्वी घाट – पूर्वी घाट निम्न शैलों के समूह हैं जो पश्चिमी घाट के पहाड़ों से बिल्कुल भिन्न हैं। ये चौड़े अन्तरों द्वारा एक–दूसरे से अलग हैं। इनकी लम्बाई फूलबनी (उड़ीसा) से नीलगिरि तक 800 किमी. है। इनकी ऊँचाई 610 मीटर है जो पश्चिमी घाट की अपेक्षा कम है। इसकी ऊँची चोटियाँ **निमेगिरि** 1516 मीटर तथा **महेन्द्रगिरी** 1500 मीटर है।

पूर्वी घाट को पार करने वाली गोदावरी, कृष्णा एवं कावेरी मुख्य नदियाँ हैं। उत्तरी भाग में मचकुण्ड तथा मध्य भाग में पेनार भी महत्वपूर्ण नदियाँ हैं। नीलगिरि के पूरब में त्रिभुजाकार तमिलनाडु उच्चभूमि है जिनमें शिवराय तथा जावडी पहाड़ियाँ विच्छिन्न हैं। पहाडियाँ 1100 मीटर से 1600 मीटर ऊँची हैं।

पूर्वी घाट छोटा नागपुर पहाड़ियों द्वारा सतपुड़ा विन्ध्य पर्वत श्रेणियों से मिल गये हैं। इस प्रकार पठार की त्रिकोणाकार चहारदीवारी बन गयी है। उत्तरी भाग में इनकी रचना नाइस तथा चारनोकाइट शैलों से हुई है। **नल्लामलाई** तथा **पालकोन्दा** की पहाड़ियाँ कडप्पा शैलों से बनी हैं जो 1300 मीटर तक ऊँची हैं।

(iii) दक्षिण का पठार दरारों से निकले लावा से ढका हुआ है। यह पठार गोंडवाना प्रदेश का एक अंग है। इसका क्षेत्रफल लगभग 5 लाख वर्ग किमी. है जिसके अन्तर्गत मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश आते हैं। इस पठार पर प्राचीन कठोर एवं परिवर्तित **धारवाड़ शैलों** का विस्तार सबसे अधिक है। आग्नेय शैलें, बलुआ पत्थर एवं चूने की शैलें तथा कोयला गोंडवाना की मुख्य शैलें हैं। इस पठार को गोदावरी, कृष्णा, तुंगभद्रा, भीमा एवं कावेरी नदियाँ खण्डित करती हैं।

इस लावा पठार के उत्तरी भाग में महाराष्ट्र में अजन्ता व बालाघाट श्रेणियाँ हैं। नदी–घाटी के पार्श्व में चपटे शिखरों की पहाड़ियाँ हैं। यहाँ हिमालय पर्वत की तरह शंकु शिखरें नही मिलती हैं।

कर्नाटक पठार – कर्नाटक पठार का दक्षिणी भाग मैसूर पठार कहलाता है। यह पठार 600 मीटर ऊँचा है। इसका दक्षिणी भाग **मालनाद** कहलाता है जो 1000 मीटर ऊँचा है। इसके कई भागों में नीची पहाड़ियाँ तथा उर्मिल मैदान मिलते हैं। **मालनाद** की महत्वपूर्ण श्रेणी बाबबूदान पहाड़ी है जो 1925 मीटर ऊँची है जो इस पठार की सर्वाधिक ऊँचाई है।

टिप्पणी

आन्ध्र का पठार – प्रायद्वीपीय पठार का एक अंग आन्ध्र पठार है जो कृष्णा नदी द्वारा दो भागों में रायलसीमा एवं तेलंगाना में विभक्त है। इस पठार का उत्तर–पश्चिमी भाग 828 मीटर ऊँचा है। यहाँ नाइस शैलों की प्रचुरता है। इस पर छोटी–छोटी पहाड़ियाँ तथा उर्मिल मैदान मिलते हैं। इसमें कृष्णा एवं गोदावरी की सहायक नदियाँ बहती हैं।

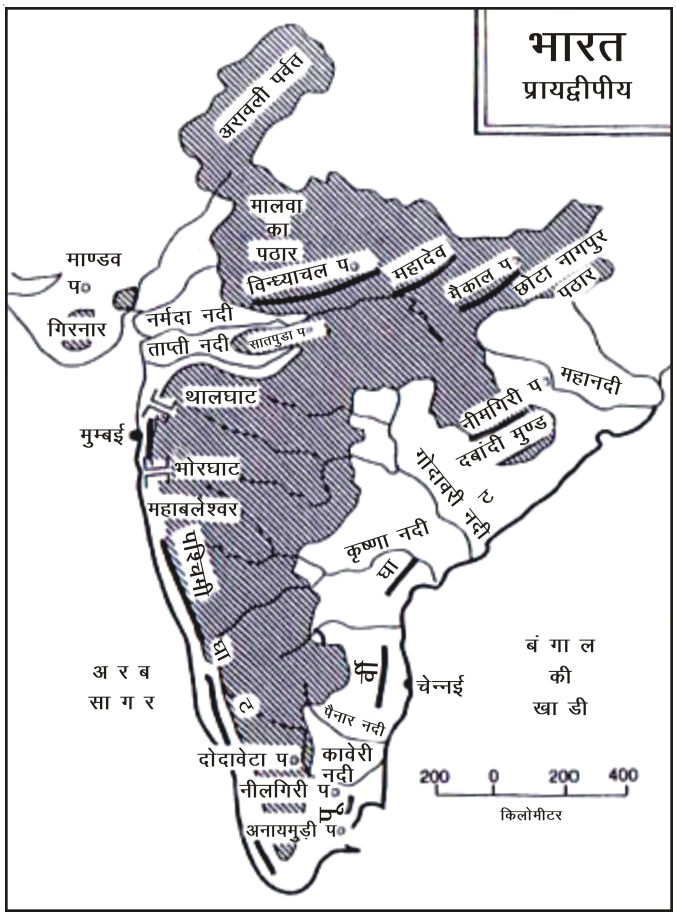
तामिलनाडु का पठार – पूर्वी घाट, पश्चिमी घाट तथा नीलगिरी की पहाड़ियों के पाद प्रदेश को **तामिलनाडु** का पठार कहते हैं। यह मुख्यतः नाइस एवं ग्रेनाइट शैलों से निर्मित है। कावेरी इसकी मुख्य नदी है जो बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

(iv) पूर्वी पठार – दक्षिणी पठार के उत्तर–पूरब में बघेलखण्ड तथा छोटा नागपुर के पठार हैं। बघेलखण्ड पठार सोन नदी तथा मेकाल पर्वत के पूरब में स्थित है। इसके उत्तरी भाग में सोनपार पहाड़ियाँ तथा दक्षिणी भाग में **रामगढ़** एवं **अमरकण्टक** पहाडियाँ मिलती हैं। इस पठार के मध्य में एक जल–विभाजक पठार है जो सोन तथा महानदी के मध्य जल–विभाजक का कार्य करता है।

पूर्वी पठार के दक्षिण–पूरब में नीची एवं छोटी पहाड़ियाँ बोनाइ, केन्दुझरगढ़ आदि हैं। इनमें प्राचीनतम धारवाड़ कल्प की शैलें मिलती हैं। इस भाग की प्रमुख नदी वैतरणी है। पूर्वी पठार दक्षिणी भाग दण्डकारण्य कहलाता है। यह बस्तर (छत्तीसगढ़ प्रदेश) तथा काला हाँडी एवं कोरापुट (उड़ीसा) जिलों में विस्तृत है। इसका पूर्वी भाग कोरापुट पठार है जिसकी ऊँचाई 1200 मीटर है।

इसका उत्तरी भाग नीचा है जहाँ बस्ती बसायी जा रही है। इस भाग में इन्द्रावती नदी सोपानों में बहती है।

पठारों से आवृत्त छत्तीसगढ़ का मैदान है जो सागर तल से 300 मीटर ऊँचा है। इस भाग में महानदी तथा इसकी सहायक नदियाँ बहती हैं। इसमें चूना पत्थर की शैलें मिलती हैं। इसका पूर्वी भाग उड़ीसा राज्य में और पश्चिमी भाग छत्तीसगढ़ राज्य में पड़ता है।



चित्र क्र. 1.14: प्रायद्वीपीय भारत

टिप्पणी

छोटा नागपुर के पठार भी दक्षिणी पठार के क्रम में आ जाते हैं। ये झारखण्ड राज्य के गया, हजारीबाग एवं राँची के जिलों में विस्तृत हैं। दो पठार हजारीबाग जनपद में तथा एक राँची में है। राँची जनपद में यह पठार रामगढ़ तक विस्तृत है जहाँ ग्रेनाइट–नाइस के **चित्तू पल्लू** घाट हैं। राँची नगर समुद्र तल से 610 मीटर की ऊँचाई के पठार पर स्थित है। यह समप्राय भूमि का अच्छा उदाहरण है। यह पठार **बागारू** पठार (Bagaru) के नाम से विख्यात है जिसकी सबसे अधिक ऊँचाई लोहारडागा के पास समुद्र तल से 1058 मीटर है। इसके आस–पास ही **दूधापट, धुलनापट, गढ़पट** पठार ग्रेनाइट एवं नाइस से बने हैं जिसके ऊपर बॉक्साइट पाया जाता है।

बगारू पठार बॉक्साइट व लैटेराइट शैलों का गढ़ है। इस पठार पर शिस्ट तथा क्वार्ट्स शैलें प्राप्त होती हैं जो कायान्तरित हो गयी हैं। खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से यह भारत का सबसे सम्पन्न भाग है। इस पठार पर गौतम, हांडू तथा नेत्रहाट जलप्रपात बड़े आकर्षक हैं। सबसे ऊँची **पारसनाथ** पहाड़ी 1366 मीटर है। इस पठार पर दामोदर, खरकोई, स्वर्णरेखा आदि नदियाँ बहती हैं।

दक्षिणी प्रायद्वीप की उत्पत्ति – प्रायद्वीपीय पठार भारतीय ढाँचे का मुख्य भाग है तथा भू–तल का एक अति प्राचीन एवं स्थिर भूखण्ड हैं जिसकी संरचना लगभग 60 करोड़ वर्ष पूर्व की बतायी जाती है और जिसकी शैलें कैम्ब्रियन युग में निर्मित हैं। इस भाग में शिलांग पठार तथा कच्छ–कठियावाड़ गुजरात क्षेत्र भी सम्मिलित हैं। इसका विस्तार उत्तर में दिल्ली तक है। यह भारत भूमि के 70 प्रतिशत भाग पर विस्तृत है। इसकी नींव ग्रेनाइट निर्मित है। भू–गर्भवेत्ताओं के मतानुसार यह आद्य महाकल्प की कठोर शैलों का खण्ड है जो गोंडवाना महाद्वीप का एक अंग है जर्मन वैज्ञानिक **वेगनर** की परिकल्पना के अनुसार यह विशाल खण्ड अतीतकाल में 20 करोड़ वर्ष पूर्व भूगर्भीय हलचलों के फलस्वरूप टूट गया जिसका त्रिभुजाकार स्वरूप भारतीय प्रायद्वीप के रूप में विद्यमान है। ऐसा विश्वास है कि गोंडवाना महाद्वीप का नामकरण नर्मदा नदी के दक्षिण में स्थित 'गोंड प्रदेश' के नाम पर ही हुआ था। इसके निर्माण काल में पृथ्वी की गति एवं तनाव के कारण स्थिर खण्ड में अनेक दरारें पड़ी और बहुत से भाग नीचे दब गये जो कालान्तर में अवसादों से भर गये। इसमें वनस्पतियाँ दब गयीं जो कोयलों की परतों में परिवर्तित हो गयीं। इसी समय अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी भी बनी।

मध्यजीव महाकल्प के उत्तरार्द्ध तथा नवजीव महाकल्प के प्रारम्भिक काल में सात करोड़ वर्ष पूर्व इसके मध्य तथा पश्चिमी भाग में ज्वालामुखीय प्रक्रिया हुई जिससे 518000 वर्ग किमी. क्षेत्र मोटी बेसाल्ट लावा से ढक गया। इसकी अधिकतम मोटाई 3000 मीटर तक है। उत्तर तथा पूरब में ये काफी पतली भी है। ये कच्छ में 160 मीटर, अमरकण्टक में 152 मीटर, नागपुर के पूर्व में 15 मीटर तथा जबलपुर की ओर केवल 6 मीटर मोटी है। इससे बेसाल्ट की शैलें बनी। इन्हें डक्कन ट्रेप भी कहा जाता है। यहाँ बाद में भी बड़े राजमहल पहाड़ी क्षेत्र में लावा का उद्‌गार हुआ।

परिपक्व उभार इस भाग की विशेषता है। इसकी नदियाँ बहुत पुरानी हैं जो अपने निम्नतम् स्तर को सुप्त हो चुकी हैं। जिससे उनकी घाटियाँ सपाट 'वी' के आकार की बन गयी है। नदियों की ऊर्ध्व उत्पादन शक्ति समाप्त हो चुकी है। किनारों का कटाव अधिक है, इसलिए घाटियाँ उथली तथा चौड़ी हैं जिनमें मंदगति से पानी बहता है इस प्रायद्वीप का धरातल अपनी प्रौढ़ावस्था को पहुँच चुका है।

टिप्पणी

इस भाग में अधिकतम नाइस एवं रवेदार शैलें हैं। कुछ अवसादी शैलें भी हैं जो इस प्रकार अनुप्रस्थ बड़ी है कि उन पर मोड़ने वाली शक्तियों का विशेष प्रभाव नहीं ज्ञात होता है। निर्जीव महा कल्प की शिष्ट एवं ग्रेनाइट शैलें मिलती हैं। भीतरी क्षेत्रों में केवल उमरिया तथा नर्मदा घाटी में नवीन अवसादी शैलें प्राप्त होती हैं। समुद्रतटीय भागों में भी अतिक्रमण से बनी कम आयु की शैलें मिलती हैं। ये समुद्री अतिक्रमण प्राचीन जातीय महाकल्प के उत्तरार्द्ध तथा पुराजीव महाकल्प के उत्तरार्द्ध में हुए।

पठार के पर्वत अवशिष्ट पर्वत हैं जो शैलों की कठोरता के कारण अपरदन से बच गये हैं। इसी प्रकार के पूर्वी एवं पश्चिमी घाट के पर्वत भी हैं। पठार का ढाल पूरब की ओर है जिससे सभी नदियाँ पूरब की ओर बहती हैं। इसी कारण पूरब के पर्वत अधिक घिस गये हैं। इन नदियों से पूरबी तट के डेल्टा बने हैं। मध्य आदिनूतन युग में पश्चिम का भू–भाग धँस गया। रत्नागिरि एवं मुम्बई के मध्य गर्म स्रोत इसके साक्षी हैं। साथ ही पश्चिम तट सीधा एवं सपाट है।

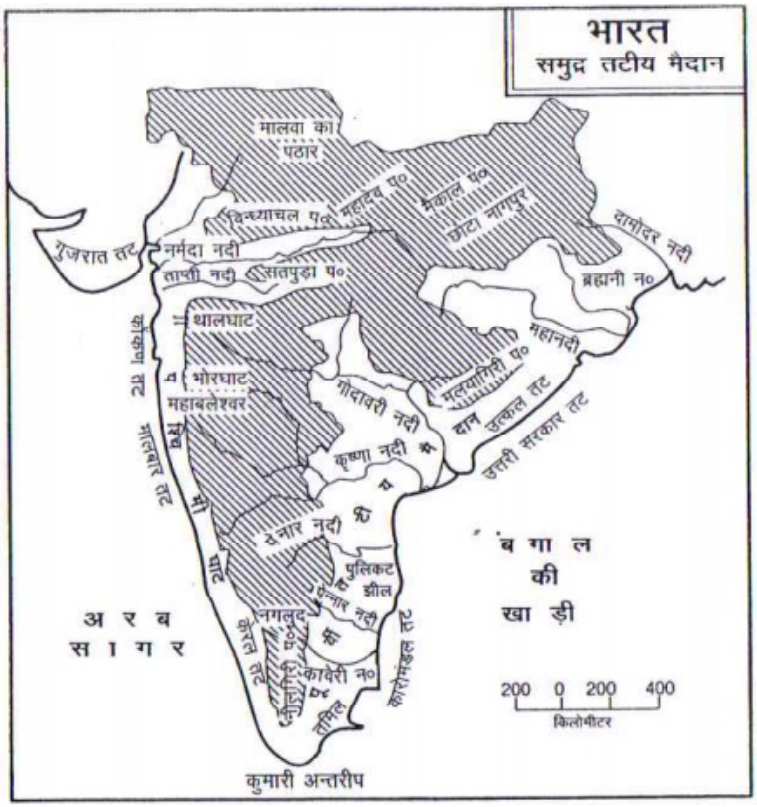
(4) तटीय मैदान एवं टापू (Coastal Plains and Islands)

प्रायद्वीपीय उच्च प्रदेश चारों ओर से निचले मैदानों द्वारा घिसा हुआ है। उत्तर में सतलज – गंगा का मैदान तथा पूरब, दक्षिण व पश्चिम में तटीय मैदान हैं। तटीय मैदान के तीन भाग हैं –

(क) पूर्वी तटीय मैदान एवं टापू – यह मैदान पूर्वी घाट पर्वत व बंगाल की खाड़ी के बीच में स्थित है। इसको पायन घाट भी कहते हैं। यह पश्चिमी तटीय मैदान की अपेक्षा अधिक चौड़ा है। इसकी लम्बाई 1235 किमी. तथा चौडाई 160 से 438 किमी. है। पूर्वी तटीय मैदान के दो भाग हैं – (i) निम्न भाग एवं (ii) उच्च भाग। निम्न भाग में महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदियों के डेल्टा प्रदेश हैं। इसमें बालुका तट (Sand Banks) जो समुद्री तरंगों द्वारा बहाकर लाये हुए रेत के एकत्र हो जाने से बने हैं। किनारों पर बालुका स्तूपों (Sand Dunes) की एक श्रृंखला मिलती है। इन बालुका स्तूपों के घिर जाने से अनेक स्थानों पर अनूप झीलों का निर्माण हुआ है, जिसमें **चिलका झील** और **पुलिकट झील** प्रसिद्ध उदाहरण हैं। उच्च भाग नदियों की डाली हुई मिट्टी और पठार के अपरदन के कारण समप्राय मैदान हो गये हैं। दक्षिणी भारत की सभी नदियाँ पूर्वी तट के मैदान से होकर बहती हैं। इस तटीय मैदान के दक्षिणी भाग को कोरामण्डल तट कहते हैं। यह तट कुमारी अन्तरीप से कृष्णा नदी के मुहाने तक और उत्तरी सरकार तट कृष्णा नदी के मुहाने से महानदी के मुहाने तक विस्तृत है। कोकनद तट में **उत्कल मैदान** (उड़ीसा राज्य) तथा **आन्ध्र मैदान** (आन्ध्र प्रदेश राज्य) और **कोरामण्डल तट** पर **तमिलनाडु मैदान** मिलते हैं। तमिलनाडु मैदान सर्वाधिक चौड़ा है। पायन घाट आगे बढ़कर पश्चिमी तट पर तमिलनाडु मैदान मिलते हैं। पायन घाट आगे बढ़कर पश्चिमी तटीय मैदान से मिल जाता है। पूरबी तट स्थल की ओर मुख वाले **उच्च तटिय श्रृंग** या क्वेसटा (Cuestas) तथा एकाकी पहाड़ियाँ हैं जो अनुतटीय टापुओं (Off Shore Islands) की प्रतिनिधि हैं। थंजावूर में समुद्र के धँसने के प्रमाण मिलते हैं। तटों पर बालू के विस्तृत एवं ऊँचे टिब्बों को टेरी कहते हैं जो 30 मीटर में 65 मीटर तक ऊँचे होते है। इस तट से कुछ दूरी पर अण्डमान व निकोबार द्वीप समूहों की श्रृंखला है। इस तट पर डेल्टा निवेशिकाएँ (Delta Creeks) मिलती हैं। पामबाम, श्रीहरिकोटा एवं हेयर द्वीप

मिलते हैं। इस तट की चौड़ाई 160 किमी. से 183 किमी. है। इस तट के प्रमुख तट **तूतिकारिन** तथा **विशाखापट्टनम** हैं।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.15: समुद्रतटीय मैदान

(ख) पश्चिमी तटीय मैदान एवं टापू – यह मैदान अरब सागर की सम्पूर्ण 1800 किमी. लम्बाई में फैला है। इस पर उन्मज्जन एवं निमज्जन के संकेत मिलते हैं। यह दक्षिण में लगभग 64 किमी. सँकरा है और उत्तर में मुम्बई के समीप 100 किमी. चौड़ा है। नर्मदा एवं ताप्ती नदियों के मुहाने पर 80 किमी. चौड़ाई है। इस तटीय मैदान के दक्षिणी भाग मालाबार तट में अनेक लम्बी और सँकरी अनूप झीलें हैं जिनमें सैकड़ों किमी. तक नौकाएँ चला करती हैं। **कोच्चिन** पत्तन ऐसी ही एक अनूप झील पर स्थित है। अलप्पे एवं कोच्चिन के मध्य **बेम्बानद** झील है। पूर्वी तट की अनूप झीलों तथा पश्चिमी तट की अनूप झीलों में अन्तर है। पूर्वी तट की ऐसी अनूप झीलें उथली होने के कारण दलदली हैं। मालाबार तट को गोवा से मंगलुरू तक का भाग **कर्नाटक तट** कहलाता है जो पथरीला एवं कगार के रूप में मिलता है। मंगलुरू से कुमारी अन्तरीप तक का **केरल तट** अधिक चौड़ा है। गोवा से दमन तक का तटीय भाग **कोंकण तट** कहलाता है। यह कटा–फटा है। इसमें छोटी–छोटी नदियाँ बहती हैं, जिनमें वैतरनी एवं उल्हास मुख्य हैं। इस तट पर लक्षद्वीप समूह महत्वपूर्ण है। पश्चिमी तटीय भाग को तीन समान्तर पेटियों मे विभक्त किया जा सकता है – (1) पश्चिमी घाट के उच्च ढाल (2) नदियों द्वारा निर्मित समतल मैदान और (3) तटीय बालू का स्तूप तथा अनूप क्षेत्र। इस तट पर **तिरुवनन्तपुरम** तथा **मुम्बई** मुख्य पत्तन हैं। इस तट की लम्बाई 1500 किमी. है।

टिप्पणी

(ग) गुजरात का मैदान – पश्चिमी तटीय मैदान गुजरात तथा काठियावाड़ तक चले गये हैं। गुजरात, कच्छ तथा काठियावाड़ के मैदान के भाग भी समप्राय भूमि (Peneplain) हैं, जिनमें प्राचीन शैलें अब भी धरातल पर दृष्टिगोचर होती हैं। ये भाग समुद्री भाग के उत्थापन तथा निक्षेप से निर्मित हैं। गुजरात के मैदान काली मिट्टी से निर्मित हैं। नर्मदा एवं ताप्ती नदियों का डेल्टाई मैदान 40 किमी. चौड़ा है। **कांधला, पोरबन्दर** एवं **ओखा** मुख्य पत्तन हैं। कच्छ क्षेत्र वर्षाकाल में बाढ़ग्रस्त हो जाता है जो **कच्छ का रन** (Runn of Kutch) कहलाता है।

अरब सागर एवं बंगाल की खाड़ी के द्वीपों के उद्‌भव एवं प्राकृतिक विशेषताओं में भिन्नता मिलती है। अरब सागर के द्वीप प्राचीन भूभाग के विच्छिन्न टुकड़े हैं और इनमें मूँगे की बनावट है। खाड़ी के द्वीप तृतीय काल के वलन से निर्मित हैं। इनके किनारे कटे–फटे हैं। इनकी सबसे ऊँची चोटी सैडिल 750 मीटर है।

तटीय मैदान का आर्थिक महत्व

(1) इस मैदान की बारीक उपजाऊ मिट्टी में धान की सघन खेती होती है।

(2) मत्स्य उद्योग के महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। मालाबार तट तथा तमिलनाडु तट पर विशेष रूप से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

(3) तट के समीप खनिज तेल मुम्बई टापू तथा अन्य क्षेत्रों में पाया जाता है।

(4) इन तटों पर नमक उद्योग विकसित है।

(5) केरल तट पर मोनाजाइट खनिज प्राप्त होता है।

भारत की संरचना (Structure of India)

भारत का भू–वैज्ञानिक इतिहास प्राचीनतम से आधुनिकतम को समेटे हुए है। इसमें आद्य महाकल्प (Archean Era) से लेकर नवीन नवजीव महाकल्प (Quaternary) तक की शैलें उपलब्ध हैं। इस प्रकार यह महाप्रदेश अपनी विविधताओं के भीतर युगों को छिपाये हुए है। इसमें शैलों के कई शैल समूह (Systems) प्राप्त होते हैं, जिनको चार प्रमुख वर्गों में विभक्त किया जाता है।

(1) आद्य वर्ग या वैदिक वर्ग की शैलें

(i) आद्य–समूह की शैलें – ये बहुत पुरानी शैलें हैं जो अनेक परिवर्तनों एवं रूपान्तरों के फलस्वरूप अपने प्रारम्भिक स्वरूप को खो बैठी है। इनसे अरावली पर्वत श्रेणियों का निर्माण हुआ। यह घटना 60 करोड़ वर्ष पूर्व की है, किन्तु मैसूर विश्वविद्यालय के भू–वैज्ञानिको ने इस वर्ग की सारागुर समूह की शैलों को 3–4 अरब वर्ष पुरानी बताया है और इसको सबसे पुरानी शैल माना है।

(ii) धारवाड़–समूह की शैलें – इनकी रचना आद्य महाकल्प की शैलों के पदार्थों से हुई है। ये अपेक्षाकृत बाद में बनी हैं। इनका निर्माण द्वितीय क्रम का प्रतीक है, जिनमें अपरदन, भ्रंशन तथा आग्नेय संचलनें हुई। इनको 2–5 अरब वर्ष प्राचीन माना गया है।

(2) पुराण वर्ग की शैलें

(i) कड़प्पा समूह की शैलें – धारवाड़ समूह के पश्चात् एक ऐसा युग आया, जिसमें समुद्र तथा नदी की घाटियों में निक्षेप एकत्रित होता गया, जिसने बाद में अवसादी शैलों

का रूप धारण कर लिया। आज से 50 करोड़ वर्ष पहले कैम्ब्रियन कल्प में चूना एवं बलुई शैलों का निर्माण हुआ।

(ii) विन्ध्य समूह की शैलें – इनकी रचना कड़प्पा–समूह की शैलों के पश्चात् हुई। ये कड़प्पा–शैलों के ऊपर जमाव है।

टिप्पणी

(3) द्रविड़ वर्ग की शैलें

इस वर्ग में अनेक प्रकार के शैल–समूह मिलते हैं, किन्तु उनमें कोई भी विशेष भौगोलिक महत्व नहीं रखता है।

(4) आर्य वर्ग की शैलें

(i) गोंडवाना समूह की शैलें – इनकी रचना ऊपरी कोयला युग में प्रारम्भ हुई। कमानियों तथा नदियों के अवसाद निक्षेपित हुए जिसके फलस्वरूप गोंडवाना प्रदेश में धसान पैदा हो गयी। भारत के भौगोलिक इतिहास में समूह की शैलों का बड़ा महत्व है।

(ii) नवीन शैलें – ये नवीन शैलें हैं। इनका निक्षेप निकटभूत में हुआ है। यह तथ्य स्मरणीय है कि उपर्युक्त वर्गों में सभी महाकल्पों का समन्वय हुआ हैं। प्रायः दो महाकल्पों या युगों की शैलों के निपेक्ष के मध्य अनिश्चितता (Unconfirmity) पायी जाती है जो बड़े धरातलीय परिवर्तन की द्योतक हैं। अग्र सारणी में भारतीय महाकल्प तथा यूरोपीय महाकल्प अंकित हैं जिनमें प्रमुख महाकल्पों तथा युगों के बीच अनिश्चितता या असम्बद्धता प्रदर्शित है। यूरोपीय आद्य एवं पुराजीव महाकल्पों के मध्य भारत में एक संक्रान्ति महाकल्प की भी कल्पना है, जिसको पुराण महाकल्प कहते हैं।

सारणी क्र. 1.2

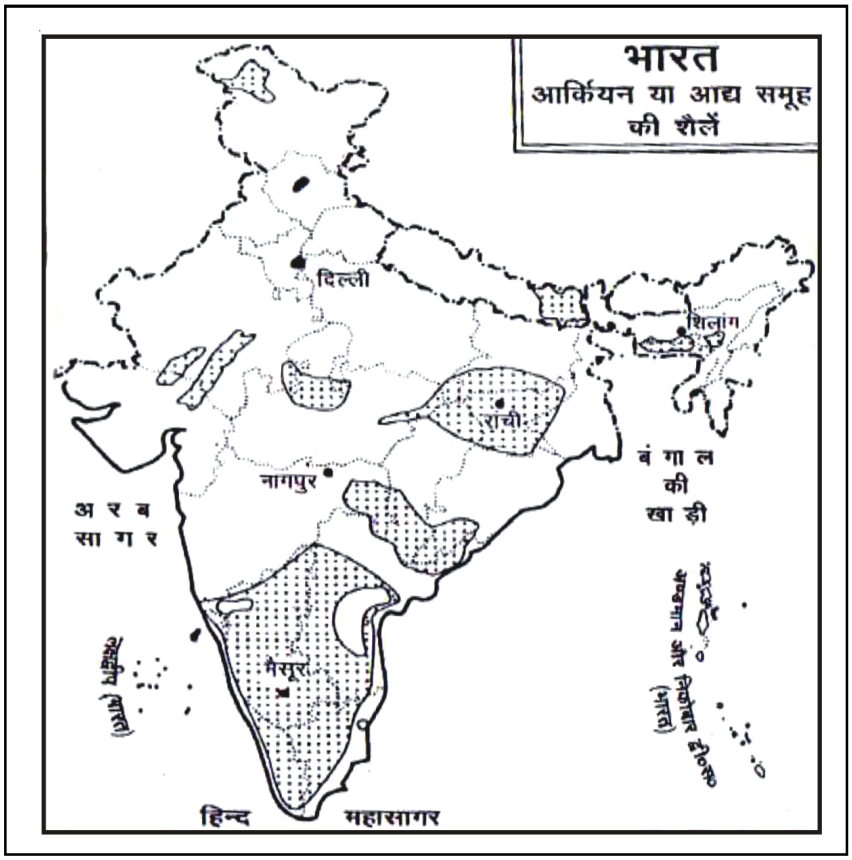
भारतीय महाकल्प	यूरोपीय महाकल्प
आर्य महाकल्प	नवीन नवजीव महाकल्प
	प्राचीन नवजीव महाकल्प
	मध्यजीव महाकल्प
द्रविड़ महाकल्प	पुराजीव महाकल्प (उत्तरार्द्ध)
पुराण महाकल्प	पुराजीव महाकल्प (पूर्वार्द्ध)
आद्य महाकल्प	आद्य महाकल्प (उत्तरार्द्ध)
	या प्रभुरा कल्प (Algon Kian Period)
	आद्य महाकल्प (Archaean Era)
	(**सर टी. हालैण्ड** के अनुसार)

भारत के भौगोलिक अध्ययन के निमित्त शैल समूहों का सापेक्ष एवं तुलनात्मक ज्ञान बहुत आवश्यक है जो निम्न प्रकार हैः

आद्य महाकल्प – इस क्रम की शैलों का निर्माण अत्यन्त ही प्राचीन काल में पृथ्वी पर तीव्र उद्‌भव के पूर्व माना जाता है। ये प्राचीन रवेदार शैलें हैं जो पृथ्वी के आन्तरिक भाग से निकले हुए द्रव पदार्थों से निर्मित हैं तथा आंशिक रुप से इनका निर्माण पृथ्वी के प्रारम्भिक पहाड़ों द्वारा भी हुआ है। इन शैलों में सर्वाधिक कायान्तरण

भी हुआ है। इनमें संरचनात्मक भिन्नता भी है। इन शैलों में नीस और शिष्ट प्रमुख है तथा इनमें जीवाश्म का अभाव है। इन शैलों का विस्तार देश में प्रायद्वीपीय पठार के दो–तिहाई भाग में है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.16: आद्य समूह की शैलें

आद्य महाकल्प की शैल समूह को अवधि के आधार पर दो प्रमुख युगों में बाँटा गया है – (i) लूविजियन युग (ii) हयूरोनियम युग।

(1) लूविजियन युग – यह भूगर्भिक इतिहास में आद्य महाकल्प का प्रारम्भिक युग माना गया है। इस युग में नीस और शिष्ट का जन्म हुआ, नीस की प्रधानता रही। संरचना एवं खनिज पदार्थों की मात्रा के आधार पर इसे तीन उपभागों में विभक्त किया गया है, (अ) बंगाल नीस (ब) बुन्देलखण्ड नीस (स) नीलगिरी नीस, पूर्वी घाट खोडालाइट तथा चार्नोकाइट परिपाटी।

(अ) बंगाल नीस – इसका जमाव पश्चिमी बंगाल, झारखंड के छोटा नागपुर पठार, राँची तथा हजारीबाग, उड़ीसा और कर्नाटक में है। सोनघाटी और असम में भी यह पाई जाती है। इन शैलों में एपीटाइट, मैग्नेटाइट तथा इल्मेनाइट खनिजों की प्रधानता है।

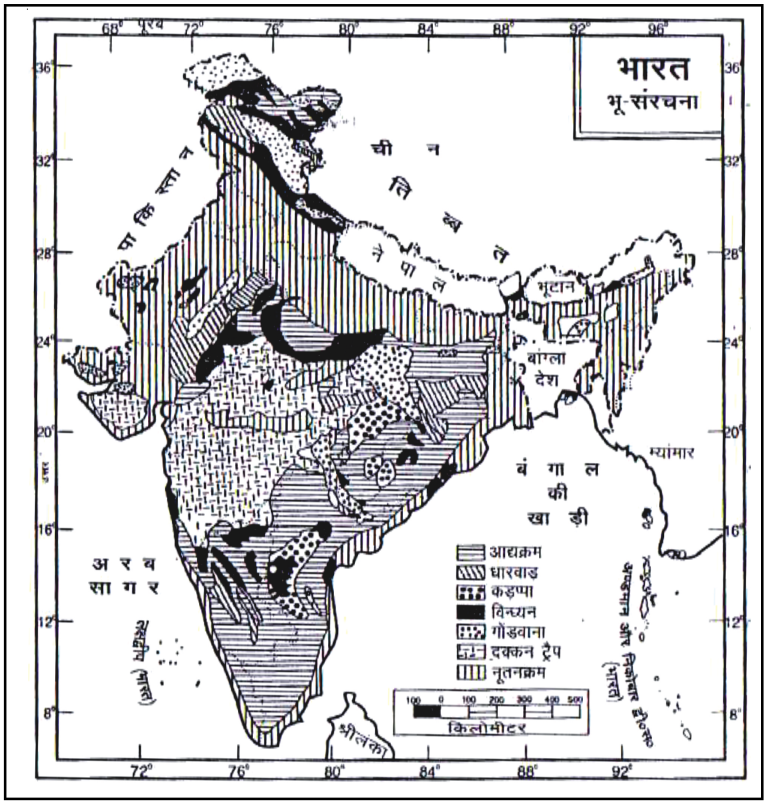
(ब) बुन्देलखण्ड नीस – आर्केशियन युग की शैलों को भूगर्भिक इतिहास में बुन्देलखण्ड नीस नाम दिया गया। उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश के सीमावर्ती क्षेत्रों में इसके निक्षेप हैं। इनमें स्फटिक, डायपोराइट, मेग्नेटाइट तथा बड़े कण

टिप्पणी

वाली नीस शैल की बहुलता है। नीस के साथ ग्रेनाइट शैल भी पाई जाती है। बुन्देलखण्ड मैसिफ की उत्पत्ति का सम्बन्ध ग्रेनाइट से माना गया है। ग्रेनाइट का निर्माण मैगमा से माना जाता है। कुछ विद्वानों ने प्रतिस्थापन प्रक्रिया से माना है। सक्सेना ने इसकी उत्पत्ती नाईस से मानी है जब कि झींगरन ने ग्रेनाईट शैल का निर्माण एक प्रक्रिया से न मानकर प्रतिस्थापना प्रक्रिया तथा उष्ण जलीय प्रभाव (Hydro-thermal) से माना है। यह मैसिफ निश्चित ही धारवाड़ युग से पूर्व ही अस्तित्व में आ चुका था तथा प्राचीनतम् अरावली शिष्ट के समकालीन है। प्री–कैम्ब्रियन बुन्देलखण्ड ग्रेनाईट शैल के समीप महरोनी ग्रुप के अवशेष पाये जाते हैं। इसमें ग्रेनाइट की तुलना में कायान्तरण अधिक हुआ है। यह मुख्यतः ललितपुर और झाँसी में पाये जाते हैं।

(स) नीलगिरी नीस, पूर्वीघाट खोडालाइट तथा चार्नोकाइट परिपाटी – इस प्रकार की शैलों का विकास पूर्वीघाट तथा नीलगिरी और पालनी पहाड़ियों के आस–पास पाया जाता है। इनमें इन्स्टेटाइट माइका क्लीन, हार्न ब्लैण्ड तथा ग्रेफाइट आदि खनिज पाये जाते हैं।

(2) ह्यूरोनियन युग – यह आद्य महाकल्प का अंतिम चरण माना जाता है। इस युग में प्रारम्भिक नीस शैलों के विखण्डन एवं अपरदित पदार्थों के उथले समुद्री भागों से निक्षेपित होकर परतदार किन्तु अधिक कायान्तरित शैल समूह को धारवाड़ समूह कहा जाता है। इस क्रम की शैलें अधिक कायान्तरण एवं भूस्खलन के कारण परतदार संरचना में संशोधित हो गई। इस क्रम में अवसादी निक्षेप नीस के ऊपरी भाग में तथा कुछ भागों में यह मिश्रित अवस्था में पाये जाते हैं।



चित्र क्र. 1.17: भू–संरचना

टिप्पणी

धारवाड़ समूह की शैलें – आद्य समूह के ऊपर धारवाड़ समूह की शैलें मिलती हैं किन्तु कुछ क्षेत्रों में इन दोनों का संयोग भी मिलता है। ये वैदिक समूह की शैलें हैं। परन्तु कहीं–कहीं यह आद्य समूह की शैलों से पहले की बनी हुई है। इसी समय शिष्ट तथा नीस शैलों की उत्पत्ति हुई। प्रकृति की प्रबल शक्तियाँ अनवरत् रुप से आद्य समूह की शैलों के अपरदन में लीन थीं। अपरदित पदार्थ के निक्षेप से अवसादी शैलों की रचना हुई। यही प्राचीनतम् अवसादी शैलें धारवाड़ समूह की हैं। अधिक कायान्तरण एवं जीवावशेष के अभाव में वर्तमान अवसादी शैलों से इनका भिन्न रुप लगता है। इनमें अपरदन, भ्रंशन एवं आग्नेय संचलनें हुई हैं। इनको 2.5 अरब वर्ष पुराना माना गया है।

धारवाड़ समूह की शैलों के प्रमुख क्षेत्र – धारवाड़ समूह की शैलों के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं –

(i) कर्नाटक में धारवाड़ और बल्लारी क्षेत्र।

(ii) छोटा–नागपुर पठार के पार्श्वों में नागपुर, जबलपुर, बालाघाट एवं भटिंडा की सासर श्रेणी, बालाघट और भटिंडा में चिपली श्रेणी, रीवा–हजारीबाग में गोगाइट श्रेणी, विशाखापट्टनम में कुदोराइट श्रेणी।

(iii) उत्तरी गुजरात में चम्पारेन श्रेणी, राजस्थान में अरावली श्रेणी, जम्मू–कश्मीर में लद्दाख एवं जास्कर श्रेणी

(vi) पंजाब में सिपली के निकट वैक्रता श्रेणी

(v) मध्य एवं उपहिमालय के बीच गिलगिट, सलखाला तथा असम में ज्यूतांष परिपाटी।

इस समूह की शैलों में फाइलाइट्स तथा संगमरमर की शैलें मिलती हैं। इन्ही शैलों से दिल्ली और आगरा की मुगल इमारतों के लिए प्रसिद्ध मकराना और जोधपुरी संगमरमर प्राप्त हुआ है। खनिज पदार्थों की दृष्टि से यह समूह महत्वपूर्ण है। भारत का सर्वश्रेष्ठ लोहा, हीरा, सोना, मैंगनीज, अभ्रक आदि खनिज इन्हीं से मिलते हैं। इस समूह का ठोस रुप 2-3 अरब वर्ष पूर्व हुआ।

पुराण महाकल्प – आद्य महाकल्प की शैलों के अपरदन से निःसृन्त पदार्थों के निक्षेपण क्रिया जनित शैलों को भारतीय भू–विज्ञान में पुराना शैल समूह के नाम से जाना जाता है। भारत में आद्य महाकल्प के अंत में पर्वत निर्माणकारी हलचल के परिणामस्वरुप निक्षेपित अवसाद से मोड़दार पर्वत श्रेणियों का निर्माण महत्वपूर्ण घटना है। इसका प्रमुख उदाहरण अरावली पर्वत है। यह भाग बाद में अपरदित होकर आधार तल को पहुँच गया। इन अधिक अपरदित क्षेत्र पर नवनिर्मित शैल समूहों के साथ पुराण कल्प का आरम्भ माना जाता है। इस कल्प की शैलों में कड़प्पा और विन्ध्यन शैल समूह प्रमुख हैं। इसके अलावा दिल्ली और हिमालयी शैल समूह भी प्रमुख हैं।

(अ) कड़प्पा शैल समूह – कड़प्पा क्रम की शैलों का निर्माण प्राचीन काल में धारवाड़ क्रम की शैलों के पश्चात् हुआ। कड़प्पा शैल समूह विन्ध्यन शैल समूह की अपेक्षा प्राचीन है। पुराण कल्प में पाश्चात्य वर्गीकरण के अनुसार, आल्गोन्कियन युग की शैल समूह को कड़प्पा शैल प्रणाली कहते हैं। यह कृष्णा और पेन्नार नदियों के मध्य आन्ध्र प्रदेश राज्य में स्थित कर्नूल और कड़प्पा जिलों में विस्तृत है। इस शैल समूह

टिप्पणी

में क्वार्टजाइट, बालू का पत्थर, चूना पत्थर एवं शैल के क्रमिक स्तर पाये जाते हैं। छत्तीसगढ़ में स्थित रायपुर, बिलासपुर तथा रायगढ़ में इनका विस्तार पाया जाता है। मध्य प्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश के समीपवर्ती भागों में वैनगंगा की घाटी में आदिलाबाद और चाँदा के समीप इसी क्रम की शैलें विद्यमान हैं। आन्ध्र प्रदेश और उड़ीसा के समीपवर्ती भाग में गोदावरी तथा इन्द्रावती के संगम के समीपवर्ती भागों में, छत्तीसगढ़ में बस्तर के आस–पास, आन्ध्र प्रदेश में वारंगल और करीमनगर जिलों में कड़प्पा क्रम की शैलें मिलती हैं। यह कायान्तरित शैलें हैं। इनमें जीवाश्म का अभाव है।



चित्र क्र. 1.18: कुडप्पा शैलों का वितरण

राजस्थान तथा मध्य प्रदेश के उत्तर–पश्चिमी भाग में दिल्ली से लेकर इन्दौर तक फैली संकीर्ण पेटी दिल्ली–अरावली समूह की शैल समूह को कड़प्पा समूह में सम्मिलित किया गया है। दिल्ली क्रम को निम्न शैल क्रम में विभाजित किया गया है।

(i) अलवर शैल क्रम – यह मेवाड़ से अजमेर तक और उत्तर–पूर्व में दिल्ली नगर तक विस्तृत है। इस शैल क्रम में क्वार्टजाइट की प्रधानता है।

(ii) कुशलगढ़ शैल क्रम – इसमें चूना पत्थर की प्रधानता है।

(iii) अजबगढ़ शैल क्रम – इसमें शिष्ट, फिलाइट, बाइयोटाइट की प्रधानता है। इस शैल क्रम के मृणमय अवसादी पदार्थ कायान्तरण की विभिन्न अवस्थाओं में पाये जाते हैं।

इसके अलावा ग्वालियर के आसपास ग्वालियर शैल क्रम, बुन्देलखण्ड की विजावर शैलमाला, सिंहभूम के कोतहन शैलमालाएँ भी कड़प्पा क्रम की शैलों की भाँति हैं।

टिप्पणी

हिमालय के उत्तर–पश्चिमी भाग में शिमला, डोगरा, हजारा, अटक को भी कडप्पा क्रम में सम्मिलित किया जाता है। मुख्य हिमालय एवं लघु हिमालय के मध्य कायान्तरित अवसादी शैलों का जटिल तंत्र मिलता है। इसमें स्लेट पत्थर की प्रधानता है। इसमें चैल, मरटोली, चाँदपूर, भूटान, शिमला तथा असम शैल क्रम प्रमुख हैं।

(ब) विन्ध्यन शैल समूह – कड़प्पा युग के अंतिम समय में हुई भूगर्भिक हलचलों एवं असमय की प्रक्रियाओं के फलस्वरुप निर्मित शैलों को विन्ध्यन शैल समूह कहा जाता है। ये शैल समूह दो प्रकार के हैं। (i) वे जो गहरे समुद्र में निक्षेपित हुए थे और (ii) वे जो उथले सागरों या नदियों की एस्च्युरीज में निर्मित हुए थे। नदी पर स्थित रोहताश स्थान तक, उत्तर में स्थित ग्वालियर और आगरा के मध्यवर्ती भाग से नर्मदा तक इस क्रम की शैलें पाई जाती हैं। इनका नाम विन्ध्यन पहाड़ियों के कारण विन्ध्यन शैल प्रणाली पड़ा। इस शैल प्रणाली का जन्म कड़प्पा शैल प्रणाली की अनाच्छादन के पश्चात् अवसादन के कारण माना जाता है। इस युग की शैलों में बलुआ पत्थर की प्रधानता है। लाल पत्थर तथा हीरक शैल भी इस अवधि में निर्मित हुई।



चित्र क्र. 1.19: भारत में विन्ध्यन शैलों का वितरण

इस शैल क्रम को दो भागों में विभक्त किया गया है –

(i) निम्न विन्ध्यन क्रम (ii) ऊपरी विन्ध्यन क्रम

(i) निम्न विन्ध्यन क्रम – इस क्रम की शैलों के मृणमय तथा चूने के पत्थर की प्रधानता है। यह वलन से प्रभावित है। निम्न विन्ध्यन क्रम का क्षेत्र पश्चिम में सासाराम से नर्मदा सोन जल विभाजक तथा मालवा और बुन्देलखण्ड प्रदेश में है। इसमें

टिप्पणी

क्वार्टजाइट और चूने के पत्थर की प्रधानता है। इस क्षेत्र को शिभरी शैल माला कहा जाता है। इसे भीमा घाटी में भीमा शैल क्रम, पेन घाटी में कड़प्पा से कर्नूल तक कर्नूल शैल क्रम तथा राजस्थान में मनाली शैल क्रम के नाम से जाना जाता है। इस शैल क्रम के दो उपविभाग हैं। (क) भाण्डेर क्रम (ख) रीवा क्रम।

(क) भाण्डेर क्रम – इस शैल में बलुई शैल के बहुत छोटे–छोटे पत्थर अधिक गहराई तक पाये जाते हैं। चूने का पत्थर और जिप्सम विभिन्न गहराई पर मिलते हैं। कुछ स्थानों पर नमक भी मिलता है। इसमें जोधपुर और सोनिया प्रमुख हैं। भारत के दक्षिण और दक्षिण–पश्चिम भाग में विन्ध्यन शैल तंत्र अधिक गहरा है। ऐसा अनुमान है इस क्रम का विस्तार बिहार में गंगा के मैदान के नीचे हिमालय श्रेणी तक है।

(ख) रीवा क्रम – इस शैल क्रम के कण कैमूर शैल क्रम की तुलना में अधिक बड़े हैं। कैमूर और रीवा शैल क्रमों के मध्य कोंग्लोमरिट शैल हैं। परन्तु कैमूर और रीवा के बलुआ पत्थरों के नीचे ग्वालियर में शैल के भी दो मोड़ हैं, जिनके मध्य बालू की शैलें हैं।

(ii) ऊपरी विन्ध्यन क्रम – इस क्रम की शैलों में बालुका निक्षेपों की प्रधानता हैं तथा समान्तर क्षैतिज स्तर मिलते हैं। इस क्रम का विस्तार नर्मदा नदी की घाटी के उत्तर में स्थित है। इस शैल समूह में चूनेदार मृणमय से बालू के विन्ध्यन शैल समूह को प्रायद्वीपीय भाग के विन्ध्यन क्रम का एक भाग माना जाता है जो तृतीय महाकल्प अवधि में पृथक हो गया। इस क्रम के दो प्रमुख शैल क्रम हैं – (क) कैमूर क्रम, (ख) सेमरी क्रम।

(क) कैमूर क्रम – इस क्रम की शैलें विजैगढ़, धनरौल तथा विन्ध्यन कगार भूमि के उत्तर–पूर्व की ओर सतना जिले में हैं।

(ख) सेमरी क्रम – इस क्रम की शैलें बिहार की सोनघाटी तथा राजस्थान में करौली में मिलती हैं। इसमें बेसाल्ट, डोलाराइट, चूने का पत्थर तथा बलुआ पत्थर की प्रधानता है।

द्रविड महाकल्प – भारत के भू–वैज्ञानिक इतिहास काल में यह महाकल्प लम्बी रिक्त अवधि का माना जाता है। केवल हिमालय के कुछ भागों को छोड़कर देश के अन्य भागों में इस शैल समूह का अभाव है। इस शैल समूह में केम्ब्रियन युग से मध्य कार्बोनीफरस युग तक शैलें सम्मिलित हैं। हिमालय के उत्तर–पश्चिमी भाग में (i) पंजाब में लवण श्रेणी और (ii) स्पीति की घाटी (हिमाचल प्रदेश) हैं। कश्मीर में इस महाकल्प की शैलों में ब्रैंकियोपाड तथा एकाइनोडर्म के अवशेष मिलते हैं। सिलयूरियन और डिवोनियन युग की शैल जीवाश्म विहीन मूथ क्वार्टजाइट के रूप में पाई जाती हैं। इनके ऊपर कार्बोनीफरस युग का चूना पत्थर मिलता है। स्पीति क्षेत्र की शैलें एक अभिनतिक गर्त में स्थित हैं जिनमें ट्राईलोबाइट तथा ब्रैंकियोपाड के जीवों के अवशेष मिलते हैं। स्पीति में कैम्ब्रियन युग की शैलों को हेमेन्त प्रणाली कहा जाता है। इसमें स्लेट और क्वार्टजाइट मुख्य हैं। वृहत् और लघु हिमालय के मध्य विभाजक रेखा से उत्तर की ओर प्राचीनतम कठोर शैलें हैं। ये शैलें अनेक क्रम की हैं। जैसे–उत्तर–पूर्वी कुमायूँ हिमालय में पैलियोजयक शैलों को दस प्रकार के क्रमों में विभाजित किया गया है। द्रविण महाकल्प की शैलों को निम्न वर्गों में बाँटा गया है –

टिप्पणी

(अ) कम्ब्रियन युग – इस युग की शैलों में जीवाश्म तत्व मिलना प्रारम्भ हुआ। इन शैलों का विकास मुख्य रुप से भारत–पाकिस्तान सीमा पर स्थित पंजाब में नमक श्रेणी तथा हिमाचल प्रदेश में स्पीति घाटी में हुआ। नमक श्रेणी का नाम यहाँ निक्षेपित नमक की अधिकता के कारण है। यहाँ लालमणि, सेंधा नमक, जिप्सम और डोलोमाइट शैल की प्रधानता है। स्पीति क्षेत्र की कैम्ब्रियन युग की शैलों में स्लेट तथा क्वार्टजाइट की प्रधानता है। कश्मीर में इस युग की शैलें बारामूला क्षेत्र में पाई जाती हैं। इसमें स्लेट, चूने का पत्थर, स्फटिक शिलाएँ और बलुआ पत्थर मुख्य हैं।

(ब) ओर्डोविसियन युग – इस युग की शैलें स्पीति क्षेत्र में कोंग्लोमरिट, क्वार्टजाइट और चूना पत्थर युक्त हैं।

(स) सिलयूरियन युग – ओर्डोविसियन युग की शैलों के ऊपर स्पीति घाटी क्षेत्र में सिलयुरियन युग की शैलों के निक्षेप पाये जाते हैं। इस शैल के ऊपर कार्बोनीफरस युग के चूना–पत्थर का जमाव पाया जाता है। सिलयुरियन शैल की एक परत स्पीति के हिमालय क्रम के ऊपर मध्य हिमालय में कुमायूं एवं गढ़वाल के समीपवर्ती क्षेत्र में पाई जाती है। इसमें स्लेट और चूने का पत्थर मुख्य हैं।

(द) डिवोनियन युग – इस युग की शैलें सिलयुरियन युग की शैलों के ऊपर एक पतली परत के रुप में निक्षेपित हैं। ये शैल सफेद क्वार्टजाइट के रुप में पाई जाती है। इन शैलों में जीवाश्म का अभाव है।

आर्य महाकल्प – भू–वैज्ञानिक इतिहास में द्रविड़ महाकल्प के ऊपरी कार्बोनीफरस युग से लेकर मध्य जीवी एवं नवजीवी महाकल्प तक की अवधि आर्य महाकल्प के नाम से जानी जाती है। इस महाकल्प की अवधि में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। दक्षिणी प्रायद्वीप को गोंडवानालैण्ड का नाम दिया गया तथा उत्तर में स्थित हिमालय का उद्‌भव टेथिस सागर के अवसाद के जमाव तथा उसके दबाव के फलस्वरुप भूगर्भिक हलचल के कारण माना गया।

गोंडवाना शैल समूह – भारत के भूगर्भिक इतिहास के युग में यह शैल समूह महत्वपूर्ण माना गया। सर्वप्रथम इस युग की शैलें नर्मदा घाटी के दक्षिण भाग में स्थित गोंड राज्य में देखी गईं जिस से इसका नाम गोंडवाना शैल समूह पड़ा। यह शैल समूह विभिन्न प्रकार की स्थलीय वनस्पति, जीवों के अवशेष तथा भू–वैज्ञानिक युगों में जलवायु परिवर्तन के कारण अधिक महत्वपूर्ण माना गया।

गोंडवाना शैल समूह उद्‌भव जलधाराओं द्वारा उथले आंतरिक जलभागों में निकटवर्ती क्षेत्रों से पदार्थों को अपरदित करने और निक्षेपण के फलस्वरुप हुआ है। गोंडवाना समूह शैल, दामोदर घाटी और राजमहल की पहाड़ियाँ, मध्य प्रदेश में महानदी की घाटी, गोदावरी नदी की घाटियों के समीप स्थित है। इसके अतिरिक्त उड़ीसा राज्य में महानदी के डेल्टाई भाग, गोदावरी जिले, राजामुन्द्री एवं विजयवाड़ा के मध्य, त्रिचनापल्ली में उलातुर गाँव के समीप इसी क्रम की शैलें पाई जाती हैं। भारत के उत्तरी भाग में पंजाब स्थित लवण श्रेणी, हजारा तथा कश्मीर के कुछ भागों में गोंडवाना समूह की शैलें पाई जाती हैं। लक्षणों के आधार पर गोंडवाना समूह की शैलों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है – (i) निम्न या निचला गोंडवाना, (ii) उच्च या ऊपरी गोंडवाना।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.20: भारत में गोंडवाना शैलों का वितरण

(i) निचला गोंडवाना समूह – इस शैल समूह की निम्नलिखित श्रेणियाँ महत्वपूर्ण हैं –

(अ) तालचिर प्रणाली (Talchir Series) – यह उड़ीसा राज्य (भूतपूर्व तालचिर स्टेट) में मिलती हैं। इस प्रकार की शैल गोंडवाना प्रदेश के अधिकांश क्षेत्रों में राजमहल से लेकर गोदावरी और रानीगंज से नागपुर तक मिलती हैं। यह ऊपरी कार्बनी युग की हैं। इसमें गोलाश्म खरोंचों की प्रधानता है। इस युग की शैल में बलुआ पत्थर और हरे रंग की शैल की प्रधानता है। इससे स्पष्ट होता है कि यह भाग बर्फ से ढका रहा होगा।

(ब) दामूदा प्रणाली (Damuda Series) – यह गोंडवाना भूमि की सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रणाली है। पश्चिमी बंगाल में बालासेन नदी से डालमा की पहाड़ी तक विस्तृत इस शैल श्रेणी को दामोदर नदी के नाम पर दामुदा के नाम से जाना जाता है। इसका जमाव रानीगंज और बराकर क्षेत्रों में बहुत अधिक गहराई तक है। इसका निर्माण बलुआ पत्थर, शैल तथा परमियन युग की कोयला संस्तरों द्वारा हुआ है। इस शैल प्रणाली में सर्वाधिक कोयला की शैलें पाई जाती हैं। कोयले के अतिरिक्त यहाँ लौह अयस्क के भी निक्षेप हैं।

(स) पंचेत प्रणाली (Panchet Series) – पंचेत शैल श्रेणी रानीगंज कोयला क्षेत्र में स्थित हैं। यहाँ कोयला संस्तरों का अभाव है। यहाँ हरे और भूरे रंग के बलुआ पत्थर पाये जाते हैं। इन तीनों शैल श्रेणियों में वनस्पतियों के अवशेष पाये जाते हैं।

इसके अतिरिक्त गोंडवाना युग की शैल उत्तरी भारत में साल्ट रेंज, हजारा, सिक्किम और असम श्रेणी में भी मिलती है।

टिप्पणी

ऊपरी गोंडवाना शैल समूह – इस शैल समूह का विस्तार भारत के दक्षिणी प्रायद्वीप में राजमहल की पहाड़ियों से दक्षिण में तमिलनाडु तक है। इस समूह में तीन प्रणालियों को सम्मिलित किया गया है।

(अ) महादेव प्रणाली (Mahadev Series) – यह मध्य प्रदेश में स्थित पेंच नदी के समीप महादेव पहाड़ी के नाम से प्रसिद्ध है। इस श्रेणी में बलुआ पत्थर की प्रधानता है।

(ब) राजमहल प्रणाली (Rajmahal Series) – यह राजमहल पहाड़ी में स्थित है। इसमें बेसाल्टयुक्त, सिलिकायुक्त चूने के पत्थर की प्रधानता है। सिलिकायुक्त शैलों में जीवाश्म की प्रधानता है।

(स) जबलपुर प्रणाली (Jabalpur Series) – इस शैल समूह का विस्तार जबलपुर के समीप है। इसमें बलुआ पत्थर और कार्बनयुक्त शैल पाई जाती है। इसमें जीवावशेष एक वनस्पति के अवशेष उपलब्ध हुए हैं।

इसी तरह इस शैल समूह का विस्तार काठियावाड़ कच्छ स्थित उमिया शैल श्रेणी में समुद्री संगुतिकारम शैल की प्रधानता है। पश्चिमी राजस्थान तथा समुद्र तटवर्ती भागों में इनके निक्षेप पाये गये हैं।

ट्रियासिक क्रम – इस युग की शैल हिमालय के स्पीति क्षेत्र, कुमायूं एवं पश्चिमी बंगाल के बाला नाग तथा शालशाल पहाड़ियों में अधिक स्पष्ट रुप से मिलते हैं। कश्मीर की जीवान क्रम का निर्माण इस काल में माना जाता है। शिमला में क्राल (Krol) क्रम की रचना भी इसी समय हुई। इस शैल समूह में हल्के काले रंग के चूने के पत्थर, डोलोमाइट तथा बेंगनी रंग की शैल मिलती है। इन शैलों में जीवाश्म तत्व बहुत कम मिलते हैं।

जुरासिक क्रम – इस युग की शैल का विकास हिमालय के स्पीति, कुमायूं तथा गढ़वाल के चूने पत्थर तथा डोलोमाइट को सम्मिलित किया जाता है। हिमालय के मध्यवर्ती भाग में स्पीति शैल महत्वपूर्ण है। कश्मीर में जुरासिक क्रम का विकास पीरपंजाल के बनिहाल दर्रे में भी पाया जाता है। यहाँ चूना पत्थर, शेल, बलुआ पत्थर के निक्षेप ट्रियासिक युग की शैलों के ऊपर हैं। कच्छ में इनके निक्षेप कच्छ के रन में हैं। राजस्थान के बीकानेर और जैसलमेर जिले में यह शैलें मिलती हैं।

क्रिटेशियस क्रम – हिमालय के स्पीति क्षेत्र में गुरूमल, सिक्किम का रम्पाक्रमटियम क्रम, कुमायूं में जौहर तथा दार्जिलिंग के उत्तर में पम्पाजोंग के समीप तथा असम में शिलांग पठार के अनेक भागों में इस क्रम की शैलें पाई जाती हैं। भारत के दक्षिणी प्रायद्वीप में पाण्डिचेरी से कावेरी नदी के मध्य इस क्रम की शैलें पाई जाती हैं।

भारत में भूगर्भिक हलचलों की क्रियाशीलता क्रिटेशियस युग से प्रारम्भ हुई इस युग के अंत में टेथिस सागर में संकुचन प्रारम्भ हुआ। इसके कारण आदि नूतन युग के आरम्भ में दक्षिणी–प्रायदीप के पश्चिमी भाग में ज्वालामुखी उद्‌गार से गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और कर्नाटक में लावा क्षेत्र का निर्माण हुआ। इस शैल समूह में जीवाश्म पाये जाते हैं। ज्वालामुखी शैलों के मध्य परतदार जीवाश्मों की उपस्थिति के आधार पर इस ज्वालामुखी क्रिया के भूगर्भिक काल के विषय में अनेक भूगर्भशास्त्रियों ने अपने मत प्रकट किये हैं।

टिप्पणी

दक्कन ट्रेप – भूगर्भिक इतिहास के क्रिटेशियस युग के अन्तिम चरण और इयोसीन युग के आरम्भिक समय में भारतीय उपमहाद्वीप अंतिम आकार ले रहा था। गोंडवाना महाद्वीप से भारतीय खंड अलग होकर उत्तर की ओर खिसक रहा था तथा उत्तर की ओर टेथिस सागर में पार्श्व दबाव से उभार आरम्भ हो रहा था, उस समय भारतीय प्रायद्वीप के उत्तर–पश्चिमी भाग में अनेक लम्बी गहरी दरारों से पतला बेसिक लावा निकलकर दूर–दूर तक फैल गया और शीघ्र ही क्षैतिज परतों या पट्टियों के रुप में जमकर बेसाल्ट शैल का आवरण बन गया, यह दरारी उद्‌गार की क्रिया रुक–रुककर अनेक बार हुई। परिणामस्वरूप, बेसाल्ट आवरण से अलग–अलग परतों में दिखाई देता है।



चित्र क्र. 1.21: भारत में दक्कन ट्रेप्स का वितरण

दक्कन ट्रेप का विस्तार महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार, तमिलनाडु, कर्नाटक राज्यों में है। महाराष्ट्र में मुम्बई तट में इसके जमाव की गहराई का अनुमान 2,134 मीटर है। यह समस्त क्षेत्र बेसाल्ट पत्थर से बनी एक के ऊपर एक परत के आवरण से ढका है जिसे दक्कन ट्रेप कहते हैं। इसकी मोटाई 600 से 1,000 मीटर तक है।

दक्कन ट्रेप को तीन भागों में बाँटा गया है। (i) ऊपरी ट्रेप, (ii) मध्य ट्रेप और (iii) निचला ट्रेप। ऊपरी ट्रेप महाराष्ट्र में लगभग 450 मीटर मोटा है, मध्य ट्रेप मध्य प्रदेश के ऊपरी भागों में लगभग 1,220 मीटर मोटा है। निचला ट्रेप मध्य प्रदेश तथा पूर्वी भाग में 150 मीटर तक मोटा है।

दक्कन ट्रेप में डोलोमाइट और बेसाल्ट की प्रकृति की खनिज युक्त शैलें उपलब्ध हैं। इनका रंग गाढ़ा भूरा, गाढ़ा–हरा–भूरा आदि हैं। यहाँ लैटराइट मिट्टी भी

टिप्पणी

पाई जाती है। भारत में यह क्षेत्र दक्कन की काली मिट्टी के क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। इसका निर्माण यहाँ उपलब्ध ट्रेप शैलों से हुआ है। यहाँ बालुका पत्थर और मिट्टियाँ भी मिलती हैं। चूने की शैलें सिलिका तथा ग्रिटमय हैं जो दक्कन ट्रेप के नीचे समूह के रूप में विस्तृत हैं। इस शैल समूह को लामेटा पात्र (Lameta Beas) कहते हैं। इन्हें मध्य प्रदेश मे जबलपुर के समीप लामेटा घाट में अच्छी तरह देखा जा सकता है।

नवजीवी महाकल्प – इस महाकल्प के अन्तर्गत तृतीय काल (Tertiary Era) तथा चतुर्थ काल कल्प की शैल समूह को सम्मिलित किया जाता है।

तृतीय महाकल्प (Tertiary Era) – भू–वैज्ञानिक इतिहास के अनुसार इयोसीन युग से प्लीओसीन युग तक की अवधि तृतीय महाकल्प अथवा टर्शरी युग कहलाती है। इस अवधि में अनेक स्थल रुपों की रचना हुई। इसमें दक्षिणी प्रायद्वीप का गोंडवाना महाद्वीप से अलग होना तथा स्थल के धँसाव के परिणामस्वरूप अरब सागर का निर्माण तथा टैथिस तल में उत्थान के परिणामस्वरूप हिमालय श्रेणियों का निर्माण प्रमुख थे। इस युग को दो भागों में विभक्त किया गया है। (i) तृतीयक युग के पूर्वार्द्ध का समय (ii) तृतीयक युग के उत्तरार्द्ध का समय। तृतीयक युग के पूर्वार्द्ध के समय को (अ) अयोसीन और ओलिगोसीन युग तथा तृतीयक युग के उत्तरार्द्ध के समय को (ब) मायोसीन और प्लीयोसीन युग में विभक्त किया गया है।

भारत में तृतीयक महाकल्प की शैलें हिमालय पर्वत के दक्षिणी भाग में एक संकीर्ण पट्टी के रुप मे मिलती हैं । इन शैलों की चौड़ाई सभी जगह समान नहीं है। पश्चिमोत्तर भाग में जम्मू–कश्मीर और पंजाब में इसकी चौड़ाई अधिक है। उत्तर–पूर्वी कश्मीर में लद्दाख क्षेत्र तथा कुमायूं में मुख्य हिमालय के उत्तर में इस युग की शैलें पाई जाती हैं। सिन्धु नदी की ऊपरी घाटी में रूपसुल से कारगिल तक तथा कुछ सीमा तक द्रास तक निम्न तृतीय महाकल्प के निक्षेप मिलते हैं।



चित्र क्र. 1.22: भारत में टरशियरी शैलों का वितरण

टिप्पणी

पंजाब हिमालय में बलुआ पत्थर तथा शैल, तृतीय महाकल्प की शैलें मुरी शैलमाला के नाम से जानी जाती हैं। इसी तरह कुमायूं हिमालय में स्थित क्षेत्र में कसौली शैल मालाएँ पाई जाती हैं। असम, मनीपुर और नागालैण्ड में भी तृतीय कल्प की शैलें पाई जाती हैं। ये बलुआ पत्थर तथा जीवावशेष विहीन शैलें ऊपरी क्रिटेशियस से ऊपरी अधिनूतन युग की हैं। इस क्षेत्र में आदि नूतन युग का जैन्तिया शैलमाला है। इसमें पर्याप्त मात्रा में वनस्पति के अवशेष हैं।

दक्षिणी प्रायद्वीपीय भाग में तृतीय महाकल्प की शैल समूहों का विस्तार तमिलनाडु राज्य के कोरोमंडल तट तथा पॉण्डिचेरी के समीप, केरल की पश्चिमी पठारी सीमा पर एक पट्टी के रुप में गुजरात में कच्छ और काठियावाड़ के तटीय भाग, सूरत और भड़ौच के समीप पाये जाते हैं। इन सभी स्थानों में बालू और चिकनी मिट्टी युक्त पदार्थ जिसमें जीवावशेष मिलते हैं, पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त राजस्थान के अरावली श्रेणी के पश्चिम में तृतीय महाकल्प जीवावशेष की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। यह तीन प्रमुख क्रम की शैलों द्वारा निर्मित हैं। उत्तरी, मध्य तथा न्यू शिवालिक, इन तीनों क्रम की शैलों की बनावट में भिन्नता है।

चतुर्थ महाकल्प (Quaternary Era) – यह भू–वैज्ञानिक दृष्टि से अन्तिम महाकल्प है। इसे प्लीस्टोसीन समूह के नाम से भी जाना जाता है। इसमें अत्यन्त नूतन और आद्य युग सम्मिलित हैं। यह महाकल्प भू–संरचना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है क्योंकि देश के उत्तरी विशाल मैदान की रचना इसी महाकल्प में हुई है। तृतीय महाकल्प की समाप्ति पर अत्यन्त नूतन कल्प का आरम्भ हुआ। इसे अत्यन्त नूतन हिमयुग भी कहते हैं।



चित्र क्र. 1.23: भारत में प्लीस्टोसीन एवं आधुनिक जमाव

तृतीय महाकल्प के अंत में उत्तरी भारत के विशाल मैदान का उद्‌भव हुआ। इस मैदान का निर्माण अवसादन क्रिया से हुआ है। यहाँ विभिन्न प्रकार के जीवाष्म एवं वनस्पति के अवशेष पाये जाते हैं।

टिप्पणी

दक्षिणी प्रायद्वीपीय पठारी प्रदेश में नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, महानदी, कृष्णा और कावेरी आदि नदियों के निचले अपवाह क्षेत्र में निक्षेपण क्रिया से विकसित मैदानी भागों का जन्म अत्यन्त नूतन काल में माना जाता है। इसके अलावा अभिनव कल्प में देश की बड़ी नदियों के समीपवर्ती तथा तटीय क्षेत्रों में पर्याप्त अवसादन हुआ है। भू–वैज्ञानिक दृष्टि से देश के इन सभी नवीन क्षेत्रों का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसी महाकल्प में भारत का वर्तमान भौगोलिक स्वरूप विकसित हुआ, इस युग में उत्तरी भाग के उच्च पर्वतीय भाग तथा दक्षिण के पठारी क्षेत्र के उत्तरी भाग से अनेक नदियाँ पदार्थ को अपरदन करके इस क्षेत्र में निक्षेपित करती रहीं और अवसादी शैलों के स्तरों का निर्माण करती रहीं।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

6. भारत की प्रमाणिक देशान्तर रेखा है–

(अ) 23½ उत्तरी अक्षांश (ब) 82½ पश्चिमी देशान्तर

(स) 82½ पूर्वी देशान्तर (द) 90 पूर्वी देशान्तर

7. भारतवर्ष की स्थलीय सीमा है–

(अ) 15,400 किमी. लम्बी (ब) 15,200 किमी. लम्बी

(स) 13,000 किमी. लम्बी (द) 6,200 किमी. लम्बी

8. भारतवर्ष की तट रेखा की कुल लम्बाई है–

(अ) 7516.6 किमी. (ब) 6900 किमी

(स) 7000 किमी (द) 8500 किमी

9. भारतवर्ष का दक्षिणतम बिन्दु है–

(अ) कन्याकुमारी (ब) इन्दिरा पॉइण्ट

(स) रामेश्वरम् (द) पांडिचेरी

10. भारत और पाकिस्तान के बीच स्थलीय सीमा की लम्बाई है–

(अ) 1120 किमी. (ब) 1500 किमी.

(स) 1300 किमी. (द) 1400 किमी.

1.4 अपवाह–तंत्र (Drainage System)

किसी भी देश का अपवाह–तंत्र उसकी संरचना, भू–भाग का ढाल, जल–प्रवाह का वेग और आकार आदि बातों पर निर्भर करता है। भारत का अपवाह–तंत्र दो भागों में बाँटा जा सकता है – (i) प्रायद्वीपीय अपवाह–तंत्र या दक्षिणी भारत का अपवाह–तंत्र (ii) प्रायद्वीपेत्तर अपवाह–तंत्र या उत्तरी भारत का अपवाह–तंत्र।

(1) प्रायद्वीपीय जल अपवाह–तंत्र

टिप्पणी

प्रायद्वीपीय भारत का भू–भाग अति प्राचीन है। इसलिए इसकी नदियाँ वृद्धावस्था को प्राप्त कर चुकी हैं। प्रायः सभी नदियाँ अपने आधार तल (Base Level) को प्राप्त कर चुकी हैं और उनकी लम्बवत् काटने (Vertical Cutting Power) की शक्ति समाप्त हो गई है। अब ये नदियाँ धीरे–धीरे किनारों को काटने की क्रिया में संलग्न हैं। इनकी घाटियाँ प्रायः चौड़ी हैं जिसके फलस्वरुप बाढ़ के समय जल चारों ओर दूर–दूर तक फैल जाता है। भूगर्भशास्त्रियों का मत है कि हिमालय पर्वत के जन्म के समय दक्षिणी पठार को कुछ धक्के लगे जिसके फलस्वरुप यह पूर्व की ओर झुक गया। केवल नर्मदा और ताप्ती को छोड़कर सभी नदियाँ पूरब की ओर बहती हैं। विद्वानों का कथन है कि नर्मदा और ताप्ती नदियाँ अपनी घाटियों में नहीं, बल्कि दो **विभ्रंश घाटियों** या **भ्रंश मैदान** (Rift Valley or Fault Plain) में बहती हैं जिनका निर्माण हिमालय की उत्पत्ति के समय हुआ था।

दक्षिण भारत का **अपवाह–तंत्र अनुवर्ती अपवाह** (Consequent Drainage) है। दक्षिण भारत की अधिकांश नदियाँ पश्चिमी घाट से निकल कर पूरब की ओर बहती हैं। कुछ छोटी–छोटी नदियाँ पेरियार पोन्नानि, शरबती पश्चिमी घाट से निकल कर पश्चिम की ओर बहती हुई अरब सागर में गिरती है। इन छोटी नदियों में पेरियार नदी उल्लेखनीय हैं जिसके पानी को कृत्रिम रुप से पूरब की ओर बहाकर बैगाई नदी में गिरा दिया गया है।

दक्षिणी प्रायद्वीप के उत्तरी भाग का ढाल उत्तर की ओर है। इसलिए विन्ध्याचल और सतपुड़ा पर्वतक्रम से निकलने वाली नदियाँ उत्तर की ओर बहती हैं और गंगा तथा यमुना नदियों से मिल जाती हैं। इनकी प्रकृति पूर्णतः पहाड़ी नदियों की है। गर्मियों में इन नदियों को आसानी से पार किया जा सकता है, किन्तु वर्षा काल में इनका पाट इतना विस्तृत हो जाता है तथा धारा इतनी तेज हो जाती है कि यह अनुमान करना कठिन हो जाता है कि यह वही नदी है जो गर्मी के दिनों में एक नाले के रुप में थी। इन नदियों द्वारा वर्षा ऋतु में अपार जन एवं धन की क्षति तो होती ही हैं; साथ–साथ इनके द्वारा मिट्टी का अपरदन एक बड़ी समस्या बन जाती है। इन नदियों द्वारा जितनी मिट्टी का खुरचाव होता है उतना किसी अन्य क्षेत्र की नदियों द्वारा नहीं। चम्बल, केन, सिन्धु, बेतवा और सोन नदियाँ इसी क्रम में आती हैं। इनका **परवर्ती अपवाह** (Subsequent Drainage) है। भूगर्भशास्त्रियों के विचार से ये नदियाँ मध्यजीव महाकल्प में टेथिस सागर में बहुत सी तलछट जमा करती थीं। बाद में उत्तर भारत का निर्माण होने पर इनका सम्पर्क गंगा, यमुना नदियों से हो गया है। कुछ भू–वैज्ञानिकों की अवधारणा है कि दामोदर, स्वर्ण रेखा, चम्बल तथा बेनाम नदियाँ **अध्यारोपि** जल अपवाह (Superimposed Draingae) का निर्माण करती हैं। विन्ध्य शैलों के क्षेत्र में **आयताकार अपवाह** प्रतिरूप भी मिलता है। **पूर्वी सिंहभूमि** झारखंड के पुराने वलित पर्वतों में जालायित अपवाह मिलता है। अमरकण्टक से निकलने वाली नर्मदा, सोन तथा **महानदी अरीय अपवाह–तंत्र** का निर्माण करती है। दक्षिण भारत की अधिक नदियाँ **द्रुमाकृतिक अपवाह** (Dendritic Drainage) का निर्माण करती हैं। पश्चिमी घाट में पश्चिम को सरिताएँ लगभग समानान्तर बहती हैं। इसको **समानान्तर अपवाह** (Parallel Drainage) कहते हैं। धारवाड़ जैसे मिश्रित शैलों के संरचनात्मक क्षेत्र में

मिर्जापुर में रेणुका एवं कन्हर नदियों में यह अपवाह मिलता है। दक्षिण भारत की नदियों के दो भाग हैं, बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियाँ तथा अरब सागर में गिरने वाली नदियाँ।

टिप्पणी

प्रायद्वीपीय भारत की नदियाँ – मुख्य नदियाँ निम्नलिखित हैं –

(1) नर्मदा नदी – नर्मदा का उद्‌गम स्थान **मैकाल पर्वत** की चोटी **अमरकण्टक** है। नर्मदा को 'मेकल–सुता', 'शांकरी', एवं 'रीवा' नामों से भी पुकारा गया है। नर्मदा अमरकण्टक से निकलकर एक तंग घाटी से होकर बहती है जिसके उत्तर में विन्ध्याचल एवं दक्षिण में सतपुड़ा पर्वत है। नर्मदा पर प्रारम्भ से अन्त तक अनेक छोटे–बड़े प्रपात हैं जिनमें इसकी सौन्दर्य वृद्धि होती है। नर्मदा का उद्‌गम स्वयं एक प्रपात है – 6.5 किमी. दूर **कपिल धारा** में 30 मीटर ऊँचा एक प्रपात है। कपिल धारा से 1.5 किमी. आगे दूध धारा है जहाँ नर्मदा की गिरती हुई धारा दूध की तरह दिखाई देती है। दूध धारा से 208 किमी. दूर मण्डला जनपद में **सहस्र धारा** नामक दूसरा प्रपात है जहाँ नर्मदा अनेक धाराओं में प्रवाहित होकर काफी ऊँचाई से गिरती है। भेड़ा घाट का धुआँधार प्रपात **वामनगंगा** और नर्मदा के संगम से थोड़ी ही दूर जबलपुर से 20 किमी. की दूरी पर है। धुआँधार के चारों ओर जल–कणों का धुआँ सा छाया रहता है और सारा जल दूध की तरह एकदम सफेद दिखाई पड़ता है। इस प्रपात के बाद लगभग 37 मीटर ऊँची संगमरमर की श्वेत और श्याम शैलों के बीच नर्मदा का जल सिकुड़ता–सा बहता है। एक स्थान पर संगमरमर के किनारे एक दूसरे से इतने निकट आ गये हैं कि एक समय एक बन्दर इस पार से उस पार कूद गया था, इसलिए यह स्थान **बन्दर कुदनी** कहलाता है। होशंगाबाद जनपद में **घाघरी** प्रपात है। हिरन प्रपात के पश्चात् नर्मदा एक विस्तृत मैदान में प्रवेश करती है और अन्त में खम्भात की खाड़ी में जा गिरती है। गुजरात का भड़ौंच नगर इसके मुहाने पर स्थित है। यह नदी 1382 किमी. लम्बी है। एक विशिष्ट विदेशी पर्यटक ने लिखा है कि यह नदी विश्व की नदियों में कल्पनातीत अपरिमित सुन्दरता के लिए एक विशिष्ट स्थान रखती है।

(2) ताप्ती नदी – यह नदी मध्य प्रदेश के बैतूल जनपद से निकलती है ओर सतपुड़ा के दक्षिण में बहती है। इसकी लम्बाई 960 किमी. है। नर्मदा के समानान्तर बहकर यह नदी अरब सागर की खम्भात की खाड़ी में गिरती है। इसके मुहाने पर गुजरात का सूरत नगर स्थित है। इसमें 50 किमी. तक ज्वार का प्रवेश होता है।

(3) महानदी – अमरकण्टक श्रेणी के दक्षिण में सिंहावा से निकलकर यह नदी पूरब की ओर बहती है। पूर्वी घाट में 50 किमी. का चक्करदार मार्ग बनाती हुई यह कटक के पास तटीय मैदान में उतरती है जहाँ यह कई शाखाओं में विभाजित होकर डेल्टा बनाती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है। महानदी का डेल्टा बहुत उपजाऊ है। इस नदी की लम्बाई 980 किमी. है। इसमें तीव्र गति से भयानक बाढ़ें आती हैं और शीघ्रता से समाप्त हो जाती हैं। यह प्रायद्वीपीय उच्च भूमि का दूसरा बड़ा अपवाह क्षेत्र है।

(4) दामोदर नदी – छोटा नागपुर के पठार की **सारु चोटी** के टोरी स्थान (पलामू जिला) से यह नदी निकली है। यह मार्ग–परिवर्तन के लिए काफी कुख्यात है। तीन शताब्दी पूर्व यह नदी हुगली में वर्तमान कोलकाता से 48 किमी. उत्तर की ओर गिरती थी, किन्तु आज यह कोलकाता से काफी दक्षिण में गंगासागर के समीप हुगली

नदी से मिलती है। इसके अत्यधिक संहारकार्य के कारण ही इसे पश्चिम बंगाल की **ह्वांगहो** कहकर पुकारा जाता है। गढ़ी, कोनार, जमुनिया तथा बराकर इसकी सहायक नदियाँ हैं। इसकी लम्बाई 530 किमी. है।

टिप्पणी

(5) गोदावरी नदी – गोदावरी नदी महाराष्ट्र की नासिक की पहाड़ियों के **त्र्यंबक** गाँव से निकलती है और दक्षिण–पूर्व दिशा में बहती हुई आन्ध्र प्रदेश राज्य में बहती है। पूर्वी घाट को पार करते समय इसकी घाटी बहुत गहरी एवं तंग हो गई है। 1,440 किमी. की दूरी पार कर यह नदी डेल्टा बनाती हुई बंगाल की खाड़ी में गिर जाती है। इसके पहाड़ी मार्गों के दृश्य बहुत आकर्षक हैं। उत्तर में इसकी प्रमुख सहायक प्रणहिता, पेनगंगा, इन्द्रावती तथा सबरी नदियाँ हैं, इनमें सबरी नदी 418 किलोमीटर लम्बी है, इन्द्रावती 513 किलोमीटर तथा पेनगंगा 676 किलोमीटर लम्बी है। सबरी नदी छत्तीसगढ़ एवं उड़ीसा की सीमा पर प्रवाहित होती है। उत्तर की यह सब नदियाँ अपना जल गोदावरी में आत्मसात् करती हैं। दक्षिण में केवल मैजीरा नदी प्रमुख है जो हैदराबाद के पास गोदावरी द्वारा आत्मसात् है। इसका डेल्टा बहुत उपजाऊ है। इसका अपवाह क्षेत्र भारत के 10 प्रतिशत क्षेत्रफल का जल ग्रहण करता है। भारत में यह द्वितीय बड़ा नदी बेसिन है। इसमें भारत का आंध्र क्षेत्र पड़ता है।

(6) कृष्णा नदी – कृष्णा नदी पश्चिमी घाट से लगभग 64 किमी. पूरब में स्थित महाबलेश्वर के निकट से निकलती है। पूरब की ओर आन्ध्र प्रदेश में बहकर यह नदी पूर्वी घाट को पार करती है और विजयवाड़ा के समीप पूर्वी तटीय मैदान में प्रवेश करती है। इसकी दो प्रमुख सहायक नदियाँ हैं। उत्तर में भीमा नदी और दक्षिण में तुंगभद्रा नदी। इन सहायक नदियों से कृष्णा नदी को पर्याप्त जल प्राप्त होता है। कृष्णा नदी डेल्टा बनाती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसकी कुल लम्बाई 1,400 किमी. है। दक्षिण भारत में यह द्वितीय बड़ा नदी बेसिन है जिसका अपवाह क्षेत्र देश का 8 प्रतिशत है। इसे **दक्षिणी गंगा** के नाम से भी पुकारा जाता है।

(7) कावेरी नदी – कावेरी नदी कुर्ग की **ब्रह्मगिरि पहाड़ी** से निकलती है। और कर्नाटक व तमिलनाडु राज्यों के अन्तर्गत बहती हुई एक विस्तृत डेल्टा बनाकर बंगाल की खाड़ी में गिरती है। धार्मिक दृष्टि से इसका अत्याधिक महत्व है। आर्थिक दृष्टि से भी इसका महत्व कम नहीं है। इस नदी पर कई जल–प्रपात हैं जिनसे जल विद्युत शक्ति प्राप्त करने की सुविधा है। शिवसमुद्र प्रपात उल्लेखनीय है। कावेरी का डेल्टा उपजाऊ है। इसकी कुल लम्बाई 800 किमी. है। इस नदी में शिवसमुद्रम तथा रंगपट्टम दो द्वीप हैं जो अति पवित्र माने जाते हैं।

अन्य नदियों में **पेन्नार, पलार** और **वैगाई** नदियों का नाम लिया जा सकता है जो पश्चिम से पूरब दिशा मे बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है। छोटा नागपुर पठार पर बहकर बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली ब्राह्मणी तथा स्वर्णरेखा नदियाँ भी उल्लेखनीय हैं।

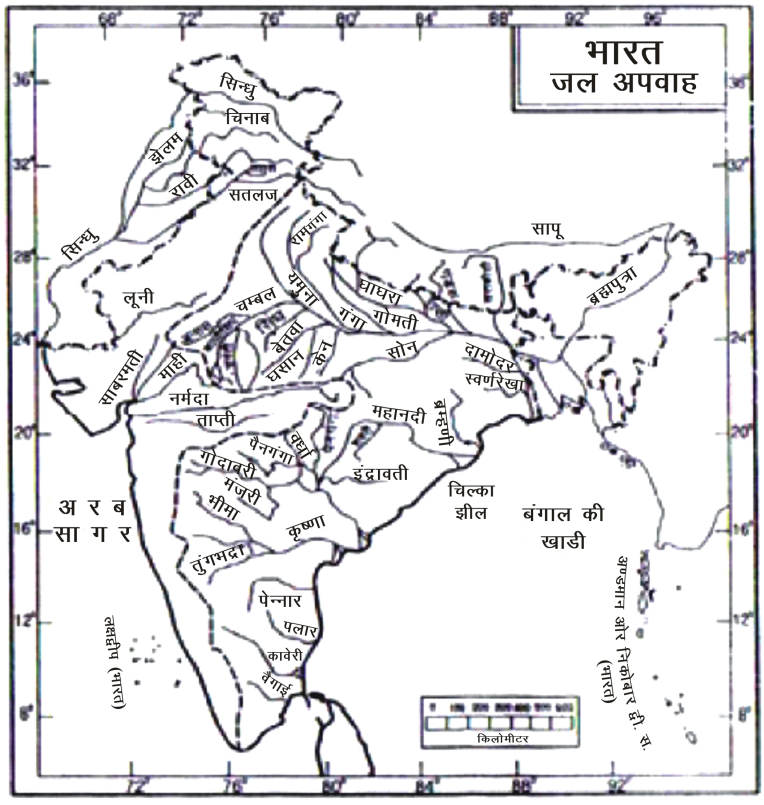
प्रायद्वीपेत्तर अपवाह–तंत्र या उत्तरी भारत का अपवाह–तंत्र

उत्तर भारत के अपवाह–तंत्र में हिमालय का अत्याधिक महत्व है क्योंकि इसकी नदियाँ हिमालय पर्वत से ही निकली हैं। ये नदियाँ प्रायद्वीपीय नदियों से बिल्कुल भिन्न हैं। ये तीव्र गति से तोड़–फोड़ करती हैं, क्योंकि यह नदियाँ अपनी युवावस्था में हैं।

टिप्पणी

अपरदन से प्राप्त सामग्री बहा कर ले जाती हैं और जब इनकी गति कम होती है तब इस सामग्री को निक्षेप करती हैं। उत्तर भारत के विशाल मैदान के निर्माण में इन नदियों का सक्रिय योग रहा है। दक्षिण भारत का **अनुवर्ती अपवाह** (Consequent Drainage) यहाँ नहीं है। इनमें से कुछ नदियाँ हिमालय पर्वत श्रेणियों से भी पुराने काल की हैं। हिमालय पर्वत उठते रहे और ये नदियाँ अपने पेट को गहरा करती गयी और बहती रहीं। हिमालय के उत्थान की गति से कई गुना अधिक इन नदियों में कटाव करने की क्षमता है। पर्वतों के उठने से इन्हें हानि नहीं हुई क्योंकि इनका अपरदन का कार्य बढ़ता ही गया। इसी कारण हिमालय श्रेणी में कई सँकरे पथ या घाटियाँ (Gorges) हैं जैसे गिलगिट के समीप सिन्धु नदी की तंग घाटी जो 5,185 मीटर गहरी है। यह गहराई लम्बवत् अपरदन के कारण ही है, क्योंकि इस घाटी के पहाड़ी पार्श्वों पर विभिन्न ऊँचाइयों पर **वेदिकाएँ** (Terraces) पाई जाती हैं।

उपर्युक्त गहरी और तंग घाटियों के निर्माण के सम्बन्ध में विद्वानों ने विभिन्न मत प्रकट किये हैं। कुछ विद्वानों का कथन है कि हिमालय पर्वत में पहले से ही भ्रंशन (Faults) एवं खाइयाँ उपस्थित थीं। नदियों द्वारा ये थोड़ी और गहरी एवं चौड़ी कर दी गयीं अर्थात इन घाटियों के निर्माण में नदियों द्वारा किया गया अपरदन अंशतः उत्तरदायी है। दूसरे मत के अनुसार यह कहा गया है कि हिमालय पर्वत के उठने के कारण पुरानी नदियों के लिए रुकावट उपस्थित हो गई और विशाल झीलों का निर्माण हुआ। बाद में इन झीलों का जल ऊँचे भागों से उतरकर बहने लगा जिससे गहरी घाटियाँ बनीं। विशेष छानबीन करने पर यह ज्ञात हुआ कि नदियों के ऊपरी भाग में झीलकृत अवसाद के प्रमाण नहीं हैं। अतः यह मत समर्थन नहीं प्राप्त कर सका।



चित्र क्र. 1.24: भारत के जल–अपवाह

टिप्पणी

उत्तर भारत की नदियाँ पहले तो श्रेणियों के समान्तर घाटी में होकर बहती हैं और बाद में एकाएक दक्षिण की ओर घूमकर समुद्र की ओर बढ़ चलती हैं जिसके फलस्वरुप गहरे **अनुप्रस्थ कन्दर** (Transverse Gorges) का प्रादुर्भाव हुआ। सिन्धु नदी गिलगिट के समीप एक बहुत गहरा तिरछा सँकरा पथ बनाती है। नदी इस क्षेत्र में 6,100 मीटर गहरी घाटी में होकर बहती है जबकि घाटी स्वयं समुद्र की सतह से 915 मीटर ऊँची है। इस प्रकार असली गहराई जैसा कि ऊपर बताया गया है, केवल 5,185 मीटर हुई।

चूँकि उत्तर भारत की कुछ नदियों के विकास में भौतिक रुपों का प्रभाव नगण्य रहा इसलिए यह अपवाह–तंत्र **पूर्ववर्ती अपवाह–तंत्र** (Antecedent Drainage System) कहा जा सकता है। इन नदियों में सरिता आत्मसात् (River Capture) के अनेक मनोरंजक उदाहरण प्राप्त होते है। गंगा की सहायक नदी भागीरथी ने तिब्बत की कई नदियों का जल हड़प लिया है। विद्वानों का अनुमान है कि ब्रह्मपुत्र का जन्म **दिहाँग** द्वारा साँपू नदी के सरिता आत्मसात् के परिणामस्वरूप ही हुआ है। पहले यहाँ एक छोटी नदी बहती थी जिसने साँपू नदी का जल हड़प कर वर्तमान ब्रह्मपुत्र का रुप ग्रहण कर लिया। तिस्ता नदी ने भी तिब्बत की नदियों का जल हड़पा है।

दीहाँग लोहित नदियाँ ब्रह्मपुत्र नदी के साथ **अक्रमवर्ती जल अपवाह** (Insequent Drainage) बनाती हैं क्योंकि ये नदियाँ विपरीत दिशा से आकर ब्रह्मपुत्र नदी में मिलती हैं।

भाबर के मैदान में सभी नदियाँ लुप्त हो जाती हैं और बाद में पुनः धरातल पर बहने लगती हैं। इस प्रकार **आंतरायिक अपवाह** (Intermittent Drainage) का निर्माण करती हैं। भारत की सभी नदियाँ समुद्र पर डेल्टा बनाती हैं और कई शाखाओं में विभक्त हो जाती हैं। इसको **गुंफित प्रतिमान** (Braided Pattern) कहते हैं। राजस्थान की रूपनारायण, मेंढा आदि नदियाँ **अन्तः स्थलीय अपवाह** (Inland Drainage) बनाती हैं।

गंगा के ऊपरी मैदान में गंगा तथा उसकी नदियों में **समानान्तर जल अपवाह** मिलता है। कोशी की सहायक नदियों में आयताकार जल अपवाह मिलता है। मुँगेर की मणिहारी पहाड़ी को घेरती हुई किउल नदी वलयाकार जलअपवाह बनाती है। **उत्तरी भारत की नदीयों –** शिवालिक काल की भूपपर्टी के संचलन के फलस्वरूप उत्तरी भारत का अपवाह–तंत्र तीन भागों में विभक्त हो गया है –

(1) सिन्धु नदी तंत्र (2) गंगा यमुना नदी तंत्र एवं (3) ब्रह्मपुत्र नदी तंत्र।

(1) सिन्धु नदी तंत्र – सिन्धु नदी का उद्‌गम स्थल तिब्बत के पठार पर स्थित कैलाश पर्वत के पूर्वोत्तर दिशा में स्थित **वोखरचू** नामक हिमनद है। इस नदी का ढाल प्रति किलोमीटर 60 मीटर से अधिक है। तिब्बत में इस नदी को सिंगी सम्बान कहते हैं। दक्षिण में इसकी सहायक नदी गारतंगचू है। यह नदी लद्दाख श्रेणी के उत्तरी भाग में लगभग 160 किलोमीटर की लम्बाई में बहती है। इस श्रेणी को थागड नामक स्थान पर पार करके इस श्रेणी के दक्षिण में 480 किलोमीटर तक बहती है। नंगा पर्वत का चक्कर लगाकर यह नदी दक्षिण–पश्चिम को बहती है। अन्त में हजारा श्रेणी को पार करके नदी पंजाब में बहने लगती है। मार्ग में दोनों किनारे से कई पर्वतीय नदियाँ जाकर इसमें मिलती हैं। जास्कर, श्यांक और गिलगिट इसकी मुख्य सहायक नदियाँ हैं।

सतलज, व्यास, झेलम, चिनाब और रावी इसकी मुख्य सहायक नदियाँ है।

टिप्पणी

सतलज – इस नदी का उद्‌गम कैलाश पर्वत से मानसरोवर झील के समीप लगभग 5,000 मीटर की ऊँचाई पर स्थित राक्षस ताल है। यह नदी 515 किलोमीटर उत्तर–पश्चिम में बहती हुई शिपकी की सीमा के पास भारतवर्ष में प्रवेश करती है। यहाँ इसकी दिशा उत्तर–पश्चिम की ओर होती है। खोराखाम क्षेत्र में यह अत्यन्त गहरे खड्डों का निर्माण करती है। इसका प्रवाह हिमाचल प्रदेश में बिलासपुर तक दक्षिण–पश्चिम दिशा में है। रामपुर के समीप धवलाधार श्रेणी को पार कर कस्वा का जल ग्रहण करती है। इसके बाद सतलज नदी शिवालिक श्रेणी को पार करने के बाद रूपड़ के समीप अपने मार्ग में अनेक परिवर्तन करती है और यह मैदानी भाग में प्रवेश करती है, फिरोजपुर में पश्चिम दिशा में बहती है। फजिल्का तक भारत–पाक की सीमा में प्रवेश करती है। भारत में इस नदी की लम्बाई 1,050 किलोमीटर है।

झेलम – इस नदी का उद्‌गम हिमालय श्रेणी में कश्मीर में स्थित शेषनाग हिमनद से हुआ है। यह 112 किलोमीटर उत्तर–पश्चिम दिशा में बहकर बूलर झील में प्रवेश करती है। इसका मुख्य बेसिन हिमालय और पीरपंजाल श्रेणियों के मध्य है। श्रीनगर से नीचे इसमें सिंधु नदी मिलती है। जम्मू से आगे त्रिमू के समीप चिनाब से मिलती है। बारामूला में यह एक संकीर्ण घाटी बनाती है और पाकिस्तान की सीमा तक बहती है। मुजफ्फराबाद के बाद किशनगंगा इसमें मिलती है। फिर यह पाकिस्तान की सीमा में प्रवेश करती है। भारत में इस नदी की लम्बाई 400 किलोमीटर है।

चिनाब – इसका उद्‌गम हिमाचल प्रदेश में स्थित लाहुल क्षेत्र के ताण्डी स्थान पर चन्द्र तथा भागा दो नदियों के मिलने पर हुआ है। दोनों नदियों का उद्‌गम बडलाचा दर्रे के विपरीत दिशा में क्रमशः दक्षिण–पूर्व तथा उत्तर–पश्चिम में है। यह 160 किलोमीटर चम्बा जिले के उत्तर–पश्चिम दिशा में प्रवाहित होती है। किश्तवार के समीप यह पीरपंजाल श्रेणी को पार करती है। यह अखनूर तक अनेक पर्वतीय मोड़ों से बहती हुई पाकिस्तान में प्रवेश करती है। भारत में इसकी लम्बाई 1,180 किलोमीटर है।

रावी – इस नदी का उद्‌गम पीरपंजाल और धौलाधार श्रेणियों के मध्य 4,000 मीटर की ऊँचाई पर स्थित बंगाहल बेसिन है। यह चम्बा तक धौलाधार श्रेणी के समानान्तर बहती है तथा इस श्रेणी को काट कर दक्षिण–पश्चिम की ओर मुड़ती है। डलहारी के मध्य मोड़ बनाती हुई अमृतसर के पश्चिम में भारत–पाकिस्तान की सीमा बनाती हुई पाकिस्तान में प्रवेष करती है। इसकी लम्बाई 725 किलोमीटर है।

व्यास – इसका उद्‌गम पीरपंजाल श्रेणी के कुल्लू घाटी में रोहताँग दर्रे में दक्षिण में है। यह नदी कुल्लू घाटी में 120 किलोमीटर पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है। नदी मण्डी और काँगड़ा प्रदेश को पार करने से पूर्व कोती और लार्जी के समीप गहरे दर्रे में होकर बहती है। यह बाद में धवलाधार पर्वतीय श्रेणी को काट कर कुल्लू, कांगड़ा और मण्डी जिलों में बहती है। मण्डी में इसकी दिशा उत्तर–पश्चिम हो जाती है तथा गुरुदासपुर तक इसकी दिशा पश्चिम होती है। कपूरथला के समीप यह सतलज में मिलती है। इस नदी की लम्बाई 480 किलोमीटर है।

टिप्पणी

(2) गंगा–यमुना नदी तंत्र – गंगा नदी भारत की प्रसिद्ध नदी है जो हिमालय पर्वत के गोमुख हिमनद (4,300 मीटर ऊँचाई) से निकलती है। उसकी ऊपरी घाटी की सुन्दरता मनमुग्धकारी है। भूवैज्ञानिक **ग्रीसवैचेन** ने लिखा है ''यह घाटी अद्‌भूत है जिसकी तुलना विश्व की किसी भी नदी घाटी से नहीं की जा सकती है। प्रारम्भ में इसकी गहराई 37 मीटर व चौड़ाई 68 मीटर लगभग है।'' हरिद्वार के पश्चात् गंगा नदीं की मैदानी यात्रा प्रारम्भ होती है और इसकी गति मन्द पड़ जाती है। मैदानी भाग में इसका पाट चौड़ा हो जाता है और यह अपने साथ लाई हुई मिट्टी को किनारों पर एकत्र करती जाती है। इलाहाबाद में यमुना नदी इसमें मिल जाती है। इलाहाबाद से पूरब में गंगा का ढाल औसतन 10 सेमी. प्रति किमी. है। जैसे–जैसे यह आगे बढ़ती जाती है, ढाल कम होता जाता है। डेल्टा के पास इसका ढाल बहुत कम है। गंगा का डेल्टा विश्व का सबसे बड़ा डेल्टा है, जो 79,700 वर्ग किमी. के क्षेत्र में फैला हुआ है। गंगा नदी के मैदान के निचले भाग में पुरानी नदियों के मार्ग परिवर्तन के परिणामस्वरुप अनेक सूखे भूगर्भ हैं, जिन्हें बंगाल में **बील** की संज्ञा दी गई है। नदी के तटों को **चर** कहते हैं। डेल्टा प्रदेश के चर पर गाँव बसे हैं, क्योंकि बरसात में इन्हें छोड़कर सर्वत्र जल ही जल हो जाता है। गंगा नदी संसार की सबसे पवित्र नदी है जिसकी लम्बाई लगभग 2,400 किमी. है। इसके किनारे पर हरिद्वार, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, पटना तथा कोलकाता प्रसिद्ध नगर हैं। भारत में सबसे बड़ा गंगा नदी का अपवाह क्षेत्र है। इसमें देश के एक–चौथाई भाग से पानी आता है।

(i) यमुना नदी – गोमुख से थोड़ी दूर पर **यमुनोत्री** स्थान से यमुना नदी निकलती है और गंगा के प्रति समानान्तर बहती हुई प्रयाग में गंगा से मिल जाती है। इसकी लम्बाई प्रयाग तक लगभग 1,375 किमी. है। दिल्ली, मथुरा व आगरा इसके किनारे स्थित प्रसिद्ध नगर हैं। यमुना नदी की सहायक नदियाँ सिन्धु, बेतवा, केन और चम्बल हैं। भूगर्भवेत्ताओं का अनुमान है कि यमुना अतीत में राजस्थान की ओर बहती थी और पौराणिक सरस्वती नदी की मुख्य सहायक थी। इसमें दक्षिण–पश्चिम से आकर मिलने वाली सभी नदियाँ **अध्योरोपित** (Super-imposed) **अपवाह–तंत्र** का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

(ii) सोन नदी – यह नदी अमरकण्टक की पहाड़ी के शोषाकुण्ड से निकलती है और दानापुर से 24 किमी. उत्तर में गंगा नदी से मिल जाती है। इसमें वर्षा ऋतु में बहुधा बाढ़ आ जाती है, जिससे कभी–कभी भयंकर हानि हो जाती है। अमरकण्टक पर्वत से निकलने वाली नदियाँ **अरीय अपवाह–तंत्र** (Radial Drainage System) का निर्माण करती हैं।

(iii) रामगंगा – इस नदी का उद्‌गम गंगा और काली नदी के मध्य विन्ध्य हिमालय के दक्षिण स्थित उत्तरांचल राज्य में नैनीताल के निकट 3,120 मीटर की ऊँचाई से माना गया है। लगभग 144 किलोमीटर बहने के पश्चात् यह शिवालिक पर्वत श्रेणी को काटकर बिजनौर जिले के मैदान में प्रवेश करती है। खोह नदी कुछ दूरी पर रामगंगा से मिलती है। शिवालिक श्रेणी के कारण यह दक्षिण–पश्चिम की ओर बहती है और मैदानी भाग में दक्षिण–पूर्व की ओर बहती है। यह नदी 600 किलोमीटर लम्बी है।

टिप्पणी

(iv) काली–काली गंगा अथवा शारदा नदी – काली नदी कुमायूं श्रेणी के उत्तर पश्चिम में स्थित मिलाम ग्लेशियर से निकलती है। इसे यहाँ गौरी गंगा के नाम से सम्बोधित किया जाता है। धर्मा, लिसार, सरजू और पूर्वी रामगंगा इसकी सहायक नदियाँ हैं। सरजू और पूर्वी रामगंगा उत्तर–पश्चिम से आकर पंचेश्वर के समीप मिलती हैं। इस संगम से आगे कालू को शारदा या सरजू के नाम से जाना जाता है।

(v) करनाली, कौरियाला या घाघरा नदी – यह नदी पहाड़ी क्षेत्र में कौरियाली और करनाली और मैदान में घाघरा कहलाती है। यह तकलाकोट से 37 किलोमीटर उत्तर–पश्चिम की ओर मापचाचुंगो हिमनद से निकलती है। दक्षिण पूर्वी दिशा में बहकर यह दक्षिण–पश्चिम की ओर से हिमालय श्रेणी को पार करती हैं। शिवालिक को पार करते समय यह नदी शीश पानी नामी 185 मीटर चौड़े और 600 मीटर चौड़ा खड्ड बनाती है। मैदानी भाग में पहुँच कर इसकी दो शाखाएँ बन जाती हैं। पश्चिम की ओर करनाली और पूर्व की ओर गिरवा परन्तु आगे चलकर दोनों नदियाँ एक हो जाती हैं और यह अवध में छपरा के निकट गंगा में मिल जाती हैं। यह नदी 1,180 किलोमीटर लम्बी है।

(vi) राप्ती नदी – यह नदी नेपाल से निकल कर पहले दक्षिण की ओर फिर पश्चिम की ओर बहती है। फिर दक्षिण की ओर मुड़कर बहराइच, गोण्डा, बस्ती और गोरखपुर जिलों में 640 किलोमीटर बहती हुई बरहज के निकट घाघरा में मिल जाती है।

(vii) गंडक – इस नदी को नेपाल में शालिग्रामी और मैदान में नारायणी कहते हैं, क्योंकि इसमें गोलमटोल शालिग्राम बहुत मिलते हैं। इसकी दो मुख्य शाखाएँ हैं। पश्चिम की ओर गंडक और पूर्व की ओर त्रिशूली गंगा। यह शिवालिक श्रेणी को पार करके मैदान में उतरती है। यह पटना के निकट गंगा में मिलती है। यह 425 किलोमीटर लम्बी है।

(viii) कोसी – यह गंगा की सबसे बड़ी सहायक नदी है। मुख्य धारा अरुण के नाम से गोसाईथान के ओर से निकलकर काफी दूर तक पूर्व दिशा में बहती है। अरुण नदी पश्चिम में माउण्ट एवरेस्ट तथा पूर्व में कंचनजंगा के बीच दक्षिण दिशा को बहती है। यहाँ इसकी घाटी बहुत संकरी है। आगे इसमें पश्चिम की और से सेन कोसी और पूर्व की ओर से तामूर कोसी नदियाँ आकर मिलती हैं। यहीं से यह कोसी के नाम से शिवालिक को पार करके मैदान में प्रवेश करती है और गंगा में मिलने से पूर्व स्वयं का एक डेल्टा बनाती है। यह नदी 730 किलोमीटर लम्बी है। इस नदी में बाढ़े बहुत अधिक आती हैं।

(ix) चम्बल – यह नदी मध्य प्रदेश में मऊ के निकट जनापाज पहाड़ी से निकलती है। यह पहाड़ी समुद्रतल से 616 मीटर ऊँची है। यह पहले उत्तर–पूर्व की ओर बहकर मध्य प्रदेश के भिण्ड और मुरैना जिलों एवं राजस्थान के झालावाड़, कोटा, बूंदी और धौलपुर जिलों में बहती हुई इटावा से 38 किलोमीटर दूर यमुना में मिलती है। काली सिंधु, सिवान, पार्बती और बनास इसकी सहायक नदियाँ हैं। यह 970 किलोमीटर लम्बी है।

(x) बेतवा – यह मध्य प्रदेश के भोपाल से निकलकर उत्तर–पूर्वी दिशा में बहती हुई भोपाल, ग्वालियर, झाँसी, जालौन आदि जिलों में बहती हुई हमीरपुर के निकट यमुना में मिलती है। सांची और विदिशा रूपी नदी के किनारे स्थित है।

टिप्पणी

(3) ब्रह्मपुत्र नदी तंत्र – ब्रह्मपुत्र नदी मानसरोवर झील के निकट कैलाश पर्वत से निकलती है और दक्षिणी तिब्बत में बहती हुई हिमालय के पूर्वी सिरे पर पहुँचती है जहाँ से यह दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। नेपाल में यह **साँपू** नाम से पुकारी जाती है। असम हिमालय में यह **दिहाँग** नाम से कही जाती है। साँपू की अधिकांश सहायक नदियाँ (दिहांग तथा लोहित) इसके विपरीत दिशा से आकर मिलती हैं। यहाँ **अक्रमवर्ती अपवाह–तंत्र** (Insequent Drainage System) का उदाहरण मिलता है। इसके बाद असम राज्य से होती हुई यह गंगा नदीं में मिल जाती है। बंगाल की खाड़ी से डिब्रूगढ़ तक इसमें जहाज चल सकते हैं। गुवाहाटी तथा डिब्रूगढ़ इसी नदी पर स्थित बड़े नगर हैं। यह नदी मार्ग–परिवर्तन तथा बाढ़ के कारण कुख्यात है। इसकी कुल लम्बाई 2,700 किमी. है।

उत्तरी भारत की नदियों का मार्ग–परिवर्तन – उत्तरी भारत की नदियों के मार्ग में तृतीय महाकल्प से लेकर अब तक अनेक परिवर्तन हुए हैं। मार्ग–परिवर्तन के कारण अपार क्षति भी हुई है। भूगोल विशारदों के मतानुसार आज जहाँ शिवालिक श्रेणी है वहाँ एक नदी बहती थी जिसे **शिवालिक** या **इण्डोवर्मन** नदी कहते थे।

शिवालिक हलचल के पश्चात् सिन्धु, पंजाब की नदियों तथा गंगा एवं उसकी सहायक नदियों का जन्म हुआ। पहले यमुना सिन्धु नदी में गिरती थी और सरस्वती की सहायक के रूप में हिन्दुओं की पवित्र नदी मानी जाती थी। सतलज नदी का अपना अलग अस्तित्व था। यह राजस्थान में होकर बहती थी।

कुछ नदियों के मार्ग–परिवर्तन का अध्ययन करने पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि उत्तर भारत की नदियाँ पश्चिम की ओर मुड़ती हैं। ब्रह्मपुत्र नदी आज से 200 वर्ष पूर्व गंगा से नहीं मिलती थीं। बंगाल के पुराने मानचित्र का, जिसमें **रेनल** (1794-1776) के मानचित्र भी सम्मिलित हैं, अध्ययन करने से यह ज्ञात हाता है कि यह नदी ढाका व मैमनसिंह से भी पूरब में बहकर चिटगाँव के पास बंगाल की खाड़ी में गिरती थी, परन्तु आज यही ढाका से भी पश्चिम में गंगा से मिलती है। इस नदी में लगभग 112 किमी. का झुकाव पश्चिम की ओर हुआ है। अनुमान किया जाता है कि तिस्ता नदी के मार्ग में भी परिवर्तन हुआ है। इन दो नदियों के मार्ग–परिवर्तन के मूल में बाढ़ और भूचाल कारण बताये जाते हैं।

कोसी नदी अपनी बाढ़ तथा मार्ग–परिवर्तन के ही कारण **'उत्तर–पूर्वी बिहार का शोक'** कही जाती है। यह अति प्राचीनकाल में ब्रह्मपुत्र नदी में गिरती थी। 18वीं शताब्दी में यह पूर्णिया के समीप से बहती हुई पश्चिम बंगाल और बिहार की सीमा के निकट गंगा नदी से मिलती थी। अब यह लगभग 81 किमी. पश्चिम की ओर हटकर गंगा नदी से मिलती है। कोसी नदी के छोड़े हुए कई प्राचीन मार्ग इस तथ्य को और भी प्रमाणित करते हैं।

दामोदर नदी भी अपना मार्ग–परिवर्तन करती है। यह नदी कोलकाता से 55 किमी. उत्तर की ओर हुगली नदी से मिलती थी, अब कोलकाता से 55 किमी. दक्षिण में मिलती है।

टिप्पणी

गण्डक, सोन व घाघरा नदियों के मार्गों में भी परिवर्तन हुए हैं। बाँकीपुर और दानापुर के बीच सोन का छोड़ा हुआ भाग इसका प्रमाण है। पाँचवीं सदी में पटना या पाटलिपुत्र, गंगा, सोन, घाघरा, गण्डक तथा पुनपुन नामक पाँच नदियों के संगम पर बसा था। आज सोन एवं घाघरा नदियाँ पटना से दूर पश्चिम में गंगा नदी से मिलती हैं।

नदियों के मार्ग–परिवर्तन हानिकारक सिद्ध होते हैं। अकेले कोसी के मार्ग–परिवर्तन से उत्तरी भागलपुर, उत्तरी मुंगेर व पूर्णिया के लगभग 6,000 वर्ग किमी. क्षेत्र व 20 लाख मनुष्य प्रभावित हो चुके हैं।

सागरीय अपवाह – उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय नदियों का जल दो भागों में विभक्त हो जाता है – **(i) बंगाल की खाड़ी** का अपवाह और **(ii) अरब सागर** का अपवाह।

झीलें – भारत की अधिकांश झीलें उत्तरी पर्वतमालाओं में हैं। सिक्किम की प्रसिद्ध झीलें यमडाकचो (Yamdakcho) और यमटोडाँग हैं। **यमडाकचो** की परिधि 72 किमी. है। उत्तरांचल में झीलों की भरमार है जिनमें **नैनीताल, भीमताल, खुरपाताल, सातताल, नौकुचियाताल, मालवाताल** तथा **पूनाताल** विशेष प्रसिद्ध हैं। ये झीलें इस क्षेत्र में आने वाले पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र हैं। **नैनीताल** इनमें सबसे प्रसिद्ध है। समुद्र–तल से 1,939 मीटर ऊँचाई पर स्थित यह झील लगभग 1,410 मीटर लम्बी, 457 मीटर चौड़ी और 26 मीटर गहरी है। पहाड़ों से घिरी हुई यह झील जल–विहार तथा आमोद–प्रमोद का एक प्रमुख साधन उपस्थित करती है। नैनीताल नगर इसी ताल पर स्थित है। दूर–दूर से आने वाले यात्री नैनीताल झील की सुन्दरता देखकर मुग्ध हो जाते हैं। यह प्रायः तीन ओर से पहाड़ों से घिरी है। केवल दक्षिण–पूर्व पार्श्व खुला है जिससे बलिया नदी निकलती है। इस झील की रचना भूमिगत जल से चूना पत्थर के गल जाने पर ऊपरी धरातल के धँस जाने से हुई है।

उत्तरांचल की झीलें – कुमायूं प्रदेश की सबसे बड़ी झील **भीमताल** है जो 1,674 मीटर लम्बी, 447 मीटर चौड़ी और 26 मीटर गहरी है। यह त्रिभुजाकार है। इसके मध्य में आग्नेय शैलों द्वारा निर्मित एक टापू है। इस झील में **नोलोगोदना** नामक पहाड़ी नदी गिरती है और गधेरा नदी निकलती है। **सातताल** भीमताल से उत्तर–पश्चिम में स्थित तीन झीलों का समूह है। इसके नाम से यह अनुमान किया जाता है कि कभी इस समूह में सात झीलें रही होंगी। **नौकुचियाताल** भी भीमताल से दक्षिण–पूरब में स्थित है जिसके नौ कोने उसे दर्शनीय बना देते हैं। यह उत्तरांचल की सबसे अधिक (40 मीटर) गहरी झील है। उत्तरांचल की झीलें हिमानी, स्थल–स्खलन, भू–संचलन एवं शैल निक्षेप से बनी हैं।

कश्मीर की झीलें – कश्मीर राज्य में अनेक झीलें हैं, जैसे **मानसबल, डल, वूलर, शेषनाग, गेंडरबल, बेरीनाग** आदि। इनमें **वूलर** झील सबसे बड़ी है जो 110 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैली है। यह 15 किमी. लम्बी तथा 10 किमी. चौड़ी है। डल एवं वूलर हिमानीकृत झीलें हैं। ये हिमानी के अपरदन, भूस्खलन एवं हिमोढ़ निक्षेप से बनी हैं। डल झील के किनारे श्रीनगर बसा हुआ है जिसका विस्तार 8 × 3 किमी है। इसमें कई छोटी–छोटी नदियाँ आकर गिरती हैं। झेलम नदी से इस झील का सम्पर्क कराके इसकी उपयोगिता और बढ़ा दी गई है। इस झील पर बड़े–बड़े हाउस बोट दिखाई देते हैं। इस

झील के किनारे 16 वीं शताब्दी के मुगल बादशाहों द्वारा लगाये गये निशात, शालीमार, नसीमबाग तथा चश्मेशाही इसकी शोभा में चार चाँद लगा देते हैं। डल झील के बीच में कश्मीर के महाराज का भवन है।

टिप्पणी

राजस्थान की झीलें – राजस्थान की शुष्क एवं बालुकामंडित धरती पर भी अनेक झीलें हैं। राजस्थान एक अन्तःस्थलीय अपवाह प्रदेश (Inland Drainage Area) है। छोटी–छोटी नदियों द्वारा लाया गया जल निचले प्रदेशों में एकत्र होकर झीलों की रचना में सहायक होता है। **साँभर** झील 220 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैली है। यह खारे पानी की झील है। इसके किनारे नमक बनाया जाता हैं। साँभर के अतिरिक्त **फलोदी, डीडवाना, लूनकरनसर, कचोर** तथा **रेवास** झीलें उल्लेखनीय हैं। नवलखासागर, गेवसागर तथा पिछौला कृत्रिम झीलें अपने सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध हैं।

राजस्थान की झीलों में लवणता है। इस सम्बन्ध में **ह्यूम्स** की धारणा है कि ये झीलें समुद्र की अवशेष हैं जहाँ जल के सूख जाने पर नमक का जमाव हो गया है। नाटेलिंग के मतानुसार यह नमक भूमिगत खारे क्षेत्र के स्रोतों से प्राप्त हुआ है। झीलों के निक्षेप के नीचे नमक की प्राचीन शैलें हैं जिससे केशाकर्शण शक्ति के द्वारा नमक ऊपर आ जाता है और झीलों में लवणता हो जाती है। **हॉलेण्ड** एवं **क्राइस्ट** के मतानुसार नमक का निक्षेप दक्षिण–पश्चिमी मानसूनी वायु से होता है। इन झीलों से प्राप्त नमक की मात्रा, रंग तथा रासायनिक मिश्रण में अन्तर मिलता है।

कभी–कभी भूमि–स्खलन (Landslide) से नदियों का प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है और अस्थायी झीलें बन जाती है। सन् 1893 में गढ़वाल जिले में **गोहना** नदी के प्रवाह अवरुद्ध हो जाने से गोहना झील की रचना हुई है। सिन्धु घाटी में शीर्षस्थल पर **चन्द्रपाल ताल** इसी प्रकार निर्मित है।

नदियों के विसर्पण से भी कभी–कभी झीलों का निर्माण होता है। इन्हें छाड़न झील (Oxbow Lake) कहते हैं। बलिया जनपद में घाघरा नदी में ऐसी झीलें पाई जाती हैं।

प्रायद्वीपीय भारत की झीलें – दक्षिण भारत में भी कुछ छोटी–छोटी झीलें मिलती हैं। महाराष्ट्र के बुलढाना जनपद में लोणार नामक एक बहुत गहरी ज्वालामुखी झील है। यह झील इसमें प्राप्त होने वाले खनिज नमक सोडियम कार्बोनेट के लिए प्रसिद्ध है। आन्ध्र प्रदेश में भी कृष्णा जिलें में इलोर के समीप गोदावरी एवं कृष्णा डेल्टाओं के मध्य **कोलार** झील बनी है। भूतत्ववेत्ता लाटूश (Latooch) महोदय के कथनानुसार, उड़ीसा के पुरी जनपद में नाशपाती के आकार की **चिलका** झील है जो 800 वर्ग किमी. क्षेत्रफल में है। यह झील भूतल के प्रशन से बनी है। कुछ लोग इसको समुद्री तरंगों के निक्षेप से बनी मानते हैं। इस अनूप झील में महानदी बहुत सी तलछट लाकर एकत्र करती है। तमिलनाडु राज्य की पुलिकट झील भी एक अनूप झील है। इसका नाम तमिलनाडु के **चिंगलेपट** जिले के **पुलकिट** नगर के नाम पर रखा गया है। यह 59 किमी. लम्बी है। असम राज्य की खासी एवं जैन्तिया पहाड़ियों के चूना क्षेत्र में घुलनशील झीलें मिलती हैं।

उपर्युक्त सभी झीलें किसी न किसी प्रकार लाभकारी सिद्ध होती हैं। कहीं इनसे खनिज नमक मिलते हैं तो कहीं इनमें मत्स्य पालन होता है। इनमें कुछ सिंचाई की दृष्टि से भी उपयोगी हैं।

टिप्पणी

जलस्रोत – भारत में अनेक जलस्रोत हैं जिनमें ठण्डा व गर्म जल प्राप्त होता है। देहरादून के **'गन्धक के चश्मे'** और मुम्बई से लगभग 64 किमी. दूर ब्रजेश्वरी के गर्म पानी के कुण्ड बहुत प्रसिद्ध हैं। इन कुण्डों में नहाने और इनके पानी को पीने से कई चर्म रोग दूर हो जाते हैं। बद्रीनाथ पुरी में **गौरीकुण्ड** गर्म पानी का झरना है। मुँगेर का **सीताकुण्ड** भी एक गर्म स्रोत है। कश्मीर में **चोंगो, पनासिक** तथा **ततवानी** गर्म पानी के स्रोत हैं।

ठण्डे पानी के जलस्रोत तो अनेक हैं। उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद के **नीमसार** स्थान में ठण्डे जल का स्रोत है जिसे चारों ओर से घेर दिया गया है।

झीलों का आर्थिक महत्व –

(i) नौकारोहण

(ii) नमक की प्राप्ति

(iii) रमणीयता एवं मनोरंजन

(iv) मत्स्य पालन

(v) सिंचाई एवं जल–विद्युत

(vi) बाढ़ की रोकथाम आदि।

जलवायु (Climate)

भारत का अत्याधिक विस्तार तथा विषम् प्राकृतिक बनावट जलवायु की विभिन्नता के लिए उत्तरदायी है किन्तु मानसुनी प्रभाव से जलवायु की विभिन्नता में समानता उत्पन्न हो जाती है। फलतः भारत की जलवायु मानसुनी है। भारत की जलवायु भिन्न–भिन्न मौसम में प्रचलित हवाओं द्वारा निर्धारित होती है। डॉ. एच.जी. डोयी के मतानुसार 'मानसून विरोधी मौसम वाली जलवायु है जिसमें ग्रीष्म काल में दक्षिण–पश्चिमी हवाएँ तथा शीत काल में उत्तर–पूरबी हवाएँ तथा शीत काल मे उत्तर–पूरबी हवाएँ चला करती हैं। ये हवाएँ बड़े पैमाने पर थलीय एवं समुद्री हवाएँ दैनिक ताप–परिसर के कारण चलती हैं और मानसूनी हवाओं के चलने का भी यही सिद्धान्त है, अन्तर केवल इतना है कि थलीय तथा जलीय हवाएँ दैनिक ताप–परिसर के कारण चलती हैं और मानसूनी हवाएँ वार्षिक ताप–परिसर के कारण। वर्ष के 6 माह में ये हवाएँ जल से थल की ओर और वर्ष के दूसरे भागों में ये थल से जल की ओर बहती हैं।

मानसून उत्पत्ति की अवधारणाएँ (Concepts of Origin of Monsoon)

मानसून की तीन विशिष्टताएँ हैं। प्रथम विशिष्टता ऋतु के साथ दिशा में पूर्ण उत्क्रमण (Reversal) हैं। दूसरी विशिष्टता यह है कि यह दिशा उत्क्रमण स्थल एवं जल के विभिन्न तापमानों के कारण होती है। इन तापीय कारणों से ऋतु–परिवर्तन के साथ उच्च एवं अल्प दाब के केन्द्र उलट जाते हैं, तीसरी विशिष्टता ग्रीष्मऋतु में मानसूनी हवाओं द्वारा अधिक वृष्टि का होना है। मानसून के परिसंचरण के सम्बन्ध में चार अवधारणाएँ हैं –

टिप्पणी

(1) चिरसम्मत अवधारणा (Classical Concept) – यह अवधारणा जल एवं थल की उपस्थिति तथा ऋतु परिवर्तन पर आधारित है। यदि पृथ्वी का धरातल केवल जल या थलपूर्ण होता तो मानसून हवाओं की उत्पत्ति नहीं होती। इसी प्रकार ऋतु–परिवर्तन के साथ प्राप्त ताप की मात्रा एक समान होती तो इन हवाओं की दिशा सदैव एक–सी होती।

इस अवधारणा के अनुसार ग्रीष्मऋतु में महासागर में महाद्वीप की ओर और शीतऋतु में महाद्वीप से महासागर की ओर हवाएँ बहती हैं। महाद्वीपों की ओर प्रवाहित होने पर इन हवाओं पर कोरियोलिस तथा संघर्षण बलों का प्रभाव पड़ता है और इनकी दिशा साधारणतः दक्षिण–पश्चिम हो जाती है। महाद्वीपों से महासागरों की ओर प्रवाहित होने पर इन हवाओं पर पृथ्वी के परिभ्रमण का प्रभाव पड़ता है और ये उत्तर–पूर्वी हवाएँ हो जाती हैं। यह संकल्पना **एडमंड हैली** ने सन् 1686 ई. में की। इस अवधारणा की कड़ी आलोचना हो रही है।

(2) स्पेट की मानसूनी अवधारणा (Spate's Concept) – ऑस्ट्रेलिया के भूगोलविद् स्पेट के अनुसार मानसून हवाओं की उत्पत्ति का कारण चक्रवातों की उत्पत्ति है। इन चक्रवातों की उत्पत्ति वायु–राशियों के स्थान पर एकत्रीकरण के कारण होती है। प्रथम वायुराशि महाद्वीपीय उष्ण प्रदेशीय है जो अत्यन्त शुष्क होती है। द्वितीय वायुराशि पुराने मानसून की वायुराशि है जो अपेक्षाकृत आर्द्र होती है। महासागरों से आने वाली मानसून हवाएँ तीसरी वायुराशि है जिनकी आर्द्रता अधिक तथा तापमान कम होता है। पुराने एवं नवीन मानसून वायुराशियों के मध्य महाद्वीपीय उष्ण प्रदेशीय वायुराशि के आ जाने पर एक वाताग्र उत्पन्न हो जाता है और चक्रवाती वायु उत्पन्न हो जाती है। इनमें हवा की गति धीमी होती है क्योकि वातावरण दुर्बल तथा छिछले होते हैं।

(3) फ्लोन की मानसूनी अवधारणा (Flohn's Monsoony Concept) – जर्मनी मौसमवेत्ता फ्लोन ने चिरसम्मत अवधारणा की तीन मुख्य त्रुटियों का उल्लेख किया है जो निम्नलिखित हैं –

(i) महाद्वीपीय उच्च एवं अल्प दाब केन्द्रों की उत्पत्ति तापोत्पादक कारणों से नहीं होती हैं, अन्यथा ये सदैव प्रबल एवं स्थिर होते हैं।

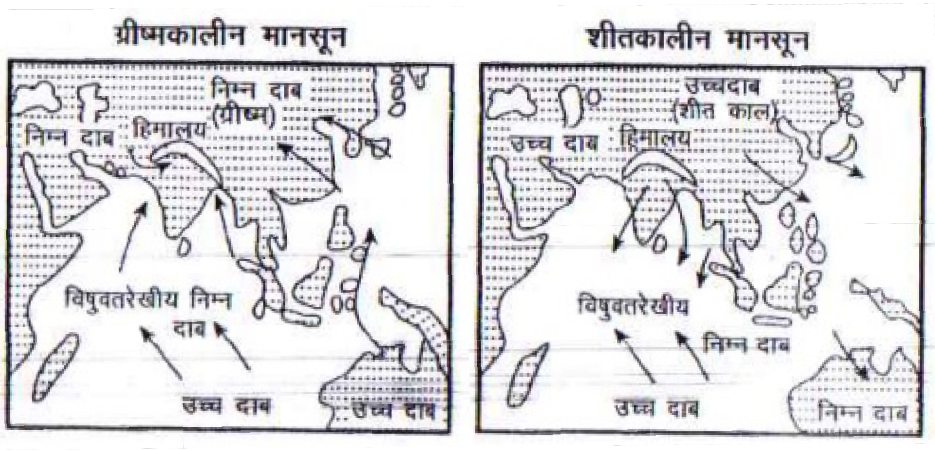
(ii) ग्रीष्म एवं शीतकालीन उच्च एवं अल्प दाब केन्द्र इतने अधिक शक्तिशाली नहीं होते हैं कि हवाओं की दिशा में पूर्ण उत्क्रमण उत्पन्न कर सकें।

(iii) ग्रीष्मकालीन वर्षा निरन्तर नहीं होती है। वर्षा की मात्रा भी सर्वदा समान नहीं रहती है। कभी विलम्ब से वर्षा प्रारम्भ होती है और बीच में कभी सहसा समाप्त भी हो जाती है। इससे व्यक्त होता है मानसूनी वर्षा मानसूनी हवाओं पर ही निर्भर करती हैं।

फ्लोन की धारणा हैं कि सन्मार्गी हवाओं के अभिसरण के फलस्वरूप विषुवत्रेखीय शान्त वायुदाब **डोलड्रम** के दोनों ओर एक प्रकार का वाताग्र उत्पन्न हो जाता है जिसको **अन्तरा–उष्ण कटिबन्धी अभिसरण** (Intertropical Convergence) कहते हैं। ग्रीष्म ऋतु में अन्तरा–उष्ण कटिबन्धी अभिसरण उत्तर की ओर खिसक कर महाद्वीप के भीतरी भाग तक पहुँच जाता है और वाताग्र में कई चक्रवात उत्पन्न हो जाते

टिप्पणी

हैं जिसके फलस्वरूप एक अर्द्ध–स्थायी अल्प दाब केन्द्र स्थापित हो जाता है। तापोत्पादक अल्प दाब की उपस्थिति के कारण यह अर्द्ध–स्थायी अल्प दाब केन्द्र अधिक प्रबल हो जाता है। वाताग्र के साथ विषुवतरेखीय पश्चिमी हवाएँ भी उत्तर की ओर खिसक जाती हैं और सागरीय हवाओ के रूप में महाद्वीपीय तटवर्ती भागों में बहने लगती हैं। इस प्रकार ग्रीष्मऋतु की दक्षिणी विषुवत्रेखीय पश्चिमी हवाओं का ही एक भाग है।



चित्र क्र. 1.25: मानसून की उत्पत्ति

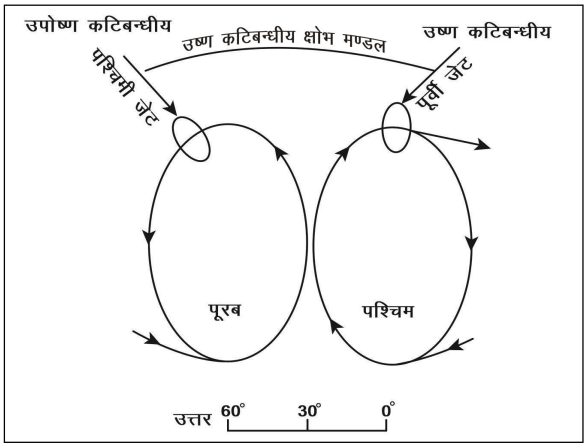
इसी प्रकार ग्रीष्मकालीन मानसूनी वर्षा भी अन्तरा–उष्ण कटिबन्धी वाताग्र के मध्य अक्षांशों तक खिसक जाने के कारण होती है। इस वाताग्र के कारण महासागरों की ओर आने वाली विषुवत्रेखीय पश्चिमी हवाओं में चक्रवाती दशा उत्पन्न हो जाती है। आर्द्रतायुक्त होने के कारण इनसे मूसलाधार वर्षा होती है। यह संवहनीय वर्षा है।

शीत ऋतु में मानसूनी प्रदेश में दुर्बल उच्च दाब क्षेत्र बनते हैं, किन्तु उपोष्ण उच्च दाब की पेटियों के खिसक जाने से दुर्बल मानसूनी दाब केन्द्र प्रबल हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप प्रतिचक्रवाती दशा उत्पन्न हो जाती है और उत्तर–पूर्वी हवाएँ चलने लगती है। इस प्रकार **फ्लोन** के विचार में हवाओं का यह उत्क्रमण तापीय कारणों पर आधारित नहीं है, बल्कि ग्रहीय वायुक्रम में सन्मार्गी वायु के पुनर्स्थापन का द्योतक है।

(4) मानसून की उत्पत्ति की अर्वाचीन अवधारणा – गत वर्षों मे दक्षिण–पश्चिमी मानसून की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पन्त, राममूर्ति जम्बुनाथम तथा रामस्वामी ने भूमध्य रेखा पर दक्षिण से उत्तर को वायुगमन की व्याख्या की है। अनन्त कृष्णन ने भी बताया है कि क्षोभ मण्डल (Troposphere) में पछुआ हवा की प्रबलता एवं कमजोरी का ऊपरी क्षोभ–मण्डल की पूर्वी हवा से कोई सम्बन्ध नहीं है। कृष्णन के मतानुसार दक्षिण–पश्चिमी मानसून की उत्पत्ति के पूर्व ही उत्तरी भारत में 20° से 50° अक्षांश के मध्य ऊपरी क्षोभ–मण्डल में एक अर्द्ध–उष्णकटिबन्धीय चक्रवात उपस्थित रहता है। अतः मानसून की उत्पत्ति में 5–6 सप्ताह का समय लग जाता है। जब मानसूनी पवनें चलनें लगती है तो यह अर्द्ध–उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात 20 से 40 उत्तरी अक्षांश के मध्य और विकीरण अधिक होने से मानसूनी पवनों के साथ तापी संरचना के कारण मई से जुलाई तक वायुमण्डल में इस अर्द्ध–उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात का विस्तार उत्तर की ओर रहता है। **कोटेश्वरम** ने प्रथमतः सन् 1958 में प्रमाणित किया कि उष्ण–कटिबन्धीय एशिया एवं अफ्रिका पर पूर्वी हवा भारतीय दक्षिण–पश्चिमी मानसून के ऊपर

स्थित है। उष्ण–कटिबन्धीय पूर्वी जेट हवा तिब्बत पठार के तापीय प्रवाह से उत्पन्न होती है और दक्षिण–पश्चिमी मानसून की देशान्तरीय परिसंचरण में निम्न स्तर की निवर्तमान हवा है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.26: मानसून की उत्पत्ति का अर्वाचीन सिद्धान्त

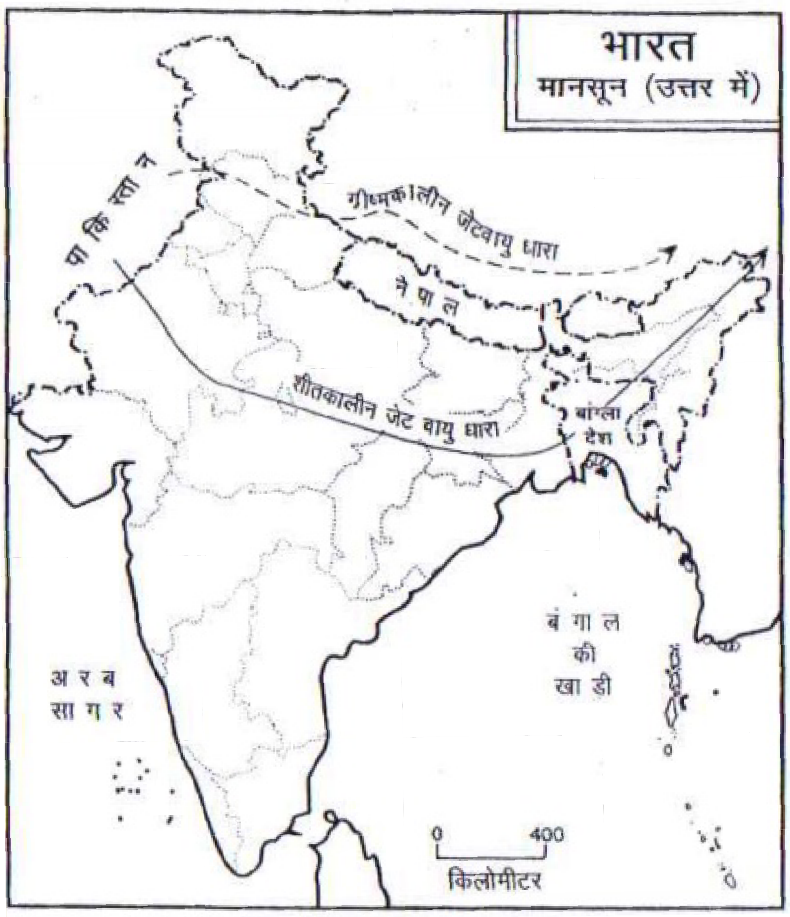
रमण एवं रामनाथन की मान्यता है कि ऊपरी क्षोभ–मण्डल में पूर्वी पवनों का सबसे अधिक विकास अधिक वर्षा के समय से पहले की अपेक्षा उसके बाद में ज्ञात किया जा सकता है। इसके अनुसार अधिक मेघाच्छन्न होने से जो गुप्त ताप की मात्रा उत्पन्न होती है, इसके फलस्वरूप ऊपरी क्षोभ–मण्डल के ताप की विलेयता से यहाँ की वायु ऊपरी क्षोभ–मण्डल में परिवर्तन उत्पन्न करती है जिससे अधिक वर्षा होती है।

फ्लोन ने उष्ण–कटिबन्धीय जेट के सम्बन्ध में बहुत–से तथ्य एकत्र किये हैं। उन्होंने बताया है कि उत्तरी ग्रीष्म के महीनों में जेट पृथ्वी के आधे वृत्त में फैल जाती है। फ्लोन के मतानुसार जेट उत्तरी गोलार्द्ध की एक अनुपम दशा है। दक्षिणी गोलार्द्ध पर दक्षिणी ग्रीष्म में जेट का निर्बल रूप मिलता है जो एकरूपता को प्रदर्शित करता है।

रमन एवं रामनाथन ने तेज के निर्माण की विधि की व्याख्या की है कि पूर्वी हवा का अधिकतम रूप ऊपरी क्षोभ–मण्डल के भारत के ऊपर घोर वर्षा के पश्चात् बनता है। इससे प्रकट होता है कि वृष्टि से उपरी स्तर को सहयोग मिलता है। जिससे क्षोभ–मण्डल के संचालन में परिवर्तन आ जाता है। फ्लोन की राय में तिब्बत का ऊँचा पठार मध्य क्षोभ–मण्डल में उष्णता के स्रोत का कार्य करता है जिसमें यकायक शीतऋतु से ग्रीष्मऋतु के संचालन में परिवर्तन आ जाता है और मानसून का प्रस्फोट हो जाता है।

संक्षेप में, इस विचारधारा में मानसूनी पवनों के अन्तर्गत क्षोभ–मण्डल में स्थित उष्ण कटिबन्धीय पूर्वी **जेट** (T.E.J.) तथा अर्द्ध उष्ण–कटिबन्धीय पश्चिमी जेट को सम्मिलित किया जाता है जो वर्ष में एक निश्चित ऋतु में ही प्रभावित होती है। मानसूनी पवनों की उत्पत्ति क्षोभ–मण्डल में विकसित सामयिक आँधियों से सम्बन्धित मानी गयी है। क्षोभ–मण्डल की इन आँधियों के फलस्वरूप वायुमण्डल की वाष्प–युक्त पवनें एक दिशा में प्रवाहित होकर ऊपरी क्षोभ–मण्डल में पहुँचती है और अनेक दिशाओं में फैल जाती हैं और निम्न क्षोभ–मण्डल की पवनों का प्रवाह जेट स्ट्रीम का रूप धारण कर लेता है और यही अधिक ऊँचाई पर पहुँच कर धरातल पर वर्षा प्रदान करता है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.27: जेट वायुधारा (येन एवं येहि)

जेट स्ट्रीम की अवधारणा अर्वाचीन है जिसके अनुसार मानसूनी हवाएँ उच्च वायुमण्डलीय तीव्र वायु के जेट स्ट्रीम के कारण उत्पन्न होती हैं। जेट स्ट्रीम भी सामान्यतः हिमालय के उत्तर में रहती है और इसका रूप सर्पिल होता है। शीतऋतु में एशिया पर विस्तृत उच्च दाब की पश्चिमी जेट स्ट्रीम दक्षिण को खिसक आती है जिससे इसका एक भाग हिमालय के दक्षिण में आ जाता है।

इस जेट स्ट्रीम के उष्ण कटिबन्धीय सीमान्त पर पवन दक्षिण की ओर बहता है और समुद्र की ओर से आने वाले आर्द्र पवन के प्रवाह को अवरुद्ध कर देता है। इसके फलस्वरूप शीतकाल में शुष्क दशा उत्पन्न हो जाती है।

ग्रीष्म ऋतु में यह जेट स्ट्रीम सामान्य परिसंचरण के साथ ही हिमालय के उत्तर में खिसक जाती है जिससे उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र वायु ग्रीष्म मानसून के रूप में महाद्वीप के आन्तरिक भाग में प्रवेश कर जाती है। फलतः ग्रीष्म ऋतु में वर्षा होती है।

भारतीय जलवायु का अध्ययन

भारत की जलवायु पर दो बाहरी कारकों का प्रभाव पड़ता है। (1) उत्तर में स्थित हिमालय की उच्च पर्वतीय श्रेणियाँ भारत को मध्य एशिया से आने वाली शीतल हवाओं से बचाती है और एशिया के अन्य देशों की तुलना में भारत को शीत–ऋतु में अधिक ठण्डा नहीं होने देती है। इस कारण उत्तरी भारत की जलवायु महाद्वीपीय जलवायु (Continental Climate) हो जाती है। इस जलवायु की मुख्य विशेषताएँ स्थलीय पवनों

टिप्पणी

का चलना, वायु की शुष्कता, अधिक दैनिक एवं वार्षिक ताप–परिसर एवं न्यून वर्षा है। (2) दक्षिण की ओर हिन्द महासागर इसे उष्ण मानसूनी जलवायु (Tropical Monsoon) देता है। इस जलवायु की विशेषताएँ न्यून दैनिक ताप–परिसर एवं उसकी समानता, स्थलीय एवं जलीय पवनों का चलना, वायु में आर्द्रता एवं वर्षा का न्यूनाधिक रूप में सर्वत्र होना है। **ब्लैफोर्ड** ने भारतीय जलवायु की भिन्नताओं के विषय में लिखा है, 'हम भारत की जलवायुओं के विषय में कह सकते हैं, जलवायु के विषय में नहीं, क्योंकि इस विश्व में जलवायु की इतनी विषमताएँ नहीं मिलतीं जितनी अकेले भारत में हैं। '**मार्सडेन** के अनुसार, विश्व के समस्त **जलवायु** के स्वरूप भारत में पाये जाते हैं।'

भारत की जलवायु पर विषुवत् रेखा की निकटता, कर्क रेखा का देश के मध्य भाग से गुजरना, कुछ की समुद–तल से अधिक ऊँचाई होना तथा दक्षिणी भारत का तीन ओर समुद्रों से घिरा होने का भी विशेष प्रभाव पड़ता है।

भारत की ऋतुएँ (Seasons in India)

भारत में मुख्य तीन ऋतुएँ मानी गयी हैं–

(1) शीत ऋतु–नवम्बर से फरवरी तक।

(2) ग्रीष्म ऋतु–मार्च से मध्य जून तक।

(3) वर्षा ऋतु–मध्य जून से अक्टूबर तक।

उपर्युक्त तीनों ऋतुओं पर मानसूनी प्रभाव व्यापक रूप में पड़ता है। इसलिए भारतीय ऋतु प्रेक्षण विभाग ने मानसून काल को आधार मानकर वर्ष के निम्नांकित विभाग किये हैं।

(क) उत्तर–पूर्वी या शीतकालीन या शुष्क मानसून का वातावरणः

(1) दिसम्बर, जनवरी, फरवरी–शीत ऋतु।

(2) मार्च से मध्य जून–शुष्क ग्रीष्म ऋतु।

(ख) दक्षिण पश्चिमी या ग्रीष्मकालीन या आर्द्र मानसून का वातावरणः

(1) मध्य जून से मध्य सितम्बर–वर्षा ऋतु।

(2) मध्य सितम्बर से दिसम्बर–शरदऋतु या मानसून का प्रत्यावर्तन काल।

(1) शीतकालीन मानसून

(1) शीत ऋतु (15 दिसम्बर से 15 मार्च) – 23 दिसम्बर को सूर्य की किरणें मकर रेखा पर लम्बवत् पड़ती हैं। इसलिये भारत में तापमान अपेक्षाकृत कम रहता है।

तापमान – उत्तर भारत का तापमान दक्षिण भारत के तापमान की अपेक्षा कम रहता है। उत्तरी मैदान का औसत तापमान लगभग 15° सेल्सियस होता है। **वाराणसी** का औसत तापमान 15° सेल्सियस रहता है। पंजाब का तापमान 13° तक गिर जाता है और दैनिक ताप–परिसर में भिन्नता मिलती है। पश्चिम बंगाल में 10° सेल्सियस तथा राजस्थान में 20° सेल्सियस ताप–परिसर मिलता है।

कश्मीर एवं हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र में तापमान और भी कम हो जाता है। **शिमला** तथा **दार्जिलिंग** में जनवरी के महिने में 5° सेल्सियस तापमान पाया जाता

टिप्पणी

है। उत्तर से दक्षिण की ओर तापमान बढ़ता जाता है। दक्षिण भारत में औसत तापमान 25° सेल्सियस के लगभग रहता है। **चेन्नई और बेंगलुरू** का जनवरी का औसत तापमान 25° सेल्सियस होता है। सबसे नीचा तापमान उत्तर–पश्चिमी भाग में पाया जाता है। समतापी रेखाएँ पूरब–पश्चिम दिशा में पाई जाती हैं। पश्चिमी घाटी की पहाड़ियों पर तापमान कभी–कभी 16° सेल्सियस से भी नीचे पहुँच जाता है। भारत में जनवरी मास के औसत तापमान का विवरण निम्न प्रकार है–

उत्तरी भारत	दक्षिणी भारत
न्यूनतम तापमान 15° सेल्सियस	न्यूनतम तापमान 21° सेल्सियस
अधिकतम तापमान 19° सेल्सियस	अधिकतम तापमान 24° सेल्सियस

सारणी क्र. 1.3:

भारत के प्रमुख नगरों का औसत तापमान (सेल्सियस में)

लेह	8°	अमृतसर	10°	दार्जिलिंग	5°
पटना	18°	कोलकाता	19°	दिल्ली	13°
इलाहाबाद	16°	वाराणसी	16°	नागपुर	21°
बीकानेर	15°	जोधपुर	17°	मुम्बई	24°
बेंगलुरू	17°	तिरुवनन्तपुरम्	16°	चेन्नई	25°

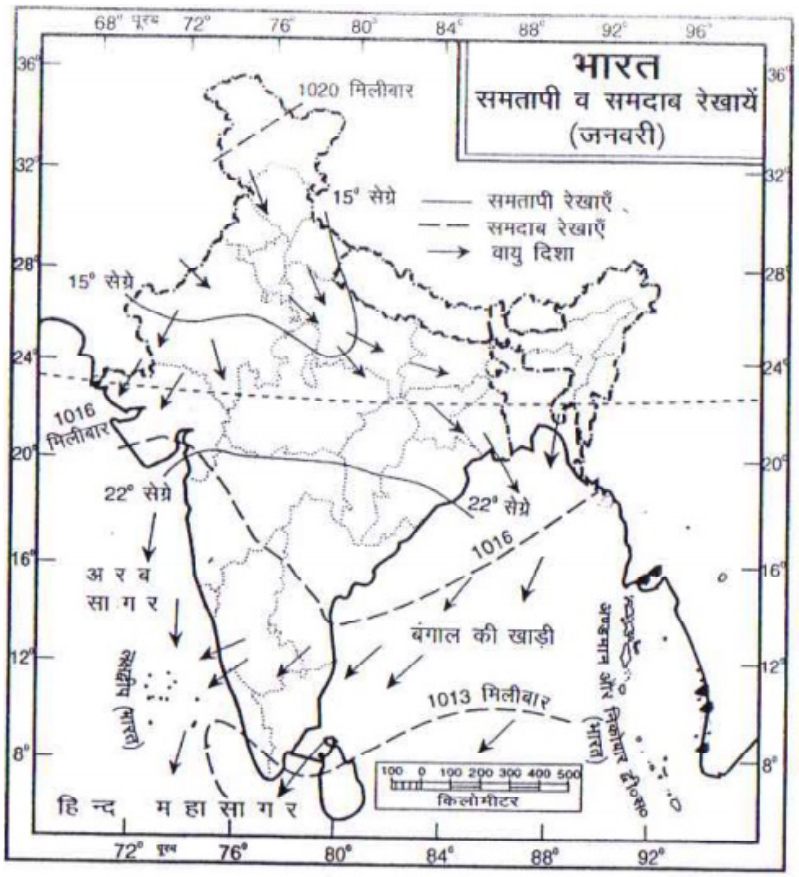
22° सेल्सियस की समतापी रेखा ताप्ती नदी की घाटी से महानदी के डेल्टाई भाग से होकर गुजरती है, जिसके उत्तर में तापमान क्रमशः कम तथा दक्षिण में क्रमशः बढ़ता है।

उत्तर भारत में प्रायः रात्रि में पाला पड़ता है किन्तु दक्षिणी भारत में पाला नहीं पड़ता है। कश्मीर के **द्रास** स्थान का न्यूनतम तापमान –9° सेल्सियस तक पहुँच जाता है। पश्चिमी राजस्थान में कई बार तापमान हिमांक बिन्दु . सेल्सियस से भी नीचे पहुँच जाता है। जनवरी की समदाब रेखाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उत्तर–पश्चिमी भाग में दक्षिण–पूर्वी भाग की अपेक्षा वायुदाब अधिक है। दक्षिण में 1008 मिलीबार की समताप रेखा है तो उत्तर में कश्मीर क्षेत्र में 1018 मिलीबार की समदाब रेखा।

वायुदाब – शीतऋतु में सम्पूर्ण एशिया महाद्वीप इतना ठण्डा हो जाता है कि उस पर अधिक दाब रहता है और इनके मुख्य केन्द्र दो हैं। (1) सायबेरिया में बेकाल झील के पास, (2) पाकिस्तान में पेशावर के समीप।

इसी समय दक्षिणी समुद्री क्षेत्र में अल्प दाब क्षेत्र की प्रधानता रहती है। हिन्द महासागर में भूमध्य रेखा के निकट समुद्र का जल गर्म रहता है और इस क्षेत्र में अल्प दाब का क्षेत्र स्थापित हो जाता है। इसलिये हवाएँ उच्च दाब की ओर से अल्प दाब क्षेत्र की और चलने लगती हैं। इस स्थिति के कारण उत्तरी भारत की हवाएँ दक्षिण एवं दक्षिण–पूरब की ओर चलने लगती हैं। **जो फेरल** के नियम के अनुसार बंगाल की खाड़ी में उत्तर–पूर्वी मानसून का रूप धारण कर लेती है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.28: भारत की जनवरी की समतापी एवं समदाब रेखाएँ तथा हवाएँ

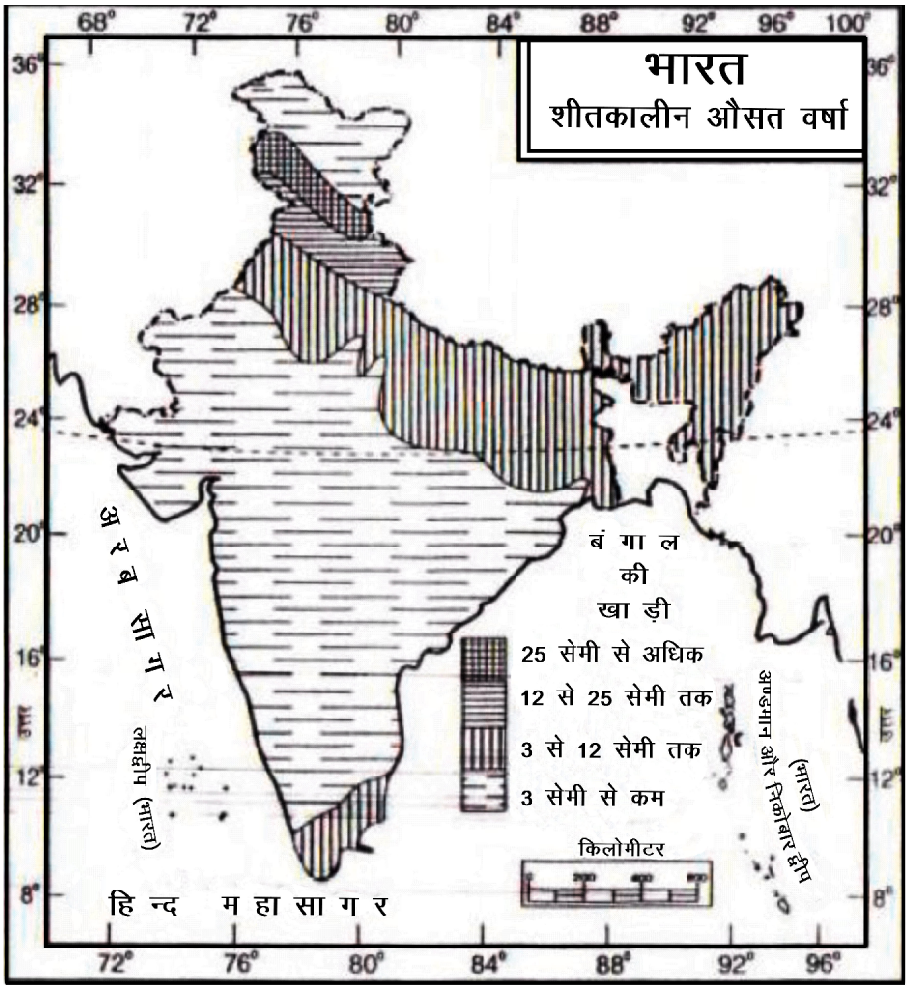
कुछ विद्वानों का विश्वास था कि, बेकाल झील के पास वाले उच्च दाब क्षेत्र से भारतीय हवाएँ प्रभावित होती हैं, किन्तु ऐसा सोचना ठीक नही है, क्योंकि ये हवाएँ उच्च हिमालय पर्वतीय श्रेणियों को पार कर दक्षिण में प्रवेश नहीं कर सकती हैं। इसलिए यह निश्चित है कि भारत की हवाएँ पाकिस्तान स्थित उच्च दाब क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। इस पवन को **शीतकालीन मानसून** की संज्ञा दी जाती है। उत्तर भारत में ये हवाएँ अत्यधिक मंद गति से चलती है। इनकी औसत गति लगभग 3 से 5 किमी. प्रति घण्टा होती है। इन हवाओं का रुख धरातल के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। गंगा–यमुना के मैदान में इनकी दिशा उत्तर–पश्चिमी या पश्चिमी होती है और बंगाल की खाड़ी में उत्तर–पूर्वी। ये थलीय हवाएँ हैं, अतः शुष्क होती हैं। जब ये हवाएँ बंगाल की खाड़ी को पार कर कोरोमण्डल तट पर पहुँचती है, तो बंगाल की खाड़ी में नमी ग्रहण कर लेने के कारण भारत के पूर्वी तटीय भाग में पानी बरसाती हैं। ये उत्तर–पूर्वी हवाओं से मिल जाती हैं।

एक पंक्ति में यदि शीतकालीन वातावरण का उल्लेख करना हो तो, **सी. डब्लू. बी. नारमण्ड** के अनुसार कह सकते हैं, 'न्यूनतम तापमान, हल्की उत्तरी वायु, स्वच्छ आकाश, शुष्क मौसम, कम आर्द्र और धीमी चलने वाली हवाएँ मौसम को सुहावना बना देती हैं।'

टिप्पणी

वर्षा – इन सामान्य परिस्थितियों में परिवर्तन भी देखने को मिलता है। उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में चलने वाले प्रतिचक्रवात समय–समय पर चक्रवातों के प्रादुर्भाव से प्रभावहीन हो जाते हैं। साधारणतया ये चक्रवात भूमध्यसागर या कभी–कभी अटलांटिक से चलना प्रारम्भ करते हैं। शीतकालीन चक्रवातों में प्रायः दस में से नौ इस प्रकार के होते हैं जो ईरान, अफगानिस्तान पर होते हुए भारत में प्रवेश करते है। **एस.एल. मालूरकर** के अनुसार ये रूमसागरीय चक्रवात नहीं, बल्कि इनके सहायक गौण **अवदाब** हैं जो ओमान की खाड़ी में उत्पन्न होते हैं। इनकी गति पूरब की ओर होती है। 21° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण क्षेत्र प्रायः इन चक्रवातों से अप्रभावित रहते हैं। कुछ विद्वान इन चक्रवातों का जन्म पश्चिमी हिमालय प्रदेश (कश्मीर की घाटी) में होने की बात करते हैं। इनके उत्पत्ति का विषय अभी विवादपूर्ण है, लेकिन यह देखने में आता है कि ये चक्रवात यूरोपीय चक्रवातों से मिलते–जुलते हैं, लेकिन उतने प्रबल नहीं होते है। इन चक्रवातों की दिशा हिमालय श्रेणी द्वारा निर्धारित पूरब की ओर होती है। ये उत्तरी मैदान पर होते हुए, असम तक पहुँच सकते हैं। ये बहुत कमजोर होते हैं।

इस ऋतु में आर्द्रता में भी कमी आ जाती है। गुजरात, पश्चिमी–दक्षिणी पठार तथा दक्षिण–पश्चिमी राजस्थान में आर्द्रता 40 से 50 प्रतिशत तक रहती है। मरुस्थलों में आर्द्रता कई स्थलों पर शून्य प्रतिशत तक मिलती है।



चित्र क्र. 1.29: भारत की शीतकालीन औसत वर्षा

टिप्पणी

ऐसे चक्रवातों से पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में 50 मिमी. से 250 मिमी. तक वर्षा हो जाती है। इस वर्षा को **'महावट'** कहते हैं, क्योंकि यह मुख्यतः माघ महीने में होती है। जैसे–जैसे ये चक्रवात गंगा–घाटी में बढ़ते जाते हैं, वैसे ही इनसे प्राप्त वर्षा की मात्रा भी कम होती है। यद्यपि यह वर्षा मात्रा में कम होती है, परन्तु रबी की फसलों के लिए अत्यधिक हितकर होती है। इन चक्रवातों से होने वाली हिम–वृष्टि उनके भीतर उपस्थित नमी पर निर्भर करती है। ऐसे चक्रवातों का मार्ग **विषुवत्रेखीय शान्त पेटी** (Doldrum) द्वारा निर्धारित होता है। जब शान्त पेटी अधिक उत्तर की और होती है तब चक्रवातों का मार्ग उत्तर की ओर अधिक होता है। जब शान्त पेटी अधिक दक्षिण की ओर स्थित है, तब चक्रवातों का मार्ग दक्षिण की ओर अधिक होता है। ऐसी अवस्था में भीषण हिम–वृष्टि होती है। हिम–वृष्टि हो जाने से मौसम में ठण्डक की वृद्धि होती है।

इन चक्रवातों के भारत में पश्चिमी तूफान कहते हैं। इनके कारण तापमान में पर्याप्त परिवर्तन आ जाता है और कुछ गर्मी प्रतीत होती है। जब इनका प्रभाव समाप्त होने लगता है, तो तापमान गिर जाता है और पाले के मौसम का अनुभव होने लगता है। इनके समाप्त हो जाने पर उत्तर–पश्चिमी भारत में अधिकतर शीत लहरें चलती हैं और कड़ी सर्दी पड़ती है। तापमान 4 सेल्सियस से भी प्रायः कम हो जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि इन चक्रकार हवाओं में हिमालय की शीत वायु खिंच आती है, जिससे मैदान में कठोर सर्दी का अनुभव होने लगता है। कई बार इन तूफानों से ओले भी पड़ते हैं, जिससे फसल को हानि पहुँचती है। इन तूफानों के कारण हिमालय पर्वत पर हिमपात होता है। बसन्त के दिन आ जाने से शिवालिक पहाड़ियों पर हिमपात नहीं होता है। प्रायः स्वच्छ आकाश, शुष्क मौसम तथा मन्द वायु मौसम को सुहावना बना देती है।

(2) शुष्क ग्रीष्मऋतु (15 मार्च से 15 जून) – शुष्क ग्रीष्मऋतु का प्रारम्भ मार्च से होता है। सूर्य उत्तरायण हो जाता है, क्योंकि 21 मार्च को सूर्य की किरणें विषुवत् रेखा पर लग्बवत् पड़ने के बाद, सूर्य उत्तर की ओर बढ़ने लगता है। चूँकि भारत उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित है, जिसके फलस्वरूप भारत का तापमान बढ़ने लगता है। तापमान की वृद्धि क्रमशः होती जाती है। मई के महिने में सबसे अधिक तापमान पाया जाता है। ग्रीष्मकालीन समतापी रेखाएँ शीतऋतु की समतापी रेखाओं से सर्वथा भिन्न हैं। मध्य प्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश में तापमान लगभग 35° सेल्सियस तक रहता है। उत्तरी मैदानी भाग में तापमान 32° से 35° सेल्सियस तक रहता है।

पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान के अधिकांश भागों में औसत तापमान 38° सेल्सियस से भी अधिक हो जाता है। आन्तरिक भागों में दैनिक ताप–परिसर अधिक रहता है, जो कभी कभी 6° सेल्सियस से भी अधिक पहुँच जाता है, किन्तु तटीय प्रदेशों में दैनिक ताप–परिसर 2° सेल्सियस तक ही पहुँच पाता है। इस प्रकार मई–जून में भीषण गर्मी पड़ती है।

उत्तर भारत में दक्षिणी भारत की अपेक्षा अधिक गर्मी पड़ती है। राजस्थान स्थित गंगानगर का उच्चतम तापमान 50° सेल्सियस तक पहुँच जाता है, जो भारत का सबसे गर्म स्थान है। पश्चिमी समुद्र तटीय क्षेत्र का तापमान प्रायः 27° से 29° सेल्सियस तक रहता है। समुद्र के निकट होने के कारण दैनिक ताप–परिसर भी अपेक्षाकृत कम हो

टिप्पणी

जाता है। इस प्रकार इस मौसम में तापमान दक्षिण से उत्तर और पूरब से पश्चिम को बढ़ता जाता है।

भारत में तापमान का दैनिक वितरण मौसमी वितरण से भिन्न रहता है। समुद्र–तट के पास औसत दैनिक ताप–परिसर 2° सेल्सियस से भी कम होता है। उत्तर भारत में औसत वार्षिक ताप–परिसर 16° सेल्सियस पड़ता है।

मालाबार तट पर वार्षिक ताप–परिसर 3° सेल्सियस रहता है किन्तु दक्षिण–पूर्वी भारत में यह 8° सेल्सियस और पंजाब में लगभग 22° सेल्सियस तक हो जाता है। उत्तर–पश्चिमी भारत का दैनिक ताप–परिसर घटकर 8° से 6° सेल्सियस तक रह जाता है। मार्च एवं अप्रैल में यह ताप–परिसर स्पष्ट प्रतीत होता है। इसी प्रकार अक्टूबर में तापमान अचानक बदल जाता है।

सारणी क्र. 1.4:

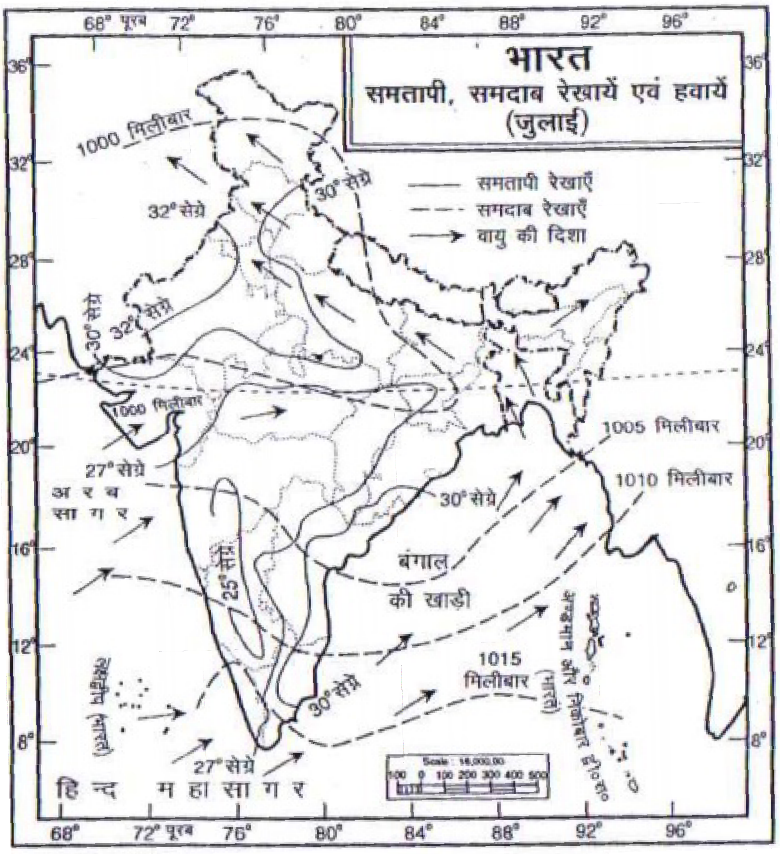
भारत के प्रमुख नगरों का औसत तापमान (सेल्सियस) ग्रीष्मऋतु

लेह	17°	अमृतसर	22°	दार्जिलिंग	19°
पटना	28°	कोलकत्ता	28°	दिल्ली	33°
इलाहाबाद	29°	वाराणसी	30°	नागपुर	30°
बीकानेर	32°	जोधपुर	32°	मुम्बई	28°
बेंगलुरू	22°	तिरुवनन्तपुरम्	25°	चेन्नई	31°

वायुदाब – ग्रीष्मऋतु में उत्तर में अधिक गर्मी पडने के कारण अल्प दाब क्षेत्र की रचना होती है। पंजाब के पश्चिमी भाग में वायुदाब अत्याधिक कम होता है। इस भाग में 996 मिलीबार की समदाब रेखा तथा दक्षिण भारत में 1010 मीलीबार की समदाब रेखा रहती है। इस समय हिन्द महासागर पर अधिक वायुदाब होता है। भूमध्यरेखीय अल्पदाब के क्षेत्र लुप्त हो जाते हैं। पश्चिमी तट पर पश्चिम की ओर से तथा पूर्वी तट एवं पश्चिम बंगाल की ओर से हवाएँ तीव्र गति से चलने लगती है। समुद्र की ओर से आने के कारण इनमें जल का अंश होता है, जिससे इन प्रदेशों में साधारण वर्षा लगभग 125 मिमी. तक हो जाती है। इस प्रकार की वर्षा को दक्षिण भारत में **आम की बौछार** (Mango Shower) कहकर पुकारते हैं क्योंकि यह वर्षा आम फसल के लिए लाभदायक होती है। कहवा उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में इसको **फूलों की बौछार** (Blossom Shower) कहते हैं।

ग्रीष्म ऋतु में आकाश स्वच्छ रहता है। ग्रीष्म ऋतु का नीला आकाश हवाओं में उड़ने वाले धूल–कणों के कारण पीला रंग ग्रहण कर लेता है। हवाएँ तीव्र तथा धूल–धूसरित होती हैं। इन गर्म हवाओं को **'लू'** कहते हैं। यह **'लू'** कभी–कभी रात्रि तक चलती रहती है। 11 बजे दिन से 3 बजे दिन तक घर के बाहर निकलना तक कठिन हो जाता है। इस लू के प्रभाव से कितनो की मृत्यु तक हो जाती है । यह ऋतु मानसिक कार्य करने के भी उपयुक्त नहीं होती है। आपेक्षिक आर्द्रता अत्यन्त न्यून हो जाती है। वायु में नमी 1 प्रतिशत ही रह जाती है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 1.30: भारत में जुलाई की समतापी एवं समदाब रेखाएँ तथा वायु दिषा

वर्षा – इस ऋतु में चारों ओर धूल ही धूल दिखाई पड़ती है। कभी–कभी पीली आँधी आती है, जिसके कारण अँधेरा छा जाता है और दिन में रात्रि–सा दृश्य उपस्थित हो जाता है। ऐसी आँधियाँ राजस्थान, गंगा नदी की घाटी तथा हरियाणा में विशेष आती हैं जहाँ परस्पर दृश्यता बहुत कम हो जाती है। ये उत्तर–पूर्वी भारत में भी आती हैं। तूफानी हवाएँ पश्चिम की तरफ से आती हैं तथा दिन में रात्रि की अपेक्षा अधिक तीव्र होती हैं। रात्रि में इनकी दिशा परिवर्तनशील होती हैं। असम और पश्चिम बंगाल में दोपहर के बाद तेज हवा के साथ–साथ जल–वृष्टि भी होती है। समुद्र की निकटता तथा हवाओं का जल से थल की ओर चलना ही ऐसी वृष्टि का कारण है। ये हवाएँ थोड़े ही भाग पर आती हैं, अतः वर्षा की मात्रा कम होती है। ऐसी हवाओं को **काल बैसाखी** (Norwester) की संज्ञा दी गई है। ऐसे झंझावातों का जन्म साधारणतया निकटवर्ती समुद्रों से आई हुई नम हवा और ऊँचाई पर बहने वाली स्थलीय शुष्क हवा में मिलाप से होता है। ये तीव्र तूफान होते हैं। इनका वेग कभी–कभी 113 से 130 किमी. प्रति घण्टा होता है। कभी–कभी इनसे काफी देर तक वर्षा होती रहती है।

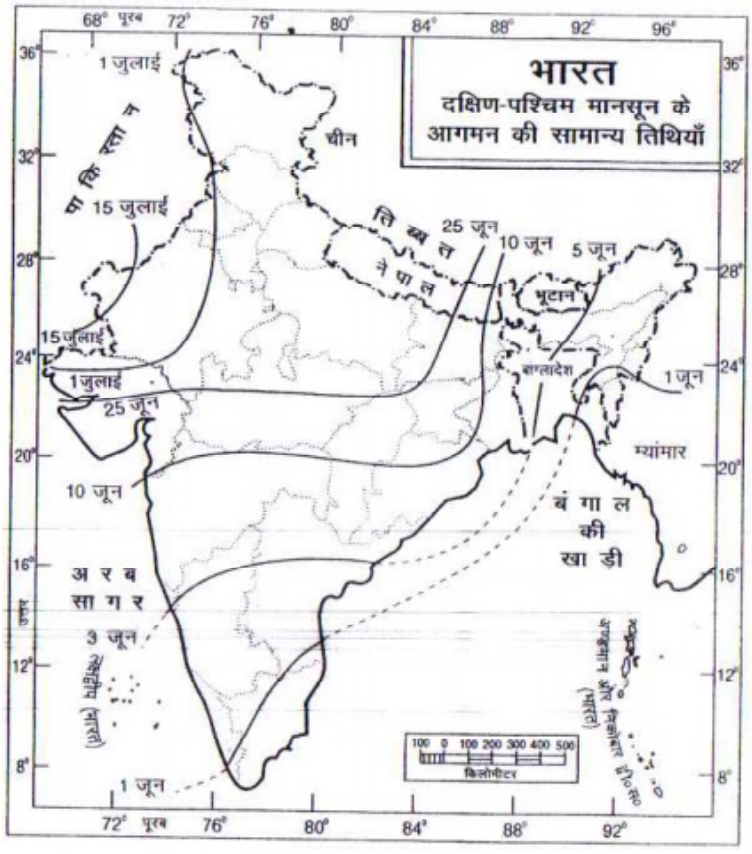
पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में बहुधा ओले गिरने वाले तूफान आते हैं। ये तूफान तीसरे पहर तथा शाम को अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं। मई के महीने में गंगा की मध्य घाटी में पछुआ हवाएँ चलती है, किन्तु रात्रि में हवा बिल्कुल बन्द हो जाती है, जिससे बेचैनी पैदा हो जाती है।

टिप्पणी

(2) ग्रीष्मकालीन मानसून

तापमान एवं वायुदाब – (1) वर्षा ऋतु (15 जून से 15 सितम्बर) – मध्य जून तक अत्यधिक तपन के कारण उत्तर–पश्चिमी भारत तथा पाकिस्तान में अल्प वायुदाब क्षेत्र बन जाता है। इस समय उत्तर–पश्चिमी भारत का वायुदाब 994 मिलीबार तथा दक्षिणी भारत में 1006 मिलीबार रहता है। इसी समय दक्षिणी गोलार्द्ध में उष्ण–कटिबन्धीय उच्चदाब क्षेत्र मलागासी के निकट तथा ऑस्ट्रेलिया के पश्चिमी तट के निकट पाये जाते हैं। **सर जॉन इलियट** के अनुसार ग्रीष्मऋतु में अरब सागर में वायुदाब अपेक्षाकृत अधिक रहता है। इसी समय विषुवत रेखा के समीप भूमध्यरेखीय अल्पदाब क्षेत्र रहता है। इन दोनों के कारण दक्षिण पूर्वी सन्मार्गी हवाएँ, जो विषुवत रेखा के दक्षिण में चलती हैं, उत्तर की ओर नहीं बढ़ पाती हैं।

मध्य जून तक अरब सागरीय उच्च वायुदाब क्षेत्र तथा भूमध्यरेखीय अल्पदाब क्षेत्र समाप्त हो जाते हैं। इस समय थार के मरुस्थल का अल्पदाब बहुत गहरा हो जाता है, इसलिए दक्षिणी गोलार्द्ध की दक्षिण–पूर्वी सन्मार्गी पवनें भूमध्य रेखा को पार करके तीव्र गति से उत्तर–पश्चिमी भारत तथा पाकिस्तान के अल्प वायुदाब क्षेत्र की और अग्रसर होती हैं। भूमध्यरेखा पार करने कर **फेरल के नियम** (Ferrel's Law) के अनुसार ये हवाएँ उत्तरी गोलार्ध के दायीं ओर मुड़ जाती हैं जिससे इनका रुख उत्तर–पूर्व की ओर हो जाता है। इन्हें **दक्षिण–पश्चिमी मानसून** कहकर पुकारते हैं।



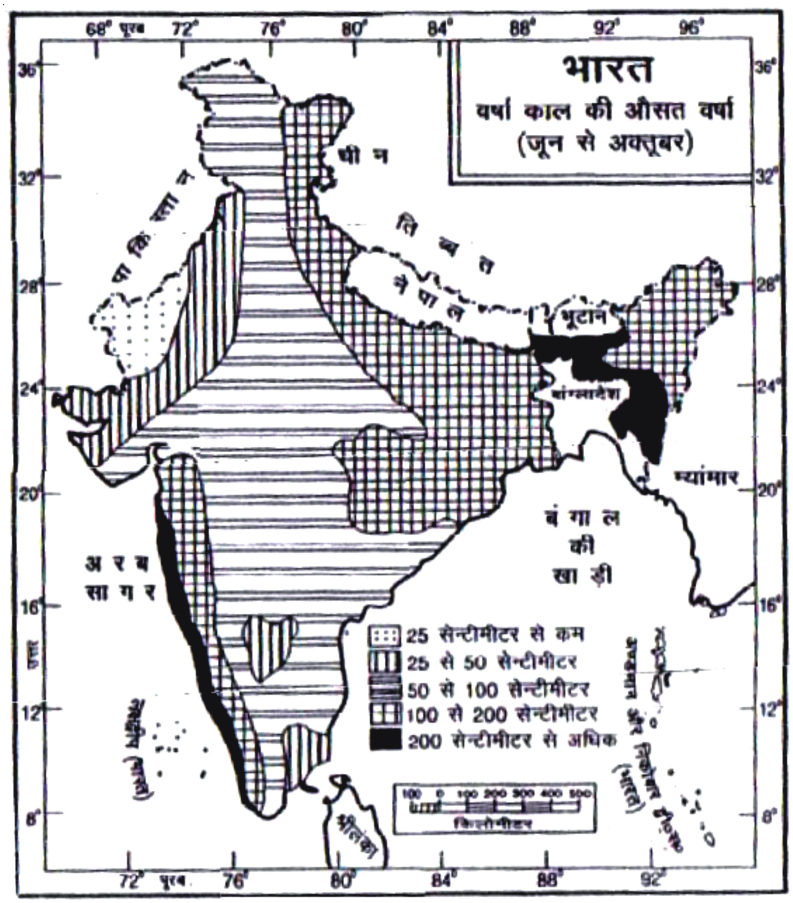
चित्र क्र. 1.31: भारत में दक्षिणी–पश्चिमी मानसून के आगमन की सामान्य तिथियाँ

टिप्पणी

दक्षिण भारत के पठार हिन्द महासागर में निकले भाग के कारण इन हवाओं की दो शाखाएँ हो जाती हैं – (1) अरब सागरीय शाखा (2) बंगाल की खाड़ी वाली शाखा। अरब सागर वाले मानसून की शाखा देश में पहले प्रवेश करती है और इसके 10 दिन बाद बंगाल की खाड़ी की शाखा प्रवेश करती है। इन्हीं हवाओं से गर्जन–तर्जन के साथ अचानक जल–वृष्टि प्रारम्भ होती है। इसको **मानसून विस्फोट** (Burst of Monsoon) कहते हैं।

वर्षा – ये हवाएँ पहले मालाबार तट पर पहुँचती हैं और पश्चिमी घाट से टकराकर बरस पड़ती हैं। ज्यों–ज्यों मानसून की वर्षा बढ़ने लगती है, त्यों–त्यों तापमान भी कम होने लगता है। जून तथा जुलाई में देश के अधिकांश भाग में तापमान में समानता पायी जाती है, केवल पश्चिमी राजस्थान का मरुस्थलीय प्रदेश तथा पर्वतीय भाग इसके अपवाद रहते हैं।

कभी–कभी लम्बे समय तक वर्षा का क्रम टूट जाता है, तो तापमान बढ़ जाता है। इस समय आर्द्रता अधिक रहती है। देश के अधिकांश प्रदेशों में आर्द्रता 80% से 90% तक रहती है। कई भागों में शत्–प्रतिशत् आर्द्रता हो जाती है। प्रातःकाल आर्द्रता अधिक रहती है, दोपहर को कम हो जाती है और सायं पुनः बढ़ जाती है। इस प्रकार तापमान के विपरीत क्रम में आर्द्रता घटती है।



चित्र क्र. 1.32: भारत में वर्षा काल की औसत वर्षा

मानसून विस्फोट (Burst of Monsoon) प्रतिवर्ष लगभग निश्चित दिनांक को ही प्रारम्भ होता है। यह ऊपरी वायुमण्डलीय दशा पर आधारित है। देश के विभिन्न

टिप्पणी

भागों में मानसूनी हवाओं के पहुँचने के समय भिन्न–भिन्न होते हैं। ये हवाएँ मालाबार तट पर औसतन 3 जून, महाराष्ट्र में 5 जून, मध्य प्रदेश में 10 जून, पश्चिम बंगाल में 15 जून, पूर्वी उत्तर प्रदेश में 25 जून, दिल्ली में 30 जून तथा पंजाब में 1 जुलाई को पहुँचती हैं। इन हवाओं के विभिन्न स्थानों पर पहुँचने की उपर्युक्त तिथियों में 3 सप्ताह तक का अन्तर पड़ जाता है। मुम्बई तट पर इन हवाओं की औसत गति 20 किमी. प्रति घण्टा रहती है, जिससे इनकी गति की तीव्रता का अनुमान लगाया जा सकता है। जब दक्षिण–पश्चिमी मानसून बड़ी तीव्रता से हिन्द महासागर से भारतीय स्थल खण्ड की ओर बढ़ता है तो तीव्र मेघगर्जन होता है तथा बिजली चमकती है। साथ ही वर्षा भी आरम्भ हो जाती है। इस स्थिति को 'मानसून का विस्फोट' कहते हैं।

मानसून की दो शाखाएँ हैं

(क) अरब सागरीय शाखा – दक्षिण–पश्चिमी मानसून की मुख्य अरब सागरीय शाखा हजारों किमी. समुद्र को पार करके पश्चिमी घाट से लगभग समकोण बनाती हुई चलती है। यह शाखा बहुत सशक्त होती हैं, लेकिन इसका वेग पश्चिमी घाट तथा पश्चिमी तटीय मैदानों में ही समाप्त हो जाता है। लगभग 1216 मीटर ऊँचे उठे हुए पश्चिमी घाट के पर्वत इन आर्द्र हवाओं के मार्ग में रुकावट डालते हैं। फलस्वरूप पश्चिमी तट पर लगभग 250 सेंमी. से भी अधिक वर्षा हो जाती है। मुम्बई में 190 सेंमी. तथा पश्चिमी घाट के उच्च भागों में 500 सेंमी. से भी अधिक वर्षा हो जाती है। इन हवाओं का प्रभाव मुम्बई तट के बहुत उत्तर तक नही पड़ पाता है। कच्छ में केवल 1.5 सेंमी. ही वर्षा हो पाती है। पश्चिमी घाट पार करनें पर इन हवाओं में जल बहुत कम रह जाता है। साथ ही साथ, ये हवाएँ पश्चिमी घाट पर्वत के पूर्वी ढालों पर नीचे उतरते समय अधिक गर्म हो जाती हैं, जिसके फलस्वरूप शुष्क हो जाती हैं। इसलिए पश्चिमी घाट पर्वत के पूर्वी ढाल पर पश्चिमी ढाल की अपेक्षा बहुत कम वर्षा हो पाती है। पश्चिमी तट पर स्थित मंगलौर में जब 292 सेंमी. वर्षा होती है, तो उसी अक्षांश पर स्थित बेंगलुरू में जो पठारी भाग के मध्य में स्थित है, केवल 50 सेंमी. ही वर्षा होती है। पूर्वी ढाल पर जुलाई के महिने में कहीं–कहीं केवल 1 सेंमी. ही वर्षा होती है, जबकि इसी माह में पश्चिमी ढाल पर 125 सेंमी. से भी अधिक वर्षा होती है। इस प्रकार दक्षिण के पठार का पूर्वी भाग वृष्टि–छाया (Rain Shadow) में पड़ जाता है। पूर्वी और पश्चिमी ढालों की वर्षा की मात्रा में अन्तर स्पष्ट हो जाता है। पूरब में चेन्नई तक पहुँचने पर 38 सेंमी. से भी कम वर्षा होती है।

इस मानसून की दूसरी शाखा नर्मदा–ताप्ती नदियों की घटियों से होकर छोटा नागपुर के पठार (झारखंड) तक पहुँच जाती है तथा वर्षा करती है। **नागपुर** में इन हवाओं से 90 सेंमी. तक वर्षा होती है। इसी की तीसरी शाखा कच्छ, राजस्थान और हरियाणा को पार कर हिमालय तक पहुँचती है और वहाँ ठण्डी होकर थोड़ी वर्षा करती है। राजस्थान और हरियाणा में इसके मार्ग को अवरुद्ध करने वाला कोई ऊँचा पर्वत नहीं है, इसलिए वहाँ इसके द्वारा वर्षा नाममात्र की ही हो पाती है। अधिक शुष्क एवं गर्म रेतीले धरातल के कारण वाष्प धारण की इनकी शक्ति अधिक हो जाती है। राजस्थान की अरावली पहाड़ियाँ इन हवाओं के रुख के समान्तर स्थित हैं इसलिए ये धरातलीय रुकावट पैदा करने में असमर्थ हैं। यदि इस हवा को कोई अवरोध मिलता तो कदाचित राजस्थान मरुस्थल न होता था। **के.जी. केण्ड्रयू** तथा **एल.डी. स्ट्राम्प**

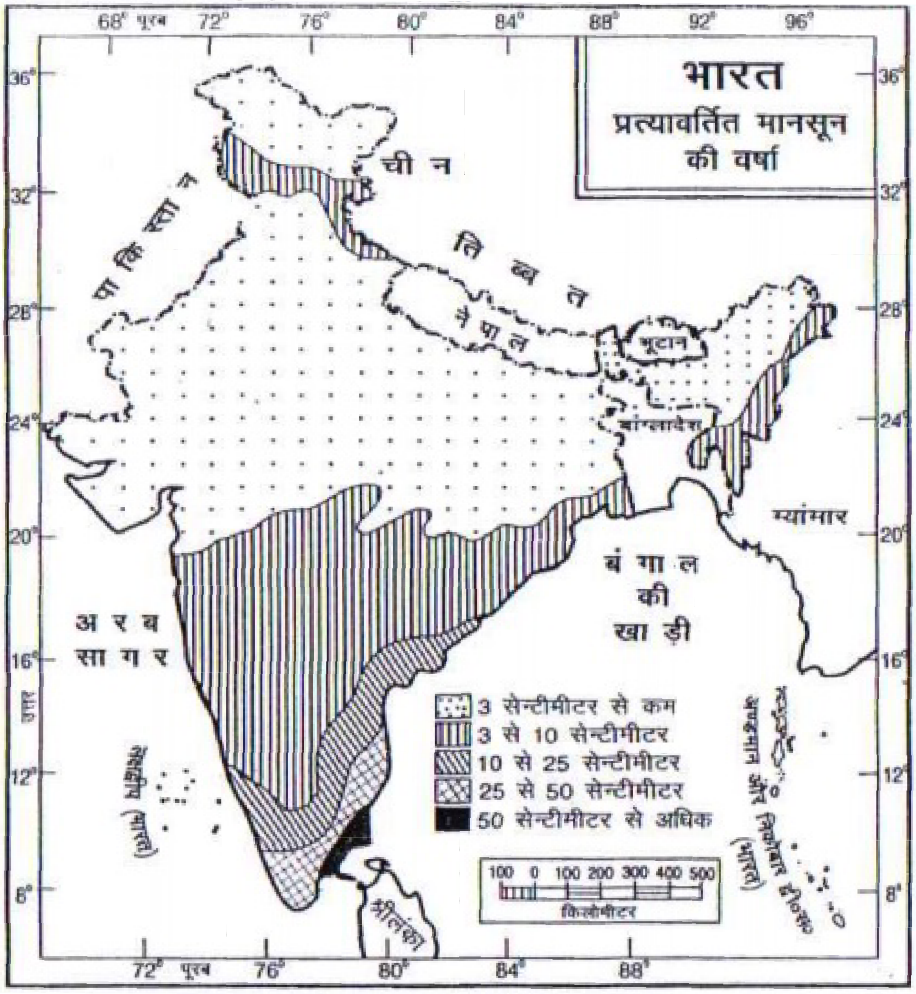
का कथन है कि ये हवाएँ सौराष्ट्र में प्रवेश ही नहीं करती हैं। उनके मतानुसार राजस्थान के शुष्क होने के कारण निम्न हैं, जैसे –

टिप्पणी

(1) बलूचिस्तान की ओर से आने वाली हवाएँ शुष्क होती हैं।

(2) यह भाग कुछ ऊपर उठ रहा है, जिससे पूर्व काल में बहने वाली नदियाँ गंगा या सिन्धु की सहायक नदियाँ बन गयी।

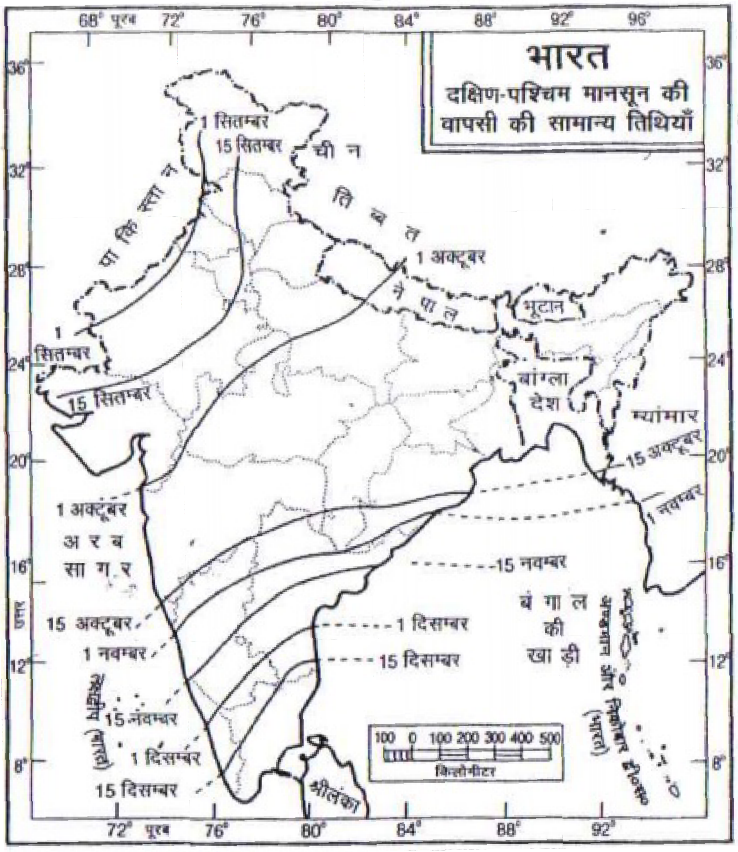
(3) बंगाल की खाड़ी वाला मानसून यहाँ पहुँचते–पहुँचते एकदम शुष्क हो जाता है, इसलिए वर्षा नहीं होती है। राजस्थान के पश्चिमी भाग में कभी–कभी वर्षा ऋतु में भी पानी नहीं बरसता है। जब वर्षा होती है तो फुहार के रूप में। कभी–कभी बिजली की कड़कड़ाहट के साथ दोपहर के पश्चात् अल्पकाल में लगभग 5 सेंमी. वर्षा हो जाती है और छोटी नदियों में बाढ़े आ जाती हैं। खम्भात की खाड़ी में उत्तर–पश्चिम की ओर वर्षा क्रमशः कम होती जाती है। उस्मानाबाद में 76 सेंमी. वर्षा होती है और **भुज** में केवल 32 सेंमी.। थार मरुस्थल में औसत वार्षिक वर्षा 10 सेंमी. है। अरावली पर्वत श्रेणी में 127 सेंमी. वर्षा हो जाती है।



चित्र क्र. 1.33: भारत में प्रत्यावर्तित मानसून की वर्षा

टिप्पणी

(ख) बंगाल की खाड़ी वाली शाखा – बंगाल की खाड़ी वाली मानसून की भी दो शाखाएँ हो जाती हैं। एक इरावदी नदी की घाटी में प्रवेश करके म्यांमार के अराकान व टनासेरिम पर्वतों से उतनी ही तीव्रता से टकराती है, जितनी अरब सागर वाली पश्चिमी घाट के पर्वत से। इसलिए यहाँ अधिक वर्षा होती है। बंगाल की खाड़ी की मानसून की दूसरी शाखा पश्चिम बंगाल व असम राज्यों में प्रवेश करती है। पूर्वी हिमालय से टकराकर इन हवाओं से अत्याधिक वर्षा होती है। मेघालय स्थित **मासिनराम** स्थान में संसार में सबसे अधिक वर्षा होती है। यहाँ से **महादेक** तक जो लगभग 5 किमी. दूर है, जाने पर समुद्र से 912 मीटर की ऊँचाई प्राप्त होती है। 'महादेक' से चेरापूँजी 6 किमी. दूर है और बीच में ढाल भी कम है। इस प्रकार 11 किमी. की दूरी में धरातलीय ऊँचाई का अन्तर लगभग 1292 मीटर हो जाता है। इसलिए जब मानसूनी हवाएँ इसको पार कर आगे क्षेत्र मे प्रवेश करती है, तो उन्हें तेजी से ऊपर उठना पड़ता है। फलस्वरूप घनघोर वर्षा होती है। इस कीपाकार क्षेत्र से निकलते–निकलते हवाओं में पानी की मात्रा कम हो जाती है, जिसके फलस्वरूप शिलांग में, जो चेरापूँजी से केवल 40 किमी. दूर है, केवल 213 सेंमी. वार्षिक वर्षा प्राप्त होती है।



चित्र क्र. 1.34: भारत में दक्षिण पश्चिमी मानसून की वापसी की सामान्य स्थिति

भारत में बंगाल की खाड़ी के मानसून की प्रवेश करने वाली शाखा भी दो भागों में विभक्त हो जाती हैं – एक ब्रह्मपुत्र की घाटी में पूरब की ओर तथा दूसरी, पश्चिम की ओर मुड़कर गंगा की घाट में होती हुई, हिमालय पर्वत की श्रेणियों द्वारा निर्धारित दिशा में पश्चिमी छोर तक पहुँचती है, ब्रह्मपुत्र घाटी में **सिलहट** और **सिलचर** में क्रमशः

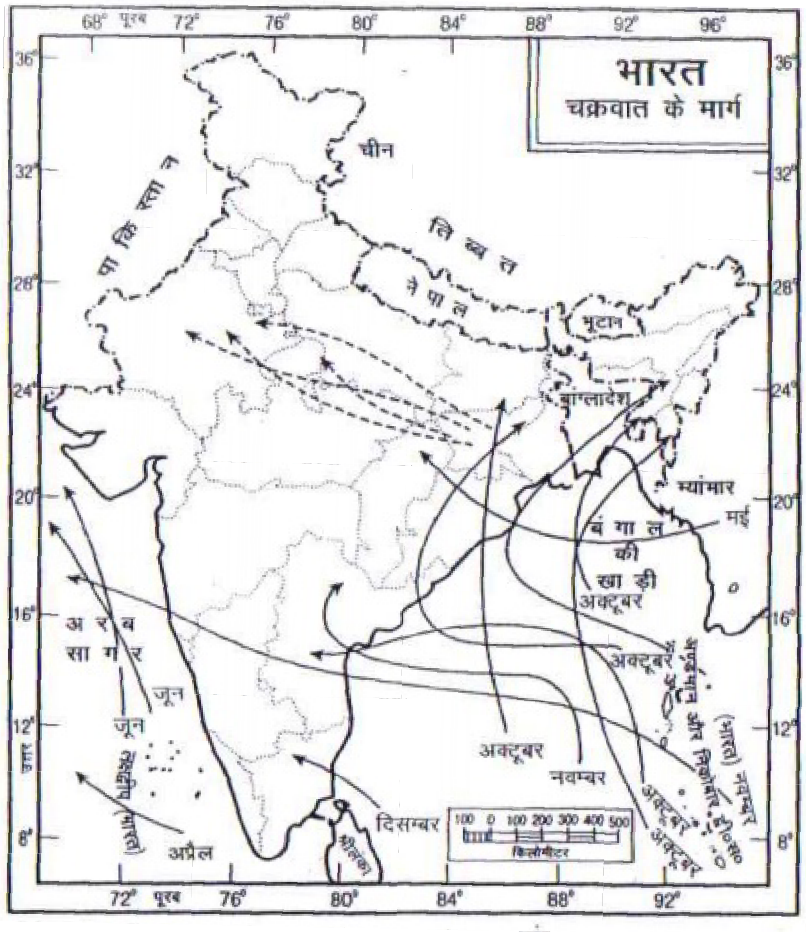
टिप्पणी

392 सेंमी. और 379 सेंमी. वर्षा होती है। **गोआलपाड़ा** मे 287 तथा **गुवाहाटी** में 120 सेंमी. वर्षा होती है।

पश्चिम की ओर जाने वाली मानसूनी हवाएँ ज्यो–ज्यों पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है, त्यो–त्यों नमी की मात्रा कम होती जाती है। अतः वर्षा की मात्रा में भी कमी आती जाती है। जून से सितम्बर तक **कोलकाता** में 157 सेंमी., **पटना** में 116 सेंमी. **इलाहाबाद** में 85 सेंमी., **आगरा** में 60 सेंमी. तथा **दिल्ली** में 58 सेंमी. औसत वर्षा होती है। **पश्चिमी पंजाब** एवं **राजस्थान** में 50 सेंमी. से कम वर्षा होती है।

हिमालय पर्वत के उँचे भागों में मैदानी भाग की अपेक्षा वर्षा अधिक होती है। आगरा में मानसून काल में जब 57 सेमी. वर्षा होती है, तो **नैनीताल** में 243 सेमी. लेकिन इन पर्वतीय भागों में ज्यों–ज्यों पश्चिम की ओर बढ़ते हैं, त्यों–त्यों। वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। **दार्जिलिंग** में 294 सेंमी. **मसूरी** में 233 सेंमी. तथा **सिमला** मं 153 सेंमी वर्षा होती है। दक्षिण की तरफ दूर क्रमशः वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। पश्चिमी **पंजाब** एवं **राजस्थान** तक पहुँचते–पहुँचते हवाओं की नमी समाप्त हो जाती है, इसलिए इन राज्यों में बहुत कम वर्षा होती है।

उत्तरी मैदान में पूरब से पश्चिम की ओर वर्षा की मात्रा घटती जाती है। असम में औसत वर्षा 200 सेमी. पश्चिम बंगाल, बिहार तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश में 100 से 200 सेमी. और पश्चिमी उत्तरप्रदेश तथा पंजाब में 50 से 100 सेमी. रह जाती है।



चित्र क्र. 1.35: भारत के चक्रवात के मार्ग

टिप्पणी

गंगा और नर्मदा घाटी के बीच में **उड़ीसा** से अरावली तक फैले हुए क्षेत्र में बंगाल की खाड़ी से तथा पश्चिमी दिशा में चलने वाले चक्रवातों से वर्षा होती है। ये चक्रवात स्थानीय तापमान के कारण पैदा होते हैं, कभी–कभी इन चक्रवातों से काफी वर्षा होती है। यह वर्षा मध्य प्रदेश की चावल की कृषि के लिए बहुत उपयोगी है।

इस समय समुद्री क्षेत्रों में वायुदाब अधिक होता है और स्थलीय भागों में कम। दक्षिण भारत के सुदूर दक्षिण में 1006 मिलीबार तथा उत्तर भारत के पश्चिमोत्तर भाग में 994 मिलीबार की समदाब रेखा होती है। वर्षा ऋतु के आरम्भ में ही चारों ओर हरियाली छा जाती है। तापमान धीरे–धीरे कम होने लगता है।

(ii) शरद ऋतु (15 सितम्बर से 15 दिसम्बर) – शरद ऋतु या मानसून का प्रत्यावर्तन काल मध्य सितम्बर से प्रारंभ होता है। तापमान धीरे–धीरे कम होने लगता है जिसके फलस्वरूप उत्तर–पश्चिमी भाग में वायुदाब में वृद्धि हो जाती है। उत्तर–पश्चिमी भाग में जब वायुदाब 1016 मिलीबार हो जाता है, तो दक्षिण में केरल तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र में 1013 मिलीबार (जुलाई की समदाब रेखाओं से तुलना कीजिए) रहता है।

बंगाल की खाड़ी में दबाव कम होने लगता है। पश्चिमोत्तर में वायुदाब की वृद्धि के कारण अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी से हवाएँ देश के काफी भीतर नहीं पहुँच पाती हैं और लौटना प्रारम्भ कर देती हैं। इन हवाओं के वापसी काल में बहुधा चक्रवात एवं स्थानीय तूफान आते हैं। इनसे कम वर्षा होती है। इस समय उत्तर भारत में आर्द्रता कम हो जाती है। कोरोमण्डल तट पर आर्द्रता 90% पहुँच जाती है। नवम्बर के अन्त तक पश्चिमी चक्रवातों के कारण उत्तर भारत में आर्द्रता का प्रतिशत 60 से 75 तक हो जाता है। केवल तामिलनाडु तट पर अक्टूबर और नवम्बर में लगभग 62 सेंमी. वर्षा होती है। यह वर्षा लौटती हुई मानसून हवाओं के द्वारा बंगाल की खाड़ी पार करने के पश्चात् आर्द्रता प्राप्त कर लेने से तथा बंगाल की खाड़ी में पैदा होने वाले चक्रवातों से होती है। यह जल कृषि–कार्यों के लिए अत्याधिक लाभप्रद होता है। शुष्क मौसम में इसका उपयोग करने के लिए इसे तालाबों में एकत्र कर लिया जाता है।

मानसून की वापसी सर्वप्रथम उन भागों में होती है जहाँ यह सबसे बाद मे पहुँचा होता है तथा जहाँ मानसून सर्वप्रथम पहुँचता है वहाँ सबसे बाद में लौटता है।

शरद ऋतु में उष्ण–कटिबन्धीय चक्रवात भी आते है। ये बंगाल की खाड़ी में अण्डमान–निकोबार द्वीपसमूह के पास उत्पन्न होकर पश्चिम या उत्तर–पश्चिम की ओर अग्रसर होते हैं। स्थानीय तापमान की भिन्नता के कारण इन चक्रवातों की उत्पत्ति होती है। अक्टूबर एवं नवम्बर में 10° उत्तरी अक्षांश के समीप ये प्रारंभ होते हैं। मई के चक्रवात की उत्पत्ति पश्चिम बंगाल तथा बर्मा के निकटवर्ती जल–राशि पर होती है। वर्षा ऋतु के चक्रवात पश्चिम बंगाल के डेल्टाई भाग के दक्षिण में प्रारम्भ होते हैं। कुछ चक्रावात तमिलनाडु के समुद्र तटीय भाग से हो के पूरे प्रायद्वीप को पार कर जाते हैं। अरब सागर में बंगाल की खाड़ी की अपेक्षा कम चक्रवात आते हैं। ये कम हानिकारक भी होते हैं क्योंकि इनके मार्ग पश्चिमी समुद्र–तट के समानान्तर होते हैं।

स्थानीय तापमान की भिन्नता के कारण ही चक्रवातों की उत्पत्ति होती है। इन चक्रवातों से वर्षा होती है तथा ऊँचे ज्वार–भाटे आते हैं जिनसे जलयानों को क्षति पहुँचने की सम्भावना रहती है। स्थलीय क्षेत्र पर समुद का जल फैल जाता है। इस प्रकार ये

चक्रवात हानिकारक सिद्ध होते हैं। ऐसे चक्रवात बंगाल की खाड़ी में साल में औसत रूप से पाँच बार तथा अरब सागर में दो बार आते हैं। सन् 1999 का भयावह तूफान आन्ध्र एवं उड़ीसा तट पर इसी कोटि का था।

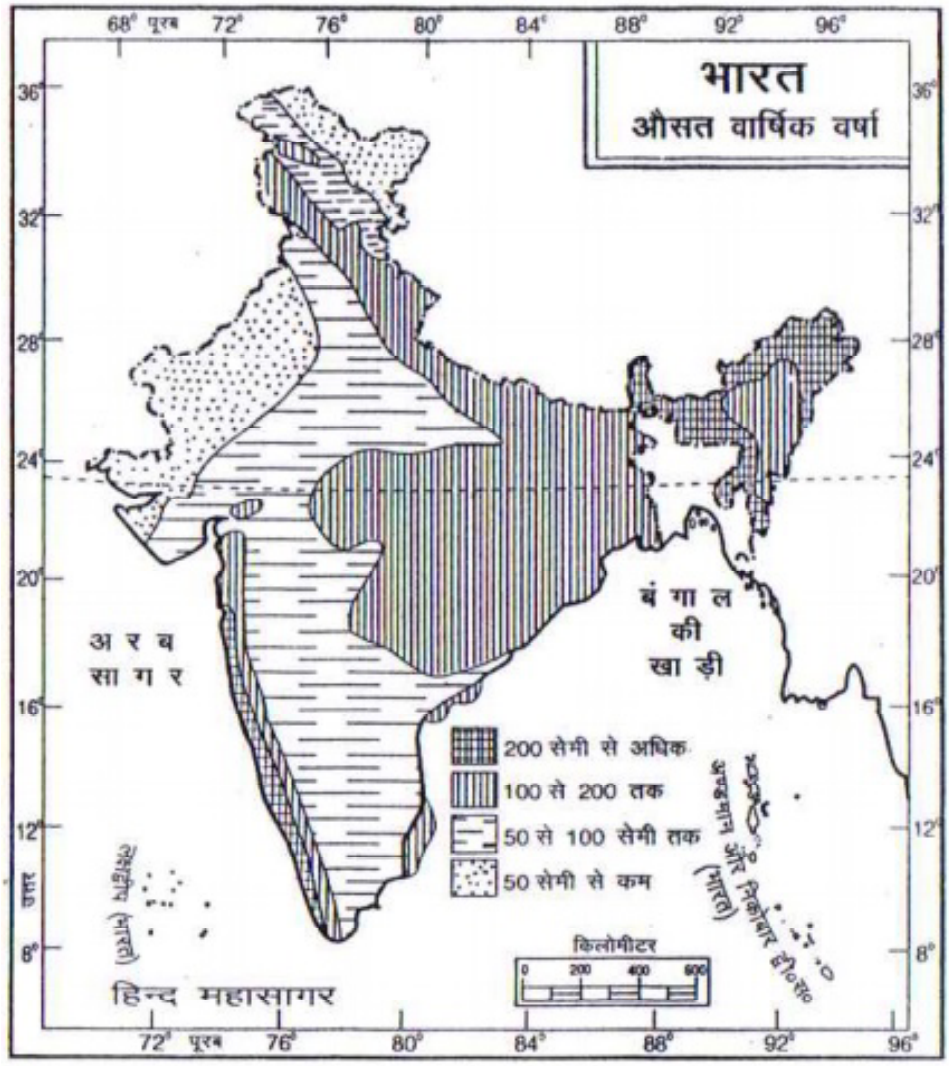
टिप्पणी

शरद् ऋतु में मानसून की वापसी के साथ–साथ आकाश स्वच्छ होने लगता है। कुछ दिनों के लिए तापमान बढ़कर लगभग 27° सेल्सियस हो जाता है। भूमि में नमी रहती है। मौसम स्वास्थ्यप्रद नहीं होता है। सितंबर के महिने में मलेरिया ज्वर का प्रकोप होने लगता है। अक्टूबर के पश्चात तापमान कम होने लगता है और शरद्कालीन चाँदनी रातें आकर्षक होती हैं। यहाँ न्यून तापमान 10° सेल्सियस या इससे कम हो जाता है। उत्तरी भाग में किसी–किसी दिन रात्रि का तापमान 0° सेल्सियस से भी कम होता है।

भारत में वर्षा

भारतीय वर्षा के प्रकार

भारत में होने वाली वर्षा तीन प्रकार की होती है –



चित्र क्र. 1.36: भारत में औसत वार्षिक वर्षा

टिप्पणी

(1) पर्वतीय वर्षा – मानसूनी हवाओं के मार्ग में पर्वतीय अवरोध उपस्थित करके वर्षा के लिए लाभदायी होते हैं। पश्चिमी तट व खासी की पहाड़ियों के क्षेत्र में होने वाली वर्षा धरातलीय प्रभाव स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है।

(2) संवाहनीय वर्षा – गर्म होने पर वायु हल्की होती है। ऊपर उठने पर यह ठण्डी होती है तथा पानी बरसाती है। भूमध्यरेखीय प्रदेशों में ऐसी वर्षा होती है लेकिन हमारे देश के दक्षिणी भाग में भी ऐसी वर्षा हो जाती है। प्रायः अक्टूबर तथा मार्च में स्थानीय गर्मी के कारण तीसरे प्रहर आकाश में बादल छा जाते हैं और हल्की वर्षा हो जाती है।

(3) चक्रवातीय वर्षा – इसका वर्णन उपर किया जा चुका है। चक्रवातजन्य वर्षा यद्यपि थोड़ी होती है किन्तु यह सुवितरित होती है। इसलिए आर्थिक दृष्टि से इसका महत्व अधिक है। मानसून की वापसी में तामिलनाडु तथा आन्ध्र तट पर होने वाली वर्षा चक्रवातीय है। भारत के उत्तर–पश्चिमी भाग में शीत ऋतु में होने वाली वर्षा भी चक्रवातीय है।

सारणी क्र. 1.5:

मानसून के प्रारम्भ तथा अन्त का समय

राज्य	प्रारम्भ की तिथि	समाप्ति की तिथि
असम	25 मई	30 अक्टूबर
पश्चिम बंगाल	1 जून	15 से 30 अक्टूबर
महाराष्ट्र	5 जून	15 अक्टूबर
आन्ध्रप्रदेश	7 जून	20 अक्टूबर
मध्य प्रदेश	10 जून	15 अक्टूबर
राजस्थान	15 जून	20 सितम्बर
उत्तर प्रदेश	25 जून	30 सितम्बर
पंजाब	1 जुलाई	14 से 21 सितम्बर

इस प्रकार **केण्ड्रयू** का कहना है कि, भारत के किसी न किसी भाग में वर्ष में प्रत्येक माह में वर्षा होती रहती है। जनवरी–फरवरी में शीतकालीन चक्रवातों से उत्तर भारत में वर्षा होती है। मार्च में पश्चिम बंगाल तथा असम में मेघ–गर्जन के साथ वर्षा होती है और जून तक वर्षा होती रहती है। अक्टूबर, नवम्बर एवं दिसम्बर में लौटती मानसून से कोरोमण्डल तट पर वर्षा होती है।

भारतीय वर्षा के विभाग

वर्षा की निश्चितता के अनुसार भारत को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है–

(1) निश्चित वर्षा वाले क्षेत्र – इसके अन्तर्गत पश्चिम बंगाल, असम, पश्चिमी घाट का पश्चिमी ढाल तथा नर्मदा की घाटी का ऊपरी भाग आ जाता है। ये अधिकतम वर्षा के क्षेत्र हैं।

(2) अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्र – इसमें उत्तर प्रदेश, राजस्थान, तामिलनाडु, गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, झारखण्ड, छत्तीसगड़ तथा उड़ीसा के कुछ जनपद सम्मिलित हैं। राजस्थान तथा कर्नाटक में निम्नतर वार्षिक **वर्षा** पायी जाती है।

टिप्पणी

भारत की वार्षिक वर्षा का औसत 105 सेंमी. है लेकिन विभिन्न क्षेत्रों में वर्षा की मात्रा भिन्न होती है। **प्रो. स्टाम्प** ने वार्षिक जल–वृष्टि के आधार पर भारत को चार भागों में बाँटा है।

(1) अधिक वर्षा वाले क्षेत्र – इसके अन्तर्गत पश्चिमी घाट, असम, मेघालय, पश्चिम बंगाल तथा पूर्वी हिमालय के भाग आ जाते हैं जहाँ 200 सेंमी. से अधिक वर्षा होती है।

(2) अच्छी वर्षा वाले क्षेत्र – बिहार, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग एवं तमिलनाडु राज्य तथा पश्चिम बंगाल डेल्टा छोड़कर इस क्षेत्र में आते हैं जहाँ, वार्षिक औसत 100 से 200 सेंमी. प्राप्त होती है।

(3) साधारण वर्षा वाले क्षेत्र – इसमें पश्चिमी मध्य प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दक्षिण का पठार (दक्षिणी गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक–वृष्टिछाया प्रदेश को छोड़कर) तथा पंजाब के उत्तर–पूर्वी भाग आ जाते हैं, जहाँ 50 से 100 सेंमी. औसत वार्षिक वर्षा होती है। यहाँ वर्षा की अनिश्चितता के कारण अकाल की आशंका रहती है।

(4) अल्प वर्षा वाले क्षेत्र – राजस्थान के अधिकांश भाग गुजरात, हरियाणा तथा पंजाब का पश्चिमी भाग लद्दाख पठार, दक्षिणी पठार का वृष्टिछाया प्रदेश तथा भीतरी उड़ीसा में बहुत कम वर्षा होती है। वर्षा का औसत 50 सेंमी. वार्षिक से भी कम होता है। राजस्थान के उत्तर–पश्चिमी भाग में तो कहीं–कहीं 10 सेंमी. से भी कम वर्षा होती है।

भारतीय वर्षा की विशेषताएँ

(1) भारत में होने वाली अधिकांश रूप में मानसूनी वर्षा है। इसका 85% ग्रीष्मकालीन मानसून दक्षिण–पश्चिमी हवाओं से सितम्बर माह तक प्राप्त होता है। इसलिए वर्ष के 8 महिने (अर्थात् दो तिहाई भाग) लगभग सूखे रह जाते हैं। जाड़े के दिनों में (अक्टूबर से फरवरी तक) 15% वर्षा प्राप्त होती है।

(2) भारतीय मानसून इतना अनियमित है कि किसान उस पर पूर्णरूप में निर्भर नहीं रह सकता है। कभी–कभी वर्षा समय से पूर्व ही हो जाती है और कभी–कभी सप्ताहों देर से। जब वर्षा नियत समय से पूर्व प्रारम्भ होती है, तो पहले समाप्त भी हो जाती है जिससे खेतों को उपयुक्त समय तक जल नहीं मिल पाता है। इाके ठीक विपरीत कभी–कभी वर्षा नियत समय से बहुत बाद तक होती है। प्रतिवर्ष वर्षा समान नहीं होती है। किसी वर्ष अधिक वर्षा होती है, तो किसी वर्ष कम।

कहीं वर्षा 250 सेंमी. से अधिक होती है, कहीं 13 सेंमी. से कम होती है। सम्पूर्ण देश के 11% भाग में 190 सेंमी. से अधिक वर्षा होती है, 21% भाग में 125 से 190 सेंमी. तक, 37% भाग में 72 से 125 सेंमी. तक 24% भाग में 35 से 75 सेंमी. तक और 7% भाग में 35 सेंमी. से कम होती है।

टिप्पणी

राजस्थान में जहाँ वर्षा केवल 15 सेंमी. वार्षिक होती है 30% ही विषमता पायी जाती है। कोलकाता में जहाँ 164 सेंमी. वार्षिक वर्षा होती है, विषमता लगभग शून्य है। पश्चिमोत्तर प्रदेशों में विषमता का प्रतिशत अधिक है, जबकि महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल तथा केरल के समुद्री–तटों पर विषमता लगभग नहीं के बराबर है। जहाँ वर्षा बहुत कम होती है, वहाँ वर्षा की विषमता से अधिक हानि नहीं होती है, परन्तु जहाँ वर्षा कृषि के लिए अभीष्ट मात्रा में होती है, वहाँ वर्षा की कमी या अधिकता से हानि पहुँचती है।

यह देखा गया है कि 5 वर्षों में दो या एक ऐसे वर्ष होते हैं, जब मानसूनी वर्षा समयानुसार तथा कृषि के लिए उपयुक्त होती है। ऐसे वर्ष भारतीय किसान के लिए समृद्धि के वर्ष होते हैं। नियमित समय पर तथा पर्याप्त वर्षा न प्राप्त करने वाले वर्ष किसान की कठिनाइयों के वर्ष होते हैं। इसीलिए कहा गया है, **'भारत सरकार का बजट मानसून का जुआ है।** (The Indian budget is the gambling of monsoon)

(3) भारतीय वर्षा का वितरण स्थान के अनुसार भी असमान है। किसी स्थान पर तो अत्यधिक वर्षा हो जाती है और किसी स्थान पर अत्यन्त कम। राजस्थान में जब 12 सेंमी. के लगभग वर्षा होती है, तब पश्चिमी घाट और मेघालय की पहाड़ियों पर 250 सेंमी. से भी अधिक। जिन भागों में वर्षा कम होती है, जैसे पश्चिम राजस्थान तथा दक्षिण–पश्चिमी पंजाब, जहाँ अकाल पड़ने की सम्भावना रहती है, ऐसे स्थानों पर सिंचाई के साधनों का विस्तार आवश्यक हो गया है।

(4) हमारे देश में अनेक स्थानों पर अत्याधिक वर्षा होती है। फलस्वरूप, फसलें नष्ट हो जाती हैं तथा नदियों में बाढ़ें आ जाती हैं। इस प्रकार कभी अत्याधिक वर्षा भी अकाल का कारण बन जाती है।

(5) मानसूनी वर्षा मूसलाधार होती है जिससे उसके अधिकांश जल का उपयोग नहीं हो पाता है। वह यों ही बहकर समुद्र में चला जाता है। वर्षा के जल की अधिक गति के कारण मिट्टि के अपरदन को भी बल मिलता है। मिट्टी के स्राव की भी समस्या कठिन हो जाती है। विभिन्न राज्यों में कई दिन की औसत वर्षा प्रतिदिन 0.5 सेंमी. से 2.5 सेंमी. होती है। इसीलिए कहा जाता है कि यहाँ वर्षा गिरती है, यहाँ वर्षा कभी नहीं होती है।

भारत में वर्षा के दिन बहुत कम होते हैं। चेन्नई में 55 दिन, मुम्बई में 75 दिन अजमेर में 45 दिन तथा कोलकाता में 118 दिन वर्षा होती है। कोलकाता में 118 दिन में 165 सेमी. वर्षा होती है, जबकि लन्दन में 161 दिन में केवल 73 सेंमी. वर्षा होती है।

जलवायु के प्रदेश (Climatic Regions)

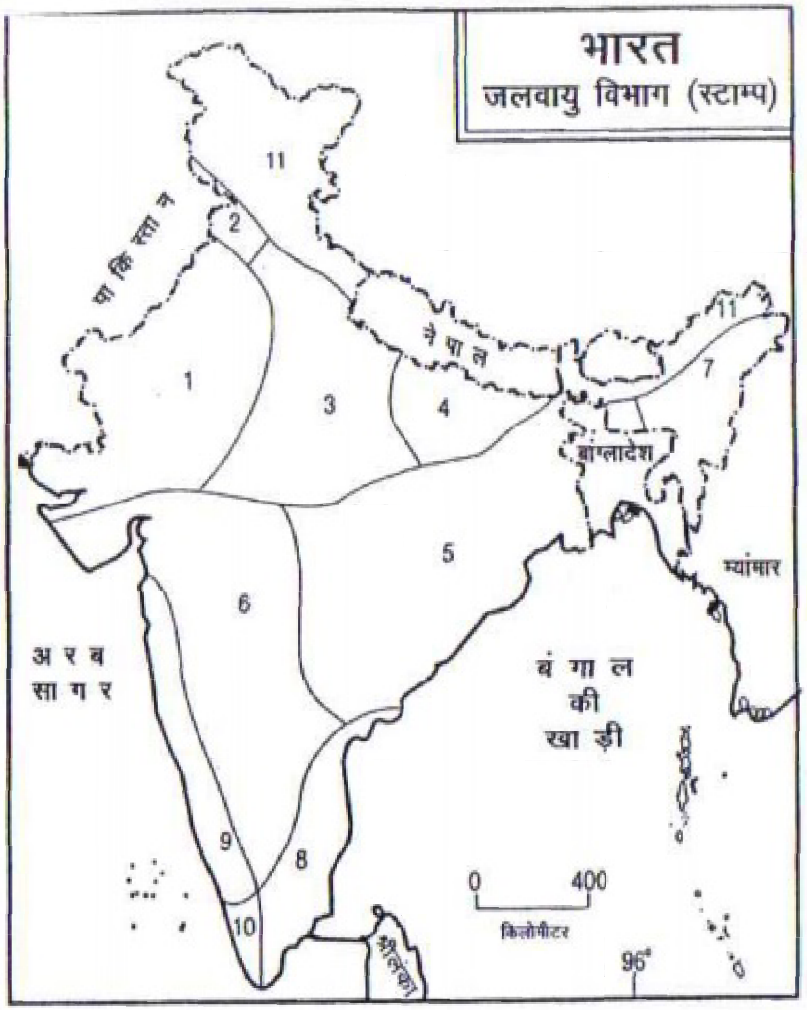
विभिन्न धरातलीय रूपों से परिपूर्ण एवं उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्ध में विस्तृत विशाल भारत में जलवायु की भिन्नता कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। पूरब की जलवायु पश्चिम से, उत्तर की जलवायु दक्षिण से, यही नही बल्कि दक्षिण भारत में ही पूर्वी समुद्री तट की जलवायू पश्चिमी तट की जलवायु से भिन्न है। असम के अत्यधिक नम प्रदेश और राजस्थान के अत्यधिक शुष्क प्रदेश एक–दूसरे से इस दृष्टि से सर्वथा विपरीत हैं।

उत्तर में पंजाब की जलवायु दक्षिण में केरल की जलवायु से भिन्न हैं। समुद्र–तल से ऊँचाई तथा समुद्र से दूरी में विभिन्नता जलवायु पर और भी प्रभाव

टिप्पणी

डालती है। मंगलुरू, बंगलुरू तथा चेन्नई लगभग एक ही अक्षांश पर स्थित हैं। मंगलुरू में जो समुद–तल से 16 मीटर ऊँचा है, जनवरी में 24.4° सेल्सियस तापमान रहता है और चेन्नई में जो 7 मीटर ऊँचा है 24.4° सेल्सियस तापमान रहता है लेकिन बंगलुरू में जो 826 मीटर ऊँचा है, उसी समय तापमान 19° सेल्सियस रहता है। इससे यह स्पष्ट हेा जाता है कि समुद्रतट से ऊँचाई की भिन्नता भारत की जलवायु पर प्रभाव डालती है। इसी प्रकार समुद्र से दूरी का भी प्रभाव पड़ता है। **कोलकाता** जो समुद्र के निकट है 10° सेल्सियस औसत वार्षिक ताप–परिसर का अनुभव करता है। इससे ज्यो–ज्यों दूर बढ़ते जाते हैं, त्यों–त्यों वार्षिक ताप–परिसर में वृद्धि होती जाती है। पटना में 15° सेल्सियस, वाराणसी में 16° सेल्सियस तथा दिल्ली में 19° सेल्सियस औसत वार्षिक ताप–परिसर अंकित किया गया है।

भारत की समतापी रेखाओं तथा वर्षा चित्र का अनुभव एवं अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि भारत के तापमान में जितनी समानता है, वर्षा में उतनी भिन्नता है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जलवायु की विभिन्नता के लिए वर्षा की मात्रा की भिन्नता सबसे अधिक उत्तरदायी है। अतः वर्षा, तापमान, आर्द्रता आदि को ध्यान में रखते हुए भारत के निम्नलिखित जलवायु विभाग किये जा सकते हैं –



चित्र क्र. 1.37: स्टाम्प के अनुसार भारत के जलवायु विभाग

जर्मन भूगोलवेत्ता कोपेन के अनुसार जलवायु विभाग

टिप्पणी

कोपेन के अनुसार भारत को निम्न जलवायु प्रदेशों – शुष्क, अर्द्ध शुष्क एवं आर्द्र – में बाँटा जा सकता है। यह मासिक तापमान तथा वर्षा को आधार मानकर किया गया है।

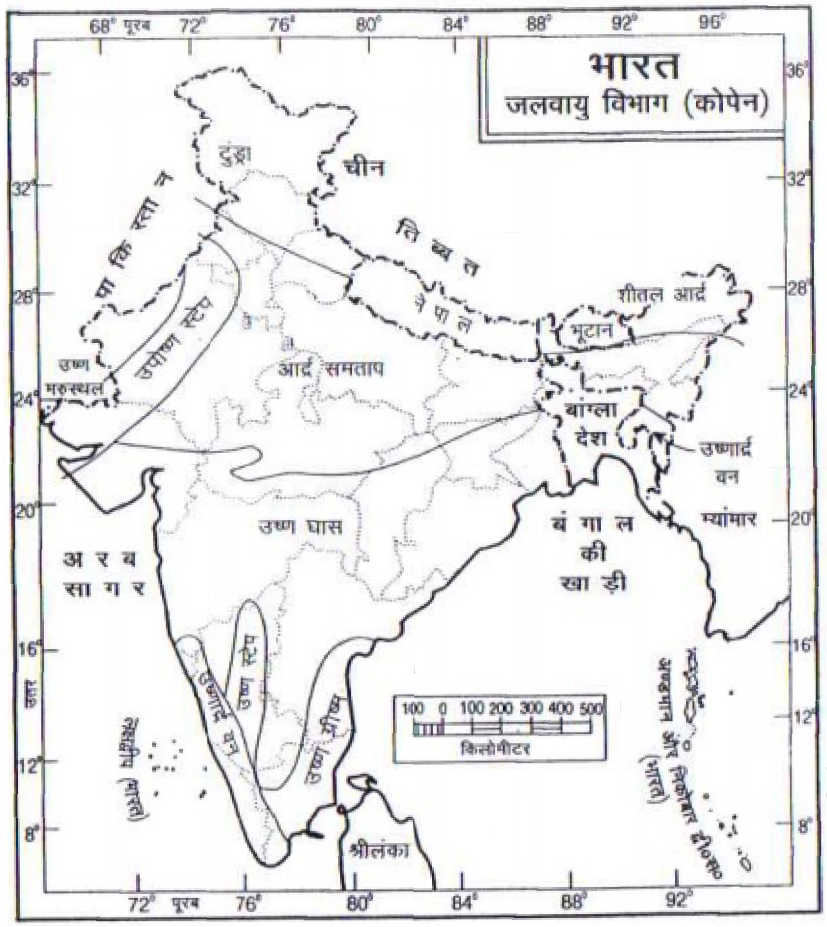
(1) टुण्ड्रा (ET) – जिसमें कोई उष्ण ऋतु न हो। उष्णतम मास का तापमान 0° सेल्सियस से 10° सेल्सियस तक रहता है। वर्षा हिमपात के रूप में होती है।

(2) शीतल आर्द्र (DfC) – मध्य अक्षांशीय वर्षायुक्त जलवायु–शीत जलवायु, नमी। अत्याधिक उष्ण मास का औसत तापमान 22° सेल्सियस से कम तथा एक से तीन माह का औसत तापमान 10° सेल्सियस से अधिक रहता है।

(3) आर्द्र समताप (Cwg) – मध्य अक्षांशीय वर्षायुक्त जलवायु, जहाँ थोडी–सी सर्दी हो, शीतऋतु शुष्क, उष्णतम मास जून के पूर्व, वर्षा ग्रीष्मऋतु के उत्तरार्द्ध में।

(4) उपोष्ण स्टेप उष्ण स्टेप (BShw) – अर्द्ध–मरुस्थली, वार्षिक तापमान 18° सेल्सियस से अधिक।

(5) उष्ण घास (Aw) – शीतऋतु का औसत तापमान 10° सेल्सियस, शुष्कतम मास की वर्षा 6 सेमी. से कम तथा शीतऋतु शुष्क।



चित्र क्र. 1.38: भारत के जलवायु (कोपेन)

(6) उष्ण ग्रीष्म (As) – अति उष्णार्द्र जलवायु, शीत मास का औसत तापमान 18° सेल्सियस से अधिक। ग्रीष्मऋतु में साधारण वर्षा।

(7) उष्णार्द्र वन (Amw) – अति उष्णार्द्र। जलवायु, मानसूनी वर्षा, शीतऋतु शुष्क एवं छोटी।

टिप्पणी

(8) उष्ण मरुस्थल (BWhw) – वर्षा कम, वाष्पन अधिक।

आलोचनाएँ

(1) समस्त संसार का वर्गीकरण उचित आँकड़ों के अभाव में किया गया हैं।

(2) प्राकृतिक वनस्पति के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रणाली नहीं अपनाई गई है।

(3) पहाड़ी उच्च भागों तथा मैदानी निम्न भागों में एक ही सिद्धान्त अपनाया गया है।

(4) वर्गीकरण जलवायु एवं वनस्पति पर आधारित है। भूपृष्ठीय रचना, वायुदाब, पवनों की दिशा तथा समुद्र जलधाराओं के प्रभाव की अवहेलना की गयी है।

(5) भारत में टुण्ड्रा जलवायु प्रदर्शित है जो आश्चर्यजनक है।

ब्रिटिश भूगोलशास्त्री केण्ड्रयू तथा स्टाम्प के अनुसार जलवायु विभाग

ये विभाग वर्षा एवं ताप की सीमाओं के आधार पर किये गये हैं।

(1) शुष्क निम्न भूमि – थार का मरुस्थल, कच्छ तथा हरियाणा के भाग इसके अन्तर्गत सम्मिलित हैं। यहाँ जनवरी का तापमान 12° सेल्सियस से 21° सेल्सियस तक रहता है तथा वार्षिक वर्षा की मात्रा 50 सेमीं. से कम ही रहती है।

(2) उत्तरी पंजाब तथा कश्मीर – यहाँ वर्ष भर साधारण वर्षा होती है तथा जनवरी का औसत तापमान 13° सेल्सियस से कम ही रहता है।

(3) हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पश्चिमोत्तर मध्य प्रदेश तथा पूर्वी राजस्थान – इस क्षेत्र में ग्रीष्मऋतु के आरम्भ में शुष्क तथा ग्रीष्मऋतु में अति उष्ण जलवायु पायी जाती है। यहाँ जनवरी की तापमान 12° सेल्सियस से 19° सेल्सियस तक मिलता है। वर्षा की मात्रा 75 सेंमी. से 100 सेंमी. तक प्राप्त होती है।

(4) पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा उत्तरी बिहार – इस क्षेत्र में जनवरी का तापमान 15° से 19° सेल्सियस तक पाया जाता है तथा वर्षा भी 100 सेंमी. से 150 सेंमी. तक होती है।

(5) छत्तीसगढ़, झारखण्ड, उड़ीसा तथा पश्चिम बंगाल – इस क्षेत्र में वर्षा तथा आर्द्रता की मात्रा अधिक पायी जाती है। जनवरी का तापमान 18° से 28° सेल्सियस तक मिलता है। वार्षिक औसत तापमान 18° से 35° सेल्सियस तक पाया जाता है।

(6) महाराष्ट्र, गुजरात, केरल तथा पश्चिमी आन्ध्र प्रदेश – इस क्षेत्र का जनवरी का औसत तापमान 18° से 24° सेल्सियस तक रहता है। वर्षा साधारण होती है जो 50 से 100 सेंमी. नापी गयी है।

(7) असम, मणिपुर व त्रिपुरा – इस क्षेत्र में मार्च–अप्रैल के महीने अधिक उष्ण तथा शुष्क होते हैं । वर्षा अत्यधिक होती है, जिसकी मात्रा 200 सेंमी. से अधिक ही रहती है।

टिप्पणी

(8) तमिलनाडु तथा पूर्वी आन्ध्र प्रदेश – अप्रैल से जून तक इस भाग में अधिक गर्मी पड़ती है। तापमान 24° से 30° सेल्सियस तक मिलता है तथा वर्षा की मात्रा 50 सेंमी. से 100 सेंमी. तक मिलती है। नवम्बर तथा दिसम्बर में वर्षा अधिक होती है।

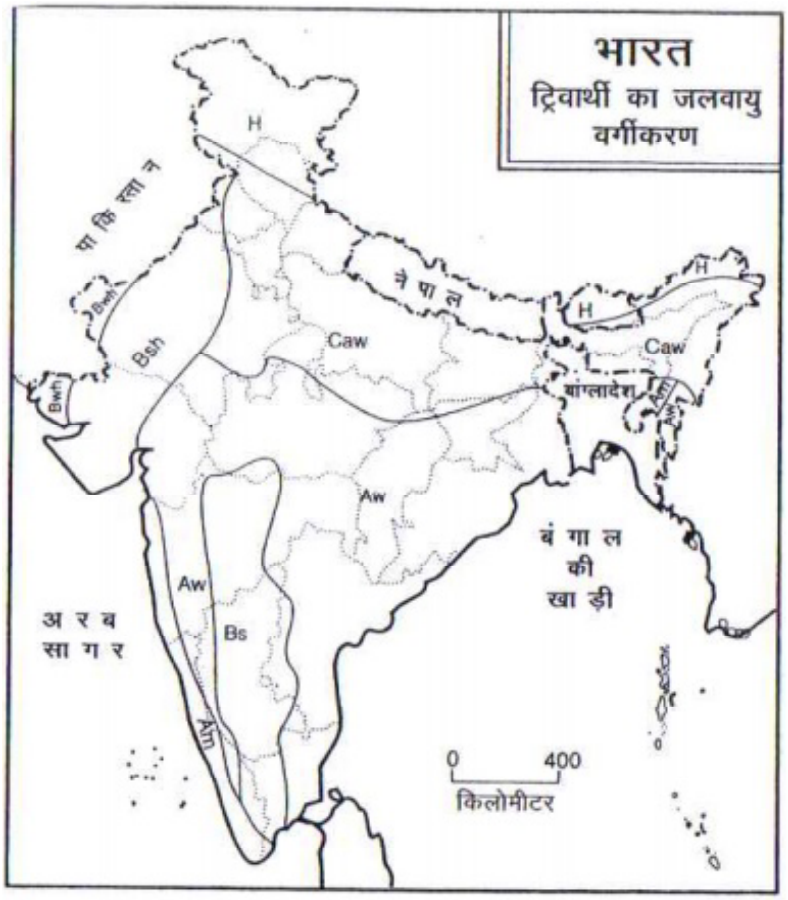
(9) पश्चिमी घाट तथा तटवर्ती पश्चिमी मैदान – इसके अन्तर्गत महाराष्ट्र तथा कर्नाटक के भाग आते हैं। यहाँ गर्मी में अत्याधिक वर्षा होती है तथा वर्षा की मात्रा 200 सेंमी. से अधिक रहती है। तापमान का औसत 18° से 19° सेल्सियस तक पाया जाता है।

(10) केरल – इस विभाग में तीन मास तक शुष्क ऋतु मिलती है तथा तापमान 18° से 19° सेल्सियस तक रहता है। वर्षा काफी अधिक होती है जिसकी मात्रा 250 सेंमी. से अधिक रहती है।

(11) हिमालय पर्वतीय जलवायु – शुष्क शीतऋतु की प्रधानता इस क्षेत्र की विशेषता है। औसत तापमान कम ही रहता है।

आलोचना – महाद्वीपीय एवं उष्ण कटिबन्धीय भाग अमान्य है। इसमें प्राकृतिक वनस्पति को स्थान नहीं दिया गया है। वर्षा की विषमता को भी ध्यान में नहीं रखा गया है।

ट्रिवार्था के अनुसार जलवायु प्रदेश – अमरीकी मौसम विज्ञानवेत्ता **ट्रिवार्था** ने **कोपेन** के जलवायु के प्रदेशों को संशोधित किया और तापमान एवं प्राकृतिक वनस्पति के आधार पर भौगोलिक प्रदेशों को दृष्टि में रखकर जलवायु प्रदेश किये हैं।



चित्र क्र. 1.39: ट्रिवार्था के जलवायु प्रदेश

टिप्पणी

इन्होंने चार प्रधान प्रदेश (A, B, C, H) तथा सात जलवायु प्रकारों में देश को विभक्त किया है।

(A) उष्ण कटिबन्धीय वर्षा प्रचुर प्रदेश – इसमें सर्वदा 18° सेल्सियस तापमान रहता है।

(i) Am – उष्ण मानसून अल्पकालिक शुष्क मौसम। औसत तापमान 27° सेल्सियस तथा औसत वर्षा 240 सेंमी.।

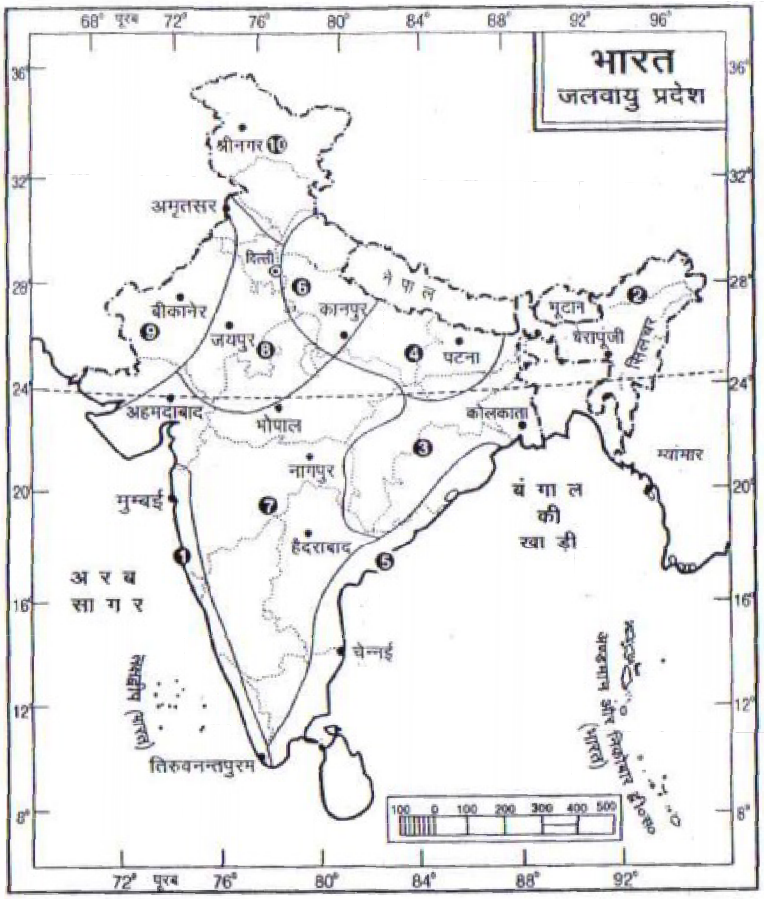
(ii) Aw – उष्ण कटिबन्धीय सवाना। औसत तापमान 27° सेल्सियस तक तथा वर्षा 100 सेंमी. तक।

(B) उष्ण शुष्क प्रदेश – उच्च तापमान, कम वर्षा। औसत तापमान 27° सेल्सियस तक तथा वर्षा 13 सेमी. से कम।

(i) Bs – उष्ण कटिबन्धीय स्टेप या अर्द्ध–ऊसर। औसत तापमान 27° सेल्सियस। वर्षा 100 सेमी. तक मुख्यतः ग्रीष्मऋतु में।

(ii) Bsh – उष्ण एवं उपोष्ण स्टेप। औसत तापमान 27° सेल्सियस, वर्षा 50 सेमी. से 100 सेमी. तक।

(iii) Bwh – उष्ण एवं उपोष्ण मरुस्थल। वर्षपर्यंत ऊँचा तापमान, वार्षिक वर्षा 20 सेमी. से कम।



चित्र क्र. 1.40: भारत के सामान्य जलवायु प्रदेश

(C) आर्द्र उपोष्ण प्रदेश – सबसे सर्द माह का तापमान 0° से 10° सेल्सियस तथा शीतऋतु की वायु में शुष्कता एवं ठण्डापन।

(i) Caw – उपोष्ण आर्द्र तथा शुष्क शीत। शीतऋतु में चक्रवातीय वर्षा ग्रीष्म ऋतु में अधिक वर्षा।

टिप्पणी

(H) पर्वतीय प्रदेश – कठोर शीत। तापमान बहुत कम। वर्षा हिमपात के रूप में।

भारत को जलवायु प्रदेशों में विभक्त करने का प्रयास **थार्नथ्वेट,** सुब्रह्मण्यम (सन 1955) और भरुचा एवं शन्भाग (सन 1957) ने भी किया। **थार्नथ्वेट** ने वृष्टि एवं वाष्पन और तापमान एवं वाष्पन के आधार पर जलवायु प्रदेश बनाया। भारत के भूगोलवेत्ताओं ने भारत का प्रादेशिक भूगोल (राष्ट्रीय भूगोल परिषद, वाराणसी द्वारा प्रकाशित) में भारत को 10 जलवायु प्रदेशों में विभक्त किया है, जो छात्रों के लिए सर्वाधिक ग्राह्य एवं उपयोगी है।

1. अति आर्द्र उत्तर–पूर्वी प्रदेश,
2. आर्द्र सह्याद्रि एवं पश्चिमी तटीय प्रदेश,
3. आर्द्र दक्षिण–पूर्वी प्रदेश,
4. उपार्द्र संक्रमण प्रदेश,
5. उपार्द्र पूर्वी तटीय प्रदेश,
6. उपार्द्र आन्तरिक प्रदेश,
7. अर्द्ध शुष्क उष्ण कटिबंधीय प्रदेश,
8. अर्द्ध शुष्क उपोष्ण कटिबंधीय प्रदेश,
9. शुष्क प्रदेश,
10. पश्चिमी हिमालयी प्रदेश।

(1) अति आर्द्र उत्तर–पूर्वी प्रदेश

इसमें पूर्वी हिमालय के राज्य सिक्किम, अरुणाचल, असम, मेघालय, मणिपुर, नागालैण्ड, त्रिपुरा तथा मिझोरम सम्मिलित हैं। यहाँ की जलवायु अत्यधिक नम है। वर्षाकाल लम्बा होता है तथा यह क्षेत्र अधिक वर्षा प्राप्त करता है। वर्षा बंगाल की खाड़ी वाली मानसूनी शाखा से होती है। चक्रवातों से भी थोड़ी वर्षा प्राप्त हो जाती है। मेघालय के पहाड़ी भाग बहुत अधिक वर्षा प्राप्त करते हैं। **चेरापूँजी** तथा **मासिनराम** गाँव इसी प्रदेश में स्थित हैं जहाँ विश्व में सर्वाधिक वर्षा होती है। **शिलांग** में वार्षिक वर्षा का औसत 350 सेमी. तथा सिलचर में 379 सेमी. है। तापमान पर समुद्र का कोई असर नहीं पड़ता है। जाड़े के दिनों में तापमान 13.5° सेल्सियस से नीचे गिर जाता है। **शिलांग** में जनवरी का औसत तापमान 10.5° सेल्सियस अंकित किया गया है। शीत ऋतु अपेक्षाकृत छोटी होती है। इस ऋतु में **कुहरा** भी काफी पड़ता है। गर्मी के दिनों में आकाश मेघाच्छन्न रहता है, इसलिए सामान्य तापमान 26° से 33° सेल्सियस तक रहता है। तापमान सबसे अधिक मार्च व अप्रैल में होता है। शिलांग का वार्षिक ताप–परिसर 10° सेल्सियस तथा सिलचर का 7° **सेल्सियस** पाया गया है। **सिलचर** इस प्रदेश का प्रतिनिधि नगर कहा जा सकता है।

(2) आर्द्र सह्याद्रि एवं पश्चिमी तटीय प्रदेश

टिप्पणी

इसके अंतर्गत पश्चिमी तट तथा पश्चिमी घाट क्षेत्र आ जाते हैं। ये अत्यधिक आर्द्र हैं, क्योंकि यहाँ वार्षिक वर्षा 200 सेमी. से अधिक होती है। जुलाई का औसत तापमान 24° से 30° सेल्सियस तक रहता है। पश्चिमी तटीय क्षेत्र के पश्चिमी घाट के पहाड़ी भाग में तटीय मैदान में अपेक्षाकृत अधिक वर्षा होती है। यही नहीं, बल्कि वर्षा की मात्रा उत्तरी भाग की अपेक्षा दक्षिणी भाग में अधिक है।

सारणी क्र. 1.6:

	पश्चिमी घाट के पहाड़ी भाग	**पश्चिमी तट के मैदानी भाग**
18° उत्तरी अक्षांश के उत्तर में	माथेरान – 560 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा	सूरत – 150 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा मुंबई – 180 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा
18° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण में	महाबलेश्वर – 612 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा	रत्नागिरि – 250 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा

वर्षा की विभिन्नता का ध्यान रखते हुए पश्चिमी तटीय क्षेत्र को दो भागों में बाँटा गया है। इस प्रकार अत्यधिक नम व गर्म प्रदेश के तीन उप–विभाग हो जाते हैं।

(i) कोंकण तट – यह क्षेत्र नर्मदा नदी के मुहाने से लेकर गोआ तक विस्तृत है। मुंबई नगर इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। दी हुई सारणी के आँकड़ों को देखने से ज्ञात होता है कि वर्षा जून, जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर के चार महीनों में अधिक होती है। शेष 8 महीने लगभग शुष्क जाते हैं। औसत तापमान 24° से 29° सेल्सियस तक और वार्षिक ताप–परिसर 12° सेल्सियस तक है। कोंकण तट पर जुलाई माह में सबसे अधिक वर्षा होती है। इस क्षेत्र की औसत वार्षिक वर्षा 200 सेमी. है किन्तु मुंबई तथा इसके उत्तर में बढ़ने पर यह औसत कम हो जाता है।

सूरत की औसत वार्षिक वर्षा 105 सेमी. अंकित की गई है। मुंबई के दक्षिण की ओर वार्षिक वर्षा का औसत अधिक है, जैसे **रत्नागिरी** में 250 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा होती है। इस क्षेत्र में अधिकांश वर्षा पश्चिमी मानसून से होती है, लेकिन समुद्री पवनों से अप्रैल, मई के महीनों में भी हल्की वर्षा होती है, हवाएं वर्ष भर चला करती हैं। हवाओं की दिशा का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि मुंबई वर्ष में केवल कुछ दिन शांत रहता है।

(ii) मालाबार तट – इस प्रदेश के अंतर्गत गोआ से दक्षिण में स्थित पश्चिमी तटीय क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र में कोंकण तट से भी अधिक वर्षा होती है। वर्षा का समय भी कोंकण तट से सर्वथा भिन्न होता है क्योंकि यहाँ वर्ष के 9 महीने वर्षा होती है और केवल 3 महीने शुष्क रहते हैं। बंगलौर में 292 सेमी., कोच्चिन में 288 सेमी., अलेप्पे में 298 सेमी. वर्षा होती है। इस क्षेत्र में जून के महीने में सबसे अधिक वर्षा होती है। वार्षिक औसत तापमान 26° सेल्सियस रहता है। वार्षिक ताप–परिसर 5° सेल्सियस से

टिप्पणी

भी कम रहता है। कोचिन में 1° सेल्सियस तथा **तिरुवनन्तपुरम** में 1.70° सेल्सियस वार्षिक ताप–परिसर ज्ञात हुआ है। इस प्रदेश की जलवायु भूमध्यरेखीय जलवायु से अधिक समानता रखती है। वर्ष के शान्त दिनों की संख्या कोंकण तटीय अधिक दिनों की संख्या से अधिक है। **तिरुवनन्तपुरम** इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। यहाँ प्रायः 17 शान्त दिन रहते हैं।

(3) आर्द्र दक्षिण–पूर्वी प्रदेश

इस प्रदेश में झारखंड, उड़ीसा का पश्चिमी क्षेत्र, पश्चिम बंगाल तथा छत्तीसगढ़ सम्मिलित हैं। वर्षा 100 से 200 सेंमी. तक होती है किन्तु वर्षा की मात्रा में भिन्नता पायी जाती है। उदाहरण के लिए कोलकाता मे 164 सेंमी. **नागपुर** में 93 सेंमी. एवं गया में 101 सेंमी. वार्षिक वर्षा होती है। वार्षिक ताप–परिसर में भी समुद्र से दूर हटने पर अंतर पाया जाता है।

इस क्षेत्र का जुलाई के तापमान का औसत लगभग 28° सेल्सियस तथा शीतऋतु का औसत तापमान 20° सेल्सियस रहता है। इस प्रकार वार्षिक ताप–परिसर लगभग 8° सेल्सियस पाया जाता है। **रायपुर** में जनवरी तथा जुलाई का तापमान क्रमशः 20° सेल्सियस तथा 28° सेल्सियस एवं कोलकाता में क्रमशः 20° सेल्सियस तथा 29° सेल्सियस अंकित किया गया है। वर्षा ग्रीष्मकालीन मानसून से होती है जिसकी मात्रा कोलकाता में 64 सेमी. तथा रायपुर में 98 सेमी. पायी गयी है। इस प्रदेश का प्रतिनिधि नगर **कोलकाता** है। यहाँ वर्ष में शांत दिनों की संख्या 37 है।

सारणी क्र. 1.7:

स्थान		जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर	वर्षा का योग	वार्षिक ताप–परिसर
1. सिलचर	तापमान (अंश सेलिसयस)	25.5	26.5	30.0	31.1	31.2	31.6	32.2	31.7	31.7	31.2	28.9	26.2	–	6.7
	वर्षा (सेमी)	1.27	6.3	13.5	33.4	52.0	61.0	67.5	63.5	52.0	24.8	3.0	0.6	379	–
2. मुंबई	तापमान (अंश सेलिसयस)	23.9	24.4	26.1	28.8	29.4	28.8	27.7	26.6	26.6	27.7	27.2	25.5	–	5.5
	वर्षा (सेमी)	0.25	0.0	0.0	0.0	1.25	52.0	61.7	41.0	27.06	4.5	1.25	0.25	190	
3. तिरूवनन्तपुरम	वर्षा (सेमी)	0.25	0.0	0.0	0.0	1.25	52.0	61.7	41.0	27.0	4.5	1.25	0.25	190	
	तापमान (अंश सेलिसयस)	26.1	26.7	27.7	27.8	27.3	25.6	25.0	25.5	26.6	26.2	25.1	26.1	–	1.7
	वर्षा (सेमी)	2.1	1.5	4.0	11.2	21.3	33.7	22.0	27.5	10.2	26.6	16.5	5.9	179	

टिप्पणी

(4) उपार्द्र संक्रमण प्रदेश

इसके अंतर्गत उत्तर प्रदेश के पूर्वी तथा झारखंड के भाग आते हैं। जुलाई के तापमान का औसत 29° सेल्सियस तथा जनवरी का लगभग 17° सेल्सियस है। गंगानदी की निचली घाटी के औसत तापमानों से तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि जुलाई के तापमानों में उतना अंतर नहीं है, लेकिन जनवरी का औसत कम हो गया है। **छोटा नागपुर** वाले क्षेत्र की अपेक्षा ग्रीष्मऋतु में यहाँ गर्मी पड़ती है। **नागपुर** में मई का तापमान 35° सेल्सियस है, जबकि **पटना** का 31° सेल्सियस।

यह क्षेत्र समुद्र से दूर है। इसलिए उसके समकारी प्रभाव से वंचित है। वर्षा दक्षिण–पश्चिमी मानसून की बंगाल की खाड़ी वाली शाखा से होती है। वर्षा 100 सेंमी. से 200 सेंमी. तक होती है। इस क्षेत्र का प्रतिनिधि नगर **पटना** है।

(5) उपार्द्र पूर्वी तटीय प्रदेश

इसमें उड़ीसा, आंध्र प्रदेश तथा तामिलनाडु के पूर्वी भाग पड़ते हैं। जलवायु की दृष्टि से यह प्रदेश शेष भारत से निराला है। अन्नामलाई पर्वतों तथा पठारी क्षेत्र के पूरब में पड़ने के कारण दक्षिण–पश्चिमी मानसून से किसी भी भाग में सामान्य वर्षा काल में मई से सितम्बर तक के 5 महीनों में 50 सेंमी. वर्षा नहीं होती है। अक्टूबर के महीने में कोरोमण्डल तट पर तेज आँधियाँ आती हैं और घोर वर्षा होती है। नवम्बर तथा दिसम्बर में भी वर्षा होती है। अक्टूबर और नवम्बर के महीनों में सबसे अधिक वर्षा होती है।

जनवरी से जून तक के समय में आकाश स्वच्छ रहता है। इस प्रदेश के भीतरी भागों में वर्षा कम होती है। **चेन्नई** में जब 123 सेंमी. वार्षिक वर्षा होती है तब **तिरुच्चिरापल्लि** में 95 सेंमी। इससे और भीतरी भागों में प्रवेश करने पर वर्षा की मात्रा और भी कम हो जाती है। साथ ही साथ ज्यों–ज्यों हम उत्तर की ओर बढ़ते जाते हैं, त्यों–त्यों वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। **मछलीपटनम** में वार्षिक वर्षा 95 सेंमी. है।

इस क्षेत्र का जनवरी का औसत तापमान 24° सेल्सियस तथा मई का 32° सेल्सियस अंकित किया गया है। वार्षिक ताप–परिसर पश्चिमी तटीय प्रदेश की अपेक्षा अधिक रहता है। **मंगलुरू** और **चेन्नई** लगभग एक ही अक्षांश पर स्थित हैं, लेकिन मंगलुरू का वार्षिक औसत ताप–परिसर चेन्नई से बहुत कम है। चेन्नई में शांत दिनों की संख्या 2 है। लेकिन दक्षिण–पश्चिम की ओर बढ़ने पर शान्त दिनों की संख्या में काफी अंतर है। **तिरूच्चिरापल्ली** में शांत दिनों की संख्या 40 अंकित की गई है। इससे ज्ञात होता है कि समुद्र के निकटवर्ती क्षेत्र तूफानों तथा आँधियों से भीतरी क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक प्रभावित होते हैं। इस प्रदेश का प्रतिनिधि नगर **चेन्नई** है।

(6) उपार्द्र आन्तरिक प्रदेश

इसमें गंगा की ऊपरी घाटी तथा दिल्ली क्षेत्र पड़ता है। यह प्रदेश समुद्र से दूर है, अतः जलवायु विषम् है।

मई का महीना सबसे अधिक गर्म होता है और तापमान 43° सेल्सियस तक पहुँच जाता है। जनवरी माह में तापमान 7° सेल्सियस से 13° सेल्सियस के लगभग पाया जाता है। जुलाई का तापमान 23° सेल्सियस से 30° सेल्सियस पाया जाता है।

जैसे–जैसे हम पश्चिम को बढ़ते जाते हैं, क्रमशः ताप–परिसर में भी वृद्धि होती जाती है।

टिप्पणी

इस क्षेत्र में 60 सेमी. से 100 सेमी. वार्षिक वर्षा होती है। वर्षा की मात्रा पश्चिम की ओर बढ़ने पर घटती जाती है। अधिकांश वर्षा ग्रीष्म ऋतु की बंगाल की खाड़ी वाली मानसून की शाखा से होती है। थोड़ी वर्षा शीतऋतु में भूमध्यसागर की ओर से आने वाले चक्रवातों से भी हो जाती है। इस प्रकार की वर्षा की मात्रा पूरब की ओर बढ़ने पर कम होती है, गर्मियाँ शुष्क रहती हैं। शीतऋतु में कहीं पाला भी पड़ता है। शांत दिनों की संख्या 21 है। **दिल्ली** इस क्षेत्र का प्रतिनिधि नगर है जिसका जनवरी का तापमान 15° सेल्सियस तथा जून का 30° सेल्सियस रहता है। वार्षिक वर्षा 68 सेंमी. है।

(7) अर्द्ध–शुष्क उष्ण कटिबंधीय प्रदेश

इसमें पश्चिमी आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात का भीतरी भाग, तामिलनाडु का भीतरी भाग तथा कर्नाटक राज्य के भाग सम्मिलित हैं। चूँकि यह भाग पश्चिमी घाट की वृष्टि–छाया में स्थित है, अतः वर्षा की मात्रा कम तथा अनियमित रहती है। वर्षा 50 से 100 सेमी. तक होती है। जनवरी का औसत तापमान 21° सेल्सियस तक पाया जाता है। मई का औसत तापमान 32° सेल्सियस रहता है।

बेंगलुरू (990 मीटर) में अधिक ऊँचाई होने के कारण जुलाई का तापमान **हैदराबाद** तथा **इन्दौर** की अपेक्षाकृत कम है। **हैदराबाद** इस क्षेत्र का प्रतिनिधि नगर है जिसका जनवरी का तापमान 21° सेल्सियस तथा जून का 26° सेल्सियस रहता है। वार्षिक वर्षा 78 सेंमी. होती है।

(8) अर्द्ध–शुष्क उपोष्ण कटिबंधीय प्रदेश

इस भाग में पंजाब–हरियाणा के मैदान, पूर्वी राजस्थान तथा मध्य प्रदेश का उत्तर–पश्चिमी भाग है। यह क्षेत्र समुद्र से काफी दूर है। इसलिए महाद्वीपीय जलवायु पायी जाती है। ग्रीष्मऋतु में कड़ी गर्मी पड़ती है। कभी–कभी दिन में तीसरे पहर उच्चतम तापमान 27° सेल्सियस तक हो जाता है। रात्रि में भी तापमान 24° सेल्सियस से नीचे नहीं उतरता है। शीतऋतु में काफी सर्दी पड़ती है, जिससे दिन में तापमान 24° सेल्सियस से ऊँचा नहीं हो पाता है। रात्रि में तापमान हिमांक तक भी पहुँच जाता है। रात्रि में बहुधा पाला पड़ता है। **अमृतसर** में जो इस क्षेत्र का प्रतिनिधि नगर है, जनवरी में 12° सेल्सियस तथा जुलाई में 31° सेल्सियस औसत तापमान अंकित किया गया है। **अमृतसर** की वार्षिक वर्षा केवल 55 सेमी. है। इस क्षेत्र में वर्षा 50 सेमी. से 100 सेंमी. तक होती है। अधिकांश वर्षा गर्मी की मानूसनी हवाओं से होती है। शीतऋतु में चक्रवातीय वर्षा भी होती है।

(9) शुष्क प्रदेश

अरावली के पश्चिम का सम्पूर्ण राजस्थान, गुजरात में कच्छ मरुभूमि तथा हरियाणा का पश्चिमी भाग इसमें सम्मिलित हैं। यहाँ मरुस्थली जलवायु पायी जाती है। यह कठोर जलवायु वाला प्रदेश है, जहाँ ग्रीष्म ऋतु में तीव्र गर्मी तथा शीतऋतु में कठोर सर्दी पड़ती है। वार्षिक ताप–परिसर काफी अधिक रहता है। जनवरी का तापमान 5° सेल्सियस से 21° सेल्सियस तक रहता है। इस क्षेत्र के प्रतिनिधि नगर **बीकानेर** का तापमान जनवरी में 15° सेल्सियस तथा जून में 35^0 सेल्सियस रहता है। वार्षिक वर्षा 27 सेंमी. है।

टिप्पणी

(10) पश्चिमी हिमालयी प्रदेश

इसमें हिमालय प्रदेश, उत्तरांचल, पंजाब के पर्वतीय भाग तथा जम्मू व कश्मीर राज्य पड़ते हैं। जैसे–जैसे ऊँचाई बढ़ती जाती है, वैसे–वैसे जलवायु में भी भिन्नता प्रकट होती है। ऊँचाई पर स्थित **नैनीताल, मसूरी** तथा **शिमला** आदि पर्वतीय नगरों में शीतऋतु का औसत तापमान 7° सेल्सियस के लगभग रहता है। ग्रीष्मऋतु में 18° से 23° सेल्सियस का औसत तापमान प्राप्त होता है। घाटियों में ग्रीष्मऋतु में 32° से 38° सेल्सियस तापमान रहता है। 2,735 मीटर ऊपर जाने पर शीतकालीन औसत तापमान 0° सेल्सियस पाया जाता है। 3,660 मीटर की ऊँचाई पर ग्रीष्मऋतु में तापमान हिमांक से थोड़ा ऊपर होता है किन्तु 4,600 मीटर पर ग्रीष्मऋतु में तापमान 0° सेल्सियस के ऊपर नहीं होता है। लगभग 2,450 मीटर की ऊँचाई तक का तापमान मानव निवास के योग्य होता है। ग्रीष्मकालीन मानसूनी हवाएँ पर्वत श्रेणियों से टकराकर वर्षा करती हैं। प्रायः शीतकालीन वर्षा बर्फ के रूप में होती है।

सारणी क्र. 1.8:

स्थान	जनवरी औसत तापमान	जून औसत तापमान	वार्षिक ताप परिसर	वार्षिक वर्षा
श्रीनगर	0° सेल्सियस	21° सेल्सियस	21° सेल्सियस	57 सेमी.
शिमला	5° सेल्सियस	18° सेल्सियस	13° सेल्सियस	120 सेमी.
नैनीताल	12° सेल्सियस	26° सेल्सियस	14° सेल्सियस	243 सेमी.

भारत की जलवायु का आर्थिक जीवन पर प्रभाव
(Effect of Indian Climate on Economic Life)

किसी भी देश की जलवायु का आर्थिक जीवन पर प्रभाव पड़ता है, लेकिन हमारे देश में इसका प्रभाव विविध क्षेत्रों में विशेषकर आर्थिक क्षेत्र में बहुत ही अधिक पड़ता है। मानसून भारतीय आर्थिक जीवन की धुरी है।

1. हमारे देश में वर्ष में किसी कृषि योग्य भू–भाग का तापमान इतना कम नहीं होता कि वहाँ कृषि न हो सके। इसलिए कृषि के लिए संपूर्ण वर्ष सुलभ है। इस दृष्टि से हम शीतोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों, जैसे साइबेरिया, जहाँ कृषि के लिए बहुत कम दिन प्राप्त होते हैं, अपेक्षाकृत अधिक भाग्यशाली हैं। हमारे देश में मई और जून के महीने में तापमान अधिक हो जाता है, साथ ही साथ ये महीने शुष्क होते हैं, इसलिए इनमें कृषि करना संभव नहीं हो पाता है। लेकिन उन क्षेत्रों में जहाँ सिंचाई के लिए जल सुलभ रहता है, शुष्क महीनों में भी खेती की जाती है।

2. मानसूनी जलवायु ने भारतीय कृषि–कार्यों में अत्यधिक योगदान दिया है। केवल समतल भूमि का होना ही पर्याप्त नहीं है, इसके लिए पर्याप्त मात्रा में वर्षा की भी आवश्यकता है। यदि गंगा व यमुना के मैदान वर्षा शून्य होते तो देश का अधिकांश भाग मरुस्थली होता। इसलिए हम कह सकते हैं कि हमारी जलवायु ही कृषि के विकास के लिए उत्तरदायी है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 1.9:

स्थान	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर	वर्षा का योग	वार्षिक ताप —परिसर
(1) तापमान नागपुर (अंश सेलिसयस)	20.5	23.3	27.7	33.1	35.0	31.3	27.2	26.6	27.2	26.1	22.2	20.0	—	14.5
वर्षा (सेमी)	1.5	1.2	1.5	1.2	2.0	2.0	33.4	22.2	19.5	5.8	1.0	1.5	93	
(2) तापमान कोलकाता (अंश सेलिसयस)	20.2	23.3	27.1	31.4	31.4	30.2	28.6	28.2	28.6	27.2	23.5	20.5	—	11.2
वर्षा (सेमी)	0.8	2.3	3.2	4.8	14.2	29.7	31.6	31.6	24.7	20.4	8.0	6.6	164	
(3) तापमान पटना (अंश सेलिसयस)	16.0	18.5	27.1	30.2	31.1	30.4	28.6	28.4	26.4	28.4	21.1	16.7	—	15.1
वर्षा (सेमी)	1.8	1.3	0.8	0.7	4.3	19.4	28.5	26.8	18.4	18.4	0.4	0.4	121	

टिप्पणी

3. जलवायु की विषमता विविध फसलों के उत्पादन के लिए अनुकूल वातावरण उपस्थित करती है। पंजाब और उत्तर प्रदेश की जलवायु गेहूँ की खेती के लिए उपयुक्त है, तो पश्चिम बंगाल की पटसन एवं चावल के लिए तथा मध्य प्रदेश व महाराष्ट्र की कपास के लिए। इस प्रकार देश में शीतोष्ण कटिबंधीय एवं उष्ण कटिबंधीय दोनों प्रकार की फसलें बोयी जाती हैं।

4. जून, जुलाई तथा अगस्त के महीनों में सबसे अधिक वर्षा होती है, जो जल्दी पकने वाली फसलों जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का के लिए लाभदायक होती है। चारा भी अधिक उपलब्ध हो जाता है जिससे पशु–पालन को बल मिलता है। कहा जाता है कि प्राचीन काल में भारत में दूध व घी की नदियाँ बहती थीं। यह चारे की पर्याप्त उपलब्धि से ही सम्भव था।

5. ग्रीष्मकालीन तापमान ऊँचे होते है। साथ ही साथ, इनकी वृद्धि एकाएक होती है जिससे फसलें शीघ्र पकती हैं। इसके फलस्वरूप उनके दाने छोटे तथा कड़े हो जाते हैं। अतः फसलें गुणात्मक (Quality Crop) न होकर मात्रात्मक (Quantity Crop) होती हैं। प्रति हेक्टेयर उत्पादन भी कम हो जाता है।

6. वर्ष के कुछ महीनों को छोड़कर शेष महीने शुष्क होते हैं। इसलिए बड़े–बड़े घास के मैदान सुलभ नहीं हैं। वर्षा काल में उगने वाली घास शुष्क महीनों में सूख जाती है। इसलिए पशुओं को एकत्र किया हुआ भूसा खिलाया जाता है।

7. कड़ी गर्मी के ठीक बाद होने वाली घोर वर्षा रोगों की जननी है। गड्ढे, तालाबों में जल एकत्र किया जाता है जिससे गन्दगी के कारण मच्छरों का जन्म होता है, जिससे मलेरिया तथा अन्य रोगों का प्रसार होता है।

8. वर्षा की अनिश्चितता का प्रभाव कृषि पर अत्यधिक पड़ता है। सूखा व अकाल की स्थिति भारतीय कृषक के लिए चिन्ता का विषय है। कभी–कभी वर्षा की अधिकता से भयंकर बाढ़ें आती हैं जिससे अपार क्षति होती है। इन सबको देखकर भारतीय कृषक भाग्यवादी, अंधविश्वासी तथा धार्मिक प्रवृत्ति का हो जाता है।

9. ग्रीष्मऋतु की उष्ण और नम जलवायु हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती ही है। साथ ही साथ वह हमें आलसी व आरामपसन्द बना देती है। शीतोष्ण क्षेत्रों में शरीर की गर्मी बनाये रखने के लिए लोगों को शारीरिक परिश्रम में रत रहना ही पड़ता है। उपर्युक्त कमी हमारी श्रम–शक्ति पर व्यापक प्रभाव डालती है। शुष्क मौसम में जीवन बिताने वाले एक पंजाबी तथा नम वातावरण में पले एक बंगाली की श्रम–शक्ति एवं स्वास्थ्य में अंतर पाया जाता है। अल्पावस्था में अर्थव्यवस्था के भार से मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है जिससे लोग निराशावादी बन जाते हैं।

10. **ग्रीष्मऋतु में चलने वाली 'लू'** ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देती है कि घर से बाहर निकलना कठिन हो जाता है। फलस्वरूप, हमारे देश में वर्ष में कार्य करने के घण्टे उन्नतिशील देशों की तुलना में कम होते हैं।

11. वर्षा की मात्रा व समय इस प्रकार है कि उन पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। इसलिए सिंचाई की शरण लेनी पड़ती है, जिससे कृषि के प्रति हेक्टेयर व्यय में भी स्वयं वृद्धि हो जाती है, किन्तु सिंचाई भी अंततः मानसून पर निर्भर करती है।

सारणी क्र. 1.10:

स्थान	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर	वर्षा का योग	वार्षिक ताप –परिसर
(1) चेन्नई–तापमान (अंश सेलिसयस)	25.4	25.5	27.2	29.4	31.5	32.1	31.1	29.4	29.4	27.7	25.5	24.4	–	7.7
वर्षा (सेमी)	2.5	0.8	1.0	1.5	5.5	5.2	9.5	11.0	11.7	27.0	34.2	12.8	123	
(2) दिल्ली–तापमान (अंश सेलिसयस)	14.4	17.2	23.3	27.2	33.3	32.7	30.5	29.4	28.8	26.6	20.5	17.3	–	18.0
वर्षा (सेमी)	2.5	1.5	1.7	1.0	1.7	8.5	21.2	16.2	12.5	1.5	0.2	1.0	68	
(3) हैदराबाद–तापमान (अंश सेलिसयस)	21.0	24.3	27.2	30.6	33.5	29.6	26.0	25.8	26.0	25.4	21.1	20.0	–	13.5
वर्षा (सेमी)	0.5	0.5	1.5	2.5	0.3	10.8	16.0	16.0	17.7	0.8	3.0	0.8	77.5	

टिप्पणी

12. जलवायु की भिन्नता के फलस्वरूप वन–संपदा, पशु–संपदा, उद्योग, परिवहन एवं मानव–जीवन में भी विभिन्नता पायी जाती है। ये हमारे आर्थिक जीवन के महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। **वेरा आन्स्टे** ने लिखा है कि मानसून की गड़बड़ी एक महान् विपत्ति होती है। जिसको सहन करने के निमित्त साहस, उदारता तथा धैर्य के गुणों की आवश्यकता पड़ती है।

13. भारत का कृषि प्रतिमान जलवायु के अनुरूप है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

11. निम्निलिखित में से कौनसी नदी अमरकंटक की पहाड़ी से निकलती है?
    (अ) नर्मदा (ब) ताप्ती
    (स) महानदी (द) दामोदर
12. निम्नलिखित में से कौनसी नदी छोटा नागपुर के पठार से निकलती है?
    (अ) स्वर्ण रेखा (ब) दामोदर
    (स) महानदी (द) हुगली
13. गोदावरी नदी का उद्‌गम क्षेत्र है–
    (अ) नासिक के पास (ब) सिहावा के पास
    (स) बैतूल के पास (द) महाबलेश्वर के पास
14. साँभर झील स्थित है–
    (अ) मध्य प्रदेश में (ब) उड़ीसा में
    (स) महाराष्ट्र में (द) राजस्थान में
15. निम्नलिखित में से कौनसी अनूप झील है?
    (अ) साँभर (ब) वूलर
    (स) पुलकिट (द) चिलका

1.5 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (स)	6. (स)	11. (स)
2. (स)	7. (स)	12. (स)
3. (ब)	8. (ब)	13. (ब)
4. (द)	9. (द)	14. (द)
5. (अ)	10. (अ)	15. (अ)

1.6 सारांश (Summary)

इस इकाई में विद्यार्थियों को भारत की प्रमुख विशेषताओं, स्थिति विवरण प्रमुख भौतिक भाग, संरचना तथा अनेकता मे एकता ऐसी विशेषताओं से परिचित कराया गया।

टिप्पणी

1.7 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- स्थिति विस्तार
- अक्षांश
- देशांतर
- द्वीप प्रायद्विप
- तटरेखा
- दर्रे

1.8 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. भारत की आकृति और विस्तार बताइये।
2. भारतवर्ष की स्थिति का महत्व बताइये।
3. भारतीय सीमाओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. भारत के पश्चिमी तट के द्वीपों का वर्णन कीजिए।
5. भारत के पूर्वी तट के द्वीपों का वर्णन कीजिए।
6. बुन्देलखण्ड नीस का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
7. धारवाड़ समूह की शैलों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
8. कड़प्पा शैल समूह का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
9. निचले गोंडवाना समूह की शैलों का वर्णन कीजिए।
10. तृतीय महाकल्प की शैल समूह का वर्णन कीजिए।
11. हिमालय का प्रादेशिक वर्गीकरण दीजिए।
12. उत्तरांचल अथवा कुमायूं हिमालय का वर्णन कीजिए।
13. हिमालय की नवीन उत्पत्ति के प्रमाण दीजिए।
14. तराई तथा भावर मैदान का वर्णन कीजिए।
15. पूर्वी तटीय मैदान का वर्णन कीजिए।

टिप्पणी

16. सिंधु नदी क्रम का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
17. यमुना नदी क्रम का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
18. गंगा नदी क्रम का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
19. प्रायद्वीपीय भारत की झीलों का वर्णन कीजिए।
20. क्लोन की मानसूनी अवधारणा का वर्णन कीजिए।
21. चिरसम्मत विचारधारा की व्याख्या कीजिए।
22. मानसून की उत्पत्ति की अर्वाचीन अवधारणा का वर्णन कीजिए।
23. भारतीय वर्षा की विशेषताएँ बताइये।
24. स्टाम्प के अनुसार भारत के जलवायु विभाग का वर्णन कीजिए।
25. ट्रिवार्था के अनुसार भारत के जलवायु विभाग का वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. भारतवर्ष की सीमाओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. भारतवर्ष की पश्चिमी तटीय भाग का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. भारतर्ष की तट रेखा तथा द्वीपों का वर्णन कीजिए।
4. भारतवर्ष एक विभिन्नताओं का देश है। वर्णन कीजिए।
5. ''भारत की विभिन्नताओं में एकता है"। इस कथन की पुष्टी कीजिए।
6. आद्य महाकल्प की शैलों का वर्णन कीजिए।
7. पुराण महाकल्प की शैलों का वर्णन कीजिए।
8. विन्ध्य क्रम की शैलों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
9. गोंडवाना क्रम की शैलों का वर्णन कीजिये।
10. नवजीव महाकल्प की शैलों का वर्णन कीजिये।
11. हिमालय का उच्चावच और संरचना का सचित्र वर्णन कीजिए।
12. हिमालय पर्वत की उत्पत्ति, संरचना तथा भौगोलिक महत्त्व का वर्णन कीजिए।
13. भारत को प्राकृतिक भागों में बाँटिये तथा किसी एक का वर्णन कीजिए।
14. हिमालय प्रदेश का वर्गीकरण कीजिए एवं भौगोलिक महत्त्व बताइये।
15. भारत के वृहत् मैदान की उत्पत्ति एवं उच्चावचन का वर्णन कीजिए।
16. भारत को भौतिक विभागों में बाँटिये तथा प्रायद्वीपीय प्रदेश की संरचना का वर्णन कीजिए।
17. भारत के प्रायद्वीपीय पठार के उच्चावचन का वर्णन कीजिए।
18. भारत के तटीय मैदान के धरातल का वर्णन कीजिए।
19. प्रायद्वीपीय भारत की प्राकृतिक दशा तथा जल–अपवाह का पूर्ण विवेचन कीजिए।

टिप्पणी

20. प्रायद्वीपेत्तर जल अपवाह–तंत्र के विकास की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
21. भारत के अपवाह–तंत्र का वर्णन कीजिए।
22. भारत में बंगाल की खाड़ी की ओर प्रवाहित अपवाह प्रणाली का वर्णन कीजिए।
23. प्रायद्वीपीय भारत के अपवाह–तंत्र का विवेचन कीजिए।
24. 'भारत की जलवायु की विशेषता इसकी विविधता है।' इस तथ्य की व्याख्या कीजिए।
25. 'भारत का बजट मानसून का जुआ है।' इस उक्ति की व्याख्या कीजिए।
26. भारत की जलवायु की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए और कृषि पर इनका प्रभाव दिखलाइए।
27. भारत को जलवायु–विभागों में विभक्त कीजिए और उनमें से किन्हीं दो का वर्णन कीजिए।
28. भारत में शीतकालीन या ग्रीष्म की वर्षा के कारण, वितरण तथा विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
29. भारतीय मानसून की उत्पत्ति की व्याख्या कीजिए।
30. मानसून से आप क्या समझते हैं? भारतीय जलवायु में मानसून के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।
31. भारत में ग्रीष्म ऋतु की जलवायु की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
32. भारत में जलवायु की विशेषताओं एवं भारतीय कृषि पर उनके प्रभावों का वर्णन कीजिए।
33. भारत में दक्षिण–पश्चिमी मानसून का विस्तृत वर्णन कीजिए।
34. भारत में वर्षा का वितरण समझाइये। भारत के अधिकांश भागों में ग्रीष्मकालीन वर्षा क्यों होती है? वर्णन कीजिए।
35. भारत को जलवायु विभागों में बाँटिये तथा उनका संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

1.9 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. बन्सल सुरेश चंद्र 1996 भारत का बृहत् भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ।
2. अहमद ई. 1992 जीओग्राफी ऑफ हिमालया, कल्याणी पब्लिशर्स लुधियाना।
3. चौहान व्ही.एस. एवं गौतम अल्का 2001 भारतवर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ।
4. दत्त रुद्र एवं सुंदरम के.पी.एम. 2005 भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चांद ॲन्ड कम्पनी लिमिटेड न्यू दिल्ली।
5. गौतम अल्का 2007 भारत का बृहत् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, अलाहाबाद।
6. गील के.एस 1993 इव्हॉल्यूशन ऑफ द इंडियन इकॉनॉमी एन.सी.आर.टी. ई. न्यू दिल्ली।

टिप्पणी

7. हुसैन माजिद एवं सिंह. रमेश 2009 भारत का भूगोल, Tata McGraw-Hill Publishing Co. New Delhi.
8. कुमार प्रमिला 1996 मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
9. मामोरिया चतुर्भुज 1996 आधुनिक भारत का वृहत् भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन आग्रा।
10. मिश्र जगदीश प्रसाद 1997 भारत का भूगोल, विद्यासागर अलाहाबाद।
11. ओझा शिवसागर 2001 भारत का भूगोल, भौगोलिक अध्ययन संस्था, अलाहाबाद।
12. पालिवाल कमलेश 2000 इकॉनॉमी जीओग्राफी इंडिया ए किताब महल, अलाहाबाद।
13. प्रकाश बी.एस. 1990 इंडियाः इकॉनॉमी जीओग्राफी एन.सी.ई. आर.टी. न्यू दिल्ली।
14. राव बी.पी. 1995 भारतः एक भौगोलिक समिक्षा, वसुंधरा प्रकाशन गोरखपूर।
15. सिंह गोपाल भारत का भूगोल, आत्माराम ॲन्ड सन्स दिल्ली।
16. तिवारी विजय कुमार 1997 भारत का बृहत् भूगोल भाग 1 एवं 2, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, मुंबई।
17. वर्मा रामविलास भारत का भौगोलिक विवेचन, किताब घर कानपुर।
18. गर्व्हमेंट ऑफ इंडिया 2000 नॅशनल पोल्यूशन पॉलिसी 2000, प्लानिंग कमिशन ऑफ इंडिया न्यू दिल्ली।
19. चंदन आ.सी. 1980 इंट्रोडक्शन टू पॉप्यूलेशन जीओग्राफी, कल्याणी पब्लिशर्स न्यू दिल्ली।
20. वर्मा मित्रा वेद 1964, एज्युकेशन इन एशियन इंडिया, आर्या बुक डेपो न्यू दिल्ली।

इकाई 2 प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)

टिप्पणी

संरचना (Structure)

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 जल संसाधन
2.3 खनिज संसाधन
  2.3.1 लौह अयस्क
  2.3.2 तांबा अयस्क
  2.3.3 बॉक्साइट
2.4 वन संसाधन
2.5 शक्ति संसाधन
  2.5.1 कोयला
  2.5.2 पेट्रोलियम (खनिज तेल)
  2.5.3 प्राकृतिक गैस
2.6 अपरम्परागत ऊर्जा स्रोत
2.7 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
2.8 सारांश
2.9 मुख्य शब्दावली
2.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.11 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय (Introduction)

जल इस जैविक संसार में जीव–जन्तुओं की प्रथम आवश्यकता है, खासकर मानव समुदाय के लिए जल बहुत ही आवश्यक है। यह मानव की लगभग सभी आवश्यकताओं की लिए जरूरी है। किसी भी क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास की संभावनायें जल से ही निर्धारित होती है। समाज के आधुनिकीकरण के साथ–साथ जल की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है। आजकल जल का प्रयोग केवल पीने, घरेलू उपयोग और सिंचाई तक ही नहीं सीमित रह गया है, बल्कि इसका उपयोग शक्ति के लिए, उद्योगी, जल परिवहन तथा मनोरंजन के लिए भी किया जाता है। अब लोग जल की गुणवत्ता पर अधिक ध्यान देने लगे हैं। जल की बढ़ती हुई आवश्यकता के विपरीत, जल की पूर्ति सीमित है और अधिक उपयोग, प्रदूषण तथा कुप्रबंधन के कारण जल संसाधन निरन्तर कम होते जा रहे हैं। भारत में जल संसाधन का असमान वितरण भी एक अन्य विशेषता है। कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ पानी कम है। ऐसी स्थिती में जल–प्रबन्ध की बहुत अधिक जरूरत है।

2.1 उद्देश्य (Objectives)

इकाई का मुख्य उद्देश्य भारत में जलसंसाधन की उपलब्धता, उनकी समस्याएँ, संरक्षण कि उपाय एवं वर्तमान तथा आगे आनेवाली जल जनित समस्या से अवगत कराना है।

2.2 जल संसाधन (Water Resources)

टिप्पणी

जल संसाधन की सम्भावनाएँ एवं उपलब्धता (Potential and Availability of Water Resources)

जल प्राप्ति के चार स्त्रोत हैं। ये स्रोत सतही जल, अधोभौमिक जल, वायुमण्डलीय जल तथा समुद्री जल है, किन्तु पृथ्वी पर पानी की पूर्ति का प्रमुख तथा प्राथमिक स्रोत वर्षा है। इसका कुछ भाग वाष्प बन कर उड़ जाता है। महत्वपूर्ण भाग नदियों द्वारा सतही जल के रूप में प्रवाहित किया जाता है तथा थोड़ा सा भाग भूमि द्वारा सोख लिया जाता है जिसे अधोभौमिक जल कहते हैं। अतः जल संसाधन को दो भागों में बाँटा जाता है।

(1) सतही जल (Surface Water)– सतही जल नदियों, नालों, तालाबों तथा जलाशयों के द्वारा प्राप्त होता है। देश में धरातलीय जल का प्रमुख स्रोत नदियाँ है। के. वी. राव के अनुसार देश के एक मील से अधिक लम्बाई वाली 10,360 नदियाँ तथा उनकी सहायक नदियाँ हैं। इन बड़ी नदियों में देश की जल सम्पदा पायी जाती है। देश को वर्षा से लगभग 3700 अरब घन मीटर जल प्राप्त होता है, जिसका लगभग एक–तिहाई भाग वाष्पीकरण और उत्सर्जन से वायुमंडल में चला जाता है। केन्द्रीय जल आयोग ने अनुमान लगाया है कि भारत की नदियों का औसत वार्षिक जल प्रवाह लगभग 1,869 अरब घन मीटर है किन्तु धरातल की विभिन्नता, जलीय तथा अन्य भौतिक कारणों से केवल 690 अरब घन मीटर सतही जल ही उपयोग में लाया जा सकता है।

जल संसाधन का वितरण बहुत ही असमान है। इसका अधिकांश भाग–कुछ ही नदी बेसिनों में संचित है। कुल सतही जल प्रवाह का 28.7 प्रतिशत जल ब्रह्मपुत्र, 26.8 प्रतिशत गंगा और 3 9 प्रतिशत सिंधु नदी प्रणाली में प्रवाहित होता है (सारणी 9.1)। इस प्रकार देश का लगभग 60 प्रतिशत सतही जल संसाधन उत्तर भारत की इन विशाल नदी तंत्रों में संचित है। यह महत्वपूर्ण बात है कि भारत की ब्रह्मपुत्र तथा गंगा नदी का विश्व की प्रथम दस बड़ी नदियों मे क्रमशः आठवाँ और दसवाँ स्थान है। संसार की समस्त नदियों के प्रवाह का लगभग 6 प्रतिशत प्रवाह (flow) भारत की नदियों में होता है। प्रायद्वीपीय भारत में गोदावरी (देश का 6.4%) कृष्णा (3.6%) महानदी (3.6%) और नर्मदा (2.2%) में प्रवाहित होने वाला जल संसाधन उल्लेखनीय है। इस प्रकार उत्तर भारत की तुलना में दक्षिण भारत में सतही जल संसाधन कम है। वास्तव में सतही जल संसाधन की मात्रा प्रवाह क्षेत्र के आकार, इस क्षेत्र में होने वाली वर्षा की मात्रा और नदी के स्रोत की विशेषताओं पर निर्भर होता हैं। इन दृष्टियों से उत्तर भारत की नदियाँ श्रेष्ठ हैं।

सतही जल संसाधन के बेसिनवार वितरण से मोटे तौर पर यह स्पष्ट हो जाता है कि जल–सम्पन्न और जल–विपन्न बेसिन कौन से हैं, परन्तु जल संसाधन के वितरण का सही चित्र नहीं उभर पाता है। एक नदी बेसिन में ही क्षेत्रीय विभिन्नता बहुत है। इसके दो मुख्य कारण हैं। पहला कारण यह है कि कई नदी बेसिन, जैसे गंगा, गोदावरी, कृष्णा आदि काफी बड़े क्षेत्र पर फैले हैं और एक ही बेसिन की सीमा में कई तरह की वर्षा होती है। उदाहरण के लिए गंगा बेसिन में यमुना की सहायक

टिप्पणी

नदियों–चम्बल, सिंध, बेतवा, केन और टोन्स के उप–बेसिन हैं। इनमें से कुछ कम और कुछ मध्यम वर्षा के क्षेत्र हैं। विशेषकर दक्षिण–पश्चिमी राजस्थान और उत्तर–पश्चिमी मध्यप्रदेश के न्यून वर्षा वाले क्षेत्र पर फैला हुआ चम्बल बेसिन को जल–सम्पन्न मध्य गंगा बेसिन के समान नहीं माना जा सकता। गोदावरी और कृष्णा बेसिनों में भी ऐसी ही स्थिति है। इनके उद्‌गम क्षेत्र पश्चिमी घाट में अधिक वर्षा होती है, मध्य बेसिन–पश्चिमी प्रायद्वीपीय पठार शुष्क है और बेसिन का पूर्वी भाग पूर्णतया आर्द्र है। प्रायद्वीपीय क्षेत्र की लगभग सभी नदियाँ पश्चिमी घाट के अधिक वर्षा वाले क्षेत्र से निकलती है और पश्चिमी घाट के वृष्टि छाया में आने वाले अल्प वर्षा के क्षेत्र से गुजरती है। इस कारण इनके बेसिनों में भी सतही जल संसाधन का स्थानिक वितरण समान नहीं माना जा सकता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि जल संसाधनों में देश का पूर्वी एक–तिहाई भाग सम्पन्न तथा पश्चिमी एक–तिहाई भाग (पश्चिमी तट और पश्चिमी घाट को छोड़ कर) विपन्न है। मध्य के एक–तिहाई भाग पर विपन्नता तथा अल्प जल संसाधन का मिश्रितरूप मिलता है।

दूसरे, नदी बेसिनों के धरातलीय लक्षणों तथा वर्षा की विशेषताओं का भी जल संसाधन की उपलब्धता पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए गंगा बेसिन और ब्रह्मपुत्र–बाराक बेसिन की तुलना की जा सकती है। ब्रह्मपुत्र–बाराक बेसिन का क्षेत्रफल गंगा बेसिन की तुलना में बहुत कम है, तथापि ब्रह्मपुत्र–बाराक बेसिन का औसत वार्षिक प्रवाह गंगा बेसिन से काफी अधिक है । इसका कारण अत्यधिक वर्षा है। परन्तु हिमालय श्रेणी और मेघालय पठार के बीच स्थित ब्रह्मपुत्र की घाटी बहुत संकरी है, जिसमें इतना जल नही समा पाता तथा बाढ़ की स्थिति बनी रहती है। ऐसी स्थिति में जल की उपयोगिता बहुत कम हो जाती है और केवल 5 प्रतिशत जल प्रवाह ही प्रायोज्य (Utilisable) है। इसके विपरीत गंगा बेसिन के कुल प्रवाह का कम से कम आधा जल प्रायोज्य है। प्रायद्वीपीय नदी बेसिनों में भौतिक बाधाएँ कम हैं। इसलिए इनके कुल प्रवाह का अधिकांश भाग प्रयोग योग्य है।

सारणी क्र. 2.1

भारत की विभिन्न नदी–बेसिनों में औसत जल प्रवाह (अरब घन मीटर)

क्र.	नदी बेसिन	प्रवाह क्षेत्र (वर्ग किमी)	औसत वार्षिक अरब घन मीटर	प्रतिशत अ.घ. मी.	उपयोग योग्य क्षमता	भंडारण क्षमता अरब घन मीटर	कुल प्रवाह का %
1.	सिन्धु	321,289	73	3.9	46	14.52	199
2.	गंगा	861,404	501	26.8	250	37.40	75
3.	ब्रह्मपुत्र	193,313	537	28.7	24	1.09	0.2
4.	गोदावरी	312,812	119	6.4	76	17.24	14.5
5.	कृष्णा	258,948	68	3.6	58	32.23	474

टिप्पणी

6.	कावेरी	87,900	21	1.1	19	7.25	34.5
7.	पेन्नार	55,213	68	0.4	6.8	2.37	34.9
8.	महानदी	141,589	67	3.6	50	8.93	13.3
9.	सुवर्णरेखा	29,196	10.8	0.6	—	—	—
10.	बैतर्णी	—	—	—	—	—	—
11.	ब्राह्मणी	51,822	36	1.9	18.1	4.29	11.9
12.	साबरमती	21,674	08	0.4	1.9	1.30	16.3
13.	माही	—	11.8	0.6	3.1	4.16	35.3
14.	नर्मदा	98,796	41	2.2	34.5	3.02	7.4
15.	ताप्ती	65,145	18	10	14.5	8.68	48.2
	कुल		**186.9**	**100.0**	**690.0**	**147**	**7.87**

स्रोतः राष्ट्रीय एटलस तथा थीमेटिक मैपिंग संगठन– सोशियो–इकनामिक एटलस 2001।

नदी तंत्रों में न केवल जल प्रवाह की मात्रा में काफी अन्तर है बल्कि प्रवाह का समयावधि में भी बहुत विभिन्नता है। जलप्रवाह के आधार पर भारत की नदियों को दो बड़े समूह में रखते हैं। प्रथम वे नदियाँ जिनका उद्‌गम हिमालय में है तथा दूसरी वे जिनका उद्‌गम प्रायद्वीपीय पठारों में है। इसीलिए इनमें वर्ष भर पानी रहता है। इन नदियों में सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र प्रमुख हैं जो हिमालय से निकल कर सिंन्धु–गंगा के मैदान में प्रवाहित होती है। इनकी सहायक नदियाँ भी हिमालय से निकलती हैं। इसके विपरीत, प्रायद्वीपीय भारत की नदियाँ अपने प्रवाह के लिए पूर्ण रूप से वर्षा पर निर्भर है, क्योंकि इनके उद्‌गम ग्लेशियर तथा हिमाच्छादित क्षेत्र नहीं है। मानसून के समय उनमें काफी पानी रहता है परन्तु मानसून के बाद धीरे–धीरे कम होने लगता है और लम्बे समय तक उनका प्रवाह बहुत कम रहता है। इसीलिए सिंचाई तथा विद्युत उत्पादन के लिए जलाशय बना कर जल संग्रह करना आवश्यक हो जाता है। प्रायद्वीपीय भारत की प्रमुख नदियाँ नर्मदा, ताप्ती, बैतरणी, ब्राह्मनी, गोदावरी, कावेरी और कृष्णा हैं।

देश में 147 अरब घन मीटर पानी संग्रहीत करने की क्षमता निर्माण हो चुकी है। स्वतंत्रता के समय यह क्षमता 18 अरब घन मीटर थी। यह संग्रह–क्षमता नदी बेसिनों में कुल प्रवाहित जल की लगभग 7.87 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि अभी भी 92 प्रतिशत सतही जल को संग्रहीत करने का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। जल–संग्रहण क्षमता ब्रह्मपुत्र बेसिन में 0.2 प्रतिशत से लेकर ताप्ती बेसिन में 48.2 प्रतिशत तक है (सारणी क्र. 2.1)। ब्रह्मपुत्र, गंगा और नर्मदा जैसे बड़े नदी बेसिनों और सुवर्णरेखा एवं बैतरणी बेसिनों में जल–संग्रह करने की क्षमता बहुत कम है। इसी तरह गोदावरी, महानदी, ब्राह्मणी तथा साबरमती बेसिनों में जल–संग्रह का कम प्रबन्ध किया जा सका है।

टिप्पणी

(2) अधोभौमिक जल (Ground Water) – देश में पुनः पूर्तियोग्य (replenishable) अधोभौमिक जल का अनुमानित भंडार लगभग 433.9 अरब घन मीटर है। इसका लगभग 90 प्रतिशत असंगठित संरचना, 6 प्रतिशत अर्द्ध–संगठित चट्टानों वाली संरचना और 4 प्रतिशत संगठित संरचना में संचित है। असंगठित शैल समूहों मे रेत, बजरी, बोल्डर, लेटराइट, दोमट और धीका प्रमुख हैं। असंगठित चट्टानों तथा मिट्टी का प्रमुखतः क्षेत्र उत्तरी भारत है। इसीलिए इस वृहद् मैदान में अधोभौमिक जल के विकास की अपार सम्भावनाएँ हैं। यहाँ भारी क्षमता वाले ट्यूब वेल खोदे जा सकते हैं। सतलज–गंगा के मैदान के अलावा भाभर क्षेत्र ब्रह्मपुत्र बेसिन, राजस्थान में लूनी बेसिन, तटीय मैदान, काश्मीर घाटी, दून क्षेत्र और मणीपुर घाटी में असंगठीत चट्टानें पाई जाती हैं, फलतः इन क्षेत्रों में भी अधोभौमिक जल का प्रचुर भंडार है। संगठित चट्टानें, ग्रेनाइट, नाइस, बैसाल्ट, स्लेट आदि भारतीय प्रायद्वीप के अधिकांश भाग पर फैली है। इन चट्टानों में रंध्रता बहुत कम होती है। फलतः इन भागों में अधोभौमिक जल का भंडार बहुत सीमित होने का अनुमान है। केवल अपक्षयित रंध्रयुक्त शैलों, शैल–संधियों (joints) और विभागों (fractures) में ही जल का भंडार मिलता है। अर्द्ध–संगठित चट्टानी संरचना में मुख्यतः परतदार चट्टानें (बलुआ पत्थर, चूनें का पत्थर, कांग्लोमरेट्स) आती हैं। इनमें रंध्रता और छिद्र काफी अधिक होते हैं। इस कारण इन शैल समूहों मे भी अधोभौमिक जल के भंडार पाए जाते हैं। ये शैल समूह राजस्थान, गुजरात और तमिलनाडु राज्यों में पायी जाती हैं। यहाँ भी ट्यूब वेल तथा गहरे कुएँ खोदे जा सकते हैं।

कुल पुनःपूर्ति योग्य अधोभौमिक जल संसाधन (433.9 अरब घ. मी.) में से लगभग 71.3 अरब घन मीटर का उपयोग घरेलू तथा औद्योगिक कार्यों के लिए किया जाता है तथा केवल 362.6 अरब घन मी. सिंचाई के लिए उपलब्ध है। जिसमें से शुद्ध 325.8 अरब घन मी. सिंचाई के लिए उपयोग किया जा सकता है। इसमें से वर्तमान में 135.0 अरब घनमीटर का उपयोग हो रहा है और 227.6 अरब घन मीटर का उपयोग भविष्य में हो सकेगा।

अधोभौमिक जल की सूचना बेसिनवार न होकर राज्यवार है (सारणी क्र. 2.2)। सम्भाव्य अधोभौमिक जल संसाधन का वितरण भी असमान हैं। संभाव्य भंडार की दृष्टी से क्रमशः उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, आन्धप्रदेश, मध्य प्रदेश और बिहार सबसे प्रमुख है, जहाँ देश का आधा अधोभौमिक जल संसाधन संचित है। अन्य पांच राज्यों–तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, गुजरात, उड़ीसा और पंजाब में देश का एक–चौथाई से अधिक संभवित अधोभौमिक जल है। इससे स्पष्ट है कि अधोभौमिक जल का लगभग 40 प्रतिशत गंगा बेसिन में है। इसका हिस्सा उपयुक्त भूगर्भिक संरचना समतल घरातल और समुचित वर्षा है। वास्तव में अधोभौमिक जल भंडार में जलभृत (aquifier) का महत्वपूर्ण योगदान होता है। सतलज गंगा के मैदान में जलभृत स्तर बहुत मोटा है और उसकी जल धारण करने की क्षमता अत्याधिक है। इसी कारण इतना प्रचुर भंडार है। इस प्रकार तटीय मैदानों तथा एलूवियल शैलयुक्त नदी घाटियों में भी मोटे जलभृत स्तर के कारण अधोभौमिक जल का बड़ा भंडार पाया जाता है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 2.2

भारत सम्भावित अधोभौमिक जल के उपयोग के अनुपात के आधार पर राज्यों का वर्गीकरण 2001–2002 (मात्रा अरब घन मीटर)

राज्य	पुनःपूर्ति–योग्य (अ.घ.मी.)	देश के भंडार का %	उपलब्ध भंडार (अ.घ.मी.)	शुद्धउपयोग की मात्रा (अ.घ.मी.)	उपयोग उपलब्धता की मात्रा का %
आन्ध्रप्रदेश	352909	8.13	299973	78304	26.1
अरूणाचलप्रदेश	14385	0.33	12227	अल्प	अल्प
आसाम	224786	5.18	191068	14249	7.49
बिहार	269796	6.22	229327	82527	35.99
छत्तीसगढ़	–160705	3.70	136599	07647	5.6
गोआ	2.182	0.50	1.855	0.0154	8.3
गुजरात	20.3767	4.70	17.3199	8.5327	49.27
हरियाणा	1.1794	2.58	9.5025	7.1846	75.61
हिमाचल प्रदेश	0.2926	0.07	0.2487	0.0413	16.33
जम्मू–काश्मीर	4.4257	1.02	3.762	0.0403	1.07
झारखण्ड	6.6045	1.52	5.6138	1.2146	21.64
कर्नाटक	16.175	3.73	13.7564	4.5481	33.06
केरल	7.9003	1.82	6.5869	1.2509	18.99
मध्य प्रदेश	34.8186	8.03	29.5958	7.3816	24.95
महाराष्ट्र	37.8677	8.73	25.4704	8.8370	34.7
मणिपुर	3.154	0.73	2.681	अल्प	अल्प
मेघालय	0.5397	0.12	0.4587	0.0182	अल्प
मिजोरम	अनुमाानित नही				
नागालैंड	0.724	0.17	0.615	अल्प	अल्प
उड़ीसा	20.1287	4.64	17.1094	2.6037	15.22
पंजाब	18.1923	4.19	16.373	16.1020	98.34
राजस्थान	12.6021	2.90	10.6044	7.7245	72.84
सिक्किम	अनुमानित नही				
तमिलनाडु	26.4069	6.09	22.4458	14.0398	62.55
त्रिपुरा	0.6634	0.15	0.5639	0.1885	33.43
उत्तरप्रदेश	82.5459	19.03	70.164	29.7619	42.42
उत्तरांचल	2.8411	0.65	2.4149	0.6843	28.34
पश्चिम बंगाल	23.0914	5.32	19.6277	6.2175	32.19
सभी राज्य	433.0063	99.80	362.0191	134.7627	37.23
केन्द्र शासित राज्य	0.853	0.20	0.3358	0.2777	अल्प
सम्पूर्ण भारत	4338593	100.00	3625938	1350104	37.24

स्रोतः भारत सरकार–भारत 2002।

टिप्पणी

अभी तक कुल उपलब्ध अधोभौमिक जल के केवल 37.24 प्रतिशत का ही विकास हो पाया है। राज्यस्तर पर कुल सम्भावित अधोभौमिक जल में से विकसित जल का प्रतिशत जम्मू काश्मीर में 1.07 प्रतिशत से लेकर पंजाब में 98.34 प्रतिशत तथा दिल्ली में 120.78 प्रतिशत है। उत्तरपूर्वी राज्यों में इसके विकास की आवश्यकता ही नहीं महसूस की गई। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, उत्तरप्रदेश, और दक्षिणी राज्य तमिलनाडु में शुद्ध निकाले गये अधोभौमिक जल का प्रतिशत देश के औसत (37.24) से काफी अधिक है। इस तरह उपलब्धता और उपयोग का कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। बल्कि उन राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में अधोभौमिक जल का विकास सर्वाधिक हुआ है, जहाँ औसत वर्षा कम और वर्षा की परिवर्तनशीलता अधिक है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तरप्रदेश, राजस्थान, गुजरात और तमिलनाडु ऐसे ही राज्य हैं। आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, कर्नाटक और महाराष्ट्र राज्यों में भी वर्षा अपर्याप्त और उसकी परिवर्तनशीलता अधिक है। इस कारण इन राज्यों में भी अधोभौमिक जल संसाधन के विकास की आवश्यकता अधिक है।

जल संसाधन की दृष्टि से समस्याप्रद प्रदेश

जल संसाधन वितरण से स्पष्ट है कि देश में कुछ ऐसे क्षेत्र है जहाँ पर्याप्त जल उपलब्ध हैं, तो दूसरी ओर ऐसे विस्तृत क्षेत्र है जो इन संसाधनों में बहुत गरीब हैं। अगर जल की पूर्ति की कमी को समय के संदर्भ में देखा जाय तो इसे वर्षा की कमी से जोड़ा जा सकता है। वर्षा की कमी तीन प्रकार के वर्षों में हो सकती है – (1) सामान्य वर्षा वाले वर्षों में, (2) सामान्य से कम वर्षा वाले वर्षों में, और (3) सूखा वाले वर्षों में। प्रथम दो प्रकार के क्षेत्र कहीं भी हो सकते हैं, परन्तु सूखाग्रस्त क्षेत्र स्थायी है। वर्षा की मात्रा और जल संसाधन की उपलब्धि के आधार पर भारत को तीन प्रकार के प्रदेशों में बाँटा जा सकता हैं, जिन्हें घरातल और जलभर संरचना के आधार पर कई उप–प्रकारों में बाँटा जा सकता है–

(अ) 100 सेंटीमीटर से अधिक वर्षा वाले क्षेत्र –

1. गहरे एलूवियल बेसिन, जिनमें अधोभौमिक जल संसाधन की प्रचुर मात्रा होती हैं, अस्तु समस्याहित होते हैं। उदाहरण के लिए सतलज–गंगा–ब्रह्मपुत्र बेसिन।
2. छिछले एलूवियल बेसिनों में वर्षाऋतु के अलावा अन्य ऋतुओं तथा सूखा के वर्षों में पानी की कमी होती है, जैसे मध्य प्रदेश और उड़ीसा।
3. पर्वतीय–पहाड़ी–पठारी क्षेत्रों में अधिक वर्षा होते हुए भी पानी की कमी बनी रहती है, क्योंकि ऐसे क्षेत्रों में वर्षा का जल तेजी से बह जाता है, न मिट्टी सोख पाती है और न ही इसे रोकने के लिए जलाशय बनाए जा सकते हैं, जैसे पश्चिमी घाट हिमालय क्षेत्र, विन्ध्याचल के सीमावर्ती क्षेत्र।

(ब) 60 से 100 सेंटीमीटर वर्षा वाले क्षेत्र –

1. गहरे एलूवियल बेसिन समस्यारहित होते हुए भी ग्रीष्मकाल में पानी की तंगी में होते हैं, जैसे मध्य प्रदेश, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश के अधिकतर भाग।

2. छिछले एलूवियल बेसिनों में ग्रीष्मकाल में पानी की कमी अक्सर होती है, जैसे गुजरात के विस्तृत भाग।
3. पहाड़ी–पठारी क्षेत्रों में ग्रीष्मकाल में प्रति वर्ष पानी की कमी होती है और यहाँ जलाशय बना कर अथवा दूर से पानी का परिवहन कर इस कमी को पूरा किया जा सकता है, जैसे विन्ध्यांचल पठार, अरावली की पहाड़ियाँ, पूर्वी घाट के कुछ हिस्से।

टिप्पणी

(स) 60 सेंटीमीटर से कम वर्षा वाले क्षेत्र – 60 सेंमी. से कम वर्षा वाले क्षेत्र देश के समस्या वाले क्षेत्र हैं। इन्हें सतही जल पर निर्भर रहना पड़ता है। वाष्पीकरण इतना अधिक होता है कि ग्रीष्मकाल आते तक मिट्टी की नमी समाप्त हो जाती है। अधोभौमिक जल का पुनर्भरण बहुत ही कम होता है तथा जल–तल बहुत नीचे होता है। ऐसे क्षेत्रों में कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात के विस्तृत भाग तथा राजस्थान का अधिकांश भाग आता है।

जल संसाधन का उपयोग (Uses of Water Resource)

भारत में प्रति वर्ष लगभग 500 अरब घन मीटर जल का उपयोग किया जाता है जो कुल उपलब्ध जल संसाधन का लगभग 40% है। जल के विविध उपयोग हैं। इस तरह प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष औसतरूप से 588 घन मीटर का उपभोग किया जाता है। विश्व का औसत 648 घन मीटर का है। जल के आर्थिक उपयोगों में सिंचाई के लिए इसका उपयोग सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इसके अलावा जल विद्युत का उत्पादन, औद्योगिक उपयोग, आवागमन के साधन, अपशिष्ट पदार्थ को हटाने तथा शुद्धिकरण के साधन तथा मनोरंजन के साधन के रूप में भी जल का उपयोग किया जाता है। वर्तमान समय (सन 1999) में कुल जल संसाधन का लगभग 84 प्रतिशत रह जायेगा क्योंकि अन्य उपयोगों में आश्चर्यजनक वृद्धि होने की सम्भावना है। इसके विपरीत केवल 4 प्रतिशत घरेलू जनसंख्या के कारण प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति औसतरूप से प्राप्य उपयोग योग्य पानी की मात्रा सन् 1951 में 3450 घन मीटर से घटकर सन् 1999 में 1250 घन मीटर हो गया तथा सन् 2050 में 760 घन मीटर हो जाने की संभावना है।

सिंचाई (Irrigation)

भारत उष्ण कटिबन्ध में स्थित है, जहाँ वर्षा एक ही ऋतु में होती है। जल का मुख्य उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। वर्तमान में लगभग 84 प्रतिशत जल का उपयोग सिंचाई में होता है। भारत में सिंचाई ईसा पूर्व से हो रही है। उदाहरण के लिए कावेरी नदी पर ग्राण्ड एनीकट बाँध का निर्माण पहली सदी में ही हो गया था। आधुनिक सिंचाई प्रणाली का विकास सन् 1882 में उत्तर प्रदेश में पूर्वी यमुना नहर के निर्माण के साथ प्रारम्भ हुआ था। प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ तक लगभग 226 लाख हेक्टर भूमि पर सिंचाई की जाती थी। स्वतंत्रता के बाद सिंचित क्षेत्र में काफी तेजी से वृद्धि हुई है। सन् 1999–2000 में लगभग 847 लाख हेक्टर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

भारत में सिंचाई का महत्व एवं आवश्यकता
(Need and Importance of Irrigation in India)

टिप्पणी

भारत का अधिकांश भाग उष्ण कटिबंध में स्थित होने के कारण यहाँ वाष्पीकरण की दर अधिक है। फलस्वरूप कृषि–उत्पादन की वृद्धि के लिए तथा भूमि की क्षमता बढ़ाने के लिए समय पर जल की पूर्ति आवश्यक है जो सिंचाई द्वारा ही सभ्भव है। वर्षा की विशेषताएँ भी सिंचाई को आवश्यक बना देती है। देश में सिंचाई की आवश्यकता निम्न कारणों से है–

(1) वर्षा का असमान वितरण – भारत में वर्षा का वितरण बहुत असमान है। यह थार मरूस्थल में 25 सेंमी. से कम और चेरापूँजी के निकट मौसीग्राम मे 1200 सेंमी. तक है। भारत के अधिकांश भाग में वर्षा काफी कम होती है जो कृषि उत्पादन के लिए अपर्याप्त है। उत्तर–पश्चिम भारत और दक्कन पठार इसी तरह के शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्र हैं।

(2) वर्षा का कुछ महीनों में सीमित होना – देश में वर्षा कुछ महिनों में ही होती है और शीतकाल तथा ग्रीष्मकाल लगभग शुष्क रहता है। फलस्वरूप अन्य महिनों में बिना सिंचाई के कृषि संभव नहीं हो पाती है। भारत की उष्ण और उपोष्ण जलवायु में फसलों का उत्पादन साल भर सभ्भव है। फलस्वरूप, सिंचाई की सुविधाओं के विस्तार से ही शुष्क काल में फसलें पैदा की जा सकती हैं।

(3) वर्षा की अधिक परिवर्तनशीलता – देश की वर्षा समय के सन्दर्भ में भी बहुत परिवर्तनशील है। वर्षा की मात्रा और परिवर्तनशीलता का विपरीत का सम्बन्ध है, अर्थात वर्षा घटने के साथ साथ उसकी परिवर्तनशीलता बढ़ती जाती है। फलस्वरूप सिंचाई की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। बिना सिंचाई के मानसून पर निर्भरता बढ़ती है तथा अकाल की संभावना भी बढ़ जाती है।

भारत में न केवल वर्षा की मात्रा अनिश्चित होती है बल्कि वर्षा का आगमन तथा समाप्त होना अनिश्चित है। साथ ही इसकी तारतम्यता, लय, तथा सघनता भी अनिश्चित होती है। कृषि के लिए इस तरह के संकटों से केवल सिंचाई ही सुरक्षा प्रदान करती है। फलस्वरूप वर्षा ऋतु में भी सिंचाई आवश्यक हो जाती है।

(4) कुछ फसलों के लिए अधिक जल की आवश्यकता – चावल, गन्ना, जूट आदि फसलों के लिए तुलनात्मक रूप से नियमित अधिक जल की आवश्यकता होती है। इसकी पूर्ति केवल सिंचाई से ही संभव है।

(5) उन्नत किस्म के बीजों के लिए नियमित जल पूर्ति की आवश्यकता – उन्नत किस्म के बीजों के लिए सतत् जल की आवश्यकता होती है। इसीलिए उन्नत बीजों पर आधारित हरित क्रांति वहीं सफल हुई जहाँ पर सिंचाई की सुविधा पर्याप्त है।

(6) कृषि की उत्पादकता – असिंचित क्षेत्रों की तुलना में सिंचित क्षेत्रों में उत्पादकता अधिक है। इसीलिए कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाने के लिए सिंचाई का विकास आवश्यक है। यह उत्पादन दर की अस्थिरता को भी कम करती है।

(7) डेयरी उद्योग को प्रोत्साहित करने के लिए सतत् जल की पूर्ति आवश्यक है।

टिप्पणी

सिंचाई के लिए प्राकृतिक सुविधायें (Natural Facilities for Irrigation)

भारत के विभिन्न भागों मे जल संसाधन के विकास के लिए अनेक संभावनायें हैं। धरातलीय तथा मिट्टी की विशेषताएँ भी कुछ हद तक अनुकूल है। इनमें से कुछ प्राकृतिक सुविधायें निम्न हैं –

(1) हिमालय से निकलने वाली नदियाँ सदावहिनी है, क्योंकि उनमें उद्‌गम स्थल हिम क्षेत्र और ग्लेशियर हैं।

(2) उत्तर के विशाल मैदान में नहरों का निर्माण करना सरल एवं सस्ता है, क्योंकि वहाँ गहरी जलोढ़ मिट्टी पायी जाती है। यहाँ के मैदान का ढाल भी अति मंद है।

(3) गहरी कॉप मिट्टी होने के कारण यहाँ पानी का स्तर ऊँचा है तथा अधोभौमिक जल संसाधन में धनी होने के कारण कुएँ तथा नलकूप खोदना सस्ता एवं आसान है। मिट्टी की ऊर्वरा शक्ति अधिक होने के फलस्वरूप कम समय में ही इसमें लगे व्यय की पूर्ति हो जाती है।

(4) प्रायद्वीपीय भारत में उत्तरी भारत की तरह नहरें खोदना आसान नहीं है। परन्तु धरातली सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए तालाबों तथा जलाशयों का निर्माण करना आसान है।

सिंचाई की स्थापित क्षमता तथा उसका उपयोग (Irrigation Potential Created and Utilized)

19 वीं सदी के बाद से सिंचाई की निर्मित क्षमता और उपयोग में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। वर्ष 1950–51 में सिंचाई की स्थापित क्षमता 226 लाख हेक्टेयर थी। विभिन्न योजना काल में सम्पूर्ण देश में सिंचाई सुविधाओं के विस्तार पर अधिक ध्यान दिया गया। इसके लिए कई बड़े, मध्यम एवं छोटी–छोटी सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण किया गया। इस तरह के व्यवस्थित प्रयासों के फलस्वरूप सिंचाई क्षमता प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में 226 लाख से बढ़कर आठवी पंचवर्षीय योजना के अन्त में 896 लाख हेक्टेयर और सन् 1999–2000 में 947.3 लाख हेक्टेयर हो गई है (सारणी क्र. 2.3)। यह देश की कुल सम्भावित सिंचाई क्षमता (1398.9 लाख हेक्टेयर) का 68 प्रतिशत है।

कुल स्थापित क्षमता में से बड़ी और मध्यम योजनाओं का अंश प्रथम पंचवर्षीय योजना के पहले 97 लाख हेक्टेयर था जो सन् 1999–2000 में 353.5 लाख हेक्टेयर हो गया है। इसी अवधि में छोटी सिंचाई योजनाओं की क्षमता 129 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 593.8 लाख हेक्टेयर हो गई है। इस प्रकार बड़ी और मध्यम योजनाओं की (+264 प्रतिशत) तुलना में छोटी सिंचाई योजनाओं की क्षमता (+220 प्रतिशत) तेजी से बढ़ी है। कुल अर्जित सिंचाई क्षमता में बड़ी और मध्यम योजनाओं का हिस्सा 37 प्रतिशत तथा लघु योजनाओं का 63 प्रतिशत है। उल्लेखनीय है कि लघु योजनाओं की क्षमता का (91 प्रतिशत) बड़ी और मध्यम योजनाओं की क्षमता (86 प्रतिशत) से अधिक प्रयोग किया जाता है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 2.3

भारत के विभिन्न योजना काल में स्थापित एव उपयोग की गई सिंचाई क्षमता

योजनाविधि	सिंचाई योजनाओं द्वारा स्थापित क्षमता (लाख हेक्टर)			उपयोग की गई क्षमता (लाख हेक्टर)		
	बड़ी एवं मध्यम	लघु	कुल	बड़ी एवं मध्यम	लघु	कुल
योजनापूर्व (1951 के पूर्व)	97.0	129.0	226.0	97.0	129.0	226.0
प्रथम योजना (1951–56)	122.0	140.6	262.6	109.8	140.6	250.4
द्वितीय योजना (1956–61)	143.3	147.5	290.8	130.5	147.5	278.0
तृतीय योजना (1961–66)	165.7	170.0	335.7	151.7	170.0	321.7
वार्षिक योजनाएँ (1966–69)	181.0	190.0	371.0	167.5	190.0	357.5
चतुर्थ योजना (1969–74)	207.0	235.0	442.0	183.9	235.0	418.9
पांचवी योजना (1974–78)	247.2	273.0	520.2	211.6	273.0	484.6
वार्षिक योजनाएँ (1978–80)	266.1	300.0	566.1	226.4	300.0	526.4
छठवीं योजना (1980–85)	277.0	375.2	652.2	235.7	352.5	588.2
सातवीं योजना (1985–90)	299.2	466.1	765.3	254.7	431.2	685.9
वार्षिक योजनाएँ 1990–92	307.4	503.5	810.9	263.1	465.4	228.5
आठवीं योजना (1992–97)	329.6	566.0	895.6	284.4	523.2	807.6
वार्षिक योजनाएँ 1997–00	353.5	593.8	947.3	304.7	542.3	847.0

स्रोतः भारत सरकार–भारत 2002।

नौवीं पंचवर्षीय योजना के पहले देश में 171 बड़ी परियोजनायें 259 मध्यम परियोजनायें तथा 72 विस्तारक, नवीनीकृत तथा आधुनिक परियोजनायें कार्यरत् थीं। स्थापित क्षमता का राज्यवार वितरण बहुत ही असमान है। यह सन् 1996–1997 में मिजोरम में केवल 12.7 हजार हेक्टर और सिक्किम में 26.2 हजार हेक्टेयर से लेकर उत्तरांचल सहित उत्तरप्रदेश में 306.5 लाख हेक्टेयर है (सारणी क्र. 2.4)। उस समय के कुल 25 राज्यों में से 07 में स्थापित क्षमता 1 लाख हेक्टेयर से कम है।

नीचे दिये सारणी क्र. 2.4 से स्पष्ट है कि न केवल स्थापित क्षमता में अन्तर है, बल्कि स्थापित क्षमता के उपयोग में भी प्रादेशिक अन्तर है। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र में स्थापित क्षमता के तीन–चौथाई का भी उपयोग किया जा सका, जबकि तमिलनाडु ने अपने स्थापित क्षमता के 99.9 प्रतिशत का उपयोग किया। उत्तरी मैदान में स्थित राज्यों में बिहार, झारखण्ड तथा पश्चिम बंगाल को छोड़कर सभी राज्यों में स्थापित क्षमता के 90 प्रतिशत से अधिक का उपयोग हुआ है। दक्षिण भारत के राज्यों में विशेषकर तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, केरल और उड़ीसा में सम्भावित जल क्षमता का उपयोग काफी अधिक हुआ है, जबकी पर्वतीय राज्यों, विशेषकर पूर्वी राज्यों तथा मध्य भारत के राज्यों (छत्तीसगढ़ सहित मध्य महाराष्ट्र) में सम्भावित क्षमता का उपयोग कम हो पाया है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 2.4

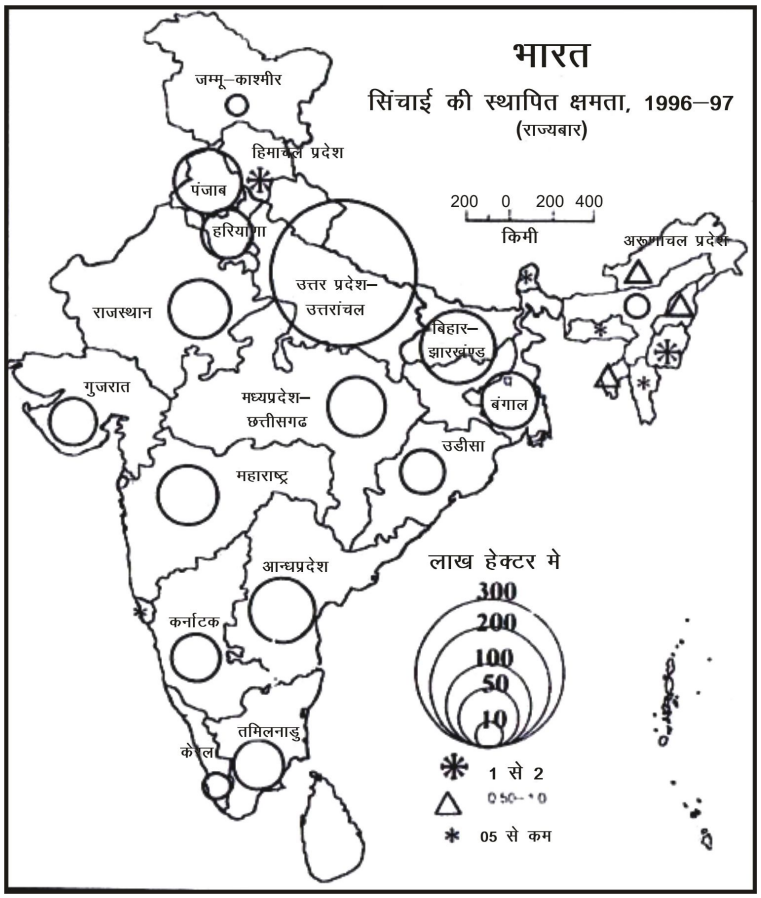
भारत में राज्यानुसार सिंचाई की स्थापित क्षमता एवं उसका उपयोग, 1996–97

क्र.	राज्य	सिंचाई की स्थापित क्षमता (हजार हेक्टेयर में)	देश की कुल क्षमता का %	उपयोग (हजार हेक्टेयर में)	उपयोग %
1.	आन्ध्रप्रदेश	5947.0	6.64	5571.0	93.7
2.	अरूणाचल प्रदेश	83.4	0.09	65.5	78.5
3.	आसाम	789.4	0.88	622.6	78.9
4.	बिहार	7910.7	8.83	8697.9	87.2
5.	गोआ	33.5	0.04	29.8	88.9
6.	गुजरात	3285.3	3.67	3039.6	92.5
7.	हरियाणा	3655.6	4.08	3365.2	92.0
8.	हिमाचल प्रदेश	160.9	0.18	134.0	83.3
9.	जम्मू और काश्मीर	548.3	0.61	508.7	92.8
10.	कर्नाटक	3197.0	3.57	2960.4	92.6
11.	केरल	1086	1.21	1001.8	92.2
12.	मध्य प्रदेश	4975.1	5.56	4043.0	81.3
13.	महाराष्ट्र	4932.2	5.51	3628.8	73.6
14.	मणीपुर	123.4	0.14	103.2	83.6
15.	मेघालय	45.5	0.05	39.5	86.8
16.	मिजोरम	12.7	0.01	11.2	88.2
17.	नागालैण्ड	67.2	0.08	57.9	86.2
18.	उड़ीसा	2915.2	3.26	2669.7	91.6
19.	पंजाब	5867.0	6.55	5748.5	98.0
20.	राजस्थान	4695.1	5.24	4425.2	94.2
21.	सिक्किम	26.2	0.03	20.6	78.9
22.	तमिलनाडु	3660.7	4.09	3656.8	99.9
23.	त्रिपुरा	94.9	0.11	86.3	90.9
24.	उत्तर प्रदेश	30654.0	34.23	28049.0	91.5
25.	पश्चिम बंगाल	4661.4	5.20	3909.4	83.9
	कुल राज्य	89428.5	99.85	80645.8	90.2
	केन्द्रशासित प्रदेश	130.4	0.15	113.4	86.9
	महायोग	**89558.9**	**100.00**	**80759.2**	**90.2**

प्रमुख बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ (Major Multipurpose Projects) – भारतीय नदियों पर ऐसी योजनाएँ बनाई गई हैं जिससे इनके जल का कई उद्देश्यों के लिए प्रयोग किया जा सकता है, जैसे, बाढ़ नियंत्रण, जल परिवहन, विद्युत–उत्पादन, सिंचाई, मछलीपालन, भूमि का कटाव रोकना, पीने तथा उद्योगों के लिए पानी प्रदान करना इत्यादि। इसीलिए इनको बहुउद्देश्यीय परियोजनाएँ कहा जाता हैं। इनमें से प्रमुख परियोजनायें निम्न हैं।

टिप्पणी

भाखड़ा नांगल परियोजना – यह देश की सबसे बड़ी नदी परियोजना है। यह पंजाब, राजस्थान, सतलज तथा हरियाणा राज्यों की संयुक्त परियोजना है। पंजाब में रोपड़ के निकट भाखड़ा नामक स्थान पर सतलज नदी पर भारत का सबसे ऊँचा बांध बनाया गया है। इसकी ऊँचाई 235 मीटर तथा लम्बाई 338 मीटर है। भाखड़ा बांध के जलाशय का नाम गोविन्द सागर रखा गया है। यह जलाशय हिमाचल प्रदेश में है। इस नदी पर दूसरा बांध नांगल स्थान पर बनाया गया है। यह 315 मीटर लम्बा और 29 मीटर ऊँचा है। यहाँ गंगुवाल तथा कोटला में जलविद्युत गृह बनाये गये हैं। तीसरा विद्युत गृह रोपड़ में बनाया गया है। इनसे प्रतिवर्ष 1204 मेगावाट विद्युत का उत्पादन होता है। इन विद्युत गृहों से पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा दिल्ली राज्यों को बिजली प्राप्त होती है। सिंचाई के लिए भाखड़ा बांध से 1100 किमी. लम्बी नहरें निकाली गई हैं। इन नहरों की 3500 उपशाखाओं के द्वारा लगभग 14.6 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है।



चित्र क्र. 2.1: भारत–सिंचाई की स्थापित क्षमता

रिहन्द परियोजना – उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर नगर से 161 किमी दूर सोन नदी की सहायक रिहन्द नदी पर एक बांध का निर्माण किया गया है। इस योजना द्वारा लगभग 57 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है, परन्तु प्रमुख उद्देश्य जलविद्युत उत्पादन करना है। इससे लगभग तीन लाख कि.वॉ. विद्युत उत्पादन किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस परियोजना से मछली पालन, मनोरंजन, पर्यटन तथा मिट्टी के कटाव रोकने में भी सहाय्यता मिलती है।

टिप्पणी

दामोदर घाटी परियोजना (DVC) – इस परियोजना की रूपरेखा अमेरिका की टेनेसी घाटी योजना के अनुरूप तैयार की गई है। यह योजना झारखण्ड–बिहार, पश्चिम बंगाल और केन्द्र सरकार के सहयोग से लागू हुई है। दामोदर नदी झारखंड के छोटा नागपुर पठार से निकलकर पश्चिम बंगाल में हुगली नदी में मिल जाती है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य बाढ़ नियंत्रण था, किन्तु निर्माण होने के बाद इस परियोजना से सिंचाई, जलविद्युत, मछलीपालन, जल परिवहन तथा भूमि–अपरदन का रोक–थाम भी किया जाने लगा। इस परियोजना में चार नदियों– बराकर, कोरार, दामोदर तथा बोकारो–पर आठ बांध (तिलैया, मैथान, बालपहाडी, कोनार, पंचत, अय्यर, बर्मो तथा बोकारो) का निर्माण किया गया है। दुर्गापुर के पास भी एक बांध बनाया गया है। इनके अलावा बोकारो, चन्द्रपुर और दुर्गापुर में तापीय विद्युत केन्द्र बनाए गए हैं। इस योजना की नहरों की कुल लम्बाई 2495 किमी. है तथा इनकी क्षमता 37 लाख हेक्टेयर सींचने की है। सिंचाई मुख्यरूप से पश्चिम बंगाल के **बर्दवान** जिले में की जाती है। डीवीसी की विद्युत उत्पादन की कुल स्थापित क्षमता 1181 मैगावाट है। जमशेदपुर, दुर्गापुर, बर्नपुर–कुल्टी में स्थित बड़े उद्योगों को इसी परियोजना से बिजली मिलती है। दुर्गापुर से **कोलकाता** को जोड़ने के लिए 137 किमी. लम्बी नाव चलाने योग्य नहर बनाई गई है।

हीराकुण्ड परियोजना – यह भी एक बहु–उद्देशीय परियोजना है जो उड़ीसा राज्य के सम्बलपुर जिले में महानदी पर स्थित है। महानदी पर तीन बांध–हीराकुण्ड, टीकापारा तथा नरोज का निर्माण किया गया है। इसमें से हीराकुण्ड प्रमुख बांध है, जो 4.8 किमी. लम्बा तथा 61 मीटर ऊँचा है। इस बांध से निकली 147 किमी नहर से लगभग 2.54 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है। इस परियोजना की 270 मेगावाट जलविद्युत पैदा करने की स्थापित क्षमता है। समीप के इस्पात सीमेंट, एलूमिनियम, कपड़ा तथा कागज उद्योगों के लिए बिजली तथा पानी यहीं से प्रदान किया जाता है।

चम्बल परियोजना – यह परियोजना मध्य प्रदेश तथा राजस्थान की संयुक्त बहु–उद्देशीय नदी घाटी परियोजना है। इसका उद्देश्य चम्बल नदी के जल का उपयोग सिंचाई और विद्युत उत्पादन के लिए करना है। इसके लिए चम्बल नदी पर गाँधीसागर (म.प्र.) राणाप्रताप सागर, कोटा अवरोधक तथा ह्वरसा बांधो (राज़स्थान) का निर्माण किया गया है। इन बांधों पर स्थित विद्युत गृहों की उत्पादन क्षमता 772 मेगावाट स्थापित कर ली गई है। राजस्थान के सीमेंट, संगमरमर, नमक तथा जिंक उद्योगों को यहाँ से बिजली प्राप्त होती है। इन बांधों से लगभग 566 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

कोसी परियोजना – कोसी नदी में आने वाली विनाशकारी बाढ़ को रोकने के लिए यह परियोजना प्रारम्भ की गई थी। इसके साथ ही बाढ़–नियंत्रण जलविद्युत का उत्पादन, सिंचाई, भूमि कटाव आदि भी इस परियोजना के उद्देश्य हैं। हनुमानगढ़ बांध नेपाल में बनाया गया जो 12 किमी. लंबा तथा 72 मी. उंची है इससे नहरे निकालकर बिहार में 7.79 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की क्षमता अर्जित कर ली गई है। पूर्वी कोसी नहर पर स्थित विद्युत शक्ति गृह से लगभग 20 मेगावाट जल विद्युत पैदा हो सकेगी। यह भारत की योजना है तथापि नेपाल को भी इससे लाभ मिल रहा है।

टिप्पणी

तुंगभद्रा परियोजना – यह आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक राज्य की संयुक्त परियोजना है। इसमें तुंगभद्रा नदी पर मल्लपुरम् स्थान पर 2441 मीटर लम्बा तथा 50 मीटर ऊँचा बांध बनाया गया है। इससे आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक राज्यों मे 3.32 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है। इस परियोजना के अन्तर्गत तीन–मुनीराबाद हम्पी तथा हास्पेट जल विद्युत केन्द्रों से लगभग 126 लाख कि. वाट जल विद्युत निर्माण की क्षमता है।

नागार्जुन परियोजना – आन्ध्रप्रदेश के नालगोड़ा जिले में स्थित कृष्णा नदी पर नागार्जुन सागर बांध बनाया गया। यह 92 मीटर ऊँचा और 1450 मीटर लम्बा है। इस बांध से निकली नहरों के द्वारा लगभग 4 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर सिंचाई की जाती है तथा स्थापित जलविद्युत केन्द्र से 50 मैगावाट बिजली तैयार की जाती है।

भारत में सिंचित क्षेत्र में प्रगति (Progress in Irrigation Areas in India)

भारत में सन् 1950–51 में कुल सिंचित क्षेत्र 226 लाख हेक्टेयर था, जो बढ़कर सन् 1999–2000 में 847 लाख हेक्टेयर हो गया है (सारणी क्र. 2.5)। इस प्रकार इन 50 वर्षों मे सिंचित क्षेत्र में लगभग तीन गुनी–वृद्धि हुई है। इसके साथ ही सिचिंत क्षेत्र का अनुपात भी बढ़ा है। सन् 1950–51 में सिंचित क्षेत्र कुल कृषित भूमि का 17.6 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 1998–99 में 38.1 प्रतिशत हो गया है। फिर भी देश की लगभग तीन–चौथाई कृषि अभी भी वर्षा पर निर्भर है। एक से अधिक बार सींचे गए क्षेत्र में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। सन् 1950–51 में यह शुद्ध सिंचित क्षेत्र का 8.7 प्रतिशत था जो सन् 1997–98 में बढ़ कर 33.4 प्रतिशत हो गया है।

सारणी क्र. 2.5

भारत में सिंचित क्षेत्र में वृद्धि 1950–2000 (लाख हेक्टर में)

वर्ष	कुल कृषित भूमि	सिंचित भूमि	प्रतिशत
1950– 51	1188	208	17.6
1959–60	1332	247	18.5
1969–70	1391	304	21.9
1980–81	1750	550	31.4
1985–86	1760	621	35.3
1990–91	1857	662	35.6
1995–96	1875	714	38.1
1997–98	1906	727	38.1
1998–99	1926	–	–
1999–2000	–	847	

स्रोतः सांख्यकीय सार, भारत 2001।

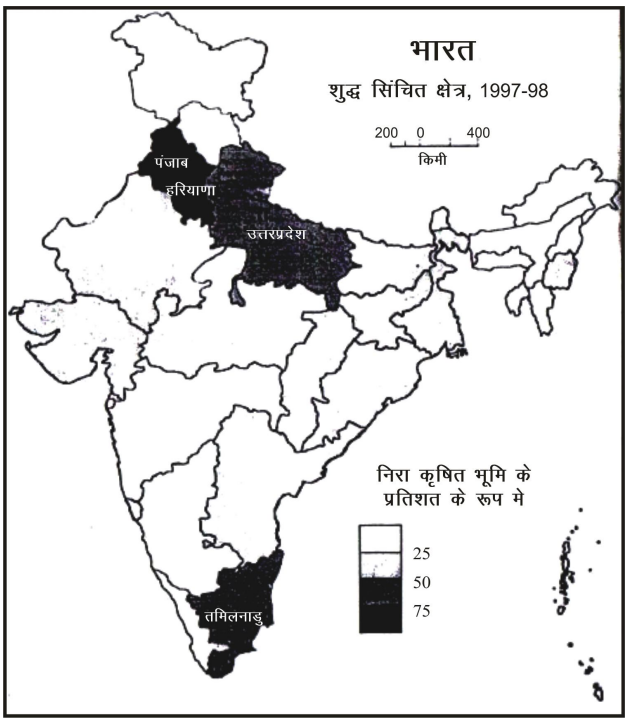
सिंचित क्षेत्र का वितरण (Distribution of Irrigated Area)

राज्यों में सिंचित क्षेत्र का वितरण काफी असमान है। यह मिजोरम राज्य में केवल 8 हजार हेक्टेयर से लेकर उत्तरप्रदेश–उत्तराचंल राज्य में 1747 लाख हेक्टेयर है। देश

टिप्पणी

का लगभग एक–चौथाई सिंचित क्षेत्र अकेले उत्तर प्रदेश में है। पंजाब, मध्य प्रदेश, राजस्थान और आन्ध्रप्रदेश ऐसे चार राज्य हैं, जहाँ प्रत्येक में 50 लाख से अधिक सिंचित क्षेत्र हैं। देश के कुल सिंचित क्षेत्र का लगभग दो–तिहाई (59.4 प्रतिशत) इन पांच राज्यों में सीमित है। बिहार, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र और तमिलनाडु प्रत्येक में 30 से 50 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर सिंचाई की जाती है। इस तरह देश के कुल सिंचित भूमि का 86.6 प्रतिशत इन दस राज्यों मे केन्द्रित है। तीन राज्यों–कर्नाटक, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में प्रत्येक में 20 से 30 लाख कृषि भूमि सींची जाती है। दूसरी ओर कुल 25 में से 12 ऐसे राज्य हैं जिनमें प्रत्येक में सकल सिंचित क्षेत्र 1 लाख हेक्टेयर से कम है। कुल मिला कर देश की केवल 2.7 प्रतिशत सिंचित भूमि इन 12 राज्यों में है।

शुद्ध सिंचित क्षेत्र को शुद्ध कृषित भूमि के अनुपात के रूप में देखने से अलग ही चित्र दिखाई देता है। मिजोरम राज्य में शुद्ध कृषित भूमि का केवल 73 प्रतिशत भाग ही सिंचित है, जबकि पंजाब में 90.8 प्रतिशत शुद्ध कृषित भूमि पर सिंचाई की जाती है। सात राज्यों में शुद्ध सिंचित क्षेत्र का अनुपात 40 प्रतिशत से अधिक है (सारणी क्र. 2.2)। पंजाब राज्य का इसमें प्रथम स्थान और इसका पड़ोसी राज्य हरियाणा दूसरे स्थान पर है। साथ ही उत्तर प्रदेश (68.3 प्रतिशत) बिहार (48.8%) और उत्तरी राज्य जम्मू और काश्मीर (42.1 प्रतिशत) में भी शुद्ध सिंचित क्षेत्र 40 प्रतिशत से अधिक है। इस पेटी से बाहर पूर्वी राज्य मेघालय (46.4 प्रतिशत) और दक्षिणी राज्य तमिलनाडु (52.3 प्रतिशत) इस वर्ग में आते हैं। केन्द्रशासित प्रदेशों में भी आधे से अधिक कृषित भूमि पर सिंचाई की सुविधायें उपलब्ध हैं। उत्तर के विशाल मैदानी क्षेत्र में सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार समतल मैदान उपजाऊ गहरी मिट्टी, सदावाहिनी नदियों मे प्रचुर जल की सुविधा तथा अधोभौमिक जल के विशाल भंडार के कारण अधिक हुआ है। विकास के कारणों में कम वर्षा इसकी अनिश्चितता और फसलों की अधिक जलीय आवश्यकता मुख्य है।



चित्र क्र. 2.2: शुद्ध सिंचित क्षेत्र

टिप्पणी

सिंचित क्षेत्र के मध्यम अनुपात (30 से 40 प्रतिशत) वाले राज्य एक लगातार पट्टी में अधिक सिंचित क्षेत्र के तारतम्य में फैले हैं। यह पट्टी पश्चिम में गुजरात और राजस्थान से प्रारंभ होकर पूर्व में पश्चिम बंगाल तक फैली है। इसमें मध्य प्रदेश, उड़ीसा एवं आन्ध्र प्रदेश सम्मिलित हैं। इन राज्यों में विशेषकर पश्चिमी राज्यों में कम वर्षा और उसकी अधिक अनिश्चितता के कारण वर्षा–आधारित कृषि की जाती है। फलतः न केवल कृषि की उत्पादकता बहुत कम और अनिश्चित होती है, बल्कि कृषित भूमि का अधिकतम उपयोग नही किया जा सकता। इसके लिए सिंचाई की आवश्यकता अधिक है, किन्तु सिंचाई क्षमता का विकास कम हुआ है।

कम (20 से 30 प्रतिशत) तथा बहुत कम (20 प्रतिशत से कम) सिंचित क्षेत्र उत्तर–पूर्वी राज्यों मे फैला है, जहाँ शुद्ध सिंचित क्षेत्र मिजोरम में 7.3 प्रतिशत से लेकर नागालैंड में 23.7 प्रतिशत तक है। यहाँ सिंचाई कम होने का मुख्य कारण पर्वतीय धरातल तथा अधिक वर्षा होना है। दूसरा कम सिंचित क्षेत्र महाराष्ट्र (14.5 प्रतिशत) और कर्नाटक (22.5 प्रतिशत) में है। यह दक्कन पठार का पश्चिमी घाट की वृष्टि छाया वाला क्षेत्र है जहाँ वर्षा कम और परिवर्तनशीलता अधिक है। यहाँ कम वर्षा के कारण कम सतही जल, ऊबड़–खाबड़ धरातल छिछली मिट्टी तथा अधोभौमिक जल का सीमित भंडार और अधिक गहराई के कारण यहाँ उपलब्ध जल संसाधनों का उपयोग कम ही हो पाया है। केरल में भी सिंचित क्षेत्र का अनुपात (15.5 प्रतिशत) कम है।

राज्यों के अंदर भी सिंचित क्षेत्रों के अनुपात में बहुत अधिक विभिन्नता मिलती है। जैसे कि आन्ध्रप्रदेश में अधिकांश सिंचित क्षेत्र कृष्णा–गोदावरी डेल्टा तथा तटीय भागों में ही सीमित है। इसी तरह उड़ीसा में सिंचित क्षेत्र महानदी डेल्टा में केन्द्रित है। अधिक गहन सिंचित क्षेत्र दो विस्तृत पट्टी में फैले हैं। प्रथम पेटी पंजाब से लेकर पश्चिमी बिहार तक फैली है। यह पुराना सिंचित क्षेत्र है और स्वतंत्रता के बाद सिंचाई की सुविधाओं में काफी विस्तार किया गया है। जैसी कि चर्चा की जा चुकी है कि इस पेटी में अधिक सिंचाई का मुख्य कारण अधिक भाग और अनुकूल भौतिक सुविधायें हैं। इन राज्यों ने अपने सतही तथा अधोभौमिक जल संसाधनों का बड़े पैमाने पर दोहन कर लिया है तथा ये सिंचाई के लिए नहरों तथा नलकूपों (ट्यूबवेल) पर निर्भर रहते हैं। दूसरी सघन सिंचित पेटी का विस्तार उड़ीसा में महानदी डेल्टा से लेकर तमिलनाडु में कावेरी डेल्टा तक पूर्वी घाट के सहारे हैं। जलोढ तटीय मैदान तथा सिंचाई के लिए उपलब्ध पर्याप्त सतही जल के कारण यहाँ सिंचाई का विकास काफी **पहले** कर लिया गया था। अन्य राज्यों में **सघन** सिंचाई वाले क्षेत्र एकाकी हैं, जैसे काश्मीर घाटी, ब्रह्मपुत्र घाटी, पश्चिम बंगाल में बीरभूमि जिला, दक्षिणी छत्तीसगढ़ बेसिन, मध्य प्रदेश में चम्बल बेसिन और बुन्देलखण्ड आदि।

इसी तरह अल्प सिंचित क्षेत्र जम्मू–काश्मीर, हिमाचल प्रदेश उत्तरांचल, सिक्किम तथा पूर्वोत्तर राज्य अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, मणीपुर, त्रिपुरा और मिजोरम के पहाड़ी तथा हिम से ढके भाग हैं। इन क्षेत्रों मे सिंचाई के विकास में विषम धरातल, कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि तथा उच्च भागों में हिमावरण बाधक हैं। इसी तरह पूर्वी मध्य प्रदेश, पूर्वी महाराष्ट्र, दक्षिणी छत्तीसगढ़ तथा पश्चिमी उड़ीसा में भी सिंचाई का विकास बहुत कम हुआ है। सामान्यतया उन भागों मे सिंचाई का कम और बहुत कम विकास हो पाया है, जहाँ सीमित सतही जल प्रवाह, बहुत कम भंडार अथवा लवणीय

अधोभौमिक जल, पहाड़ी तथा ऊबड़खाबड़ धरातल और अनुपजाऊ मिट्टियाँ पाई जाती हैं। देश का विस्तृत भूभाग इसी वर्ग में आता है जहाँ कृषि–भूमि की दक्षता तो कम है ही, कृषि की उत्पादकता भी कम और अनिश्चित होती है।

टिप्पणी

सिंचाई के साधन (Means of Irrigation)

भारत में न केवल सिंचित भूमि के अनुपात में काफी प्रादेशिक विभिन्नता है, बल्कि सिंचाई के लिए उपयोग किए जाने वाले साधनों में भी सुस्पष्ट अन्तर है। इस अन्तर का प्रमुख कारण भौतिक दशाओं–धरातल, संरचना, वर्षा की मात्रा, अधोभौमिक जल–तल एवं गुणवत्ता, मिट्टी आदि में पाई जाने वाली क्षेत्रीय विभिन्नता है। सिंचाई के चार साधन हैं– नहर, कुआँ, नलकूप, तालाब तथा अन्य साधन। वर्तमान (सन् 1997–98) में शुद्ध सिंचित भूमि का आधे से अधिक (56.6%) की सिंचाई कुओं और नलकूपों द्वारा होती है (सारणी क्र. 2.6)। इस तरह अधोभौमिक जल का उपयोग करने वाले ये साधन सिंचाई के सबसे महत्वपूर्ण साधन बन गए हैं। दूसरा स्थान नहरों का है जो शुद्ध सिंचित भूमि के एक–तिहाई से कम (31.3%) भूमि को पानी दे पाती है। इनके अलावा 5.7 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्र तालाबों से तथा 6.4 प्रतिशत अन्य विविध तरीकों से सींचा जाता है।

सारणी क्र. 2.6

भारत में विभिन्न साधनों के द्वारा सिंचाई 1997–98
(क्षेत्र हजार हेक्टर में तथा कुल सिंचित क्षेत्र का %)

राज्य	नहरें		तालाब		कुआँ / नलकूप		अन्य साधन		निरा सिंचित	कुल सिंचित	
	क्षेत्र	%	क्षेत्र	%	क्षेत्र	%	क्षेत्र	%	क्षेत्र %	क्षेत्र	%
आन्ध्रप्रदेश	1538	39.0	563	14.3	1676	42.5	168	4.2	35.9	5158	37.9
अरूणाचल प्रदेश	–	–	–	–	–	–	36	100	19.5	36	14.4
आसाम	362	63.3	–	–	–	–	210	36.7	21.2	572	14.5
बिहार	1072	29.6	117	3.2	1794	49.5	641	17.7	48.8	4664	46.4
गोवा	8	33.3	–	–	16	66.6	–	–	16.9	36	21.1
गुजरात	613	20.1	29	0.9	2386	78.4	14	0.4	31.4	364.3	34.0
हरियाणा	1397	50.0	1	0.03	1363	48.8	32	1.1	77.0	4829	76.4
हिमाचल प्रदेश	3	2.8	1	0.9	13	12.4	88	83.8	19.1	176	18.1
जम्मू–काश्मीर	284	91.9	2	0.6	2	0.6	21	6.8	42.2	446	41.3
कर्नाटक	903	38.2	240	10.1	861	36.4	359	15.2	2.5	2912	23.7
केरल	104	29.7	45	12.8	83	23.7	118	33.7	15.5	417	14.3
मध्य प्रदेश	1783	28.3	219	3.5	3503	55.6	799	12.7	31.8	6527	25.1
महाराष्ट्र	538	20.9	369	14.4	1571	61.2	89	3.5	14.5	3149	14.2
मणिपुर	–	–	–	–	–	–	65	100	46.4	75	34.7

टिप्पणी

मेघालय	–	–	–	–	–	–	47	100	21.3	54	20.4
मिजोरम	8	100	–	–	–	–	–	–	7.3	10	8.6
नागालैण्ड	–	–	–	–	–	–	62	100	23.8	70	24.5
उड़ीसा	949	45.4	305	14.6	836	40.0	–	–	34.6	2318	27.5
पंजाब	1356	35.2	183	3.4	3657	67.4	134	3.5	90.8	7377	90.9
राजस्थान	1525	28.1	183	3.4	3657	67.4	57	1.1	33.7	6676	31.2
सिक्किम	–	–	–	–	–	–	16	100	16.8	16	12.6
तमिलनाडु	838	28.4	675	22.9	1413	48.0	19	0.7	52.3	3519	53.1
त्रिपुरा	21	60.0	5	14.3	4	11.4	5	14.3	12.6	60	13.5
उत्तरप्रदेश	3059	25.5	84	0.7	8583	71.4	286	2.4	68.3	17467	65.6
प. बंगाल	717	37.5	263	13.7	712	37.2	219	11.4	35.1	2491	26.8
केन्द्रशासित प्रदेश	13	28.6	–	–	50	71.4	06	8.6	51.5	86	45.5
कुल भारत	17092	31.3	3100	5.7	30880	56.6	3491	6.4	38.3	72784	37.8

स्रोतः सांख्यकीय सार – भारत 2001।

इन साधनों का सापेक्षिक महत्व समय के साथ बदलता रहता है। उदाहरण के लिये प्रथम पंचवर्षीय योजना के पहले नहरें सिंचाई के मुख्य साधन थी। इनसे शुद्ध सिंचित क्षेत्र का 39.8 प्रतिशत सींचा जाता था। नहरों के द्वारा सिंचित क्षेत्रफल में लगातार वृद्धि होती रही है। सन् 1950–51 में नहर सिंचित क्षेत्र 83 लाख हेक्टेयर था, जो बढ़कर सन् 1997–98 में 171 लाख हेक्टेयर हो गया, किन्तु नहरों के द्वारा सिंचाई का सापेक्षिक महत्व घटा है।

उदाहरण के लिये सन् 1950–51 में नहरों से 39.8 प्रतिशत क्षेत्र पर सिंचाई होती थी जो घटकर सन् 1997–98 में 31.3 प्रतिशत रह गया। इसके विपरीत विद्युत पम्प तथा डीजल पम्पों का प्रयोग बढ़ने से कुओं तथा नलकूपों के द्वारा सिंचित क्षेत्र मे बहुत तेजी से वृद्धि हुई। कुओं और नलकूपों से सन् 1950–51 में केवल 59 लाख हेक्टर भूमि सींची जाती थी जो बढ़ कर सन् 1950–51 में 28.7 प्रतिशत से बढ़ कर सन् 1996–97 में बढकर 56.6 प्रतिशत हो गया है। शेष दो साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र का सापेक्षिक महत्व घटा है। इस अवधि में तालाबों का हिस्सा 17.3 प्रतिशत से घट कर 5.7 प्रतिशत तथा अन्य स्रोतों का 14.2 प्रतिशत से घटकर 6.4 प्रतिशत हो गया है। भारत में विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में वृद्धि को सारणी क्र. 9.7 में प्रस्तुत किया गया है।

नहरें (Canals)

भारत में ऐतिहासिक काल से बांध बनाने की परम्परा रही है। कावेरी नदी पर ग्रैण्ड एनीकट चोला शासकों द्वारा प्रथम शताब्दी में बनवाया गया था। स्वतंत्रता के पूर्व कुछ बांध और नहरें बनाई गई थीं। इनमें ऊपरी कावेरी एनीकट, गोदावरी एनीकट और कृष्णा एनीकट उल्लेखनीय हैं।

टिप्पणी

ये बांध इन नदियों के डेल्टा क्षेत्रों में स्थित है। इसी तरह यमुना तथा पंजाब की नदियों पर बांध एव नहरें, तमिलनाडु की पेरियार योजना, मुथा नहर सभी 19 वीं सदी में बनीं थीं। बिहार, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ में 20 वीं सदी में बांध तथा नहरें बनाई गईं। स्वतंत्रता के बाद कई बहुउद्देशीय परियोजनाएँ पूरी की गईं।

सारणी क्र. 2.7

भारत विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल में वृद्धि, 1950–98
(क्षेत्र लाख हेक्टेयर में)

वर्ष	नहरें	तालाब	कुआ / नलकूप	अन्य साधन	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकलसिंचित क्षेत्र
1950–51	83	36	59	30	208	226
	(39.8)	(17.3)	(28.7)	(14.2)	(100)	(108.7)
1970–71	255	45	118	24	312	382
	(39.9)	(14.5)	(37.7)	(7.9)	(100)	(122.41)
1990–91	174	29	247	29	480	632
	(36.3)	(6.1)	(51.5)	(6.1)	(100)	(131.7)
1997–98	171	31	309	35	546	728
	(31.3)	(5.7)	(56.6)	(6.4)	(100.0)	(133.5)

नोट– कोष्ठक में दिये गये अंक कुल सिंचित क्षेत्र में से प्रतिशत दर्शाते हैं। स्रोत सांख्यकीय सार, भारत 2001।

देश के सभी राज्यों में नहरों के द्वारा सिंचाई होती हैं। नहरों से शुद्ध सिंचित क्षेत्र का एक–तिहाई से कम (31.3 प्रतिशत) क्षेत्र ही सींचा जाता है। यह औसत चार राज्यों में शून्य तथा हिमाचल प्रदेश में 2.8 प्रतिशत से लेकर जम्मू–काश्मीर में 91.9 प्रतिशत और मिजोरम में शत् प्रतिशत है। नहर द्वारा सिंचाई में मिजोरम (100 प्रतिशत) जम्मू–काश्मीर (91.9), आसाम (63.3), त्रिपुरा (60), हरियाणा (50), उड़ीसा (45.4), आन्ध्रप्रदेश (39), कर्नाटक (38.2), पश्चिम बंगाल (37.5), पंजाब (35.3) और गोवा (33.3) देश के औसत से आगे हैं। इनमें भी केवल आठ राज्यों में नहर सिंचाई के साधनों में प्रथम स्थान पर है। अन्य राज्यों में बिहार, केरल, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान और उत्तर प्रदेश उल्लेखनीय हैं। नहरों द्वारा प्रधान सिंचित क्षेत्र वे हैं, जहाँ स्वतंत्रता के बहुत पहले से सिंचाई की बड़ी योजनाएँ कार्यरत हैं। इनमें पंजाब–हरियाणा का मैदान, गंगा–यमुना दोआब, रूहेलखण्ड का मैदान, दक्षिणी बिहार के मैदान का पश्चिमी भाग, तमिलनाडु का कावेरी डेल्टा, आन्ध्रप्रदेश का कृष्णा–गोदावरी डेल्टा और उड़ीसा के महानदी डेल्टा मुख्यरूप से नहरों पर निर्भर है। साथ ही पश्चिम बंगाल में दामोदर घाटी, आसाम में ब्रह्मपुत्र घाटी, छत्तीसगढ़ में महानदी बेसिन, पश्चिमी राजस्थान में राजस्थान नहर क्षेत्र और कर्नाटक के कुछ नदी घाटियों में भी नहरों से ही सिंचाई होती है। विभिन्न राज्यों की प्रमुख नहरें निम्न हैं –

भारत की प्रमुख नहरें (Main Canals of India)

पंजाब और हरियाणा की नहरें (Canals of Punjab and Haryana)

टिप्पणी

उत्तरपश्चिमी भारत में स्थित होने के कारण इन राज्यों में वर्षा कम होती है। फलस्वरूप कृषि के विकास के लिये सिंचाई आवश्यक हो जाती है। यहाँ बहुत पहले से नहरों द्वारा सिंचाई की जाती रही हैं। सन् 1997–98 में इन दोनों राज्यों की 27.53 लाख हेक्टेयर भूमि नहरों द्वारा सींची गई, जो देश के नहर सिंचित क्षेत्र का 16.1 प्रतिशत है। यहाँ की प्रमुख नहरें निम्न हैं –

(1) ऊपरी बारी दोआव नहर – यह नहर रावी नदी से निकाली गई है। इसकी कुल लम्बाई 2900 किमी. है। इससे पंजाब के गुरूदासपुर तथा अमृतसर जिलों की लगभग 3 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(2) सरहिन्द नहर – यह नहर रोपड़ के पास सतलज नदी से निकाली गई है। इस नहर की लम्बाई 6115 किमी. है तथा इससे पंजाब के लुधियाना, फिरोजपुर, पटियाला तथा नामा एवं हरियाणा के हिसार और जिन्द जिलों की 7 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(3) भाखड़ा नहर – यह नहर भाखड़ा बांध से निकाली गई है। मुख्य नहर की लम्बाई 864 किमी. है। इस नहर द्वारा करनाल, रोहतक और हिसार जिलों की लगभग 7 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(4) पश्चिमी यमुना नहर – यह नहर यमुना नदी से निकाली गई है। इससे अम्बाला, करनाल, रोहतक, हिसार जिलों तथा राजस्थान एवं दिल्ली के कुछ भागों में सिंचाई की जाती है। इसकी लम्बाई 3200 किमी. है।

(5) बिस्त दोआव नहर – यह भाखड़ा–नांगल की एक शाखा है जो सतलज नदी से निकाली गई है। इसकी लम्बाई 145 किमी. है तथा यह जालन्धर और होशियारपुर जिलों की 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई करती है।

(6) गुडगांव योजना की नहर – यमुना नदी से निकाली गई है। हरियाणा के गुड़गांव और फरीदाबाद जिलों की 32 लाख हेक्टेयर भूमिपर सिंचाई की जाती है।

(7) व्यास योजना की नहर – इस योजना के अन्तर्गत व्यास नदी पर बांध बनाकर नहरें निकाली गई हैं। इनके द्वारा पंजाब, राजस्थान तथा हरियाणा की लगभग 21 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती हैं।

उत्तर प्रदेश की नहरें (Canals of Uttar Pradesh)

नहरों द्वारा सिंचाई की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण राज्य है। बड़ी नदियाँ समतल भूमि और पश्चिमी भागों में कम वर्षा के कारण यहाँ नहरों का अधिक विकास हुआ है। इस राज्य में सन् 1997–98 में 306 लाख हेक्टेयर नहरों द्वारा सींचा गया। यह देश के नहर सिंचित क्षेत्र का 17.9 प्रतिशत है। यहाँ की प्रमुख नहरें निम्न हैं –

(1) ऊपरी गंगा नहर – यह नहर हरिद्वार के निकट से गंगा नदी से निकाली गई है। मुख्य नहर 342 किमी. लम्बी है जबकि इसकी शाखायें 4632 किमी. लम्बी है जिनके द्वारा 7 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है। इस नहर के द्वारा

सहारनपुर मेरठ मुजफ्फरनगर, गाजियाबाद, बुलन्दशहर, अलिगढ़ और मथुरा जिलों में सिंचाई की जाती है।

टिप्पणी

(2) निचली गंगा नहर – यह नहर बुलन्दशहर जिलों में नरोड़ा स्थान से निकाली गई है। इसकी कुल लम्बाई 6174 किमी. है तथा इससे बुलन्दशहर, अलीगढ़, एटा, फर्रूखाबाद, कानपुर, फतेहपुर तथा इटावा जिला की 5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(3) पूर्वी यमुना नहर – यह नहर यमुना नदी से फैजाबाद स्थान से निकाली गई है। इसकी लम्बाई 1440 किमी. है तथा इससे 2 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है तथा इससे सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, गाजियाबाद व दिल्ली में सिंचाई की जाती है।

(4) आगरा नहर – यह नहर दिल्ली के समीप ओखला स्थान से निकाली गई है। इसकी कुल लम्बाई 1600 किमी. है। इससे दिल्ली, मथुरा, आगरा, गुडगांव और भरतपुर जिलों की लगभग 1.5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(5) शारदा नहर – यह नहर गोमती नदी से निकाली गई है। इसकी लम्बाई 12340 किमी. है तथा इससे इलाहाबाद, सुल्तानपुर, जैतपुर, प्रतापगढ़, रायबरेली, बाराबांकी, उन्नाव, लखनऊ, सीतापुर, हरदोई, खीरी, बरेली और पीलीभीत जिलों की 8 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है।

(6) बेतवा नहर – यह बेतवा नदी से झाँसी के पास से निकाली गई है। इसके द्वारा झाँसी, जालौन और हमीरपुर जिलों की 80 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(7) केन नहर – केन नदी से बाँदा जिला के पना स्थान से निकाली गई है। इससे बाँदा जिले की 40 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

बिहार की नहरें (Canals of Bihar)

देश का 63 प्रतिशत (10.7 लाख हेक्टेयर) नहर सिंचित क्षेत्र झारखण्ड सहित बिहार राज्य में है। इस राज्य की प्रमुख नहरें निम्न हैं।

(1) सोन बांध की नहरें – सोन नदी पर बांध बनाकर दो दायीं और बायीं नहरें निकाली गई हैं। ये दोनों नहरें शाहबद, पटना और गया जिलों की 3.5 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई करती हैं।

(2) कोसी बांध की नहरें – बाढ़ को रोकने के लिए कोसी बांध का निर्माण किया गया। इससे दो नहरें निकाली गई हैं जिनसे पूर्णिया, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, चंपारन और सारन जिलों की लगभग 8 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती हैं।

(3) मण्डक योजना – इस योजना के अन्तर्गत गण्डक नदी पर बांध बनाकर दो नहरें निकाली गई हैं जिनसे सारन, गोरखपुर, देवरिया, चंपारन, मुजफ्फरनगर तथा दरभंगा जिलों की लगभग 6.9 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(4) त्रिवेणी नहर – गंडक नदी से त्रिवेणी नामक स्थान से यह नहर निकाली गई है। इससे चंपारन जिले की एक लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है।

पश्चिमी बंगाल की नहरें (Canals of West Bengal)

टिप्पणी

राज्य की कुल सिंचित भूमि का 37.5 प्रतिशत (7.2 लाख हेक्टेयर) नहरों द्वारा सींचा जाता है। वर्षा तो पर्याप्त होती है, किन्तु इसका वितरण असमान होने के कारण सिंचाई आवश्यक हो जाती है।

(1) मयूराक्षी योजना की नहरें – इस योजना में मयूराक्षी नदी पर दो बांध कनाड़ा और तिलपाड़ा बनाये गये हैं, जिनसे लगभग 5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है। राज्य के वीरभूमि, मुर्शिदाबाद और बर्दवान जिलों की भूमि सिंचित होती है।

(2) दामोदर घाटी योजना की नहरें – दुर्गापुर नामक स्थान पर दामोदर नदी पर बांध बनाकर आसनसोल, हुगली और बर्दवान जिले की लगभग 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(3) एडन नहर – यह दामोदर नदी से निकाली गई 65 किमी. लम्बी नहर है जिससे 10 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(4) मिदनापुर नहर – यह कोसी नदी पर मिदनापुर के समीप से निकाली गई 520 किमी. लम्बी नहर है। इससे 50 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है। यह नावगम्य भी है।

राजस्थान की नहरें (Canals of Rajasthan)

राजस्थान कम वर्षा वाला राज्य है। इसीलिए फसलों के समुचित उत्पादन के लिए सिंचाई आवश्यक हो जाती है। राज्य में नहरों के द्वारा राष्ट्रीय औसत से कम भूमि पर सिंचाई की जाती है। फिर भी 15.25 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई नहरों से होती है। यह देश की नहर सिंचित भूमि का 8.9 प्रतिशत है।

(1) राजस्थान नहर – यह नहर पंजाब में सतलज नदी पर हरीक बांध का निर्माण कर के निकाली गई है। इसे इंदिरा गांधी नहर भी कहते हैं। यह पंजाब में 132 तथा राजस्थान में 470 किमी. लम्बी है। इससे श्रीगंगानगर, बीकानेर एवं जैसलमेर जिलों की लगभग 14.5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई होती है।

(2) चम्बल योजना – इस योजना में चम्बल नदी पर गांधी सागर और राणाप्रताप सागर बांध बनाये गये हैं जिनसे 5.7 लाख हेक्टर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

उड़ीसा राज्य की नहरें (Canals of Odisha)

राज्य के कुल सिंचित भूमि का 45.4 प्रतिशत (9.5 लाख हेक्टेयर) विभिन्न नहरों द्वारा सींचा जाता है। इस राज्य में नहरें सिंचाई की सबसे प्रमुख साधन हैं। इनमें से निम्न मुख्य हैं।

(1) हीराकुड बांध योजना की नहरें – महानदी पर 4.8 किमी. लम्बा बांध बनाया गया है जिनसे लगभग 4.0 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(2) केन्द्रपास नहर – यह विरूपा नदी से जगतपुर के निकट से निकाली गई है। इससे लगभग 66 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

टिप्पणी

(3) तलदन्दा नहर – यह महानदी से जोवरी एनीकट के ऊपर से निकाली गई है। यह 84 किमी. लम्बी है तथा इससे 66 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(4) सलन्दी नहर – सलन्दी नदी पर दो बांध बनाकर 82 किमी. लम्बी नहर निकाली गई है, जिससे बालासोर जिले की 62 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(5) महानदी डेल्टा की नहरें – महानदी के डेल्टाई भाग में महानदी व उसकी शाखाओं से नहरें निकाली गई हैं जिनकी लम्बाई 3650 किमी. है। इनके द्वारा कटक और पुरी जिलों में सिंचाई की जाती है।

दक्षिण भारत की नहरें (Canals of South India)

दक्षिण भारत में उत्तरी राज्यों की तुलना में नहरों का प्रयोग असमतल घरातल के कारण कम ही किया जाता है। फिर भी नहरों द्वारा सिंचाई की दृष्टि से आन्ध्रप्रदेश तमिलनाडु और कर्नाटक महत्वपूर्ण राज्य हैं।

आन्ध्रप्रदेश की नहरें (Canals of Andhra Pradesh)

आन्ध्रप्रदेश की कुल शुद्ध सिंचित भूमि के 39 प्रतिशत (15.4 लाख हेक्टेयर) भाग नहरों द्वारा सींचा जाता है। यहाँ पश्चिमी घाट से निकलकर राज्य में बहने वाली गोदावरी और कृष्णा नदियों पर बांध बनाकर नहरों द्वारा सिंचाई की जाती है।

(1) गोदावरी डेल्टा की नहरें – गोदावरी के डेल्टा में लगभग 4 हजार किमी. लम्बी नहरों के द्वारा 5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(2) कृष्णा डेल्टा की नहरें – इस नदी पर विजयवाड़ा के समीप बांध बनाकर 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(3) रामपद सागर परियोजना – गोदावरी नदी पर रामपद सागर बांध का निर्माण कर दो नहरें निकाली गई हैं जिनसे विशाखापटनम्, कृष्णा, गोदावरी और गुंटूर जिलों की 11 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(4) तुंगभद्रा परियोजना – इस नदी पर बांध बनाकर नहरें निकाली गईं जिनसे एक लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(5) कृष्णा–पेनार परियोजना – कृष्णा और पेनार नदियों पर दो बांध बनाये गये हैं जिनसे 12 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

तमिलनाडु की नहरें (Canals of Tamil Nadu)

कावेरी डेल्टा में प्राचीन समय से नहरों से सिंचाई की जा रही है। साथ ही कई अन्य परियोजनाएँ विकसित की गई हैं। इनसे लगभग 8.4 लाख हेक्टेयर की सिंचाई की जाती है। यह राज्य के कुल सिंचित क्षेत्र का 28.4 प्रतिशत है। इस राज्य की प्रमुख नहरें निम्न हैं।

(1) कावेरी डेल्टा की नहरें – कावेरी नदी व उसकी सहायक नदी पर दो बांध बनाये गये हैं। इनसे निकाली गई नहरों की लम्बाई 6400 किमी. है तथा इनसे 4 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है।

टिप्पणी

(2) पेरियार योजना – पेरियार नदी का पानी बेगई नदी में डाला जाता है। बाद में इस नदी से नहरें निकालकर मदुराई जिले की भूमि को सिंचित किया जाता है।

(3) मैटूर योजना – कावेरी नदी पर मैटूर स्थान पर बांध बनाकर लगभग 1.5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(4) निचली भवानी योजना की नहरें – कावेरी की सहायक भवानी पर बांध बनाकर लगभग एक लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

कर्नाटक की नहरें (Canals of Karnataka)

(1) भद्रा योजना की नहरें – भद्रा नदी पर बांध बनाकर 1.2 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(2) मलप्रभा योजना की नहरें – मलप्रभा नदी पर बांध बनाकर बेलगाव जिले की लगभग 2.5 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(3) ऊपरी कृष्णा योजना की नहरें – कृष्णा नदी पर नारायणपुर बांध बनाकर सिंचाई की जाती है।

केरल की नहरें (Canals of Kerala) – केरल में मालमपूझा बांध की नहरें, बलायर जलाशय की नहरें तथा मंगलम योजना की नहरें प्रमुख हैं, जिनसे राज्य की लगभग 30 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

महाराष्ट्र की नहरें (Canals of Maharashtra) – महाराष्ट्र में गोदावरी नहर, मूठानहर मूला बांध परियोजना वीर परियोजना, गिरना परियोजना आदि प्रमुख नहर योजनायें हैं, जिनसे सिंचाई की जाती है।

कुएँ एवं नलकूप (Well and Tube-wells)

सिंचाई का यह साधन उत्तरी भारत के जलोढ़ मिट्टी मैदान पर अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहाँ भूमिगत जल का प्रचुर भंडार है तथा कुओं का निर्माण करणा सरल व सस्ता है। कुओं तथा नलकूपों द्वारा सिंचित वास्तविक क्षेत्रफल का वितरण काफी असमान है। इसमें उत्तरप्रदेश सबसे आगे है जहाँ देश में कुओं तथा नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र का एक–चौथाई से अधिक (27.8%) है। देश में कुओं तथा नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र का आधा उत्तरप्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश (11.3) तीन राज्यों में तथा तीन चौथाई से अधिक (77.6%) सात राज्यों (गुजरात, पंजाब, बिहार, आन्ध्रप्रदेश) में सीमित है। महाराष्ट्र, तमिलनाडु और हरियाणा प्रत्येक में 13 लाख हेक्टेयर से 16 लाख हेक्टेयर कृषित भूमि इनसे सींची जाती है। इस प्रकार राजस्थान से लेकर बिहार तक फैले समतल एवं उपजाऊ मैदान में नलकूप और कुएँ सिंचाई के सबसे प्रमुख साधन हैं। इस दृष्टि से पंजाब–हरियाणा के मैदान, मध्य गंगा का मैदान, पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश का मालवा पठार तथा बुन्देलखण्ड क्षेत्र, उत्तरी गुजरात का मैदान और पश्चिमी महाराष्ट्र पठार विशेष उल्लेखनीय है।

कुएँ तथा नलकूपों से सिंचित क्षेत्र का राज्यों के कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्र में अनुपात सात राज्यों में शून्य तथा जम्मू–काश्मीर में 0.65 प्रतिशत से लेकर गुजरात

टिप्पणी

में 78.4 प्रतिशत तक है। उत्तर प्रदेश (71.4), राजस्थान (67.4), गोवा (66.6), पंजाब (61.3) और महाराष्ट्र (61.2) में कुएँ तथा नलकूपों से सिंचित क्षेत्र का अनुपात देश के औसत अनुपात (56.6 प्रतिशत) से अधिक है। मध्य प्रदेश, बिहार, हरियाणा, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश और उड़ीसा में शुद्ध सिंचित भूमि के 40 से 60 प्रतिशत भागों पर कुओं तथा नलकूपों सें सिंचाई की जाती है।

तालाब (Lake)

सिंचाई के साधनों के रूप में तालाब का सापेक्ष महत्व घटता जा रहा है। वर्तमान में केवल 5.7 प्रतिशत सिंचित भाग ही तालाबों से पानी पाता है। ये तालाब अलग–अलग आकार एवं माप के हैं। प्रायद्वीपीय भारत में तालाब का निर्माण करना सरल है, क्योंकि वहाँ धरातल काफी ऊबड़खाबड़ है। ऐसे भूभाग पर बड़े बांध बनाना तथा नहरें निकालना कठिन है। इसीलिए तालाबों द्वारा सिंचित भूमि दक्षिण भारत के राज्यों में अधिक है। वास्तव में दक्कन पठार में तालाबों से सिंचाई की पुरानी परंपरा रही है। तमिलनाडु और आन्ध्रप्रदेश में अनेकों पुराने बड़े तालाब आज भी सिंचाई के लिए प्रयोग किए जाते हैं। तमिलनाडु (6.75 लाख हेक्टेयर) और आन्ध्रप्रदेश (5.63 लाख हेक्टेयर) प्रत्येक में 5 से 7 लाख हेक्टेयर पर तालाबों से सिंचाई की जाती है। अन्य महत्वपूर्ण उड़ीसा, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल तथा मध्य प्रदेश प्रत्येक में तालाबों से सिंचित भूमि 2 से 4 लाख हेक्टेयर है। कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्र में तालाबों से सिंचित क्षेत्र का सर्वधिक हिस्सा भी तमिलनाडु में (22.9%) है। इसके अलावा आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल और त्रिपुरा में 10 से 15 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्र तालाबों से सींचा जाता है।

घरेलु जल पूर्ति (Domestic Water Supply)

सरकारी आँकड़ों के अनुसार भारत में प्रति वर्ष 42 अरब घन मीटर पानी का उपयोग घरेलू कार्यो के लिए किया जाता है। मोटेतौर पर देश की जनसंख्या 1 अरब मानी जाय तो प्रति व्यक्ति प्रति दिन का औसत 115 लीटर पानी आता है, जो संयुक्त राज्य अमेरिका के औसत (300 लीटर) से बहुत कम है। देश में ऐसे भी क्षेत्र हैं जहाँ प्रति व्यक्ति प्रति दिन 50 लीटर पानी नही मिल पाता।

भारत की राष्ट्रीय जल नीति (1987) में सबसे अधिक महत्व पेयजल की पूर्ति को दिया गया है तथा इसके बाद सिंचाई, जलशक्ति, नौका परिवहन एवं औद्योगिक उपयोग और अन्य उपयोग को दिया गया है। इसके परिपालन में पेयजल की आपूर्ति की व्यवस्था और स्वच्छता सुविधाओं का तेजी से विकास एवं प्रसार करने का प्रयास किया गया है। सन् 1991 में देश के लगभग 62.7 प्रतिशत आवासों को स्वच्छ पीने योग्य पानी की सुविधा थी। यह अनुपात ग्रामीण क्षेत्रों में 55.9 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में पेयजल पूर्ति बढ़ाने के लिए त्वरित शहरी जलापूर्ति कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसका मुख्य उद्देश 20 हजार से कम आबादी वाले नगरों तथा कस्बों में जलापूर्ति की सुविधा प्रदान करना था। 31 मार्च 2001 तक लगभग 601 योजनाओं को मंजूरी दी जा चुकी थी। भारत में बड़े शहरों में पीने के पानी की पूर्ति के लिए सिंचाई वाले जलाशयों और बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं का उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए दिल्ली

को पानी टेहरी बांध से और चेन्नई के लिए पानी कृष्णा से तेलगु–गंगा योजना के सहारे आता है।

टिप्पणी

ग्रामीण क्षेत्रों में पीने तथा घरेलु उपयोग के लिए पानी अधोभौमिक जल स्रोतों से प्राप्त होता है। सन् 1972 में कुल 580 हजार राजस्व गावों में से लगभग 150 हजार गाँव पेयजल हेतु समस्याग्रद गाँव थे। नौवीं पंचवार्षीय योजना में देश के प्रत्येक बस्ती को पेयजल उपलब्ध कराने के लिए स्थाई पानी की सुविधाओं के विकास पर जोर दिया गया। एक जनवरी 2002 में 1,25,522 आवासों को जलापूर्ति की पूरी सुविधा और 147,241 आवासों को आंशिक सुविधा दी जा चुकी थी। शेष 7,891 निवास स्थानों में स्वच्छ पेयजल का अभाव है। जल प्रदाय में 38 लाख हैंड पंप तथा 11 लाख पाइप द्वारा जलापूर्ति की स्कीम काम कर रही थी। स्वतंत्र रिपोर्टस के अनुसार अभी भी आधे गांवों में पेयजल की समस्या है।

जल का औद्योगिक उपयोग (Industrial Uses of Water)

औद्योगिक विकास की प्राथमिक आवश्यकता पर्याप्त जल की उपलब्धता है। द्वितीय जल कमीशन 1972 की रिपोर्ट में सिफारिस की गई है कि सम्पूर्ण देश में औद्योगिक उद्देश्य के लिए 50 अरब घन मीटर घन मीटर जल की आवश्यकता होगी। वर्तमान में लगभग 30 अरब घन मीटर जल का विभिन्न उद्योगों में प्रयोग किया जाता है। यह कुल उपभोग का केवल 2 प्रतिशत है। नवीन अनुमान के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सन् 2025 में 120 अरब घन मीटर जल की आवश्यकता होगी। वास्तव में कृषि और उद्योगों के बीच पानी की आपूर्ति की प्रतिस्पर्धा निरंतर बढ़ रही है। अभी भी उद्योग जल के एक बड़े प्रदूषक बने हुए हैं।

जल विद्युत की संभावना एवं विकास (Possibility of Hydro Electricity and Development)

देश में जल विद्युत उत्पादन की विपुल संभावनाएँ हैं। केन्द्रीय विद्युत अथार्टी ने 60 प्रतिशत लोड के आधार पर देश में जल विद्युत की संभावित क्षमता 84,000 मैगावाट आंका है। इससे प्रति वर्ष 450 अरब यूनिट बिजली पैदा की जा सकती है। सर्वाधिक संभावना उत्तरी तथा उत्तरपूर्वी क्षेत्रों में है। स्वतंत्रता के समय जल विद्युत की स्थापित क्षमता 1362 मैगावाट की थी तथा उत्पादन 508 मैगावाट था। यह क्षमता सन् 2000–01 में 25100 मैगावाट हो गई है, जो सभी प्रकार की विद्युत उत्पादन की स्थापित क्षमता की 24.7 प्रतिशत है। जल विद्युत उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा सन् 1975 में राष्ट्रीय जल विद्युत ऊर्जा निगम (National Hydroelectric Power Corporation) की स्थापना की गई।

जल संसाधन की समस्याएँ (Problems of Water Resources)

जल प्रकृति की अक्षय देन है। किन्तु बढ़ती हुई मांग तथा जल संसाधन के वर्तमान उपयोग से आने वाले वर्षो में मानव कल्याण, विकास, जीविका तथा स्वयं जीवन को भी खतरा उत्पन्न हो गया है। भविष्य में विकास के लिए आवश्यक उपयुक्त पानी की कमी हो सकती है। कमी के साथ पानी की गुणवत्ता भी तेजी से गिर रही है। इस परिपेक्ष्य में जल संसाधन संबंधी समस्याएँ तीन वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं,

यथा – 1. उपलब्धता सम्बन्धी समस्याएँ 2. उपयोग सम्बन्धी समस्याएँ और 3. अवनयन तथा प्रदूषण की समस्याएँ।

टिप्पणी

1. जल संसाधनों की उपलब्धता संबंधी समस्याएँ (Problems related to the Availability of Water Resources) – पानी का प्राथमिक स्रोत वर्षा है। भारत में वार्षिक वर्षा का औसत 400 अरब घन मीटर है। इसका एक भाग जमीन के अन्दर जाकर अधोभौमिक जल को बढ़ाता है, एक भाग वाष्पीकृत हो जाता है, बाकी बचा भाग सतही जल के रूप में बहता है। भारत की नदियों का औसत प्रवाह 869 अरब घन मीटर अनुमानित किया गया है। संग्रहण क्षमता कम होने से केवल 690 अरब घन मीटर सतही जल का उपयोग किया जा सका है। इसी तरह प्रतिवर्ष 450 अरब घन मीटर अधोभौमिक जल निकाला जा सकता है। अतः औसतन 1140 अरब मीटर जल उपयोग करने के लिए उपलब्ध है। सन् 2025 में परम्परागत जल की मांग का अनुमान 1050 अरब घन मीटर होगी। अतः देश में सम्पूर्ण मांग के आधार पर जल की कोई भी कमी नहीं है।

किन्तु वर्षा के वितरण के परिणामस्वरूप सतही जल का वितरण बहुत अधिक असमान है। वर्षा का विभिन्न ऋतुओं में वितरण भी बहुत अधिक असमान है। वर्षा की स्थानिक और कालिक वितरण की असमानता के कारण जटिल प्राकृतिक विपदाओं की स्थिति पैदा होना सामान्य सी बात है, जैसे कि बहुत कम और बहुत अधिक वर्षा के क्षेत्र तथा सूखा और बाढ़ ग्रस्त दोनों प्रकार के क्षेत्र देश में एक साथ मिलते हैं। वर्षा के इस तरह के क्षेत्रीय वितरण के कारण जल संसाधन की संभावना कुछ क्षेत्रों मे अधिक और अन्य में कम है। वर्षभर नमी की कमी वाले क्षेत्रों में राजस्थान, पश्चिमी और दक्षिणी पंजाब और हरियाणा का मैदान, पश्चिमी गुजरात और पश्चिमी घाट का वृष्टि छाया वाला क्षेत्र मुख्य है। इसके परिणामस्वरूप इन क्षेत्रों में मरुस्थली और अर्द्ध–मरुस्थली दशायें मिलती हैं। इन जलाभाव वाले क्षेत्रों में पेय जल और घरेलू उपयोग के जल की कमी होती है।

इसी तरह ऋतुगत वर्षा का वितरण जल पूर्ति को अधिक प्रभावित करता है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भी वर्षा कुछ ही महीनों तक होती है। परिणामस्वरूप वर्ष के अधिकांश भाग में जल की कमी बनी रहती है। कम और मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों में शुष्कता की समस्या अधिक गंभीर होती है। ऐसे क्षेत्रों की फसलों के लिए अतिरिक्त नमी की आवश्यकता पड़ती है, जिसकी पूर्ति केवल सिंचाई के द्वारा हो सकती है। इसीलिए संभावित जल संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग संरक्षण और प्रबंधन की नितांत आवश्यकता है। जल की मांग और पूर्ति में संतुलन होने के बावजूद देश में जल संसाधन की क्षेत्रीय विभिन्नता और ऋतुगत आवश्यकता गंभीर स्थिती पैदा कर रही है जिसके लिए अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

2. जल संसाधन के उपयोग संबंधी समस्याएँ (Problems related to the Utilization of Water Resources) – जल संसाधन के अलग–अलग उपयोग संबंधी कई समस्याएँ हैं। जीवन के लिए पेय जल और स्वच्छता न केवल आधारभूत आवश्यकताएँ हैं, बल्कि सबके लिए स्वास्थ के उद्देश्य की पूर्ति के लिए भी आवश्यक है। इसीलिए पेयजल सुविधाओं को बढ़ाने के लिए अथक प्रयास किये जा रहें हैं। फिर भी उसकी पूर्ति नहीं हो पा रही है। नौवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में लगभग 90

टिप्पणी

प्रतिशत शहरों में पीने योग्य पानी की पूर्ति की सुविधायें थीं। फिर भी अधिकांश शहरों और कस्बों में पेयजल की सुविधाएँ वांछनीय मानदण्डों से बहुत नीचे अथवा ग्रामीण मानदण्डों से भी नीचे थीं। गरीब, विशेषकर झुग्गी–झोपड़ी तथा गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग इस प्राथमिक आवश्यकता से वंचित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में पीने योग्य पेयजल की स्थिति और अधिक चिंतनीय है। सन् 1994 में भारतीय व्यावहरिक आर्थिक शोध परिषद (I.C.A.E.R.) ने इस समस्या का विस्तृत सर्वेक्षण किया था। सर्वेक्षण के परिणाम बताते हैं कि भारत के आधे गाँवों में शुद्ध पेय जल की कोई भी सुविधा उपलब्ध नहीं थी। परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में लोग पानीजनित बीमारियों से पीड़ित थे, क्योंकि उनको शुद्ध और सुरक्षित जलापूर्ति का अभाव था। शेष गाँवों में से लगभग 17 प्रतिशत गाँवों को पाइप के द्वारा पेय जल मिलता था। अन्य 18 प्रतिशत हैण्ड पम्प का उपयोग करते थे और 13 प्रतिशत अन्य सुरक्षित स्रोत का उपयोग करते थे। जल के अधिक दोहन के कारण देश के अधिकांश भागों में जलस्तर काफी नीचे पहुँच गया है जिससे जल का स्त्रोत घट रहा है। आजकल यह देखा गया है कि अधोभौमिक जल का अत्याधिक दोहन करने से जल की गुणात्मक समस्याएँ बढ़ रही हैं।

विकसित जल संसाधन का 84 प्रतिशत सिंचाई में प्रयोग किया जाता है। देश की कुल संभावित सिंचाई क्षमता के लगभग 68 प्रतिशत का विकास कर लिया गया है। फिर भी देश का दो–तिहाई कृषित क्षेत्र असिंचित है। कृषित भूमि के समुचित उपयोग कृषि की उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाने तथा स्थिर बनाने और कृषि के आधुनिकीकरण के लिए सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार अति आवश्यक है। जल संसाधनों का वर्तमान प्रादेशिक वितरण इन आवश्यकता को पूरा करने में असमर्थ है। विकसित सिंचाई की सुविधाओं में काफी अधिक क्षेत्रीय भिन्नता है। सिंचाई की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अन्तर बेसिन स्थानान्तरण आवश्यक है। अभी तक बड़े उद्योगों की तरह बड़े बांधों के निर्माण को अधिक महत्व दिया गया है। इनमें अधिक जमीन डूब जाती है तथा भारी संख्या में लोग अपने मूल आवास से सदैव के लिए विस्थापित हो जाते हैं। फिर भी बड़े ओर मध्यम परियोजनाओं की स्थापित क्षमता का उपयोग कम ही हो रहा है। सन् 1999–2000 में इनकी कुले स्थापित क्षमता के केवल 86 प्रतिशत का उपयोग हो पाया। बड़ी और मध्यम सिंचाई योजनाओं का देश के कुल सिंचित क्षेत्र में केवल 36 प्रतिशत हिस्सा है। जलाशयों में मिट्टी का जमाव एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या है। इसके विपरीत छोटी योजनाओं की स्थापित क्षमता के 91 प्रतिशत का उपयोग हो रहा है। छोटी सिंचाई योजनाएँ कम लागत में पूरी हो जाती हैं तथा इनसे कम क्षेत्र डूबता है। इस कारण लोग अपने मौलिक स्थान से विस्थापित होने के स्थान पर उससे बंध जाते हैं।

हाल के वर्षों में कुओं और नल कूपों द्वारा सिंचाई मे काफी अधिक विकास हुआ है। ये साधन अधोभौमिक जल पर आधारित है। इसके परिणाम अधोभौमिक जल की कमी तथा जल स्तर तेजी से नीचा होने जैसी समस्याएँ होने लगी हैं। देश में अधोभौमिक जल का बहुत अधिक दोहन एक नई समस्या की ओर संकेत कर रहा है। देश के 10 राज्यों में विशेषकर पंजाब, हरियाणा, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान, तामिलनाडु और उत्तरप्रदेश के कई जिलों में अधिक दोहन वाले काला जिले घोषित किये गये हैं।

टिप्पणी

जल के उपयोग की कम क्षमता भी एक गम्भीर समस्या है। यह क्षमता 38–40 प्रतिशत नहर से सिंचाई में और लगभग 60 प्रतिशत अधोभौमिक सिंचाई योजनाओं में है। जल का सर्वाधिक उपयोग सिंचाई के लिए होता है फिर भी इसका अनुपात निरंतर घटता जा रहा है। यह वर्तमान में 84 प्रतिशत से घटकर सन् 2025 में 74 प्रतिशत ही रह जायेगा। इसका मुख्य कारण अन्य उपयोगों की बढ़ती मांग है। इसीलिए जल के उपयोग विशेषकर सिंचाई जल की क्षमता को बढ़ाने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। जल के उपयोग की क्षमता का लगभग 10 प्रतिशत सरलता से बढ़ाया जा सकता है। इससे बिना सिंचाई की सुविधा बढ़ाए हुए लगभग 140 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र सींचा जा सकता है।

3. जल की गुणवत्ता संबंधी समस्याएँ (Problems Pertaining to Water Quality) – जल का प्रदुषण एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या है। जल के प्रदूषण का मुख्य स्त्रोत घरेलू व्यर्थ (अपशिष्ट) जल, औद्योगिक अपशिष्ट जल और गंदे द्रव की निकासी और खेत का बहता पानी (वाह) है। कई विशेषज्ञ यह दावा करते हैं कि हमारा तीन–चौथाई धरातलीय जल प्रदूषित है और जिसके 80 प्रतिशत भाग को केवल मलजल (गन्दा पानी /Sewage) ने प्रदूषित किया है। यह अनुमान लगाया गया है कि लगभग 1200 करोड़ लीटर प्रतिदिन व्यर्थ पानी प्रथम श्रेणी नगरों से तथा 130 करोड़ लीटर प्रतिदिन द्वितीय श्रेणी के नगरों से निकलता है। नगरपालिकाओं का अपशिष्ट जल को बिना पर्याप्त संसाधित (treat) किए हुए, या तो खुली जगह पर या फिर नदियों में छोड़ दिया जाता है। उदाहरण के लिए पवित्र गंगा नदी को अपवित्र करने वाले अनेकों नाले हैं जिनमें शहरी बदबूदार गंदा पानी रहता है और जो प्रतिदिन लाखों गैलन पानी गंगा में फेंकते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि जब तक मानव के मैला को सुरक्षित होने तथा नष्ट करने के साधनों का पर्याप्त विकास नहीं होता, तब तक इसी तरह नदियों के जल को हम प्रदूषित करते रहेंगे। अधिकांश नगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ को खुले मैदान में ढेर लगा दिया जाता है जो अन्ततः समीप के नदियों और जलाशयों में पहुँचता है और पानी को प्रदूषित करता है। शहरी क्षेत्रों में स्थित कारखानें बड़े पैमाने पर अवांछित पदार्थ उत्पन्न करते है, जैसे औद्योगिक व्यर्थ पदार्थ, प्रदूषित अपशिष्ट जल, जहरीली गैसें, रासायनिक अवशिष्ट, धूल, धुआँ आदि। इनमें से अधिकांश औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ बहते हुए जल में मिल जाते हैं और ये जहरीले तत्व जलाशयों, नदियों और अन्य जलीय भागों में पहुँचकर वहाँ के जैवीय तंत्र को नष्ट कर देते हैं। औद्योगिक क्षेत्रों से कितना अधिक अपशिष्ट पदार्थ निकलता है इसकी कल्पना करना कठिन है। उदाहरण के लिए कानपुर शहरी क्षेत्र में लगभग 150 चमड़ा फैक्ट्री स्थापित हैं, जिनसे लगभग 5100 मिलियन लीटर अपशिष्ट जल प्रतिदिन गंगा नदी में फेंका जाता है। शहरों में स्थापित उद्योग नदियों के जल को प्रदूषित करते हैं तथा नदी के निचले क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए गंभीर स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ पैदा करते हैं। अधिक मात्रा में रसायनिक खाद तथा रसायन धरातलीय एवं भूगर्भिक जल को प्रदूषित करते हैं। ये रसायन जलाशयों में पहुँचकर वहाँ के रसायनिक संगठन में परिवर्तन करके जलीय तंत्र को प्रभावित कर देते हैं। कुछ विशेष क्षेत्रों में ऐसे दूषित पदार्थ फ्लोराइड तथा आर्सेनिक जमा हो जाते हैं।

टिप्पणी

जल संसाधनों का संरक्षण (Conservation of Water Resources)

वर्तमान समय में यह अति आवश्यक हो गया है कि उपलब्ध जल संसाधनों का संरक्षण किया जाये। इसके महत्वपूर्ण कारण हैं। जल संसाधनों की सीमित मात्रा, ऋतुवार और क्षेत्रानुसार उनका अत्यधिक असमान वितरण, जल की विभिन्न माँगों में बढ़ती प्रतिस्पर्धा और उनका तेजी से कम होता भंडार तथा अवनयन और प्रदूषण का बढ़ना है। इन जल संसाधन संबंधी समस्याओं के मूल में संसाधन–उपयोग सम्बन्धी संकुचित विचार है। जल संसाधन को अन्य सभी संसाधनों से स्वतंत्र मान कर विकसित किया जाता है। परन्तु वास्तविकता यह है कि सभी प्राकृतिक संसाधन एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं तथा सामूहिक रूप से कार्य करते हैं। यदि एक संसाधन नष्ट होने लगता है तो उसका बुरा असर अन्य संसाधनों पर भी पड़ता है। इस तथ्य की अवहेलना की गई है। पुनः कई शासकीय विभाग और एजेन्सियाँ अलग–अलग विधियों और तरीकों से जल संसाधन के उपयोग, रखरखाव और प्रबंधन में सलग्न हैं। ये विभिन्न जल संसाधनों के संयुक्त उपयोग और संरक्षण के नियोजन में कई समस्याओं को जन्म देते हैं। वास्तव में जल सार्वजनिक संसाधन (Common Property Resources) है, इसीलिए लोग बिना इसके संरक्षण को ध्यान में रखते हुए इससे अधिकतम लाभ लेते हैं। जल संसाधन से संबंधित मूलभूत समस्या यह है कि किस तरह से पर्यावरण को संतुलित रखते हुए लोगों की पानी की बढ़ती मांग और उसकी सीमित पूर्ति में सामंजस्य बनायें रखा जाय।

ऐसी दशा में जल संसाधनों की सतत आपूर्ति बनाये रखने के लिए बहुआयामी प्रयासों की आवश्यकता है। जैसे कि तकनीकी तरीकों को उपयोग करकें जल संसाधन की उपलब्धि बढ़ाई जा सकती है, अवशिष्ट, अशुद्ध जल को शुद्ध किया जा सकता है और पानी के उपयोग की कुशलता को बढ़ाया जा सकता है। जल संसाधनों की आपूर्ति बढ़ाने के कई तरीके हो सकते हैं, जैसे विभिन्न आकार के बांध, जलाशय आदि बनाना एक बेसिन से दूसरे बेसिन में जल ले जाना और सतही तथा अधोभौमिक जल का संयुक्त रूप से कुशलतापूर्वक उपयोग करना। बाढ़ से सुरक्षा का प्रबन्ध कर के भी जल की उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। इन सब के अलावा कई अन्य विधियाँ तथा तकनीक हैं जिनसे जल संसाधन की उपलब्धता तथा उसके उपयोग की कुशलता को बढ़ाया जा सकता है। उनमें से रेन वाटर हार्वेस्टिंग विधि तथा वाटरशेड विकास विधि महत्वपूर्ण हैं।

वर्षा–जल संग्रहण (Rain Water Harvesting)

यह अधोभौमिक जल के पुर्नभरण बढ़ाने तथा जल तल को ऊपर उठाने की विधि है जिसमें वर्षा के जल को एकत्रित कर उसका भंडारण किया जाता है। अधोभौमिक जल का भंडार बढ़ाने के लिए वर्षा के जल को विभिन्न तरीकों से पृथ्वी के अन्दर पहुंचाने को रेन वाटर हार्वेस्टिंग कहते हैं। किसी विशेष जलग्रहण जिन क्षेत्रों में जल स्त्रोत सूख गये हैं, अत्यधिक दोहन के कारण अधोभौमिक जलस्तर नीचे चला गया हो, भूमिगत जल भी प्रदूषित हो गया है, उन क्षेत्रों में यह विधि जल उपलब्ध कराने का असरदार तरीका है। इन क्षेत्रों में रेन हार्वेस्टिंग की विधियों का प्रयोग करकें

टिप्पणी

वर्षा–जल का भंडारण किया जाता है जो पीने और सिंचाई के लिए उपलब्ध होता है। इसके निम्न मुख्य उद्देश्य हैं –

1. जल की बढ़ती मांग को पूरा करना
2. बहते जल को रोककर नलियों को चोक होने से बचाना
3. सड़क पर पानी बहने को रोकना
4. अधोभौमिक जल संग्रह और जलस्तर को बढ़ाना
5. अधोभौमिक जल के प्रदूषण को कम करना
6. अधोभौमिक जल की गुणवत्ता को बढ़ाना
7. भूमि–अपरदन को कम करना, और
8. गर्मी तथा सूखे की स्थिति में घरेलू जल की आवश्यकता की पूर्ति करना।

अत्यधिक दोहन के कारण अधोभौमिक जल का स्तर तेजी से गिरता जा रहा है। इसे भविष्य में और नीचे जाने से रोकने के लिए कुछ उपाय करना जरूरी हो गया है। अधोभौमिक जलस्तर को बढ़ाने की कई सस्ती तथा सुलभ विधियाँ उपलब्ध हैं। उनमें से कुओं को वर्षा–जल से भरना, हैन्ड पम्प का जलस्तर वर्षा–जल द्वारा बढ़ाना, खाली जगहों में गढ्ढों का निर्माण कर पानी को रोकना, जिससे जमीन पानी सोख सके, खेतों के चारों और खाईयों का निर्माण करना, छोटे नालों पर स्टाप डैम का निर्माण करना तथा छत के वर्षा–जल को भूमि के अन्दर पहुँचाना आदि वाटर हार्वेस्टिंग की महत्वपूर्ण विधियाँ है। बड़े नगरों और जल के समस्याग्रस्त क्षेत्रों में छत के वर्षा–जल संग्रहण की विधि का उपयोग किया जाना चाहिए। सोखता गड्ढों का निर्माण सड़क के किनारे तथा खुली जगहों पर किया जा सकता है। इससे नलों का जलस्तर बढ़ जाता है तथा गढ्ढों से पार्कों एवं बगीचों को पानी प्राप्त हो सकता है। फलतः शुद्ध पेय जल बचाया जा सकता है। इस तरह के उपाय बाढ़ की तीव्रता को कम कर देते हैं। वर्षा–जल भूमि के नीचे पहुँचकर अधोभौमिक जल में उपस्थित लोराइड तथा नाइट्रेड को पतला करके उसकी गुणवत्ता को बढ़ा देता है। रूफ टॉप हार्वेस्टिंग विधि में घरों की छत पर बारिश के पानी को एक टैंक मे जमा किया जाता है। रेन वाटर हार्वेस्टिंग की कुछ विधियों का प्रयोग दिल्ली में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, राष्ट्रपति भवन तथा आइआईटी कैम्पस में किया जा रहा है।

देश में इस तरह की विधियों का प्रयोग नया नहीं है। भारत में रेन हार्वेस्टिंग विधियों का प्रयोग प्राचीन समय से ही हो रहा है। इनमें नहर, तालाब, बांध तथा कुओं के निर्माण प्रमुख रहे हैं। पर्वतीय और पहाड़ी क्षेत्रों में बांस की मदद से लम्बी दूरी तक पानी ले जाने के उदाहरण आज भी मिलते हैं। राजस्थान के मरुस्थली और अर्द्धमरुस्थली क्षेत्रों में कुओं तथा सीढ़ीदार कुओं द्वारा गहराई में स्थित जल का प्रयोग वर्षों से किया जा रहा है। इन सीढ़ीदार कुओं को बावड़ी कहा जाता है, जिसका विभिन्न कामों में प्रयोग किया जाता है। वर्षा–जल को संरक्षित करने के लिए देश भर में तालाबों का निर्माण एक महत्वपूर्ण उपाय रहा है। इन सभी साधनों का आधुनिकीकरण तथा पुनरुद्धार करके न केवल जलस्तर बढ़ाया जा सकता है, बल्कि विभिन्न उद्देश्यों कि लिए जल के उपयोग की क्षमता में भी वृद्धि होगी।

जल विभाजक क्षेत्र का विकास (Watershed Development)

टिप्पणी

नदी घाटी की तरह वाटर शेड को एक भौतिक इकाई के रूप में परिभाषित कर सकते हैं और इसका उपयोग एकीकृत विकास नियोजन में किया जाता है। वाटरशेड डेवलपमेंट बेकार भूमि के विकास का एक समग्र उपागम है, जिसमें अति सूक्ष्म जल विभाजक क्षेत्र की भूमि के विकास के लिए एकीकृत योजना बनाई जाती है। इन योजनाओं में मिट्टी और नमी संरक्षण, वर्षा–जल एकत्रित करने के लिए विभिन्न ढ़ाँचा बनाना, वन लगाना, बागबानी, चारागाहों का विकास और अन्य सार्वजनिक संसाधनों के विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाता है। इस तरह की योजनाओं में भूमि की क्षमता और स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं और सहभागिता को ध्यान में रखा जाता है।

जल विभाजक क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन केन्द्रीय और राज्य सरकारों के विभिन्न विभागों द्वारा अलग–अलग उद्देश्यों से किया जाता है। कृषि और सहकारिता विभाग वर्षाआधारित क्षेत्रों के लिए एक कार्यक्रम, राष्ट्रीय जल विभाजक विकास परियोजना (NWDPRA) के नाम से चलाता है। वाटरशेड विधि का प्रयोग कई अन्य कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए किया जाता है, जैसे कि उत्तरपूर्वी भारत में नदी घाटी के अप्रवाह क्षेत्र के विकास बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों को कम करना तथा चलवासी कृषि पर रोक लगाना आदि इस कार्यक्रम के अंग हैं। इसी तरह से ग्रामीण विकास मंत्रालय शुष्क तथा मरुस्थलीय क्षेत्रों के विकास के लिए बनाए गए विभिन्न कार्यक्रमों जैसे सूखा प्रभावित क्षेत्र कार्यक्रम (DPAP, Drought Prone Area Programme) मरुस्थल विकास कार्यक्रम (DDP Desert Development Programme) तथा एकीकृत वाटरशेड विकास कार्यक्रम के संचालन के लिए इस उपागम का उपयोग करता है। इसी तरह पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा बिगड़े वनों के विकास के लिए वन रोपन तथा आर्थिक विकास से संबंधित कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। विशिष्ट क्षेत्रों के विकास योजनाओं को लागू करने लिए योजना आयोग भी इसी उपागम का उपयोग करता है। कई राज्य सरकार मिट्टी और नमी संरक्षण के लिए वाटरशेड के अन्तर्गत विशेष कार्यक्रमों का संचालन करती है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि वाटरशेड विकास कार्यक्रम मुख्यतः कमजोर संसाधन वाले तथा शुष्क क्षेत्रों में कृषि उत्पादन बढाने और पर्यावरण सुधारने की विधि है। ऐसे क्षेत्रों के लोगों को रोजगार अवसर उपलब्ध कराकर, उनके जीवन स्तर को ऊपर उठाया जाता है। इसके अन्तर्गत मिट्टी की नमी बढ़ाने और उसे सुरक्षित रखने के उपायों का सर्वाधिक महत्व है। सन् 1999–2000 से वाटरशेड डेव्हलपमेंट फण्ड बनाया गया है, जिसका संचालन राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) करता है।

2.3 खनिज संसाधन (Mineral Resources)

खनिज संसाधनों पर ही किसी भी देश का औद्योगिक विकास निर्भर रहता है तथा औद्योगिक विकास किसी देश के आर्थिक विकास का मूल आधार है। **कीन्स** एवं **मेग्र्समार्क** महोदय ने खनिज संसाधनों के महत्व की विवेचना इन शब्दों में की हैं,

''मानव जाति की प्रगति एवं विकास में खनिज पदार्थों का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं .....। वास्तव में यदि लोहे एवं इस्पात का उपयोग बंद कर दिया जाये तो हमारी कृषि, वन, खनिज, यातायात, उद्योग आदि सभी प्रकार से पंगु हो जायेंगे।''

टिप्पणी

भारत खनिज संसाधनों की दृष्टि से एक सम्पन्न राष्ट्र है। भारत में इस समय लगभग 125 प्रकार के खनिजों का उत्पादन हो रहा है। इनमें से 35 व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कहे जा सकते हैं। लगभग 3,600 खानें कार्यरत् हैं, जिनमें लगभग 880 खानें यन्त्रीकृत हैं, जिनसे देश को 85 प्रतिशत मूल्य के खनिजों का उत्पादन किया जा रहा है, जबकि शेष 15 प्रतिशत उत्पादन अन्य खानों से प्राप्त होता है। भारत में खनिज संसाधनों का वितरण अति असमान है। बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा पश्चिम बंगाल भारत के ऐसे राज्य हैं, जहाँ देश के महत्त्वपूर्ण खनिजों का उत्पादन होता है। भारत में लोहा, कोयला, बॉक्साइट, क्योनाइट, मैंगनीज तथा मैग्नेसाइट के पर्याप्त भण्डार हैं, जबकि टिन, तांबा, सीसा, जस्ता, निकिल, कोबाल्ट, गन्धक तथा पेट्रोलियम के भण्डार काफी कम हैं। शक्ति के साधनों से बिटूमिनस कोयले के यहाँ प्रचुर भंडार हैं, जबकि कोक कोयले का अभाव और पेट्रोलियम की कमी है। आणविक ऊर्जा के खनिज भी यहाँ पर्याप्त हैं।

साारणी क्र. 2.8

भारत में खनिज संसाधनों के संचित भण्डार

(करोड़ टन में)

खनिज	भण्डार	खनिज	भण्डार
कोयला	293.3 अरब टन	क्रोमाइट	1072 लाख टन
लौह धातु	66412 लाख टन	काओलिन	1772 लाख टन
तांबा	2376 लाख टन	सीसा	2115 हजार टन
बॉक्साइट	8302 लाख टन	जस्ता	10893 हजार टन
लिग्नाइट	42 अरब टन	सोना	146 लाख टन
फॉस्फेट खनिज	645 लाख टन	मैग्नेटाइट	346 लाख टन
मैंगनीज	2045 लाख टन	सिलिमेनाइट	4292 लाख टन
निकिल	1887 लाख टन	ग्रेफाइट	1687 लाख टन
डोलोमाइट	7839 लाख टन	टंगस्टन	874 लाख टन
चूना पत्थर	149260 लाख टन	हीरा	984.9 हजार कैरेट
जिप्सम	391 लाख टन		
अभ्रक	639 लाख टन		

Source: Statistical Profile of Mircoals 2013-14. Controller Gerneral, IBM Nagpur, 2014 and Annual 2014-15. Ministry of Mines, Govt of India.

भारतीय औद्योगिक आयोग के अनुसार प्रमुख आधारभूत उद्योगों के लिये प्रायः सभी खनिज पर्याप्त मात्रा में देश में उपलब्ध हैं। इनके समुचित उपयोग से हमारा देश औद्योगिक रूप से आत्म निर्भर बन सकता है। देश में अनेक संगठन खनिज अनुसंधन एवं शोषण कार्य में संलग्न हैं। **भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण** (Geological Survey of India), 1851 में स्थापित किया गया भारतीय खान ब्यूरो (Indian Bureau

टिप्पणी

of Mines) एक वैज्ञानिक व तकनीकी संगठन हैं, जिसका मुख्यालय नागपुर में तथा प्रादेशिक कार्यालय अजमेर, बंगलौर, कोलकाता, देहरादून, गोआ, हैदराबाद, हजारीबाग, जबलपुर, मद्रास व उदयपुर में स्थित हैं। **खनिज अन्वेशण निगम** (Mineral Investigation Corporation Ltd.), 1977 में खनिज परियोजनाओं को परामर्श एवं विशेषज्ञ सेवाएँ प्रदान करने के लिए स्थापित किया गया। **राष्ट्रीय खनिज विकास निगम लि.** (National Mineral Development Corporation Ltd.) की स्थापना 1951 में की गयी।

खनिज अनवीकरणीय संसाधन हैं। एक बार भू–गर्भ से निकाले जाने के बाद उतनी मात्रा में वहाँ के खनिज सदा के लिए समाप्त हो जाते हैं। इसलिए खानें खोदना **'लुटेरी अर्थ व्यवस्था'** (Robber Economy) कहलाती है। जिस ढंग और गति से आज खनिज पदार्थ निकाले जाते हैं अथवा उनका अवैज्ञानिक अनियोजित दुरुपयोग होता है उसे देखकर भू–गर्भशास्त्रियों का मत हैं कि भविष्य में इन पदार्थों की कमी पड़ जायेगी। अतः आवश्यक है कि इस संसाधन का संरक्षण और उचित उपयोग हो। यह संसाधन असीमित नहीं हैं।

खनिजों का वितरण (Distribution of Minerals)

भारत में अधिकांश खनिज पाँच पेटियों (Belts) में पाये जाते हैं –

1. झारखण्ड, बिहार, ओडिशा एवं पश्चिम बंगालः इस पेटी में कोयला, अभ्रक, इल्मेनाइट, क्रोमाइट, बॉक्साइट, फॉस्फेट, मैंगनीज, तांबा, लोहा व चूना पत्थर बड़ी मात्रा में मिलते हैं। **वाडिया** के अनुसार इस खनिज पेटी में देश का 100 प्रतिशत कायनाइट, 93 प्रतिशत लोहा, 84 प्रतिशत कोयला, 70 प्रतिशत क्रोमाइट, 70 प्रतिशत अभ्रक, 50 प्रतिशत अग्निमिट्टी, 45 प्रतिशत एस्बेस्टस, 45 प्रतिशत चीनी मिट्टी, 20 प्रतिशत चूना पत्थर तथा 10 प्रतिशत मैंगनीज उपलब्ध होता है।

2. मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, आन्ध्रप्रदेश एवं महाराष्ट्रः इस पेटी में भारत का अधिकांश मैंगनीज व बॉक्साइट तथा चूना पत्थर व कोयला बड़ी मात्रा में उपलब्ध होते हैं। पन्ना, अभ्रक, कच्ची लौह धातु, तांबा, ग्रेफाइट भी मिलते हैं।

3. कर्नाटक–तमिलनाडुः यहाँ सोना, लोहा, तांबा, क्रोमाइट व मैंगनीज पाये जाते हैं। तमिलनाडु में लिग्नाइट, अभ्रक, मैंगनीज, बॉक्साइट, जिप्सम, चूना पत्थर, आदि प्राप्त होते हैं।

4. राजस्थान गुजरातः इस पेटी में खनिज प्राप्ति की सम्भावनाएँ अधिक हैं। राजस्थान में तांबा, जस्ता, सीसा, यूरेनियम, अभ्रक, मैंगनीज, एस्बेस्टस, मुल्तानी मिट्टी, नमक, पन्ना, संगमरमर, लिग्नाइट, आदि तथा गुजरात में पेट्रोलियम, जिप्सम, तांबा, मैंगनीज, नमक व बॉक्साइट प्रमुख खनिज हैं।

5. केरलः केरल के समुद्रतटीय क्षेत्रों में आण्विक खनिजों (इल्मेनाइट, जिरकन, मोनोजाइट) के अतिरिक्त गार्नेट, चिकनी मिट्टी, आदि मिलते हैं।

6. उत्तराखण्ड–हिमाचल प्रदेशः तांबा, सीसा, बिस्मथ, सुरमा, निक्कल, कोबाल्ट, टंगस्टन, पायरइट, जिप्सम हिमाचल प्रदेश में तथा उत्तराखण्ड में अल्मोड़ा में मैंग्नेसाइट, चूना का पत्थर, पायराइट, जिप्सम आदि खनिज मिलते हैं।

7. असम–अरुणाचल प्रदेशः पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस के भण्डार हैं।

टिप्पणी

उत्तरी मैदान प्रायः खनिज विहीन हैं। खनिज उत्पादन की दृष्टि से झारखण्ड व बिहार राज्य सर्वोपरि हैं। मूल्य की दृष्टि से यहाँ समस्त खनिज सम्पदा का लगभग 24 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 8 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ तथा मध्यप्रदेश में 12 प्रतिशत, असम 10 प्रतिशत, गुजरात 10 प्रतिशत, उड़ीसा व आन्ध्रप्रदेश में 5 प्रतिशत (प्रत्येक) तथा राजस्थान में 4 प्रतिशत प्राप्त होता है। निस्सन्देह भारत मे विविध प्रकार की खनिज सम्पदा पायी जाती है। यहाँ लगभग 100 प्रकार के ज्ञात खनिज मिलते हैं, यद्यपि इनमें से केवल 30 ही आर्थिक महत्त्व के हैं। योजना आयोग के अनुसार भारत मे तीन प्रकार के खनिज उपलब्ध होते हैं –

(1) पर्याप्त उत्पादन एवं आर्थिक महत्त्व के खनिज – कोयला, लौह धातु, अभ्रक, मैंगनीज, सोना, इल्मेनाइट, बॉक्साइट, भवन निर्माण सामग्री।

(2) पर्याप्त भण्डार वाले खनिज – औद्योगिक मिट्टियाँ, क्रोमाइट, आण्विक खनिज आदि।

(3) औद्योगिक महत्व के खनिज जिनका अभाव पाया जाता है – जस्ता, टिन, सीसा, तांबा, गन्धक, निक्कल, ग्रेफाइट, कोबाल्ट, पारा व पेट्रोलियम।

खनिजों का वर्गीकरण (Classification of Minerals)

खनिजो की प्रकृति, संरचनाएवं उपयोगिता के आधार पर भारत में पाये जाने वाले खनिज पदार्थों को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

(1) धात्विक खनिज – लौह अयस्क, बॉक्साइट, क्रोमाइट, ताम्र अयस्क, टापस्पोर, स्वर्ण आदि।

(2) अधात्विक खनिज – अगेट, एपेटाइट, फास्फोराइट, डोलोमाइट, अग्नि मिट्टी, चूना पत्थर, अभ्रक, गंधक, नमक, सिलिका आदि खनिज आते हैं।

(3) अन्य उपयोगी खनिज –

(i) **ईंधन खनिज** – कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस आदि।

(ii) **आण्विक खनिज** – यूरेनियम, थोरियम, मोनोजाइट आदि।

(iii) **उर्वरक खनिज** – सोडियम नाइट्रेट, पोटैशियम नाइट्रेट, जिप्सम आदि।

(iv) **अपघर्शी खनिज** – हीरा, पुखराज, स्फटिक आदि।

खनन उद्योग की समस्याएँ (Problems of Mining Industry)

भारत में विविध खनिजों के अपार भण्डारों की उपलब्धता के बावजूद खनन उद्योग अधिक उन्नत दशा में नहीं है। इसके कारण हैं – (i) यहाँ स्वतन्त्रता के पूर्व खनिजों का शोषण निर्यात के लिए होता था। (ii) खनन कार्य व्यवस्थित रुप से नहीं होता। ऊपरी भाग में खुदाई करके खानें अप्रयुक्त छोड़ दी जाती हैं। इससे वे अनार्थिक सिद्ध होती हैं। (iii) आन्तरिक जलमार्ग विकसित न होने के कारण खनिजों का परिवहन स्थल मार्गों (रेल व सड़कों) द्वारा होता हैं अतः वे महँगे पड़ते हैं। (iv) नये क्षेत्रों में खनिजों का उचित सर्वेक्षण नहीं हुआ हैं। उड़ीसा, असम व मध्यप्रदेश के दुर्गम भागों में महत्त्वपूर्ण खनिजों का पर्याप्त सर्वेक्षण भी नहीं हुआ है। (v) खनिजों का शोषण,

उपयोग, विक्रय, स्वामित्व सम्बन्धी कठिनाइयों के अतिरिक्त तकनीकी ज्ञान, पूँजी एवं श्रम सम्बन्धी समस्याएँ भी रहती हैं। (vi) खनिजों का अविवेकपूर्ण शोषण एक प्रकार से 'लुटेरी अर्थव्यवस्था' (Robber Economy) है। खनिज क्षयशील संसाधन होते हैं। एक बार समाप्त होने पर उनके पुनर्निर्माण में लाखों वर्ष लगते हैं।

टिप्पणी

2.3.1 लौह अयस्क (Iron Ore)

आधुनिक युग को 'लौह युग' कहा जाता है, क्योंकि विश्व में अन्य किसी धातु का इतना अधिक व्यापक रुप में प्रयोग नहीं किया जाता है, जितना कि लोहे का। लोहा किसी भी देश के आर्थिक विकास का मुख्य आधार है। यह धातु सस्ती होने के साथ–साथ बहुउपयोगी है। यही कारण है कि वर्तमान में अन्य कोई धातु इससे प्रतिस्पर्धा करने में सफल नहीं हो सकी है। भूगर्भ से यह धातु अशुद्ध रूप में निकाली जाती हैं, जिसे लौह अयस्क (Iron Ore) कहा जाता है।

लोहा कार्बन की विभिन्न मात्राओं से संयोग कर भिन्न–भिन्न प्रकार के इस्पात तथा हल्के लोहे का निर्माण करता है। इसी प्रकार यह अन्य धातुओं जैसे– निक्कल, क्रोमियम, टंगस्टन आदि के संयोग से विभिनन मिश्र धातुओं का निर्माण करता है। इसके द्वारा बनाया गया जंगरोधी इस्पात अपने विशिष्ट गुणों के कारण लोकप्रिय है।

लौह अयस्क के प्रकार (Kinds of Iron-ore)

लोहे की कच्ची धातु निम्नलिखित प्रकार की होती है –

(1) हेमेटाइट (Hametite) – यह अयस्क लाल रंग का होता है, जो लोहे के ऑक्सीकृत (लौह ऑक्साइड) होने से बनता है। यह अयस्क में शुद्ध लौह धातु का अंश 60 से 70 प्रतिशत तक मिलता है। यह सर्वोत्तम किस्म का लौह अयस्क है, जिसके भारत में संचित भण्डार लगभग 1,140 करोड़ मी. टन हैं।

(2) मैग्नेटाइट (Magnetite) – यह अयस्क काले अथवा गहरे भूरे रंग का होता है, जिसमें शुद्ध लौह धातु का अंश 52–62 प्रतिशत तक होता है। इस अयस्क में चुम्बकीय गुण होता है। भारत में इस अयस्क के संचित भण्डार लगभग 600 करोड़ मी. टन है।

(3) लिमोनाइट (Limonite) – यह अयस्क पीले रंग का होता है, जिसमें शुद्ध लौह धातु का अंश 10 से 40 प्रतिशत तक मिलता है।

(4) सीडेराइट (Siderite) – इस लौह अयस्क में लोहे के कार्बोनेट मिलते हैं। इस अयस्क का रंग भूरा होता है तथा इसमें लौह धातु की उपस्थिति 48 प्रतिशत तक मिलती है।

(5) लेटेराइट (Laterite) – यह भूरे रंग का लौह अयस्क है, जिसमें लौह धातु का प्रतिशत 30 से कम होता है।

लौह अयस्क के संचित भण्डार (Iron Ore Reserves)

लौह अयस्क के संचित भण्डारों की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। यहाँ विश्व के कुल लौह अयस्क भण्डारों का लगभग 25 प्रतिशत है। **भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग (GSI)** वर्ष 2013 के अनुसार भारत में लगभग 3,200 करोड़ मी. टन

के लौह अयस्क के संचित भण्डार हैं। कुल संचित भंडारों में 85 प्रतिशत हेमेटाइट, 8 प्रतिशत मैग्नेटाइट तथा 7 प्रतिशत अन्य प्रकार का लौह अयस्क है।

टिप्पणी

हैमेटाइट लौह अयस्क के 79 प्रतिशत भण्डार पूर्वी क्षेत्र में विशेषकर ओडिशा, झारखण्ड, गोवा और छत्तीसगढ़ में संचित हैं। इसके विपरीत मैग्नेटाइट अयस्क का 92 प्रतिशत भाग दक्षिणी क्षेत्र विशेषकर कर्नाटक में संचित है। इनमें हेमेटाइट किस्म का अयस्क उत्तम किस्म का माना जाता है। वर्ष 2013 में हेमेटाइट अयस्क का कुल अनुमानित भण्डार 20.6 अरब टन है। मैग्नेटाइट का कुल अनुमानित भण्डार 10.75 अरब टन है। सामान्यतः देश में भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग द्वारा सततरूप से नये क्षेत्रों की खोज की जा रही है। अतः अनुमानित भण्डार बढ़ते जा रहे हैं।

कर्नाटक में देश के विशालतम भण्डार पाये जाते हैं। ओडिशा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ तथा गोआ अन्य महत्वपूर्ण राज्य हैं। इन पाँच राज्यों में देश के 85.0 प्रतिशत लौह भण्डार संचित हैं।

सारणी क्र. 2.9

क्र.	राज्य	संचित भण्डार (मिलियन टन)
1.	कर्नाटक	10070
2.	ओडिशा	7182
3.	झारखण्ड	5079
4.	छत्तीसगढ़	4031
5.	गोवा	1245
6.	राजस्थान	627
7.	तमिलनाडु	507
8.	महाराष्ट्र	297
9.	मध्य प्रदेश	253
	भारत	**31323.1**

स्रोतः CMII Statistical Abstract India 2012-13 & IBM Indian Minerals Year Book - 2014.

लौह अयस्क के उत्पादन क्षेत्र (Iron Ore Producing Areas)

भारत में लौह अयस्क के विशाल भण्डार होने के बावजूद यहाँ विश्व का मात्र 5.0 प्रतिशत लौह अयस्क प्रतिवर्ष उत्पादित किया जाता है। भारत का प्रमुख लौह उत्पादक क्षेत्र झारखण्ड राज्य के सिंहभूम जिले से होता हुआ ओडिशा में क्योंझर, बोनाई, मयूरभंज क्षेत्रों तक फैला है। इस क्षेत्र में उच्च कोटि का हेमेटाइट लौह–अयस्क पाया जाता है, जिसमें धातु का अंश 60 से 65 प्रतिशत तक पाया जाता है।

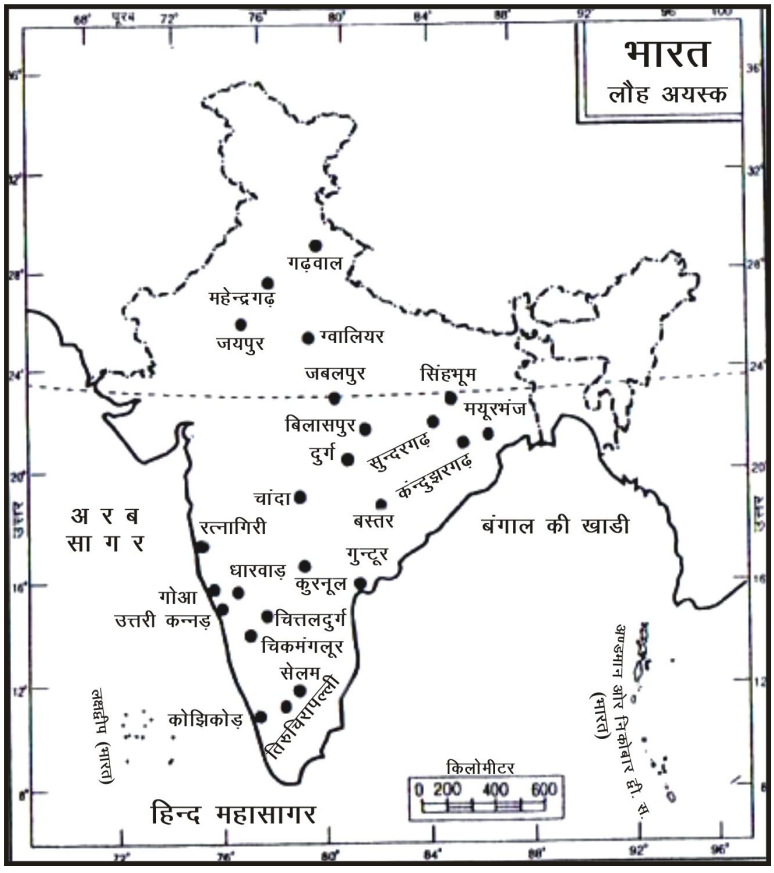
लौह अयस्क के उत्पादन में उड़ीसा (33.19:), कर्नाटक (22.0:), छत्तीसगढ़ (14.87:) गोआ (14.18:) झारखण्ड (10.14:) आंध्रप्रदेश (4.17:) मध्य प्रदेश (1.07:) राजस्थान (2.20:) क्रमशः महत्वपूर्ण है।

(1) ओडिशा – लौह–अयस्क उत्पादन की दृष्टि से यह देश का प्रथम राज्य है। इस राज्य का अधिकांश लौह–अयस्क उच्चकोटि का है जिसमें लौहांश का प्रतिशत 50 से 70 के मध्ये है। इस राज्य में सुन्दरगढ़, मयूरभंज तथा क्योंझर लौह अयस्क के

प्रमुख उत्पादक जिले हैं। सुन्दरगढ़ जिले में बरसना, कूड़ाझार–पहाड़, कोटू तथा मालनगोलो, मयूरभंज जिले में **गुरमहिसानी, सुलेपत** तथा **बादाम पहाड़** एवं क्योंझर जिले में **बाँसपानी, ठकुरानी, टोड़ा कोड़ेकोला,** किरुबक तथा फिलैरा महत्त्वपूर्ण लौह अयस्क उत्पादक क्षेत्र हैं। इसके अतिरिक्त कोरापुट जिले में अमरकोट तथा कटक जिले में तमका पहाड़ी व दैतारी क्षेत्रों में भी लौह अयस्क का उत्पादन होता है।

टिप्पणी

(2) कर्नाटक – लौह अयस्क उत्पादन की दृष्टि से इस राज्य का देश में द्वितीय स्थान है। इस राज्य में देश के सर्वाधिक 38 प्रतिशत लौह अयस्क के संचित भण्डार हैं। इस राज्य का अधिकांश लौह अयस्क बेल्लारी तथा चिकमंगलूर जिलों में प्राप्त किया जाता है। **बेल्लारी** जिले में हास्पेट क्षेत्र लौह अयस्क उत्पादन का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। यहाँ से उत्तम किस्म का हैमेटाइट अयस्क प्राप्त किया जाता है। हास्पेट क्षेत्र में लौह अयस्क के लगभग 125 करोड़ मी. टन संचित भण्डार हैं। **चिकमंगलूर** जिले में केमानगुण्डी, कुद्रेमुख तथा बाबाबूदन पहाड़ी क्षेत्र लौह अयस्क उत्पादन की दृष्टि से उल्लेखनीय है। चित्रदुर्ग, शिमोगा, तुमकुर तथा धारवाड़ लौह अयस्क उत्पादन के अन्य क्षेत्र हैं।



चित्र क्र. 2.3: भारत मे लोहा खनिज क्षेत्र

(3) छत्तीसगढ़ – यह राज्य भारत का तीसरा सर्वाधिक लौह अयस्क उत्पादित करता है। यहाँ देश के लगभग 10 प्रतिशत लौह अयस्क के प्रमाणित संचित भण्डार हैं। यहाँ उत्पादित किये जाने वाला अधिकांश लौह अयस्क हैमेटाइट किस्म का है, जिसमें 67 प्रतिशत तक लोहांश मिलता है। बस्तर जिलें में **बैलाडीला** तथा

टिप्पणी

राऊघाट एवं **दुर्ग जिले में डल्ली–राजहरा की पहाड़ियाँ** लौह अयस्क के महत्त्वपूर्ण उत्पादक जिले हैं। बैलाडीला क्षेत्र में लौह अयस्क उत्पादन की एशिया महाद्वीप की सबसे बड़ी खान है। छत्तीसगढ़ के रायगढ़, सरगुजा एवं बिलासपुर जिले लौह अयस्क उत्पादन के अन्य क्षेत्र हैं।

(4) गोआ – इस राज्य में लिमोनाइट तथा सीडेराइट के विशाल भण्डार हैं। उत्तरी गोआ में पिरनाअदोल, पाल–ओलड़ा, कुड़नेमपिसरूलेम तथा कुदनेय–सुरला नामक स्थानों पर लौह अयस्क की प्रमुख खदानें हैं। इस राज्य में लौह–अयस्क की 315 खदानें हैं। यहाँ का अधिकांश लौह–अयस्क मार्मुगाओ बन्दरगाह द्वारा निर्यात कर दिया जाता है।

(5) झारखण्ड – देश के कुल उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत झारखण्ड राज्य से मिलता है। यहाँ उत्पादित किया जाने वाला अधिकांश लौह अयस्क हैमेटाइट एवं मैग्नेटाइट किस्म का है। सिंहभूम इस राज्य का सर्वाधिक लौह अयस्क उत्पादक जिला है। सिंहभूम जिले की करमपदा, विजयघाट, कुरी, मेछाहात, बुरू, किरूबुरू तथा गुआ खानों में हैमेटाइट तथा मैग्नेटाइट प्रकार का लोहा मिलता है। मुख्य जमाव के क्षेत्र सिंहभूम जिले के नोआमण्डी में कुदादा, पोदापहाड़, कोटवार पहाड़, दुबलावेरा, सिन्दूरपुर आदि हैं। यहाँ का लौह–अयस्क टाटा नगर, दुर्गापुर, राउरकेला तथा भिलाई इस्पात कारखानों को भेजा जाता है। इसी राज्य में **बोकारो** नामक कारखाना एशिया का सर्वाधिक बड़ा कारखाना स्थापित किया गया है। लौह अयस्क के नवीन भण्डार पलामू जिले में कोयल नदी के पश्चिम में स्थित सेमरा सलतुआ क्षेत्र में कोल वासरी में पाये गये हैं।

(6) आंध्रप्रदेश – यहाँ देश के 6.5 प्रतिशत लौह भंडार है। कृष्णा, कुर्नुल, कुडुप्पा, अनंतपुर, खम्भाम व नेल्लोर प्रमुख उत्पादक जिले हैं। यहाँ 50 से 65 प्रतिशत शुद्ध धातु का अयस्क पाया जाता है।

(7) महाराष्ट्र – यहाँ प्रतिवर्ष देश का लगभग 2 प्रतिशत लौह अयस्क उत्पादित किया जाता है। इस राज्य में पूर्वी एवं दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्रों में लौह अयस्क के भण्डार निहित हैं। पूर्वी भाग में **चाँदा** जिला तथा दक्षिण–पश्चिमी भाग में **रत्नागिरी** जिला लौह अयस्क के प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं। इस राज्य में उत्पादित लौह अयस्क घटिया किस्म का होता है।

(8) मध्य प्रदेश – यह देश का प्रमुख लौह उत्पादक राज्य है। यहाँ पाया जाने वाला अधिकांश लौह अयस्क उत्तम श्रेणी का है। जिसमें 65 से 67 प्रतिशत लोहांश मिलता है। प्रदेश के मण्डला, बालाघाट, जबलपुर कटनी आदि जिलों में लोहे के भण्डार पाये जाते हैं। यहाँ लगभग 75 लाख टन लोहा संचित है।

(9) बिहार – यह राज्य देश का 3 प्रतिशत लौह अयस्क उत्पादित करता है। यहाँ उत्पादित किये जाने वाला अधिकांश लौह अयस्क हैमेटाइट एवं मैग्नेटाइट किस्म का है। भागलपुर तथा संथाल परगना लौह अयस्क उत्पादन के प्रमुख जिले हैं।

(10) लौह अयस्क उत्पादन के अन्य राज्य – तमिलनाडु राज्य में सेलम, मदुराई, त्रिचुरापल्ली तथा दक्षिणी अरकाट जिले, हरियाणा में मेहन्द्रगढ़ जिला, उत्तराखण्ड में गढ़वाल जिला, हिमाचल प्रदेश में मण्डी तथा काँगड़ा जिला तथा केरल राज्य में कोजिकोड जिला लौह अयस्क उत्पादन के अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

टिप्पणी

लौह अयस्क उत्पादन में प्रगति – सन् 1950–51 में भारत के लौह अयस्क का वार्षिक उत्पादन 42 लाख टन था, जिसका मूल्य 234 लाख रुपया था। सारणी में दर्शाये आँकड़ों के अनुसार पिछले लगभग 50 वर्षों में भारत में लौह अयस्क के उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार – अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारत लौह अयस्क का प्रमुख निर्यातक देश है। सन् 1950–51 में भारत से 22 लाख रुपये का लौह अयस्क विदेशों को निर्यात किया गया था, जो 2010–11 में 27,195 करोड़ रुपये पहुँच गया। भारत में लौह अयस्क का निर्यात मार्मुगाओ, हल्दिया, पाराद्वीप, बंगलौर तथा विशाखापट्टनम बन्दरगाहों से किया जाता है। चीन भारत के लौह अयस्क का सबसे प्रमुख ग्राहक (89 प्रतिशत) है, वर्ष 2017–18 में कुल निर्यात का 82 प्रतिशत चीन को भेजा गया। जबकि जापान (7 प्रतिशत), दमानिया, चैकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड, जर्मनी, ईरान, इराक, यूगोस्लाविया, इटली तथा हंगरी भारतीय लोह अयस्क के अन्य ग्राहक हैं। देश में लौह आयात के मुख्य स्रोत रूस, यूक्रेन तथा ब्राजील हैं।

सारणी क्र. 2.10

भारत में लौह अयस्क के उत्पादन में प्रगति

(मिलियन टन में)

वर्ष	उत्पादन	वर्ष	उत्पादन
2000–01	80.59	2009–10	218.5
2001–02	93.3	2010–11	207.9
2002–03	86.4	2011–12	191.5
2003–04	120.6	2012–13	135.8
2004–05	142.7	2013–14	152.0
2005–06	140.1	2014–15	129.1
2006–07	187.6	2015–16	155.3
2007–08	213.2	2016–17	191.3
2008–09	212.9		

स्रोतः Economic Survey, 2017-18.

2.3.2 तांबा अयस्क (Copper Ore)

भारत में तांबे का प्रयोग प्राचीन समय से किया जा रहा है। तांबे के सिक्कों तथा बर्तनों का प्रचलन यहाँ काफी लम्बे समय से रहा है। वर्तमान में विद्युत के तार मिश्रित धातु के रूप में, टेलीग्राफ के तारों, बर्तन बनाने आदि में तांबे का प्रयोग किया जा रहा है।

अलौह धातुओं में तांबा एक महत्त्वपूर्ण धातु है। यह मुख्य रूप से आग्नेय एवं रूपान्तरित चट्टानों में कॉपर सल्फाइड, कॉपर ऑक्साइड तथा कॉपर कार्बोनेट के रूप में अशुद्ध रूप में प्राप्त होता है, जिसमें शुद्ध तांबे का प्रतिशत 2 से 3 के मध्य पाया जाता है।

टिप्पणी

तांबा के संचित भण्डार (Copper Reserves)

भारत में तांबा प्राचीन रवेदार कुड्डुप्पा तथा अरावली चट्टानों में पाया जाता है। देश में ताम्र अयस्क के अनुमानित संचित भण्डार 156 करोड़ टन (सन् 2010) के हैं, जिसमें ताँबे की उपस्थिति का अनुमान लगभग 122.9 लाख टन तक है।

तांबे का सर्वाधिक भण्डार राजस्थान राज्य में 77.1 करोड़ टन (50 प्रतिशत) अनुमानित है। इसके पश्चात् मध्य प्रदेश (37.1 करोड़ टन, 24.2 प्रतिशत) और झारखण्ड (28.8 करोड़ टन, 19 प्रतिशत) का स्थान है। आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, हरियाणा, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु में भी इसके भंडार पाये जाते हैं।

सारणी क्र. 2.11
भारत में तांबा के संचित भण्डार

राज्य	अनुमानित भण्डार (लाख टन)	प्रतिशत	धात्वंश (प्रतिशत)
राजस्थान	7771.7	50	0.8 से 2.5
मध्य प्रदेश	3771.9	24	1.31 से 1.45
झारखण्ड	2884.3	19	1.2 से 2.0
कर्नाटक	335.4	2.2	1.0 से 2.0
हरियाणा	329.1	2.1	0.61
महाराष्ट्र	132.1	2.1	0.61
गुजरात	141.2	0.47	—
आंध्रप्रदेश	75.8	0.53	—
भारत	15584.6	100.00	1.19 (औसत)

स्रोतः आई.बी.एम.: इण्डियन मिनरल्स इयरबुक 2014।

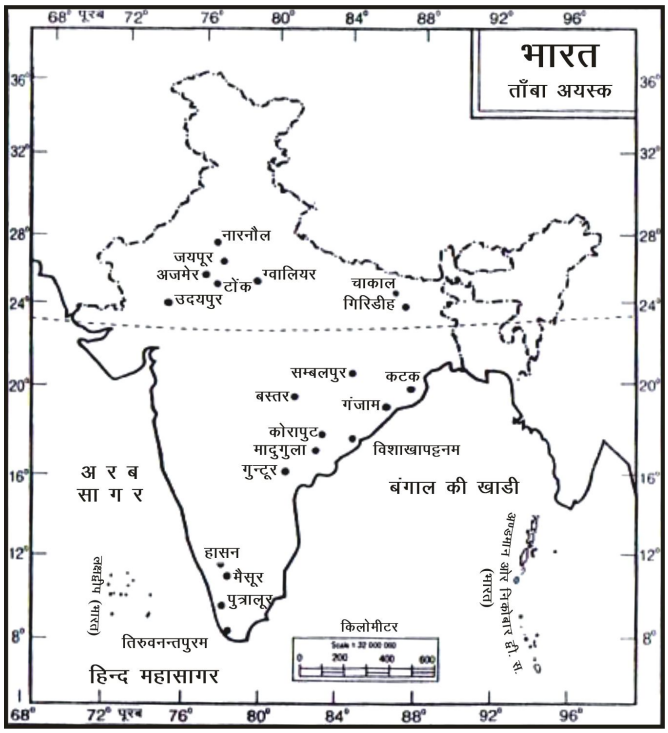
तांबा के उत्पादन क्षेत्र (Copper Producing Regions)

भारत में तांबा उत्पादन करने वाले राज्यों में मध्यप्रदेश (62 प्रतिशत), राजस्थान (27 प्रतिशत) तथा झारखण्ड (11 प्रतिशत) सर्वप्रमुख है। वर्तमान में इन तीनों राज्यों से देश के कुल तांबा उत्पादन का लगभग 99 प्रतिशत उत्पादन प्राप्त होता है। कर्नाटक, महाराष्ट्र, बिहार, गुजरात तथा आन्ध्रप्रदेश राज्यों में कुछ ताम्र अयस्क प्राप्त होता है।

(1) मध्य प्रदेश – तांबा के उत्पादन में मध्यप्रदेश का भारत में प्रथम स्थान है। सन् 2013–14 में यहाँ 23.76 लाख मी. टन ताम्र अयस्क उत्पादित किया गया जो देश का 62.1 प्रतिशत हैं। यहाँ तांबा की अनुमानित संचित राशि 24.2 मिलियन मी. टन है। बालाघाट जिले में मलाजखण्ड ताम्र पेटी राज्य का सर्वप्रमुख ताम्र अयस्क उत्पादक क्षेत्र है, जहाँ 170 मीटर लम्बी और 20 मीटर चौड़ी पेटी में 193 मिलियन टन तांबे के सुरक्षित भण्डार हैं। इसके अतिरिक्त जबलपुर, नरसिंहपुर, सागर, होशंगाबाद, भिंड, छतरपुर, देवास तथा ग्वालियर में भी तांबा के संचित भण्डार हैं। यहाँ हिन्दुस्तान कॉपर लिमि. द्वारा उत्पादन कार्य किया जा रहा है।

टिप्पणी

(2) राजस्थान – यहाँ देश का सर्वाधिक तांबा (19.9 प्रतिशत) संचित हैं। तांबा उत्पादन में राजस्थान राज्य का भारत में द्वितीय स्थान है। सन् 2013–14 में यहाँ 10.0 लाख मी. टन ताम्र अयस्क उत्पादित किया गया जो देश के कुल उत्पादन का 26.9 प्रतिशत है। **झुँझनूँ तथा अलवर** जिले ताम्र अयस्क उत्पादन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अलवर जिले में खो–दरीबा क्षेत्र तथा झुँझनूँ जिले में खेतड़ी–सिंघाना क्षेत्र ताम्र अयस्क का उत्पादन करने वाले प्रमुख क्षेत्र हैं। इसके अतिरिक्त उदयपुर का देलवाड़ा, किरोवली तथा सिरोड़ी क्षेत्र एवं भीलवाड़ा जिलों के पुर क्षेत्र से भी ताम्र अयस्क का उत्पादन प्राप्त होता है। राजस्थान में ताम्र अयस्क खनन का कार्य **हिन्दुस्तान कॉपर कार्पोरेशन** (Hindustan Copper Corportaion) द्वारा सम्पन्न होता है।



चित्र क्र. 2.4: भारत में तांबा अयस्क के क्षेत्र

(3) झारखण्ड – तांबा के संचित भण्डारों तथा उत्पादन की दृष्टि से झारखण्ड देश में तृतीय स्थान रखता है। सन् 2013–14 में इस राज्य में 39.86 लाख मी. टन ताम्र अयस्क उत्पादित किया गया, जो भारत के कुल ताम्र अयस्क उत्पादन का लगभग 11 प्रतिशत था। झारखण्ड राज्य में **सिंहभूम जिला** ताम्र अयस्क भण्डारों का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं, जहाँ जिले के पश्चिमी भाग में स्थित चक्रधरपुर से अम्बाराखा तथा मोसाबनी होते हुए पूर्वी भाग में सूगरी क्षेत्र तक 140 किमी की लम्बाई में एक ताम्र अयस्क की महत्त्वपूर्ण पेटी स्थित है। इस पेटी में 10 करोड़ मी. टन के ताम्र अयस्क के संचित भण्डार होने का अनुमान है। राखा, मोसाबनी, धोबानी, राया, सुरदा, राजदाह तथा पाथरगारा इस क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण ताम्र खानें हैं। इस क्षेत्र में उत्पादित ताम्र अयस्क में शुद्ध तांबे का प्रतिशत 1.3 से लेकर 2.5 तक मिलता है। यहाँ 1924 से इंडियन कॉपर कार्पोरेशन कम्पनी घाटशिला में खनन व धातु–शोधन का कार्य कर रही है। हजारीबाग, गया, पलामू, छोटा नागपुर तथा सन्थाल परगना ताम्र अयस्क उत्पादन करने वाले झारखण्ड राज्य के अन्य जिले हैं।

टिप्पणी

(4) उत्तराखण्ड – इस राज्य के गढ़वाल, पोखरी तथा देहरादून जिले तांबा के भण्डार हैं, किन्तु ये भण्डार सुदूर क्षेत्रों में तथा निम्न किस्म के हैं। यहाँ पर सम्पूर्ण क्षेत्र 97 किलोमीटर के विस्तार में भागीरथी घाटी से लेकर धानपुर तक फैला है।

(5) तांबा उत्पादन के अन्य क्षेत्र–आन्ध्रप्रदेश के गुण्टूर, नालगोंड़ा, नेल्लोर तथा अनन्तपुर जिले; **कर्नाटक राज्य** का हासन जिला; **हिमाचल प्रदेश** में कुल्लू–काँगड़ा घाटी; **महाराष्ट्र** में चन्द्रपुर जिला; **तमिलनाडु** में दक्षिणी अरकाट जिला तांबा उत्पादन के अन्य क्षेत्र हैं।

सारणी क्र. 2.12

भारत में तांबा उत्पादन में प्रगति

वर्ष	उत्पादन (लाख टन में)
1950–1951	3.75
1960–1961	4.23
1970–1971	6.66
1980–1981	21.09
1990–1991	52.55
2000–2001	34.23
2010–2011	36.15
2011–2012	34.79
2012–2013	36.35
2013–2014	37.77

स्रोतः आई.बी.एम.: इण्डियन मिनरल्स इयरबुक्स 2011 and 2014।

तांबा उत्पादन प्रतिरुप

भारत में सन् 1950–51 में 3.75 लाख मी. टन तांबे का उत्पादन हुआ, जिसका मूल्य 1.94 करौड़ रुपया था। सन् 1960–61 में यह उत्पादन बढ़कर 4.23 लाख मी टन तथा मूल्य 2.29 करोड़ रुपया हो गया। सन् 1991 के बाद देश में तांबे का उत्पादन निरन्तर घट रहा है। सन् 1991 में देश में तांबे का उत्पादन 51.07 लाख मी. टन था जो 2013–14 में 37.77 लाख टन रह गया।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade)

देश में तांबे का उत्पादन माँग से कम होता है। अतः तांबे की आपूर्ति के लिए विदेशों पर निर्भर रहना होता है। भारत अपनी घरेलू आवश्यकता पूर्ति के लिए चिली (40 प्रतिशत) ऑस्ट्रेलिया (25 प्रतिशत) इण्डोनेशिया, ब्राजील, ईरान तथा पूर्वी अफ्रीकी देशों से तांबे का आयात करता है। वर्ष 2013–14 में 13,400 करोड़ रुपये मूल्य का 1810 हजार टन तांबा आयात किया गया।

2.3.3 बॉक्साइट (Bauxite)

टिप्पणी

एल्यूमीनियम के अयस्क (ऑक्साइड) को बॉक्साइट कहा जाता है। उत्तम किस्म के बॉक्साइट में एल्यूमिनियम ऑक्साइड का प्रतिशत 50 से 68 के मध्य मिलता है। बॉक्साइट से प्राप्त एल्यूमिनियम एक बहुउपयोगी अलौह धातु है, जिसका उपयोग वाहनों, विद्युत यन्त्रों, रासायनिक उद्योग, सैनिक आयुधों तथा टेलीफोन के तारों के निर्माण के लिए किया जाता है।

सारणी क्र. 2.13
भारत में बॉक्साइट के संचित भण्डार

क्र.	राज्य (करोड़ टन)	अनुमानित भण्डार	प्रतिशत
1	ओडिशा	51.69	52.0
2	आन्ध्रप्रदेश	61.50	17.7
3	गुजरात	15.26	6.8
4	महाराष्ट्र	3.16	5.0
5	छत्तीसगढ़	2.03	4.9
6	मध्य प्रदेश	1.56	4.2
7	झारखण्ड	7.09	4.2
8	गोवा	1.63	1.7
9	कर्नाटक	0.50	1.6
10	अन्य	—	—
11	भारत	83.01	100.00

स्रोतः आई.बी.एम.: इण्डियन मिनरल्स इयरबुक 2011।

बॉक्साइट के संचित भण्डार (Bauxite Reserves)

भारत में बॉक्साइट के संचित भण्डारों की अनुमानित मात्रा 348 करोड़ मी. टन है। इन संचित भण्डारों में से केवल 8 करोड़ मी. टन उच्च किस्म का बॉक्साइट है, जबकि शेष मात्रा मध्यम एवं घटिया किस्म के बॉक्साइट की है। देश के लगभग 50 प्रतिशत बॉक्साइट भण्डार उड़ीसा राज्य में निहित हैं। बॉक्साइट के संचित भण्डारों की दृष्टि से उड़ीसा (52 प्रतिशत), आंध्रप्रदेश (17.7 प्रतिशत), गुजरात (6.8 प्रतिशत), महाराष्ट्र (5 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (4.9 प्रतिशत), मध्य प्रदेश (4.2 प्रतिशत), झारखण्ड (4.2 प्रतिशत), गोआ (1.7 प्रतिशत) एवं कर्नाटक (1.6 प्रतिशत) क्रमशः प्रमुख राज्य हैं।

बॉक्साइट उत्पादन प्रतिरुप

भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से बॉक्साइट उत्पादन में तीव्र प्रगति हुई है। सन् 1950–51 में देश में बॉक्साइट का उत्पादन 68 हजार टन जो वर्ष 2013–14 में बढ़कर 216.66 लाख टन हो गया। जिसका मूल्य 7.82 लाख रुपया था। देश में बॉक्साइट के उत्पादन में निरंतर वृद्धि हुई है। विगत दशकों में बॉक्साइट उत्पादन की प्रगति निम्न सारणी क्र. 2.14 में दृष्टव्य है।

टिप्पणी

बॉक्साइट उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र

बॉक्साइट उत्पादन की दृष्टि से ओडिशा (38.4 प्रतिशत), महाराष्ट्र (17.8 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (12 प्रतिशत), झारखण्ड (5 प्रतिशत), गुजरात (7.2 प्रतिशत), मध्य प्रदेश (3.5 प्रतिशत), तथा तमिलनाडु (1.0 प्रतिशत) राज्य महत्वपूर्ण हैं। इन राज्यों द्वारा सन् 2010–11 में देश का लगभग 70 प्रतिशत बॉक्साइट उत्पादित किया गया। कर्नाटक, गोआ, उत्तरप्रदेश तथा जम्मू–कश्मीर बॉक्साइट उत्पादन के अन्य राज्य हैं।

सारणी क्र. 2.14
भारत में बॉक्साइट का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन (मिलियन टन में)
1950–1951	0.68
1960–1961	4.75
1970–1971	15.71
1980–1981	19.23
1990–1991	48.50
2000–2001	79.90
2009–2010	97.77
2011–2012	93.41
2013–2014	216.66

स्रोतः Economic Survey, 2014-15 & IBM Indian Minerals year books.

(1) ओडिसा – बॉक्साइट के भंडारण तथा उत्पादन की दृष्टि से यह देश का प्रथम राज्य है। यहाँ देश के 52.0 प्रतिशत बॉक्साइट भण्डार संचित हैं तथा यह देश के बॉक्साइट उत्पादन में प्रथम स्थान (38.4 प्रतिशत) पर है। यहाँ 300 किमी. लम्बी तथा 40–100 किमी. चौड़ी और 950–1300 मीटर गहरी ही बॉक्साइट की पेटी कालाहांडी तथा कोरापुट जिलों से लेकर आन्ध्रप्रदेश के विशाखापट्टनम जिले तक विस्तृत है। यह देश का समृद्धतम बॉक्साइट उत्पादक क्षेत्र है।

(2) महाराष्ट्र – बॉक्साइट के संचित भण्डारों की दृष्टि से महाराष्ट्र का दूसरा स्थान है। यहाँ देश के लगभग 27 प्रतिशत बॉक्साइट के जमाव निहित है। जबकि यहाँ से देश का बॉक्साइट उत्पादन होता है। रायगढ़, सातारा, रत्नागिरी, कोल्हापुर तथा सिंधुदुर्ग राज्य के महत्त्वपूर्ण बॉक्साइट उत्पादक जिले हैं। महाराष्ट्र में मिलने वाले बॉक्साइट में एल्यूमिना का प्रतिशत 50 से 85 के मध्य मिलता है।

(3) छत्तीसगढ़ – यहाँ दुर्ग, बिलासपुर, रायपुर, सरगुजा और बस्तर जिलों में बॉक्साइट के भण्डार है। सरगुजा का मैनपाट बॉक्साइट का मुख्य उत्पादक क्षेत्र है।

(4) गुजरात – बॉक्साइट उत्पादन में गुजरात का देश में चतुर्थ स्थान (6.8 प्रतिशत) है। गुजरात में बॉक्साइट के लगभग 23.7 करोड़ मी. टन के प्रमाणित संचित भण्डार हैं। यहाँ छेड़, कच्छ, जामनगर, भावनगर, जूनागढ़ तथा अमरेली जिले बॉक्साइट के प्रमुख उत्पादक जिले हैं। खेड़ा जिले का कपदवंज व वम्बास डूगरी क्षेत्र तथा कच्छ जिले का माण्डवी, भुज, नखराना व अंजर क्षेत्र बॉक्साइट उत्पादन में उल्लेखनीय हैं।

टिप्पणी



चित्र क्र. 2.5: भारत में बॉक्साइट के क्षेत्र एवं एल्यूमीनियम के कारखाने

(5) मध्य प्रदेश – बॉक्साइट के संचित भण्डारों की दृष्टि से मध्यप्रदेश सम्पन्न राज्य हैं। यहाँ बॉक्साइट के संचित भण्डारों की मात्रा लगभग 30 करोड़ मी. टन है। मध्यप्रदेश में बॉक्साइट उत्पादन के निम्नलिखित तीन प्रमुख क्षेत्र हैं –

(i) **अमरकंटक** – बालाघाट क्षेत्र (शहडोल, अनूपपुर, मण्डला तथा बालाघाट जिले)।

(ii) **कटनी** – निमाड़–जबलपुर क्षेत्र।

(iii) शिवपुरी तथा गुना जिले।

(6) झारखण्ड – बॉक्साइट उत्पादन की दृष्टि से भारत का सम्पन्न राज्य है। यहाँ लगभग 14.6 करोड़ मी. टन बॉक्साइट के प्रमाणित संचित भण्डार हैं। सन् 2010–11 में झारखण्ड में देश का 5.0 प्रतिशत बॉक्साइट उत्पादित किया गया है। इस राज्य में उत्तम किस्म का बॉक्साइट उत्पादित होता है, जिसमें एल्यूमीनियम ऑक्साइड का प्रतिशत 60 से 68 तक पाया जाता है। बॉक्साइट उत्पादित जिलों में राँची तथा पलामू उल्लेखनीय हैं। राँची जिलें में बाँगरु पठार, जमीरापत तथा पाखरापत क्षेत्र तथा पलामू जिले में नेत्रहाट क्षेत्र से बॉक्साइट का उत्पादन प्राप्त होता है।

(7) तमिलनाडु – तमिलनाडु राज्य में बॉक्साइट के संचित भण्डार लगभग 3 करोड़ मी. टन है। तमिलनाडु राज्य में उत्पादित बॉक्साइट का 45 से 50 प्रतिशत एल्यूमिना मिलता है।

टिप्पणी

इस राज्य में बॉक्साइट उत्पादन के निम्नलिखित 3 क्षेत्र हैं –

(i) **सेलम** जिले में शिवराय पहाड़ियाँ एवं कोल्ली पहाड़ियाँ।

(ii) **नीलगिरी** एवं मदुराई जिले में पालनी एवं कोडाईकनाल पहाड़ियाँ।

(iii) **कोयम्बटूर** जिले में कोलेगलाई पहाड़ियाँ।

सारणी क्र. 2.15
भारत में प्रमुख राज्यों मे बॉक्साइट का उत्पादन

राज्य	खानों की संख्या	उत्पादन (हजार टन)	प्रतिशत
ओडिशा	23	7635.2	38.4
महाराष्ट्र	17	2057.7	17.8
छत्तीसगढ़	22	1314.1	12.1
गुजरात	86	7024.3	7.2
झारखण्ड	35	2282.4	5.1
मध्य प्रदेश	32	732.5	3.5
तमिलनाडु	16	100.9	1.1
गोवा	9	444.4	2.0
भारत	—	21666.0	100.00

स्रोतः आई.बी.एम.: इण्डियन मिनरल्स इयरबुक्स 2011 और 2014।

(8) कर्नाटक – इस राज्य में बॉक्साइट के भण्डार लगभग 1.0 करोड़ मी. टन के हैं। राज्य के बॉक्साइट उत्पादक जिलों में बेलगाँव जिला उल्लेखनीय है। इस जिले के उत्तर–पश्चिमी भाग में स्थित कारले पहाड़ियाँ, नावगी पहाड़ियाँ, किखले क्षेत्र तथा जम्बोती क्षेत्र बॉक्साइट खनन के प्रमुख क्षेत्र है।

(9) बॉक्साइट उत्पादक अन्य क्षेत्र – बॉक्साइट उत्पादन भारत के निम्नलिखित क्षेत्रों से भी किया जाता है –

(i) उत्तरप्रदेश में बाँदा जिले का राजुहान वन क्षेत्र तथा कर्बी तहसील।

(ii) गोआ का क्विपेग तथा कानकौआ क्षेत्र।

(iii) उड़ीसा में बोलानगिरी, कालाहाण्डी तथा सम्बलपुर जिला।

(iv) जम्मू–कश्मीर में रियासी एवं ऊधमपुर जिले।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार – भारत में उत्पादित सम्पूर्ण बॉक्साइट का देश में ही उपभोग हो जाता है। एल्यूमिनियम की बढ़ती हुई माँग की पूर्ति के लिए भारत में कनाडा, स्विट्जरलैण्ड, यूगोस्लाविया, संयुक्त राज्य अमेरिका, रुस, जर्मनी, नार्वे, ऑस्ट्रेलिया, फ्रांस आदि से बॉक्साइट का आयात किया जाता है। भारत से बॉक्साइट का कुछ निर्यात इटली, जापान, चीन, ताइवान, संयुक्त अरब अमीरात, सउदी अरब व बांग्लादेश को किया जाता है।

2.4 वन संसाधन (Forest Resources)

टिप्पणी

प्राकृतिक वनस्पति अपने विभिन्न स्वरूपों में भौतिक वातावरण–तापमान, वर्षा, जल अपवाह, 'ऊँचाई एवं मिट्टी के विभिन्न तत्त्वों का उत्तम एकमात्र स्वरूप या प्रतिबिम्ब होती है। **कोपेन** वैज्ञानिक ने प्राकृतिक संपत्ति को जलवायु का वास्तविक मापदण्ड माना है। विद्वान **थार्नथ्वेट** ने प्राकृतिक वनस्पति का ऋतु विज्ञान के प्रश्न के रूप में विचार किया है।

अतीत से भारतीय वनों का आर्थिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व रहा है। मत्स्य पुराण, रामायण तथा महाभारत में वन–प्रदेशों का प्रसंग मिलता है। विशाल वनस्थली में महाभारत जैसे विशालग्रन्थों की रचना हुई। नन्दनवन, दण्डकारण्य, अशोकवन, वृन्दावन ऋषि–मुनियों की तपोभूमि रहे, जहाँ भारतीय इतिहास की अनेक धार्मिक घटनाएँ हुईं। अतीत में आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्रियाओं के केन्द्र अरण्य ही थे। प्रकृति ने वनों के रूप में भारत को एक बहुमूल्य उपहार प्रदान किया है किन्तु मानव ने इसके मूल्य को नहीं आँका और विदेशी सत्ता के स्थापित होने तथा जनसंख्या में क्रमशः तीव्र वृद्धि के साथ क्रूरता से वन काटे गये। निर्माण–कार्यों के लिए लकड़ी की आवश्यकता बढ़ी, विनाशकारी दावाग्नि से वन नष्ट हो गये। खेती के लिए भूमि की क्रमशः आवश्यकता बढ़ती गयी, जिससे वन नष्ट होते गये। असम में झूमिंग से कई स्थानों पर वन साफ हो गये। बाढ़ एवं अवर्षण से भी वनों को क्षति हुई। देश के ऊपर आर्थिक संकट मँडराने लगे। इसी बीच भारत स्वाधीन हो गया। अन्त में वन एवं खेती के घनिष्ठ सम्बन्ध को हम पहचान सके। सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ। वन–विभाग अनुसन्धान करने लगा। वन–महोत्सव की योजना चालू हुई और वन–वृद्धि की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। यही कारण है कि दसवीं पंचवर्षीय योजना तक भारतमें वनस्पति क्षेत्र 25% करने का लक्ष्य है जो ग्यारहवीं योजना के अन्त तक 33% करने का लक्ष्य है।

भारत में शीतोष्ण एवं उष्ण कटिबन्धीय दोनों ही प्रकार के वन हैं। कुल वनों का 7 प्रतिशत शीतोष्ण वन (3.9 प्रतिशत संकुल वन तथा 3.1 प्रतिशत चौड़ी पत्ती के वन) तथा 93 प्रतिशत उष्ण कटिबन्धीय वन (80 प्रतिशत मानसूनी वन, 12 प्रतिशत सदाबहार वन) तथा 1 प्रतिशत अन्य वन हैं। कुलवन के 5.6% पर शंकु वृक्षी वन तथा 94.4% पर चौड़ी पत्ती के वन हैं। विश्व का वन क्षेत्रफल 405.7 करोड़ हेक्टेयर है। इस प्रकार भारत का वन क्षेत्र विश्व का 1.85 प्रतिशत है। विश्व में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 1 हेक्टेयर है। भारत में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0.11 हेक्टेयर है।

भारत में 6.90 करोड़ हेक्टेयर भूमि में वन हैं जिनमें 4.18 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर घने वन तथा 12.72 करोड़ हेक्टेयर खुले वन हैं। भारत की सम्पूर्ण भौगोलिक भूमि के केवल 20.55 प्रतिशत भाग में वन हैं। परन्तु विस्तृत उपलब्ध आँकड़े केवल 6.33 करोड़ हेक्टेयर भूमि के हैं।

विश्व के अन्य देशों में कम से कम 20 से 25 प्रतिशत वन–भूमि मिलती है। स्वीडन में 56%, पू. सोवियत संघ में 34%, कनाडा एवं संयुक्त राज्य अमेरीका में 33%, फिनलैण्ड में 73%, जापान में 62%, हिन्देशिया में 64% तथा थाईलैण्ड में 64% भूमि पर वन फैले हुए हैं। भारत में वनों का विस्तार कम है। भारत के राज्यों में भी वन क्षेत्र

टिप्पणी

में भिन्नता मिलती है। मिजोरम में 86.99%, त्रिपुरा में 54.79%, अण्डमान निकोबार में 92.21%, उड़ीसा में 30.21%, हिमाचल प्रदेश में 23.50%, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में 29.73%, केरल में 26.56%, महाराष्ट्र में 15.17%, आन्ध्रप्रदेश में 16.08%, उत्तरांचल और उत्तरप्रदेश में 11.55% और झारखण्ड और बिहार में 15.23% वनभूमि है। सन् 1952 की राष्ट्रीय वन–नीति के अनुसार देश की कम से कम 33 प्रतिशत भूमि पर वन–क्षेत्र आवश्यक हैं। यह वन–विस्तार पहाड़ी एवं पठारी क्षेत्र पर 60 प्रतिशत तथा मैदानी क्षेत्र पर 20 प्रतिशत होना चाहिए। इसके लिए वन संरक्षण तथा वन विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है, जिसके लिए वन आन्दोलन को बीस सूत्रीय कार्यक्रम में स्थान दिया गया है। जैसे सामाजिक वानिकी कार्यक्रम को विशिष्टता प्रदान की जा रही है।

स्थूलता की दृष्टि से प्राकृतिक वनस्पति तीन प्रकार की होती है – वन, झाड़ी तथा घास। अधिक वर्षा वाले भागों में वन मिलते हैं, कम वर्षा वाले भागों में घास और अति अल्प वर्षा के क्षेत्रों में कँटीली झाड़ियाँ पायी जाती हैं। इस प्रकार प्राकृतिक वनस्पति के रूप तथा प्रकार वहाँ की मिट्टी तथा जलवायु के अनुसार होते हैं। भारत में तीस हजार प्रकार के पौधे मिलते हैं।

प्रशासनिक दृष्टि से वनों का वर्गीकरण (Classification of Forests from the Perspetive of Administration)

प्रशासनिक दृष्टि से वनों को तीन वर्गों में बाँटा गया है –

1. सुरक्षित वनः जो वन जलवायु की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होते है, उन्हें सुरक्षित वन कहते हैं। इनमें न काटी जाती हैं, न पशु चराने दिये जाते हैं, क्योंकि ये सरकारी सम्पत्ति माने जाते हैं। बाढ़ों पर नियंत्रण करने, भूमि क्षरण से सुरक्षा एवं मरुस्थल प्रसार को रोकने तथा जलवायु एवं भौतिक कारणों से इनकी आवश्यकता होती है। 54% भाग पर इस प्रकार के वन हैं।

सारणी क्र. 2.16

वनों का वर्गीकरण (Classification of Forests)

(लाख हेक्टेयर में)

विवरण	क्षेत्रफल
1. स्वामित्व के आधार पर–	
अ. राजकीय वन	582.20
ब. सामुदायिक वन	46.30
क. व्यक्तिगत वन	4.50
	कुल 633.00
2. प्रशासनिक दृष्टि से	
अ. सुरक्षित वन	350.00
ब. संरक्षित वन	190.00
स. अवर्गीकृत वन	93.00
	कुल 633.00

टिप्पणी

3. वनों के प्रकार की दृष्टि से	
अ. कोणधारी वन	47.00
ब. चौड़ीपत्ती वाले वन	586.00
	कुल 633.00

2. संरक्षित वनः इन वनों में विशेष नियमों के अन्तर्गत मनुष्यों को अपने पशुओं को चराने तथा लकड़ी काटने की सुविधा दी जाती है। इस प्रकार के वन 29% भाग पर हैं।

3. अवर्गीकृत वनः इन वनों में लकड़ी काटने एवं पशुओं के चराने पर कोई प्रतिबंध नहीं है। सरकार इसके लिए कुछ शुल्क लेती है। इस प्रकार ये वन 17% भाग पर हैं।

संविधान के अंतर्गत अब वनों का वर्गीकरण निम्न प्रकार स्वीकृत किया गया है:

1. राजकीय वनः लगभग 95% भाग पर ये वन हैं जो पूर्णतया सरकारी नियंत्रण में हैं।

2. सामुदायिक वनः ये वन स्थानीय नगरपालिकाओं एवं जिला परिषदों के अंतर्गत हैं। ये लगभग 3.1% भाग पर हैं।

3. व्यक्तिगत वनः व्यक्तिगत वन लोगों के अधिकार में हैं। कुल वनों का 1.7% इस प्रकार के वन हैं।

वानस्पतिक प्रदेश (Vegetation Zones)

पिछले दशकों में वनस्पति शास्त्रियों ने भारत की प्राकृतिक वनस्पति का वर्गीकरण किया है। **एच.जी. चैम्पियन** महोदय के विशद् अध्ययन एवं वर्गीकरण में **डॉ. जी. पुर सेठ** महोदय द्वारा प्रतिपादित संशोधनों के आधार पर भारत के वनों को चार प्रमुख वर्गों तथा सोलह विभागों में विभाजित किया गया है। यह विभाजन अधिक मान्य एवं सरल हैं। इस वर्गीकरण का आधार भूमि की बनावट, वैज्ञानिक स्तर तथा शोषण की सीमा है। उपवर्गों को जलवायु, उच्चावचन, पौधों के प्रकार आदि आधारों पर निश्चित किया गया है।

भारतीय वनों के प्रदेश (Indian Forest Regions)

(क वर्ग) आर्द्र उष्ण कटिबंधीय वन – ये भारत के अमूल्य वन हैं। इनके मुख्य चार भाग हैं –

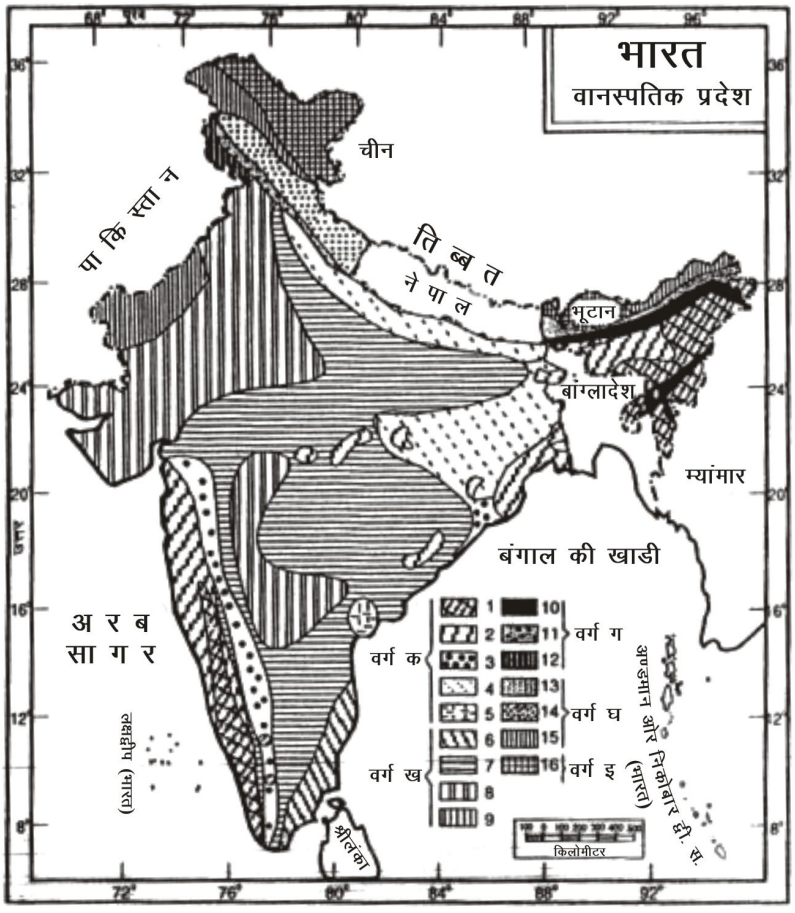
1. उष्ण कटिबंधीय आर्द्र सदापर्णी वनः इन वनों का विस्तार 250 सेमी. से अधिक वर्षा के क्षेत्रों में (असम क्षेत्र, पश्चिमी घाट के पर्वत, आर्द्र भागों तथा अण्डमान निकोबार द्वीपों पर मिलता है) ये अत्यंत घने तथा ऊँचे वृक्षों वाले वन हैं जो बल्लरियों से गुंठित मिलते हैं। (इनके महत्त्वपूर्ण वृक्ष **चलाप्स, महोगनी, देवदार** आदि हैं) इन में वृक्षों के कम प्रकार मिलते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण वृक्ष असम राज्य में **अंगुरू** है। इस की लकड़ी में मधुर सुगंध (incense) प्राप्त होती है। इससे सुगंधित तेल निकलता है। अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह के **पादौक** तथा **गुरजन** बड़े उपयोगी वृक्ष हैं।

टिप्पणी

2. उष्ण कटिबंधीय आर्द्र अर्द्ध–सदापर्णी वनः इस वन का प्रसार 200 से 250 सेमी. वर्षा के क्षेत्रों में विशेषतया पश्चिमी घाट पर्वत की एक पतली पट्टी तथा असम घाटी और पश्चिमी बंगाल एवं उड़ीसा के विस्तृत तटीय भाग में मिलता है। लता एवं बल्लरियों के फलस्वरूप वन में हरियाली बनी रहती है। इसके मुख्य वृक्ष **रबड़, तुल्सर** तथा **महोगनी** हैं। सभी सदापर्णी वनों का विस्तार 25 हजार वर्ग किमी. है।

3. आर्द्र पर्णपाती वनः ये वन प्रायद्वीपीय पठार के भागों में मिलते हैं। इनका विस्तार मध्य प्रदेश छत्तीसगढ़, उड़ीसा, असम, बिहार, झारखण्ड, पश्चिमी बंगाल, कर्नाटक, महाराष्ट्र तथा अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह में है। झारखंड का सिंहभूम, पश्चिमी बंगाल का बुक्सा तथा असम का कामरूप जनपद महत्त्वपूर्ण हैं। (इसके प्रमुख वृक्ष सागवान, शीशम, चंदन, रोजवुड तथा पादौक हैं।) शीशम पूर्वी हिमालय, कर्नाटक तथा महाराष्ट्र में मिलता है। चंदन एवं रोजवुड कर्नाटक में मिलते हैं। अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह का पादौक वृक्ष अपने टिकाऊपन, कठोरता तथा नक्काशी के लिए प्रसिद्ध है। अन्य वृक्ष **कुसुम, पलास, हरड़, बहेड़ा, आँवला** तथा **खैर** हैं।

4. साखू वनः यह वन झारखण्ड के छोटा नागपुर पठार, बघेलखंड, उड़ीसा की पहाड़ियों तथा पूर्वी घाट पर्वत पर मिलते हैं। यह सबसे महत्त्वपूर्ण वृक्ष है, जिसका प्रसार 91,222 वर्ग किमी. में है। यह कुल वन का 12% है। पश्चिमी घाट पर्वत, नीलगिरि तथा मध्य प्रदेश में इस वृक्ष की बहुलता है। इसकी लकड़ी भवन निर्माण तथा रेल के स्लीपर के लिए उपयोगी होती है।



चित्र क्र. 2.6: भारत के वानस्पतिक प्रदेश

टिप्पणी

5. ज्वारीय वनः समुद्री तटों पर निचले दलदली भागों में यह वन मिलते हैं। ऐसे वन गंगा नदी के डेल्टा, महानदी के डेल्टा, गोदावरी नदी के डेल्टा, कृष्णानदी के डेल्टा तथा कावेरी नदी के डेल्टा पर मिलते हैं। गंगा नदी के डेल्टा का सुंदरी वृक्षों का सुंदर वन बहुत प्रसिद्ध है। (डेल्टा के ऊपरी भागों में **केतकी, बेंत** तथा **ताड़** के वृक्ष मिलते हैं।) उत्तरप्रदेश, पश्चिमी बंगाल तथा असम में ताजे पानी के दलदल मिलते हैं, जिनमें छोटे पेड़ों के केवल ऊपरी भाग वर्षा के दिनों में पानी के ऊपर रहते हैं।

(ख वर्ग) उष्ण कटिबंधीय शुष्क वन – ये वन 75 सेमी. से 125 सेमी. वर्षा के क्षेत्र में मिलते हैं।

6. शुष्क सदापर्णी वनः इन का प्रसार प्रायद्वीपीय पठार के पूरब में तामिलनाडु तट से आंध्रप्रदेश के नेल्लूरू तक मिलता है, जहाँ मुख्यतः उत्तर–पूर्वी मानसून से वर्षा होती है। इनमें कई प्रकार के वृक्ष मिलते हैं और वनस्पति की अधिकता मिलती है।

7. शुष्क पर्णपाती वनः ये वन प्रायद्वीपीय भारत के मध्य भाग तथा हिमालयीय तराई के भाग में मिलते हैं। गंगा, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदियों तथा इनकी सहायक नदियों के किनारे भी ये वन मिलते हैं। इसके मुख्य वृक्ष **साल, बाँस, खैर** तथा **पेडूला** हैं। सभी प्रकार के पर्णपाती वनों का विस्तार नौ लाख वर्ग किमी. है।

8. उष्ण कटिबंधीय शुष्क कँटीली झाड़ीः अरावली क्षेत्र (राजस्थान) तथा पश्चिमी घाट पर्वत के पूर्वी ढालों पर वृष्टि छाया प्रदेश में कर्नाटक, आंध्र प्रदेश तथा तामिलनाडु राज्यों में यह वन मिलते हैं। इस वन के मुख्य वृक्ष **बबूल, झाऊ** तथा **खेजड़ा** हैं।

9. मरुस्थली वनस्पतिः राजस्थान, हरियाणा, पंजाब तथा गुजरात के मरुस्थली भागों में ताड़, नागफनी तथा खजूर के वृक्ष यत्र–तत्र मिलते हैं। छोटी–छोटी कँटीली झाड़ियाँ भी मिलती हैं।

(ग वर्ग) उपोष्ण कटिबंधीय पर्वतीय वन – ऊँचे पर्वतों पर विभिन्न प्रकार के वन मिलते हैं। ऊँचाई के अनुसार वनों में परिवर्तन मिलता है। इन वृक्षों से मुलायम लकड़ी प्राप्त होती है।

10. उपोष्ण कटिबन्धीय आर्द्रवनः इस प्रकार के वन नीलगिरि एवं पालनी पहाड़ियों पर 900 से 1000 मीटर ऊँचाई पर, पश्चिमी घाट, सतपुड़ा एवं मैकाल पहाड़ियों पर 1,000 मीटर से ऊँचे भागों पर तथा पूर्वी देशांतर के पूरब में हिमालय के एक हजार से दो हजार मीटर ऊँचे भागों पर मिलते हैं। मेघालय पाइन 915 मीटर से, 2,134 मीटर ऊँचे भाग में मिलता है। इस वन के प्रमुख वृक्ष ओक, लारेल तथा चेस्टनट हैं।

11. उपोष्ण कटिबंधीय चीड़ वनः पश्चिमी हिमालय में एक हजार मीटर से अधिक ऊँचाई पर ये पड़े मिलते हैं। इनमें ओक वृक्ष मिलता है। इससे फर्नीचर, कागज तथा पर्ती लकड़ी (प्लाईवुड) बनती है।

12. उपोष्ण कटिबंधीय शुष्क सदाबहार या जम्मू व कश्मीर के पर्वतीय वनः 400 मीटर से 1,500 मी. ऊँचाई पर 50 से 100 सेमी. वर्षा के क्षेत्रों में जैतून के वन मिलते हैं। ये ईंधन एवं चारे के काम आते हैं।

टिप्पणी

(घ वर्ग) पर्वतीय शीतोष्ण कटिबंधीय वन – यह वन पर्वतीय भाग में 125 सेमी. से 200 सेमी. वर्षा के क्षेत्रों में 700 मीटर से 1,800 मीटर ऊँचाई पर मिलते हैं।

13. आर्द्र शीतोष्ण वनः 1,500 मीटर ऊँचे तथा 150 सेमी. वर्षा के क्षेत्रों में नीलगिरि, अन्नैमलाई तथा अन्य पहाड़ियों पर **मैग्नोलिया, लारेल, सिनकोना** एवं **यूकेलिप्टस** के वृक्ष मिलते हैं।

14. कम आर्द्र शीतोष्ण वनः 1,800 मीटर से 3,500 मीटर ऊँचाई के पहाड़ी क्षेत्रों में चीड़, देवदार, फर तथा स्प्रूस के वन मिलते हैं। ये शंकु वृक्षी सदापर्णी वन हैं। ये बड़े उपयोगी होते हैं।

15. शुष्क शीतोष्ण वनः 100 सेमी. से कम वर्षा वाले हिमालय के अनुपाती ढालों पर शंकुल वन मिलते हैं।

16. अति उच्चपर्वतीय वन या अल्पाइन वनः हिमालय के 2,900 मीटर से ऊँचे भागों पर छोटे वृक्षों तथा अल्पाइन घास के वन मिलते हैं। **भोजपत्र, लिचेन, जुनिपर, बर्च** तथा सुंदर पुष्पित पौधे प्रसिद्ध हैं। ये वृक्ष 10 मीटर से अधिक ऊँचे नहीं होते हैं।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में वन (Forests in National Economy)

वनों से अनेक लाभ होते हैं। ये किसी देश की आर्थिक निधि होते हैं। वनों से होने वाले लाभों का अध्ययन हम दो शीर्षकों में कर सकते हैं–

प्रत्यक्ष लाभ (Direct Benefits)

1. वनों से ईंधन प्राप्त होता है।
2. मकान, जहाज तथा दैनिक व्यवहार की वस्तुओं को बनाने की इमारती लकड़ी मिलती है।
3. पशुओं के लिए चारा मिलता है।
4. कागज, दियासलाई, रबड़ आदि उद्योगों के लिए कच्चे पदार्थ मिलते हैं।
5. वनों से लाख, गोंद, कत्था, विरोजा, तारपीन का तेल आदि प्राप्त होते हैं।
6. बहुत–सी औषधियाँ तथा फल प्राप्त होते हैं।
7. वनों से बहुत–से लोगों की जीविका चलती है।
8. वन राष्ट्रीय संपत्ति हैं और सभ्यता के लिए नितान्त आवश्यक होते हैं।

अप्रत्यक्ष लाभ (Indirect Benefits)

1. वन जलवायु को सम करते हैं और जल वृष्टि में सहायक होते हैं। ये वायु की गति को रोकते हैं। अतः भयानक आँधी से होनेवाली क्षति को कम करते हैं।
2. पेड़ों की पत्तियाँ सड़कर मिट्टी को ह्यूमस प्रदान करती हैं जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है और उपज में वृद्धि करती है।
3. बाढ़, आँधी तथा मरुस्थल–विस्तार को वन रोकते हैं।

टिप्पणी

4. वन प्राकृतिक छटा में वृद्धि करते हैं। वनों से जल–स्तर ऊँचा उठ जाता है जिससे कुएँ बनाने में सुविधा होती है जिससे सिंचाई की सुविधा में वृद्धि होती है। वन कृषि के दासी होते हैं।
5. वन मिट्टी में दब जानेपर कालान्तर में कोयला तथा खनिज तेल प्रदान करते हैं।
6. वनस्पतिहीन पहाड़ी ढालों पर भूमि अपरदन (erosion) जल्दी होता है। वनों द्वारा मिट्टी के अपरदन की रोकथाम होती है।
7. वनों में कृषि की पूरक वस्तुएँ उपलब्ध होती हैं।
8. वनों में असंख्य कीड़े–मकोड़े एवं जीव–जन्तु मिलते हैं, जो उपयोगी होते हैं।
9. पर्यावरण को प्रदूषण से बचाते हैं।
10. **कालिन्स** के मतानुसार वृक्ष पर्वतों को थामे रहते हैं। तूफानी वर्षा को नियन्त्रित करते हैं, नदियों को अनुशासित रखते हैं। जल प्रपातों को बनाये रखते हैं तथा पक्षियों का पोषण करते हैं।

वनों का आर्थिक उपयोग (Economic Utility of Forests)

भारतीय वन आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। वनों से प्राप्त होनेवाली वस्तुओं को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है – (1) मुख्य उपज, (2) गौण उपज।

1. मुख्य उपज

भारतीय वनों से लकड़ी, ईंधन तथा पशुओं का चारा प्राप्त होता है। इन वनों के प्रमुख पेड़ देवदार, चीड़, सनोवर, साल, अर्जुन, सागवान, शीशम, चंदन, बबूल, चप्लास, तेल्सुर तथा खैर हैं। वनों से पाँच हजार प्रकार की लकड़ियाँ मिलती हैं जिनमें 450 का व्यापारिक महत्त्व है।

हिमालय प्रदेश की लकड़ियाँ – हिमालय प्रदेश से हमको निम्न पेड़ों की लकड़ियाँ प्राप्त होती हैं जिनमें रेल्वे फर्नीचर, चिरे लट्ठे, गूदा लकड़ी तथा जलवनी लकड़ी मुख्य हैं।

देवदार (Devdar): यह सदापर्णी शंकुल पत्ती का पेड़ है, जो लगभग 30 मीटर ऊँचा तथा 10 मीटर मोटा है। यह 2,500 मीटर ऊँचाई तक कश्मीर, पंजाब की पहाड़ियों तथा गढ़वाल के जौनसार–बाबर क्षेत्रों में पाया जाता है। इस की लकड़ी सामान्य कठोर, भूरी–पीली, टिकाऊ तथा मूल्यवान होती है। यह लकड़ी निर्माण कार्यों में प्रयुक्त होती है। विशेषतः रेल के स्लीपर तथा पुल बनाने के काम आती है। इस लकड़ी से एक प्रकार की सुगंध निकलती है। इस पेड़ के क्षेत्र का विस्तार 5,120 वर्ग किमी. में है।

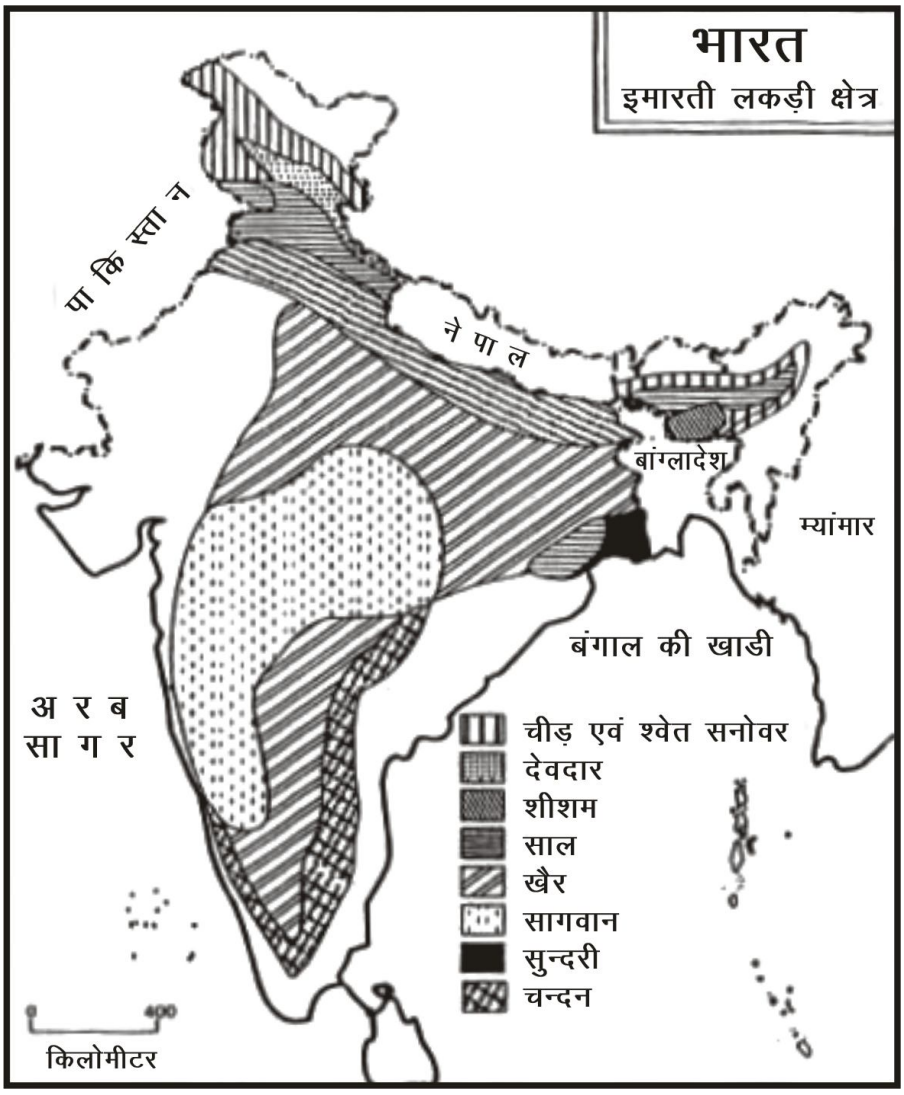
चीड़ (Chir): यह शंकुल पत्तीवाला सदाबहार वृक्ष है, जो 1,000 मीटर से 2,000 मीटर ऊँचाई पर कश्मीर, पंजाब तथा उत्तरांचल के पर्वतीय प्रदेशों में पाया जाता है। यह वृक्ष 18 से 30 मीटर तक ऊँचा होता है। चीड़ के वृक्षों के क्षेत्र का विस्तार 7,680 वर्ग किमी. है। इसकी लकड़ी हल्की होने के कारण पानी में आसानी से तैर सकती है। इसकी लकड़ी नरम तथा उपयोगी होती है। इसका उपयोग चाय एवं साबुन की पेटियाँ, नाव तथा सस्ता फर्निचर बनाने में अधिक होता है। इससे विरोजा तथा तारपीन का तेल प्राप्त होता है।

टिप्पणी

श्वेत सनोवर (Silver Fir) – यह शंकुल पत्ती का सदाबहार पेड़ है, जो 2,000 से 3,000 मीटर की ऊँचाई पर पश्चिमी हिमालय प्रदेश में मिलता है। यह 60 मीटर ऊँचा तथा इसका घेरा 6 से 7 मीटर होता है। इसकी लकड़ी सफेद, नम एवं टिकाऊ होती है। इसका प्रयोग कागज की लुग्दी, दियासलाई, हल्के संदूक, पैकिंग के तख्ते बनाने में होता है।

मानसूनी वनों की लकड़ियाँ – मानसूनी वनों से हम को निम्न प्रकार की लकड़ियाँ मिलती हैं –

साल (Sal) – यह पर्णपाती वृक्ष है जो हिमालय के निचले ढालों पर तराई प्रदेश में असम में नवगाँव तक पाया जाता है। उत्तरप्रदेश, मध्य प्रदेश, छोटा नागपुर, झारखंड, त्रिपुरा तथा उड़ीसा में ये वृक्ष अधिक मिलते हैं। इसकी लकड़ी कठोर एवं भूरे रंग की होती है। यह टिकाऊ लकड़ी है जो देर से चिकनी हो पाती है। 116 हेक्टेयर क्षेत्र में ये वृक्ष फैले हुए हैं। इस लकड़ी का प्रयोग रेल के स्लीपर एवं डिब्बे पुल बनाने में किया जाता है।



चित्र क्र. 2.7: भारत में इमारती लकड़ी का क्षेत्र

टिप्पणी

सागवान (Teak) – इसकी लकड़ी मजबूत तथा सुन्दर होती है। इसमें साधारण कठोरता पाई जाती है। यह मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, केरल, तामिलनाडु तथा उड़ीसा राज्यों में मुख्य रूप से मिलती है। टिकाऊ होने के कारण इसकी लकड़ी जहाज, रेल के डिब्बे तथा मेज–कुर्सी बनाने में प्रयोग की जाती है। इसके वन 89 हेक्टेयर में मिलते हैं जिनमें आधे मध्य प्रदेश में मिलते हैं।

शीशम (Sheshum) – इसकी लकड़ी भूरे रंग की साधारण कठोर व ठोस होती है। यह वृक्ष मुख्यतः उत्तर प्रदेश, पंजाब, तामिलनाडु तथा आंध्रप्रदेश के शुष्क भागों में अधिकता से पाया जाता है। कुछ वृक्ष मध्य प्रदेश, असम तथा पश्चिम बंगाल में भी मिलते हैं। इसकी लकड़ी का प्रयोग मकान बनाने, संदूक, रेल के डिब्बे तथा फर्नीचर बनाने में किया जाता है।

चंदन (Sandal) – यह वृक्ष दक्षिण भारत में विशेषतया कर्नाटक एवं तामिलनाडु में पाया जाता है। इसकी लकड़ी सजावट सामग्री तथा पूजा प्रयोजनों में आती है। यह सुगंधित कठोर लकड़ी होती है।

सुंदरी (Sundari) – यह वन नदी के डेल्टा पर मिलता है। विशेषतया गंगा नदी के डेल्टा पर। इसकी विशेषता होती है कि अधिक नमी के कारण इसकी जड़ें भूमि के अंदर न जाकर भूमि से बाहर निकली होती है। इसकी लकड़ी कठोर एवं ठोस होती है। इससे नाव, मेज–कुर्सियाँ तथा शहतीर बनाये जाते हैं।

सदाबहार वनों की लकड़ी – सदाबहार वनों से हमको निम्नांकित लकड़ियाँ प्राप्त होती हैं –

चप्लास (Chaplas) – इस पेड़ की लकड़ी मजबूत तथा टिकाऊ होती है। इससे फर्नीचर, जहाज, बक्से, सामान भरने की पेटियाँ तथा साधारण उपयोग की कई वस्तुएँ बनाई जाती हैं। असम के वनों में यह पेड़ अधिक मिलता है। इसी प्रकार का एक पेड़ आइनी (Aine) होता है जो दक्षिण–भारत में पश्चिमी घाट के वनों में पाया जाता है। इसकी लकड़ी सागवान की तरह मजबूत होती है।

तेल्सुर (Telsur) – इसकी लकड़ी कड़ी, मजबूत, लचीली तथा टिकाऊ होती है। यह लकड़ी पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, केरल तथा अण्डमान द्वीप में पायी जाती है। यह जल के भीतर काफी दिन तक टिक सकती है। अतः नौका एवं पुल बनाने में इसका प्रयोग होता है।

शुष्क वनों की लकड़ियाँ – शुष्क वनों में निम्न प्रकार की लकड़ियाँ पाई जाती है –

बबूल (Acacia) – यह पेड़ भारत के सभी प्रदेशों में पाया जाता है। भारत में 22 किस्म के बबूल मिलते हैं। इन वृक्षों की छाल तथा गोंद का प्रयोग अनेक कार्यों में होता है। इसके विशेष क्षेत्र उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र हैं। बबूल की तीन किस्में–तेलिया बबूल, कौड़िया बबूल तथा रामकाँटा विशेष प्रसिद्ध हैं। बबूल की छाल चमड़ा कमाने के काम आती है। बबूल से गोंद निकलता है। यह गोंद कपड़े की छपाई तथा रँगाई में भी प्रयोग होता है। यह कागज, देशी दवाइयों, स्याही, रंग एवं रंगलेप बनाने में भी बड़े काम का होता है।

टिप्पणी

खैर – खैर के वृक्ष की लकड़ी कठोर होती है। साधारणतः वृक्ष 3–4 मीटर ऊँचा होता है। यह वृक्ष पंजाब से असम तक तथा समस्त दक्षिणी प्रायद्वीप पर पाया जाता है। इसकी तीन किस्में होती हैं। पहली किस्म पंजाब, उत्तरांचल, बिहार, उत्तरी आंध्रप्रदेश में पाई जाती है। दूसरी किस्म असम, कर्नाटक तथा तामिलनाडु (नीलगिरि की पहाड़ियाँ) में पाई जाती हैं। तीसरी किस्म प्रायद्वीपीय भाग में पाई जाती है। खैर से **कत्था** तथा **कच** निकाला जाता है। **कत्था** पान में प्रयोग होता है। यह कई रोगों में दवा के रूप में भी प्रयोग होता है। कच का प्रयोग रूई तथा रेशम की रंगाई और कपड़ों की छपाई में किया जाता है। इसका उपयोग मत्स्याखेट के जालों, नाव के पालों तथा डाक के थैलों को रंगने के लिए किया जाता है।

खैर की लकड़ी अच्छी, मूल्यवान तथा टिकाऊ होती है। इसमें दीमक नहीं लगती और इस पर पॉलिश अच्छी चढ़ती है। मकानों के खम्भे, तेल तथा गन्ने के रस निकालनेवाले यंत्रों, हलों तथा औजारों के दस्ते भी अच्छे बनाये जाते हैं। इस लकड़ी का कोयला बहुत अच्छी श्रेणी का होता है।

देश में लकड़ी चीरने की साढ़े तीन हजार मिलें हैं, जो जम्मू व कश्मिर, हिमाचल प्रदेश, असम, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, आंध्रप्रदेश, तामिलनाडु तथा कर्नाटक में हैं। उत्तरांचल प्रदेश के जनपदों में मिलों की संख्या पर्याप्त मिलती है।

भारत में लकड़ी का वार्षिक उत्पादन 87.9 लाख घनमीटर लट्ठा लकड़ी तथा 14.4 लाख घनमीटर ईंधन लकड़ी है।

2. गौण उपजें

भारतीय वनों से अनेक प्रकार की गौण उपजें भी प्राप्त होती हैं। इनमें से मुख्य लाख, गोंद, चमड़ा कमाने के पदार्थ, कत्था, विरोजा, कागज की लुग्दी, दियासलाई की लकड़ी, फल, तेल, बाँस, बेंत तथा घासें हैं। वन–पशु भी घूमते रहते हैं, जिनका शिकार कर चमड़ा, सींग तथा रोयें काम में लाये जाते हैं। वृक्षों से औषधियाँ मिलती हैं, जैसे आँवला, हरड़, बहेड़ा तथा चिरोंजी आदि। इन वस्तुओं पर भारत के अनेक उद्योगधंधे निर्भर करते हैं। इसलिए इन वनों का आर्थिक महत्त्व अधिक है।

(i) **लाख (Shellac)** – इस प्रकार के कीड़े जो लैसीफर लक्का (Lacciferlacca) या लैक – बैग (Lac bag) जाति के होते हैं, कुछ पेड़ों के रसको चूसकर लाख बनाते हैं। ये कीड़े कुसुम, पलास, गूलर, बरगद, खैर, रीठा, पीपल तथा बबूल पेड़ों की नरम डालों के रस को चूस कर लाख बनाते हैं। यह कीड़ा 305 मीटर ऊँचे, 150 सेमी. से कम वर्षा तथा 20^0C तापमान वाले स्थानों में बढ़ते हैं। लाख पैदा करने के लिए उपर्युक्त पेड़ों में छोटी–छोटी टहनियाँ बाँध दी जाती हैं। इन टहनियों में लाख के कीड़ों के बीज रहते हैं। ये कीड़े शनैः–शनैः संपूर्ण पेड़ पर फैल जाते हैं।

नये पेड़ों पर लाख का कीड़ा जून, जुलाई, अक्टूबर तथा नवंबर में फैलाया जाता है। लाख तैयार होने पर एकत्र कर ली जाती है और उसको पीस कर छलनियों से छाना जाता है। उसको कई बार धोकर शुद्ध लाख (Shellac), दाला लाख (Seed lac) तथा बटन लाख (Button lac) प्राप्त की जाती है।

लाख उत्पादन क्षेत्र – संसार में लाख का सबसे बड़ा उत्पादक देश भारत है। द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले भारत विश्व का 90% लाख उत्पन्न करता था और दूसरा

बड़ा उत्पादक देश इग्लैण्ड था। परंतु अब भारत विश्व का केवल 50% लाख उत्पन्न करता है। थाइलैण्ड विश्व का एक–चौथाई लाख उत्पन्न करता है। भारत में लाख उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र निम्न प्रकार हैं –

टिप्पणी

झारखंड – हजारी बाग, पालम, राँची, संथाल परगना तथा सिंहभूम। छोटा नागपुर में भारत से कुल उत्पादन की आधी लाख प्राप्त होती है। संथाल परगना तथा गया (बिहार) क्षेत्रों में लाख साफ करने वाली 83 बड़ी इकाइयाँ हैं।

मध्य प्रदेश – बालाघाट, बिहारा, जबलपुर, मांडला, शहडोल तथा होशंगाबाद जनपद में लाख प्राप्त होती हैं जो देश की एक चौथाई है। यहाँ 14 इकाइयाँ परिशोधित लाख तैयार करती हैं।

छत्तीसगढ़ – यहाँ बिलासपुर, रायपुर में लाख प्राप्त होती है।

पश्चिम बंगाल – मुर्शिदाबाद, मालदा तथा बांकुड़ा जनपद में लाख साफ करने वाली 87 इकाइयाँ है।

उड़ीसा – संबलपुर, मयूरभंज, केन्दुझरगढ़ तथा ढेकानाल।

मेघालय – गारो, खासी एवं जैन्तिया जनपद।

असम – नवगाँव, कामरूप तथा शिवसागर।

गुजरात – पंचमहल एवं वड़ोदरा।

उत्तरप्रदेश – मिर्जापुर।

लाख की फसलें – वर्ष में लाख की चार फसलें होती हैं। **बैसाखी, कतकी, अगहनी** तथा **जेठवी**। बैसाखी फसल बड़ी होती है। यह बेर तथा पलास के वृक्षों से प्राप्त होती है। भारत के कुल उत्पादन का 62 प्रतिशत बैसाखी फसल है, जिसमें बिहार 63 प्रतिशत, मध्य प्रदेश 19 प्रतिशत और शेष अन्य राज्यों में प्राप्त होता है।

कतकी फसल से भारत का 23 प्रतिशत उत्पादन होता है। इसमें बिहार और झारखण्ड का 42 प्रतिशत और मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ का 34 प्रतिशत हिस्सा होता है।

जेठवी तथा अगहनी फसल से भारत का केवल 15 प्रतिशत उत्पादन होता है। जेठवी फसल का 70 प्रतिशत बिहार तथा 18 प्रतिशत मध्य प्रदेश से प्राप्त होता है। अगहनी फसल का 75 प्रतिशत बिहार तथा 15 प्रतिशत मध्य प्रदेश में प्राप्त होता है।

लाख का उपयोग – लाख विद्युत निरोधक होता है और मद्यसार को छोड़कर अन्य साधारण द्रवों में नहीं घुलता है। चपड़े का प्रयोग विद्युत तारों की खोल तथा विद्युत मोटरों की रक्षा में किया जाता है। बिजली के बल्ब, रेडियो तथा टेलीविजन ट्यूब तैयार करने में भी इसका उपयोग किया जाता है। तेल–वाहक टैंकरों की भीतरी दीवार की रंगाई चपड़ा से की जाती है जिससे खनिज तेल का कोई प्रतिकूल रासायनिक प्रभाव न पड़े। इसका उपयोग फोटो के कामों तथा छपाई की स्याही बनाने में किया जाता है। यह विभिन्न पदार्थों को सुरक्षित रखने के लिए प्रयोग में आता है।

लाख का उपयोग सजावट के लिए वार्निश तैयार करने में होता है। दवा, पॉलिश, आतिशबाजी तथा लेपाई में इसका महत्त्वपूर्ण उपयोग होता है। मुहर, ग्रामोफोन रेकॉर्ड आदि निर्माण में भी इसका प्रयोग होता है।

टिप्पणी

भारत में लाख उत्पादन का मुख्य कार्य आदिवासी करते हैं। लाख को धोकर तथा पीसकर दाना लाख बनाई जाती है। कपड़े के थैलों में मिलाकर यांत्रिक विधि से शुद्ध लाख तैयार की जाती है। भारत में चपड़े के 198 कारखाने बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र तथा उत्तरप्रदेश में हैं।

लाख उद्योग की समस्याएँ (Problems Faced by Lac Industry)

लाख उद्योग की समस्याएँ निम्नलिखित हैं –

1. सबसे उत्तम कुसमी लाख का उत्पादन दिन–प्रतिदिन कम हो रहा है।
2. देश में केवल राँची में एक अनुसंधान शाला है। अन्य अनुसंधान शालाओं के स्थापित करने की आवश्यकता है।
3. लाख के भावों में अधिक उतार–चढ़ाव होता है। अतः लाख उद्योग को सरकारी नियंत्रण में रखना आवश्यक है।
4. लाख उत्पादकों को प्रशिक्षित करना चाहिए। बिक्री व्यवस्था सहकारी समितियों द्वारा होनी चाहिए।
5. लाख की माँग कम हो जाने पर शीत गोदामों की आवश्यकता पड़ती है। केवल कोलकाता में एक गोदाम है। अतः अधिक गोदामों की व्यवस्था आवश्यक है।
6. लाख के कुटीर उद्योग को बड़े उद्योग का रूप देना आवश्यक है।

लाख उद्योग का भविष्य (Future of Lac Industry)

लाख उद्योग का भविष्य स्पर्धा से आवृत्त है। अतः निम्न प्रयास आवश्यक हैं –

1. लाख उत्पादक फार्म खोले जाएँ।
2. लाख के अधिक पेड़ लगाए जाएँ। उत्तम लाख पैदा की जाए।
3. प्राविधिक ज्ञान सुलभ किया जाए। शोध संबंधी सुविधायें प्रदान की जाएँ।
4. लाख के लिए वायु–अनुकूलित गोदाम बनाए जाएँ।
5. इसका उद्योग बड़े पैमाने पर चलाया जाए और क्रय–विक्रय की व्यवस्था सहकारी समितियों द्वारा करायी जाएँ।

भारत सरकार ने 1 अप्रैल, 1996 में कृषि मंत्रालय के अंतर्गत लाख उद्योग विकास निदेशालय (Directorate of Lac Development) की स्थापना राँची में कर दी है। इसका कार्य इस उद्योग से संबंधित समस्याओं का निदान करना एवं उद्योग का विकास करना है।

भारत की लाख विश्व में सर्वोत्तम कोटि की होती है। यह अपने उत्पादन का 90% एक सौ देशों को निर्यात करता है। इसके प्रमुख ग्राहक संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत रूस, जर्मनी, ब्रिटेन तथा ऑस्ट्रेलिया हैं। भारत तथा इग्लैंड, कम्पूचिया तथा मलेशिया से कुछ मात्रा में लाख का आयात करता है जिसको कारखानों में शुद्ध करके पुनर्निर्यात कर दिया जाता है।

(i) चमड़ा कमाने का पदार्थ – भारतीय वनों में बहुत से ऐसे वृक्ष मिलते हैं जिनकी छाल तथा फल, चमड़ा कमाने के काम आते हैं। हरड़, बहेड़ा, आँवला, टीमरू,

टिप्पणी

बैटल, माइराबोलन, गैम्बियर तथा बबूल वृक्षों की छाल चमड़ा कमाने में विशेष उपयोगी होती है। बैटल का वृक्ष नीलगिरि पर्वत (तामिलनाडु) तथा केरल में मिलता है। इसकी छाल में 35: टैनिन होता है। इसमें चमड़ा कमाने के सभी गुण होते हैं। माइराबोलन मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तामिलनाडु एवं पश्चिम बंगाल में मिलता है। सुंदरी एवं कच वृक्ष के फल से चमड़ा रंगा जाता है। राजस्थान में आँवला, टीमरू की छाल, ढाक के फूल एवं फलों से हरा, नीला, लाल एवं पीला रंग प्राप्त किया जाता है।

(ii) दियासलाई की लकड़ी – दियासलाई बनाने के लिए सेमल, धूप, पपीता, सलाई, आम तथा सुंदरी वृक्षों की लकड़ियाँ काम में लाई जाती हैं। ये वृक्ष भारत के अनेक भागों में मिलते हैं। प्रमुख उत्पादक मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, महाराष्ट्र तथा उत्तरप्रदेश राज्य हैं। देशमें 800 दियासलाई के कारखाने हैं जिनमें दियासलाई की डिब्बियाँ तथा तीलियाँ बनती हैं।

(iii) कागज की लुग्दी – कागज की लुग्दी स्प्रूस, श्वेत, सनोवर, चीड़ आदि शंकुल वृक्षों की नरम लकड़ी बाँस तथा सवाई, भाबर एवं हाथी घासों से प्राप्त होती है। हाथी घास विशेषकर पश्चिम बंगाल, असम तथा उत्तर प्रदेश के तराई प्रदेश में मिलती है। शेष घासें झारखण्ड (छोटा नागपुर का पठार), उड़ीसा तथा हिमालय की तराई में प्राप्त होती हैं। भारत में अधिकांश कागज बाँस तथा सवाई एवं भाबर घास को मिलाकर बनाया जाता है।

(iv) गोंद की राल (Gum Resin) – बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश, असम राज्यों के शुष्क भागों के बबूल, नीम, खेजड़ा, कीकर आदि वृक्षों से यह वस्तु प्राप्त होती है। यह बहुत से कामों में आती है।

(v) कत्था व कच – इसका विभिन्न कामों में प्रयोग होता है। विदेशों में इसका प्रयोग रंग बनाने में होता है।

(vi) घासें – भारत में कुछ सुगंधित घासें भी पाई जाती हैं। रोशा तेल की घास से सुगंधित तेल निकाला जाता है। यह घास महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश तथा दक्षिण भारत में मिलती है। अगिन घास (Lemon grass) से तेल बनाया जाता है। केरल एवं तामिलनाडु इसका मुख्य क्षेत्र है। यह तेल संयुक्त राज्य अमेरीका, ब्रिटेन, जर्मनी तथा फ्रांस को निर्यात कर दिया जाता है। इसका उपयोग विटामिन 'ए' तथा दवा के बनाने में किया जाता है। इससे कई करोड़ रूपये वार्षिक आमदनी होती है।

(vii) अन्य पदार्थ – मेघालय तथ उत्तर प्रदेश में तुंग वृक्ष से तुंग तेल मिलता है। इससे वॉर्निश, रोगन एवं स्नेहक मिलता है। मदौक तथा मारबुल वृक्ष से सजावट के सामान तथा रंगदार चित्र बनते हैं। कई वृक्षों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। महुआ के फल से शराब बनाई जाती है। बाँस एवं बेंत से टोकरियाँ, मेज एवं कुर्सियाँ बनती हैं। कागज का भी निर्माण होता है। ये महाराष्ट्र, दक्षिणी राजस्थान, उड़ीसा, बिहार, कर्नाटक, केरल, असम, नागालैण्ड तथा त्रिपुरा में पाये जाते हैं।

टिप्पणी

वनों के पिछड़े होने के कारण तथा विकास के उपाय (Causes of Forests Degration and Efforts for its Development)

1. भारत में वन क्षेत्र कम हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति पर वन–क्षेत्र केवल 0.2 हेक्टेयर पड़ता है, जबकि यह क्षेत्रफल सोवियत रूस में 3.5 हेक्टेयर तथा संयुक्त राज्य अमेरीका में 1.8 हेक्टेयर है। भारतीय वनों का वार्षिक उत्पादन भी 0.2 घन मीटर प्रति व्यक्ति है। जापान में 3.3 घन मीटर तथा संयुक्त राज्य अमेरीका में 1.6 घन मीटर प्रति व्यक्ति उत्पादन है।
2. भारत में शीतोष्ण वन अधिक ऊँचाई पर हैं जहाँ पहुँचना कठिन है। वहाँ से लकड़ी काटकर लाना प्रायः असंभव है।
3. परिवहन के साधन संतोषप्रद नहीं हैं। केवल पंजाब तथा पश्चिम बंगाल में लट्ठा ले जाने के लिए नदियों का प्रयोग होता है। बाढ़ के समय लट्ठे बहा दिये जाते हैं। चेरापूँजी के निकट राज मार्ग (Rope ways) बनाये गये हैं। अब ट्रकों का प्रयोग बढ़ रहा है।
4. भारत में लकड़ियों का प्रयोग कम होता है। जीवन स्तर भी नीचा है। अतः फर्नीचर के लिए उत्तम लकड़ी की भी कम आवश्यकता पड़ती है। भारत में 0.12 घन मीटर, प्रति व्यक्ति लकड़ी का वार्षिक उपयोग होता है जबकि कनाडा में 20 घन मीटर, सोवियत संघ में 5.5 घन मीटर तथा इंग्लैंड में 1.5 घन मीटर का उपयोग है।
5. भारतीय पूँजीपति वनोद्योगों को चलाने का कम साहस करते हैं। वनों में भक्षक जानवरों से जीवन रक्षा में भी कठिनाई होती है। वनों की अस्वास्थ्यकर जलवायु तथा अनेक प्रकार के वृक्षों की एक स्थान पर बहुतायत इनके उपयोग में बाधक सिद्ध होती है।
6. वन प्रशिक्षण का अभाव है।

भारत सरकार की वन नीति (Forest Policy of Indian Government)

भारत सरकार ने वनों की रक्षा तथा उनकी वृद्धि के लिए सन 1952 में घोषणा की कि देश की एक तिहाई भूमि पर वन होने चाहिए। इसके दो उद्देश्य थे – एक तो वनों के दीर्घकालीन विकास की व्यवस्था करना और दूसरे लकड़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करना। इस नीति के साथ सन् 1952 की जुलाई–अगस्त मे वन महोत्सव मनाना प्रारंभ हुआ, जो प्रतिवर्ष देशव्यापी आंदोलन के रूप में मनाया जाता है। तत्कालीन खाद्य मंत्री **श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी** ने कहा था कि "वृक्ष का अर्थ जल है, जल का अर्थ रोटी है और रोटी ही जीवन है।" पंचवर्षीय योजनाओं के कार्यक्रम में वनों के विकास के निमित्त परिवहन के साधनों की वृद्धि की जा रही है। वनों की वृद्धि के लिए जनता में प्रचार किया जा रहा है। हरे वृक्षों को काटने पर सरकारी प्रतिबंध लगा दिया गया है। वनों के उपयोग को नियंत्रित किया जा रहा है।

वन–शिक्षा तथा अन्वेषणात्मक कार्यों के लिए प्रोत्साहन दिया जा रहा है। **देहरादून** में वन शिक्षा महाविद्यालय तथा वन–अनुसंधानशाला स्थापित है। सन् 1929

टिप्पणी

से **कूलागढ़** से यह अनुसंधानशाला वन के उत्पादन वनस्पतिशास्त्र में कार्य, वन वृक्षों एवं पदार्थों का उपयोग, उपजों के रासायनिक एवं औषधि गुणों की खोज तथा वन की गौण उपजों पर कार्य करती है। यह संसार की सबसे बड़ी तथा एक सर्वश्रेष्ठ संस्था है। जोधपुर में वृक्षारोपण की अनुसंधानशाला स्थापित की गई है जो मरुभूमि में वृक्षारोपण की समस्याओं एवं उनके निदान की खोज कर रही है। कृषि विभाग तथा वन विभाग में सामंजस्य स्थापित किया गया है। कोयम्बटूर, बंगलौर तथा जबलपुर में भी अखिल भारतीय वन महाविद्यालय चल रहे हैं।

पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत वनों का विकास (Development of Forests 1 Five Years Plan)

प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में 31,250 हेक्टेयर भूमि पर वन लगाये गये और वन क्षेत्रों में 800 किमी. सड़कों का निर्माण हुआ। लगभग 80 लाख हेक्टेयर निजी अधिकार के वनों को राजकीय अधिकार में लिया गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में वन पशुओं की रक्षा, नये वनों के आरोपण तथा औद्योगिक दृष्टि से वनों में सुधार किये गये। औद्योगिक विकास में लकड़ी की क्रमशः अधिक आवश्यकता को दृष्टि में रखकर 84,000 हेक्टेयर भूमि पर सागौन, 16,000 हेक्टेयर पर बाँस, 24,000 हेक्टेयर पर दियासलाई के वृक्ष, 8,800 हेक्टेयर पर बैटल के वृक्ष, 18,400 हेक्टेयर पर ईंधनोपयोगी वृक्ष तथा 12,000 हेक्टेयर पर मिश्रित वन लगाये गये। वन क्षेत्रों में 24,000 किमी. सड़कों का विकास हुआ। पशुचारण की व्यवस्था, वनों की पुनर्व्यवस्था तथा लकड़ी को सुरक्षित रखने के 27 ऋतुनिष्ठ संयंत्र (Seasoning Plant) स्थापित किये गये।

तृतीय पंचवर्षीय योजना काल में 64,000 हेक्टेयर भूमि पर शीघ्र उगने वाले वृक्ष तथा 2.40 लाख हेक्टेयर भूमि पर आर्थिक महत्त्व के वृक्ष तथा 2 लाख हेक्टेयर वनों को पुर्नस्थापित किया गया।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर शीघ्र ही उगने वाले वृक्ष 3.4 लाख हेक्टेयर भूमि पर आर्थिक दृष्टि से उगने वाले वृक्ष, 75 हजार हेक्टेयर भूमि पर नये वन एवं 2 लाख हेक्टेयर भूमि पर नये वनों की पुनर्व्यवस्था की गई।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 8.6 लाख हेक्टेयर भूमि पर शीघ्र ही उगने वाले वृक्ष, औद्योगिक एवं व्यापारिक उपयोग के वृक्ष 16 लाख हेक्टेयर भूमि पर लगाये गये।

छठी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 21.5 लाख हेक्टेयर भूमि पर वृक्षारोपण किया गया और कुल 750 करोड़ रूपया व्यय का प्रावधान रखा गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 1,859.10 करोड़ रूपये व्यय का प्रावधान रखा गया जिसमें 50 लाख हेक्टर भूमि पर वनों का पुनर्वास एवं नवीन वृक्षारोपण था जबकि आठवीं पंचवर्षीय योजना में 1992 में एक National Afforestation and Eco Development Board की स्थापना की गई, जिसका मुख्य उद्देश्य वनारोपण, अधिक वृक्ष लगाना, पर्यावरण संतुलन बनाये रखना तथा आर्थिक विकास करना था। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण आदि की स्थापना करना था। वह स्थापना पश्चिमी हिमालय, अरावली क्षेत्र और पश्चिमी घाट पर करनी थी। जबकि 2001 में 142.0 लाख

टिप्पणी

हेक्टर भूमि पर वन प्रबंधन करने का अनुमान था और नवीं योजना तक कुल 900 करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान था जबकि दसवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत पर्यावरण एवं वनारोपण के लिए 5,945 करोड़ रुपया स्वीकृत करने की योजना है जिसके अंतर्गत देश के वन क्षेत्र का प्रतिशत 19.27% से बढ़ाकर 25% करने का है।

भारत में 175 किस्म के दीमक (Termites) हैं जबकि संसार भर में ये 1,900 किस्म के होते हैं। इसी प्रकार एक हजार किस्म के काष्ठ कुकुरमुत्ता (Woodfungi) मिलते हैं। इनसे वनों की रक्षा के लिए देहरादून में अनुसंधान चल रहे हैं। ऋतुनिष्ठ एवं लकड़ी को सुरक्षित रखने के संयंत्र स्थापित किये गये। शीघ्र उगने वाले पेड़ों तथा लाभकारी पेड़ों को लगाने और घटिया वर्ग के पेड़ों के वनों की पुनर्स्थापना द्वारा माँग की पूर्ति का प्रयास किया गया है। पंचम पंचवर्षीय योजना से उपरोक्त कार्यक्रम तीव्र गति से चलाये गये है।

2.5 शक्ति संसाधन (Power Resources)

शक्ति के साधनों के विकास का इतिहास बड़ा ही रोचक है। प्रारंभिक काल में मनुष्यों को वर्तमान युग में प्रयुक्त शक्ति के साधनों का ज्ञान नहीं था। मनुष्य एवं पशुओं की शक्ति ही प्रधान शक्ति थी। वाष्प युग के साथ–साथ मानव ने एक नया स्वप्न देखा और शक्ति के साधनों में कोयले का महत्त्वपूर्ण स्थान हो गया। खनिज एवं विद्युत की प्राप्ति ने इस विकास में एक नवीन अध्याय का श्रीगणेश किया। आज सूर्य शक्ति एवं परमाणु शक्ति की प्राप्ति की ओर विश्व अग्रसर हो रहा है। आधुनिक युग में किसी देश का आर्थिक विकास तथा उसके बल का अनुमान उस देश के शक्ति के साधनों के विकास से आँका जाता है। साधनों की दृष्टि से हमारे देश की अवस्था अच्छी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार का ध्यान इस ओर विशेष आकृष्ट है कि देश को शक्ति के साधनों की दृष्टि से अधिक सुदृढ़ बनाया जाय, क्योंकि इसके बिना देश की औद्योगिक उन्नति एवं सुरक्षा व्यवस्था असंभव है। भारतीय इस्पात, खान एवं ईंधन मंत्रालय (The Ministry of Steel, Mines and Fuel of the Govt. of India) के खान एवं ईंधन विभाग के कई कार्यालय एवं संगठन कार्य कर रहे हैं। इन संस्थानों के सतत् प्रयत्नों से देश के यांत्रिक साधनों में विकास हो रहा है। विविध पंचवर्षीय योजनाओं की सफलता के साथ–साथ हमारा देश भी विश्व के प्रमुख शक्तिशाली राष्ट्रों में हो गया है।

2.5.1 कोयला (Coal)

संसार की औद्योगिक प्रगति के साथ–साथ कायेले का महत्त्व बढ़ता ही गया। कुछ लोगों ने इसे 'काला सोना' तक की संज्ञा दी और यह भी ठीक है क्योंकि आधुनिक विश्व में कोयला ही शक्ति का सर्वप्रथम साधन है। प्रो. ई.सी. जैफरे के शब्दों में, "आधुनिक संस्कृति जिन साधनों पर टिकी है उनमें कोयले को प्रथम स्थान मिलना चाहिए।" विगत कुछ वर्षों से जल विद्युत तथा खनिज तेल के उपयोग पर बल दिया गया है। विद्युत द्वारा यंत्र के चलाने में सुविधाएँ अवश्य हैं, किन्तु जब तक उसका पर्याप्त मात्रा में उत्पादन नही होता, तब तक कोयला ही सर्वोपरि साधन है। अब भी किसी देश द्वारा कोयले की खपत उस देश के औद्योगिक विकास की परिचायक है।

टिप्पणी

आधुनिक औद्योगीकरण का सूत्रपात तथा विकास का श्रेय कोयले को है। युद्ध की दृष्टि से भी कोयले का अधिक महत्त्व है। आधुनिक युद्ध की दो प्रमुख आवश्यकताओं – उत्पादन और परिवहन की पूर्ति कोयले से ही होती है। शस्त्र, बारूद, युद्ध विमान, टैंक, बंदूक एवं वायुयान के उत्पादन में कोयला आवश्यक है। इसी प्रकार उत्पादित वस्तुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाने में भी कोयले की आवश्यकता होती है। आज भी देश की 80 प्रतिशत शक्ति कोयले से प्राप्त होती है।

विज्ञान ने कोयले से अनेक वस्तुओं का निर्माण किया है जिसके फलस्वरूप कोयला केवल शक्ति का साधन ही नहीं, बल्कि सभ्यता का मापदंड हो गया है। यह तथ्य विस्मयजनक है कि कोयले से लिपिस्टिक, श्रृँगार की वस्तुएँ, नाइलोन, प्लास्टिक, बटन, कागज तथा अमोनिया का निर्माण हो रहा है।

कोयले के वर्ग (Classification of Coal)

कोयले को उसमें उपस्थित गैस तथा कार्बन के अनुसार अग्र वर्गों में रखा जाता है –

ऐन्थ्रासाईट (Anthracite) – यह सर्वोत्तम प्रकार का कोयला होता है जिसमें कार्बन 93 से 95 प्रतिशत होता है। इसमें गैस की मात्रा कम होती है जिससे धुआँ तथा राख नहीं होती है। इसकी ज्वाला नीली और तेज प्रकाश वाली होती है।

बिटुमिनस (Bituminous) – इसमें कार्बन 55 से 75 प्रतिशत पाया जाता है। इसके प्रमुख दो विभाग है – **(i)** कोकिंग कोयला (Coking coal)। **(ii)** साधारण कोयला जिसमें कोक तैयार नहीं होता है।

कोक के कपोले से कोक बनाया जाता है, जो लोहा–इस्पात आदि के निर्माण में प्रयुक्त होता है। यह कोयला इतना मूल्यवान होता है कि इसका प्रयोग भाप बनाने के लिए भट्टियों में नहीं करना चाहिए।

लिग्नाइट या भूरा कोयला (Lignite or Brown coal) – इसमें अशुद्धियाँ अधिक होती हैं तथा कार्बन 45 से 55 प्रतिशत होता है। यह आसानी से टूटने वाला कोयला है। यह धुआँ अधिक देता है।

पीट (Peat) – यह कोयले की प्रारंभिक अवस्था है, जिसे लकड़ी तथा लिग्नाइट के बीच की अवस्था कह सकते हैं। यह अति शीघ्र ही जल जाता है। इसमें धुआँ अधिक तथा उष्णता कम होती है।

संसार के प्रमुख एवं विस्तृत कोयला क्षेत्र शीत–शीतोष्ण कटिबंध में पाये जाते हैं। 1 जनवरी 2003 के उपलब्ध आँकड़ो के अनुसार 1200 मीटर की गहराई तक भारत में कोयले का निचय भंडार 240.748 अरब टन है। निर्यात की दृष्टि से भारत का विश्व में सातवाँ एवं उत्पादन की दृष्टि से पाँचवाँ स्थान है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 2.17

राज्य	भंडार (दस लाख टन में)
आंध्र प्रदेश	16,584
अरूणाचल प्रदेश	90
असम	340
बिहार	160
छत्तीसगढ़	38,135
झारखंड	71,143
मध्य प्रदेश	18,205
महाराष्ट्र	8,194
मेघालय	459
नागालैंड	20
उड़ीसा	59,104
उत्तर प्रदेश	1,062
पश्चिम बंगाल	27,252
योग	**2,40,748**

भारत में कोयले का कुल निर्यात विश्व के निचय का 0.8 प्रतिशत है। प्रति व्यक्ति निचय 201 मीटरी टन है जबकि संयुक्त राज्य अमेरीका में प्रति व्यक्ति 13,747 टन, सोवियत रूस में 23,112 टन तथा चीन में 1,060 टन है।

ऐसा अनुमान है कि, यदि कोयले को वर्तमान गति से खर्च किया जाये, तो आगामी 70 वर्षों में इसका भंडार समाप्त हो जाएगा। डॉ. फर्मर के अनुसार भविष्य में कुछ अच्छे कोकिंग कोयले की खानें मिलेंगी, जैसे पश्चिमी बोकारो में; किंतु इनकी उत्पादित मात्रा बहुत कम होने के कारण यह वृद्धि मूल स्थिति को बहुत अधिक प्रभावित नहीं कर सकेगी। **भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग** कोयला भंडारों का नवीन सिरे से आकलन कर रहा है, जिससे कोयले के भंडार का अधिक सही ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। कोकिंग कोयले के भंडार को अधिक समय तक चलाने के लिए भारत सरकार ने निम्न कदम उठाये हैं –

1. ऐसे कोयले का उत्पादन सीमित किया गया है।
2. धातु शोधन के अतिरिक्त अन्य कार्यों में ऐसे कोयले के उपयोग पर प्रतिबंध लगाया है। यदि कोकिंग कोयले का प्रयोग केवल धातु उद्योगों के लिए वर्तमान उपयोग के अनुसार ही किया जाये तो इसके उपयोग की आयु 225 वर्ष हो जाएगी, ऐसा अनुमान है।
3. कोयले की धुलाई को प्रोत्साहित किया है। इस क्रिया से अच्छी जाति के उस कोयले को, जो अधिक राख देने वाला होता है, धोकर कोकिंग कोयले के रूप में परिणत कर दिया जाता है। झारखण्ड में ऐसे कई केंद्र स्थापित किये गये हैं। इस धुलाई के कार्य के अतिरिक्त ऊँचे तथा नीचे किस्म के कोयले को मिलाकर भी कोकिंग कोयला बनाया जाता है। इस क्रिया को वेल्डिंग या मिलाई कहते हैं।

टिप्पणी

4. खानें कोयला निकालने के पश्चात खाली हो गई हैं, उन्हें रेत से भरा जा रहा है, जिससे शेष कोयला सुगमतापूर्वक निकाला जा सके। रेत भरने से कोयले की संपत्ति की आयु कितनी बढ़ जाती है, इसका अनुमान भारतीय कायेला के भूगर्भिक सर्वेक्षण के सदस्य **डॉ. एस.एन. चटर्जी** द्वारा अनुमानित आँकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है।

सारणी क्र. 2.18

कोयला	बिना बालू भरे	बालू भरने पर
कोकिंग	50 वर्ष	75 वर्ष
कोक के अयोग्य	135 वर्ष	200 वर्ष
निकृष्ट	268 वर्ष	400 वर्ष

कोयला उत्पादक क्षेत्र – निचय एवं उत्पादन की दृष्टि से एशिया में भारत का द्वितीय स्थान है। भारत में कोयला गोंडवाना और टर्शरी शैलों से प्राप्त होता है। गोंडवाना शैले बहुत पुरानी हैं और प्रधानतः बालू पत्थर तथा शैल की बनी हैं। इन शैलों का निर्माण ऊपरी कोयला युग में हुआ। उस समय मध्य प्रदेश तथा दक्षिणी भारत के पूर्वी पठारी भाग पर विस्तृत झीलें तथा चौड़ी नदियाँ थीं। इनमें गर्भ में ही गोंडवाना कोयले का जमाव हुआ। उस समय यह क्षेत्र घने वनों से आच्छादित था। ये वनस्पतियाँ ही दबकर अत्यधिक ताप एवं दबाव के कारण कोयले की तहों में परिणत हो गयीं। गोंडवाना शैलों को निचली गोंडवाना तथा ऊपरी गोंडवाना शैलों में बाँटा जा सकता है। कोयले के उपलभ्य की दृष्टि से निचली गोंडवाला शैलों का ही अधिक महत्त्व है। निचली गोंडवाना शैलों में (i) तालचेर, (ii) दामुदा एवं (iii) पंचत परिपाटियाँ हैं। इनमें तालचेर परिपाटी सबसे नीचे और पंचत परिपाटी सबसे ऊपर है तथा बीच में दामुदा परिपाटी है। दामुदा परिपाटी (Damuda series) की शैलें जिनसे भारत का 98% कोयला प्राप्त किया जाता है, दक्षिणी अफ्रीका की एक्का परिपाटी (The Ecca series in South Africa) एवं ऑस्ट्रेलिया की मैटलैंड (The Maitland in Australia) की समकालीन हैं। दामुदा परिपाटी पुनः तीन भागों में विभाजित की जाती है –

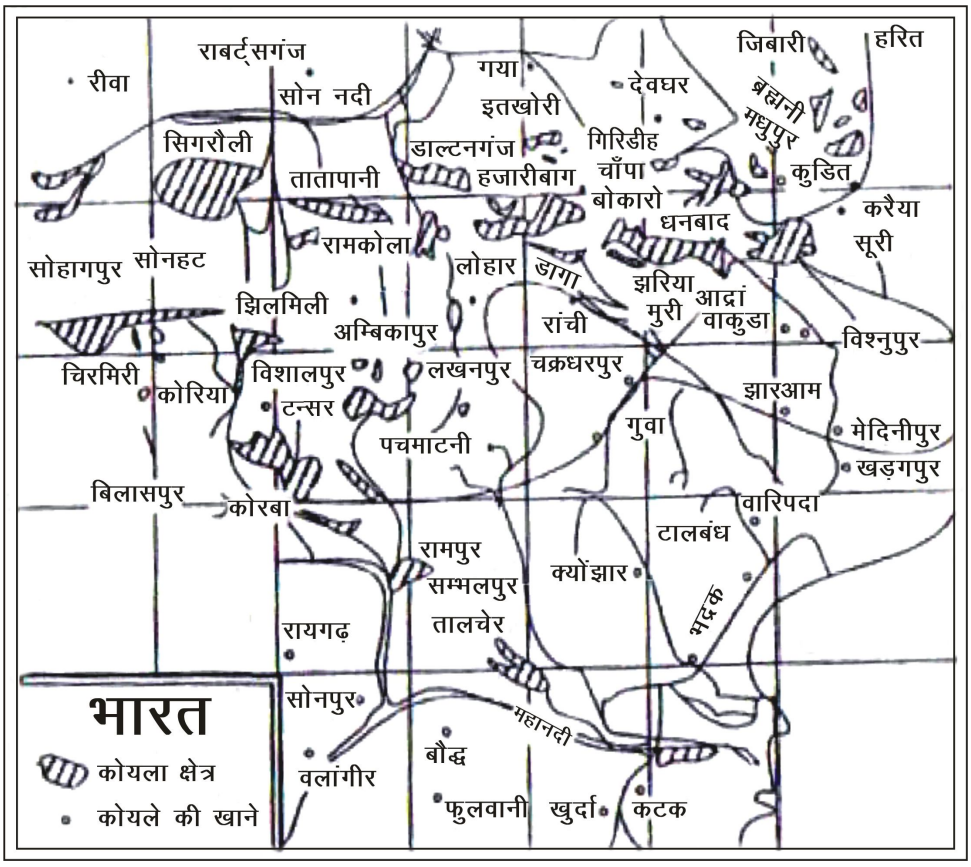
(i) रानीगंज, **(ii)** लौह प्रस्तरीय शैलें **(iii)** बराकर।

रानीगंज एवं बराकर की शैलें ही कोयला प्रदान करती हैं। लौह प्रस्तरीय शैलों से लौह अयस्क प्राप्त होता है। उपर्युक्त दोनों शैलों से अभ्रक पेरिडोटाइट (Mica peridotite) एवं डोलेराइट (Dolerite) के अंश कोयला क्षेत्र के पश्चिमी एवं मध्यवर्ती भागों में पाए जाते हैं जिनके कारण कोयले की अच्छी परतों को क्षति भी पहुँची है। रानीगंज कोयला क्षेत्र के पश्चिमी एवं मध्यवर्ती भागों में पाए जाते हैं, जिनके कारण कोयले की अच्छी परतों को क्षति भी पहुँची है। रानीगंज कोयला क्षेत्र की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तहें रानीगंज शैलों में तथा झरिया की ऐसी ही तहें बराकर शैलो में मिलती हैं। गोंडवाना क्रम के कोयला क्षेत्र का विस्तार पश्चिम बंगाल, झारखंड, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र एवं आंध्र प्रदेश में है। दामोदर घाटी से कुल उत्पादन का लगभग 82.8% तथा गोदावरी घाटी में 15.4% कोयला प्राप्त होता है।

टिप्पणी

झारखंड और बिहार – कोयले के उत्पादन में झारखंड राज्य का हमारे देश में प्रथम स्थान है। देश का लगभग 47% कोयला केवल इसी राज्य में प्राप्त होता है। इस राज्य की मुख्य खानें, झरिया, बोकारो, गिरिडीह, कर्णपुरा, डाल्टनगंज एवं रामगढ़ है। झिरिया कोयला क्षेत्र झारखंड राज्य ही नहीं, अपितु पूरे देश का सबसे बड़ा उत्पादक क्षेत्र है। पूरे देश का लगभग 35.5 प्रतिशत कोयला केवल झरिया की कोयला की खदानों से ही प्राप्त होता है। 448 वर्ग किमी. में विस्तृत यह कोयला क्षेत्र कोलकाता में 224 किमी. दूर उत्तर पश्चिम दिशा में तथा रानीगंज 25 किमी. पश्चिम में स्थित है। यहाँ 610 मीटर गहराई तक कोयले की परतें पाई जाती हैं। इतनी गहराई से कोयला ऊपर लाने के लिए लिफ्ट का प्रयोग किया जाता है। इस क्षेत्र में कोयले की 18 तहें हैं जो दक्षिण–पूर्वी किनारों के अतिरिक्त कटी–फटी नहीं हैं। कोयले की इन परतों की कुल मोटाई लगभग 61 मीटर है। **डॉ. फाक्स** के मतानुसार कोयले की इन परतों में 900 करोड़ मीटरी टन कोयला का निचय है। झरिया कोयला क्षेत्र का उत्पादन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। साथ ही साथ उत्तम कोयला प्रदान करने के लिए भी यह क्षेत्र अग्रणी है। नवीनतम सर्वेक्षण के अनुसार भंडार 35.3 अरब मीटरी टन है।

कोक बनाने वाला कोयला इस कोयला क्षेत्र के **टालबंद** और **जियालगाड़ा** परतों में पाया जाता है। इन क्षेत्रों में 305 मीटर की गहराई तक 7,370 लाख मीटरी टन और 305 मीटर से 610 मीटर गहराई तक 1,630 लाख मीटरी टन निचय है। इसमें वर्तमान खनन विधि से केवल 50% कोयला उपलब्ध हो सकेगा। **डॉ. फर्मर** के अनुसार इस कोयले का जीवन 40 से 100 वर्ष तक होगा।



चित्र क्र. 2.8: भारत में कोयले के प्रमुख क्षेत्र

टिप्पणी

झरिया कोयला क्षेत्र की एक विशेषता यह है कि यह गंगा घाटी के समीप हैं और पूर्वी रेल्वे के द्वारा अन्य स्थानों से मिला हुआ है। दिल्ली से कोलकाता तक इस घाटी में औद्योगिक कार्यों के लिए झरिया की खदानों से निकाला गया कोयला अधिक प्रयुक्त होता है। **जमशेदपुर** तथा **बर्नपुर** के लोहे के कारखानों में इसी कोयले का उपयोग किया जाता है। अभ्रक पेरिडोटाइट (Mica peridotite) के समावेश से लाखों मीटरी टन अच्छा कोयला झावाँ में बदला गया है।

झरिया क्षेत्र में सर्वोत्कृष्ट एवं सर्वाधिक कोयला सुलभ होने पर भी समीपवर्ती क्षेत्र में औद्योगिक प्रगति नहीं हुई है, जिसके मूल में निम्नलिखित कारण हैं –

1. आस–पास कोई कच्चा माल नहीं प्राप्त होता है।
2. निकटवर्ती क्षेत्र निर्जन, बंजर एवं पठारी है जहाँ पानी की कमी है। कोयला की खदानों में प्रयुक्त जल भी बड़ी कठिनाई से मिल पाता है।
3. इस क्षेत्र के निवासी जंगली हैं, जिनसे कुशल कार्यों की आशा नहीं की जा सकती है।

बोकारो कोयला क्षेत्र – झरिया कोयला क्षेत्र के समीप ही पश्चिम दिशा में बोकारो का क्षेत्र है। लगभग 312 वर्ग किमी में विस्तृत यह कोयला क्षेत्र पूरब–पश्चिम दिशा में 64 किमी. तथा उत्तर–दक्षिण में केवल 11 किमी. की दूरी में फैला हुआ है। इस क्षेत्र में कोयले की परतें थोड़ी ही गहराई पर मिलती हैं। 30 मीटर मोटी भरगली परत से अच्छा कोयला मिलता है। इस क्षेत्र के पूर्वी भाग में रेल्वे अधिकृत खदाने हैं जिनसे रेल इंजनों के उपयोग के लिए कोयला निकाला जाता है। इस क्षेत्र में उत्पादन क्रमशः बढ़ता जा रहा है। 305 मीटर गहराई तक 6 करोड़ मीटरी टन कोयले के भंडार का अनुमान है।

गिरिडीह कोयला क्षेत्र – यह कोयला क्षेत्र झरिया कोयला क्षेत्र के उत्तर में बराकर नदी की घाटी में स्थित है। इस जनपद में केवल 28 वर्ग किमी. में फैले हुए इस क्षेत्र को कढ़रवारी कोयला क्षेत्र भी कहते हैं। इसमें भी केवल 18 वर्ग किमी. क्षेत्र उत्पादन की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि यह बहुत छोटा क्षेत्र है, परंतु इसके कोयले में 69% कार्बन की मात्रा पाई जाती है, जो धातु गलाने के काम आता है। इस क्षेत्र में कोयले का निचय 6 करोड़ मीटरी टन है। कढ़रवारी में अच्छा कोकिंग कोयला मिलता है।

कर्णपुरा (उत्तर एवं दक्षिण) कोयला क्षेत्र – ऊपरी दामोदर घाटी में उत्तरी एवं दक्षिणी कर्णपुरा की कोयले की खदाने हैं। उत्तर कर्णपुरा कोयला क्षेत्र का क्षेत्रफल 1,208 वर्ग किमी. है जबकि दक्षिणी कर्णपुरा कोयला क्षेत्र 180 वर्ग किमी. में फैला हुआ है। इन दोनों क्षेत्रों में कुल 950 करोड़ मीटरी टन निचय है। **भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग** ने यह स्पष्ट किया है कि दक्षिणी कर्णपुरा कोयला क्षेत्र के एक भाग में 21 कोयले की परतें हैं, जिनमें लगभग 177 करोड़ मीटरी टन कोयले का निचय है। उत्तरी कर्णपुरा का भंडार 450 करोड़ मीटर टन है।

राज्य के अन्य कोयला क्षेत्र – औरंगा, हुतार एवं डाल्टनगंज की कोयले की खदानें पलामू जनपद में हैं। उत्तरी किउल नदी के ऊपरी अपवाह के आस–पास भी इन खदानों का विस्तार है। औरंगा खदान का क्षेत्रफल 250 वर्ग किमी. है। यहाँ

टिप्पणी

कोयले की कई तहें हैं, जिनमें से कुछ की अच्छी मोटाई भी है, किन्तु इनमें प्राप्त होने वाला कोयला अच्छी कोटि का नहीं होता है। हुतार की खदान औरंगा खदान के क्षेत्र से 19 किमी. पश्चिम में है। इसका क्षेत्रफल 150 वर्ग किमी. है। यहाँ उच्चकोटि का कोयला मिलता है। डाल्टनगंज की खदानों का विस्तार 80 वर्ग किमी. क्षेत्र में है। झारखंड में कोल इंडिया की 161 खानें हैं।

2. मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ – भारत के कोयला उत्पादक राज्यों में मध्य प्रदेश एवं छत्तीगढ़ का संयुक्त रूप से द्वितीय स्थान है। यहाँ देश का लगभग 12% कोयला निकाला जाता है। इस राज्य के मुख्य कोयला क्षेत्र पेंचघाटी, सोहागपुर, उमरिया, रायगढ़, कोरबा एवं बिलासपुर (छत्तीसगढ़) हैं। राज्य का अनुमानित भंडार 157.5 करोड़ मीटरी टन है। इस प्रदेश में 111 कोयला खानें हैं।

(i) सिंगरोली कोयला क्षेत्र – सोन नदी के दक्षिण में मध्य प्रदेश का शहडोल, सीधी जिला तथा उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद के समीपवर्ती क्षेत्रों में इस कोयला क्षेत्र का विस्तार है। इसलिए यह कोयला क्षेत्र उत्तर प्रदेश के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। लगभग 2,294 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैले हुए इस कोयला क्षेत्र में कोयले की कई तहें पाई जाती हैं। यहाँ की कोयला परत झिंगदा 153 मीटर मोटी है, जो विश्व में सबसे मोटी है। यहाँ का निर्यात 36 अरब मीटरी टन अनुमानित है।

(ii) सुहागपुर कोयला क्षेत्र – होशंगाबाद में सोहागपुर कोयला क्षेत्र 3,106 वर्ग किमी में फैला हुआ है। इसका क्रम कोरबा (छत्तीसगढ़) क्षेत्र तक विस्तृत है। इनमें पाई जाने वाली परतों में अच्छी जाति की भी है। इसका भण्डार 12 करोड़ मीटरी टन हैं।

(iii) उमरिया कोयला क्षेत्र – शहडोल जिले में यह कोयला क्षेत्र केवल 16 वर्ग किमी क्षेत्र में विस्तृत है, किंतु कटनी–बिलासपुर रेल्वे लाइन पर स्थित होने के कारण इसका महत्त्व बढ़ गया है। यहाँ के कोयले में राख एवं नमी का अंश मिलता है। यहाँ लगभग 8 करोड़ मीटरी टन कोयले की उपलब्ध संपत्ति का अनुमान है।

(iv) कोरबा कोयला क्षेत्र – छत्तीसगढ़ प्रदेश का बिलासपुर जिले में यह नया क्षेत्र है जो निचली हसदो (Hasdo) घाटी में लगभग 512 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैला हुआ है। कोरबा कोयला क्षेत्र को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। कोरबा में कोयले की 21 मीटर मोटी एक तह है। इस कोयला क्षेत्र में 25 करोड़ मीटरी टन उत्तम कोयले का निचय है। यह संपत्ति 50 वर्षों की खुदाई के लिए पर्याप्त होगी, ऐसी आशा है। रूसी इंजीनियरों की सहायता से इसमें 40 लाख मीटरी टन कोयले के वार्षिक उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। मानिकपुर में खदान की सुंदर व्यवस्था की योजना है। साथ ही साथ यहाँ कोयला धोने के यंत्र भी लगाये जायेंगे। मानिकपुर की खदान से 20 लाख मीटरी टन कोयला प्रतिवर्ष निकाला जाएगा। यहाँ के कोयले में राख का अंश अधिक है। इसीलिए कोयला धोने की यंत्र की व्यवस्था आवश्यक है। इस कोयला क्षेत्र को खनन कार्यों के लिए नवीन वैज्ञानिक यंत्रों से सज्जित किया गया है।

(v) पेंचघाटी कोयला क्षेत्र – छिंदवाड़ा जनपद के इस क्षेत्र में कोयले की कई परतें पाई जाती हैं, लेकिन केवल 4 ही उत्पादन योग्य हैं।

(vi) कनहन घाटी कोयला क्षेत्र – कनहन से पेंचघाटी (छिंदवाड़ा) तक कोयले की खानें पाई जाती हैं। कनहन घाटी क्षेत्र की खानें प्रस्तर भ्रंश (Faults) से प्रभावित हैं। भंडार 7 करोड़ मीटरी टन अनुमानित है।

टिप्पणी

(vii) शाहपुर कोयला क्षेत्र – होशंगाबाद जिले में तावा नदी के आस–पास कोयले की कई खानें हैं लेकिन बराकर शैलों में पाई जाने वाली तीन खानें ही महत्त्वपूर्ण हैं – (i) गुरगुण्डा (Gurgunda), (ii) मदनपुर एवं (iii) कतासुर (Katasur)।

(viii) मोहपानी कोयला क्षेत्र – नरसिंहपुर जिले में मोहपानी गाँव के समीपस्थ कोयले की बराकर श्रेणी की चार तहें पाई जाती हैं जिनमें से दो 6 से 8 मीटर मोटी हैं। इस क्षेत्र में 21 करोड़ मीटरी टन कोयले के उपलब्ध होने का अनुमान है।

(ix) ताता–पानी–रामकोला कोयला क्षेत्र – छत्तीसगढ़ प्रदेश में सरगुजा जिले के उत्तर–पश्चिमी भाग में यह कोयला क्षेत्र स्थित है। यहाँ कोयले की कई परतें पाई जाती हैं। इसका क्षेत्रफल 260 वर्ग किमी. है। इसका पूर्वी भाग तातापानी तथा पश्चिमी भाग रामकोला है।

(x) रायगढ़ कोयला क्षेत्र – यह कोयला क्षेत्र लगभग 320 वर्ग किमी. में रायगढ़ के उत्तर–पश्चिमी भाग में विस्तृत है। यहाँ अच्छी कोटि का कोयला नहीं है।

3. पश्चिम बंगाल – भारत में कोयला उत्पादक राज्यों में पश्चिम बंगाल का तृतीय स्थान है। भारत के कुल उत्पादन का लगभग 31.4% कोयला इस राज्य से प्राप्त होता है। इसी राज्य में रानीगंज का प्रसिद्ध कोयला क्षेत्र है जहाँ भारत की सबसे पुरानी खाने हैं। कोलकाता से उत्तर–पश्चिम दिशा में लगभग 260 किमी दूर रानीगंज का कोयला क्षेत्र स्थित है, जो दामोदर घाटी का सबसे पूर्व का कोयला क्षेत्र है। यह लगभग 1,280 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है जिसका अधिकांश बर्दवान जनपद में है। किन्तु इसकी सीमाएँ बाँकुड़ा (पश्चिम बंगाल) मानभूमि और संथाल परगना बिहार तक चली गई हैं। रानीगंज के कोयले की तहें साधारणतः दक्षिण या दक्षिण–पूरब की ओर ढालुवाँ हैं। दक्षिण–पूर्वी भाग को दामोदर द्वारा बिछाई गई मिट्टी ने ढक लिया है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि बर्दवान और कोलकाता की ओर यह कोयला क्षेत्र कहाँ तक फैला हुआ है। रानीगंज क्षेत्र में 6 अच्छी परतें पाई जाती हैं, जिनकी पूरी मोटाई लगभग 15 मीटर है। देशेरगढ़ परत का कोयला अच्छा वाष्प कोयला (Steam coal) है जिसकी माँग रेलों तथा जलयानों में अधिक रहती है। कोकिंग कोयला भी निकाला जाता है। कोयला 610 मीटर की गहराई तक मिलता है जिससे प्रति मीटरी टन कोयला निकालने का व्यय कुछ अधिक पड़ता है। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग द्वारा किए गए सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ है कि इस क्षेत्र में कुल 13 अरब मीटरी टन कोयले का निचय है। यहाँ उत्तम कोटि का कोयला मिलता है।

इस क्षेत्र के अतिरिक्त पश्चिम बंगाल में बर्दवान, पुरूलिया, वीरभूमि तथा दार्जिलिंग में कोयले की खदानें हैं। पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा कोक बनाने का कारखाना दुर्गापुर में स्थापित किया गया है, जिसकी उत्पादन क्षमता प्रतिदिन एक हजार मीटरी टन उत्तम कोटि का कोकिंग कोयला है। यह कोकिंग कोयला दुर्गापुर के इस्पात कारखाने को प्राप्त होता है। इस प्रदेश में 110 खानें कार्यरत हैं।

4. आंध्र प्रदेश – **भारत** के कोयला उत्पादक राज्यों में आंध्र प्रदेश का चतुर्थ स्थान है। इस राज्य के प्रमुख कोयला क्षेत्र सिंगरेनी, तन्दूर व सस्ती हैं। ये क्षेत्र

टिप्पणी

गोदावरी घाटी में स्थित हैं। सिंगरेनी की दो प्रमुख खदानें – (1) कोठागुदम (Kothagudium) तथा (2) येलन्दु (Yellandu) हैं। कोठागुदम महत्त्वपूर्ण है, जो गोदावरी नदी के किनारे भद्राचलम नगर से 30 किमी दूर हैं। सिंगरेनी कोयला क्षेत्र में कई परतें मिलती है। सिंगरेनी की निचली कोयले की परत लगभग 22 मीटर मोटी है।

इस भाग में कोयले की खदान का इतिहास सन् 1871 से प्रारंभ होता है। जब भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के डायरेक्टर डॉ. ब्ल्यूकिंग ने येलन्दु गाँव में कोयला की घोषणा की।

सिंगरेनी कोयला क्षेत्र के अतिरिक्त आंध्र प्रदेश में तंदूर एवं सस्ती क्षेत्र से भी कोयला प्राप्त होता है। तंदूर की कोयले वाली शैलें विस्तार में 250 वर्ग किमी क्षेत्र में है। इस राज्य का प्रामाणिक भंडार 200 करोड़ मीटरी टन है। सिंगरेनी कंपनी की 65 खानें हैं।

5. उत्तर प्रदेश – उत्तर प्रदेश राज्य सरकार ने पंचवर्षीय योजना में मिर्जापुर स्थित कोयला क्षेत्र के विकास के लिए 10 करोड़ रूपए व्यय करने का प्रस्ताव रखा है। पिपरी के निकट सिंगरौली क्षेत्र में कोयले की काफी मोटी परतें पाई गई हैं। यह स्थान नौनागढ़ क्षेत्र में पिपरी से 40 किमी. दूर है। मिर्जापुर की बीना खान विश्व में सबसे बड़ी है। इसकी एक परत 139 मीटर मोटी है जो विश्व की तीसरी मोटी कोयले की परत है। इस योजना में सफलता प्राप्त हो जाने से कोयले की दृष्टि से उत्तर प्रदेश आत्मनिर्भर हो ही जाएगा, साथ–साथ पंजाब, राजस्थान एवं हिमाचल प्रदेश की भी यथासंभव आवश्यकताएँ पूरी की जा सकेंगी। ऐसा अनुमान है कि इस योजना के पूर्ण हो जाने पर यह क्षेत्र रानीगंज और झरिया क्षेत्र की टक्कर का हो जाएगा। बस्ती जिले के शोहरतगढ़ क्षेत्र में भी उत्तम श्रेणी के कोयले का जमाव पाया गया है।

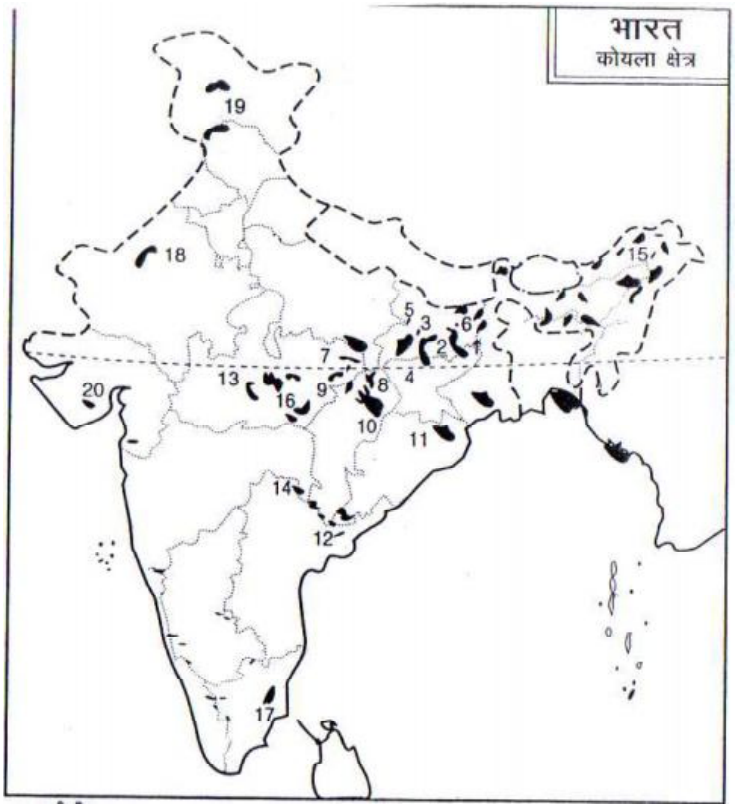
6. उड़ीसा – ब्राह्मणी नदी की घाटी में कटक से 104 किमी. उत्तर–पश्चिम में तालचेर (ढेकानल) कोयले की खानें हैं। लगभग 520 वर्ग किमी. में विस्तृत इस कोयला क्षेत्र में 74 अरब मीटरी टन कोयला निचय है, ऐसा अनुमान है। यह राज्य भारत के समस्त उत्पादन का 1.2% कोयला उत्पन्न करता है। हिंगुर, रामपुर (संबलपुर) का निचय 105 करोड़ मीटरी टन है। इस प्रदेश में 21 खानें हैं।

7. महाराष्ट्र – नागपुर, यवतमाल तथा चान्दा में कोयला पाया जाता है। यहाँ चार परतें पाई जाती हैं। यहाँ लगभग 11 मीटरी टन कोयले का निचय होने का अनुमान हे। वरोरा के निकट कोयले की दो परतें हैं। लगभग 1.2 करोड़ मीटरी टन कोयले का निचय है। यवतमाल या वुन (Yeotmal or Wun) जनपद में राजपुर की कोयले की खदानें हैं। कोयला बहुत उत्तम कोटि का नहीं है। कोयले की कुल उपलभ्य राशि 24 करोड़ मीटरी टन आँकी गई है। नागपुर जिले में टेकड़ी और जुना कांपरी में 45 करोड़ मीटरी टन कोयले का उपलब्ध भंडार अनुमानित है। राज्य का कुल भंडार 7,362.0 लाख टन है। इस प्रदेश में 37 खानें चल रही है।

8. तामिलनाडु – इस राज्य में नेवेली कोयले की खान ही एकमात्र कोयला प्रदान कर सकती है। नेवेली कुड्डालोर (Cuddalore) से 38 किमी. तथा चेन्नई से 216 किमी. दूर इस राज्य के दक्षिण अरकाट जिले में स्थित है। दिसंबर सन 1956 से नेवेली लिग्नाइट निगम द्वारा कोयला निकालने का कार्य प्रगति पर है। नेवेली स्थान के

आस–पास 256 वर्ग किमी क्षेत्र में भूरे कोयले की खानें हैं, जिनमें 2 अरब मीटरी टन कोयला होने का अनुमान है। इस संपूर्ण क्षेत्र में से भी 16 वर्ग किमी. क्षेत्र ऐसा है जहाँ पर भूरा कोयला बहुत अधिक अर्थात लगभग 20 करोड़ मीटरी टन है। नेवेली क्षेत्र में कोयला भूपटल से लगभग 52 मीटर नीचे पाया जाता है जिसकी तहों की मोटाई लगभग 20 मीटर है। लिग्नाइट के इस अपार भंडार की प्राप्ति से दक्षिण भारत के औद्योगिक विकास के द्वार खुल गए। नेवेली के भूरे कोयले के उपयोग की समुचित योजना बन गई है। देश के 2.1 अरब टन लिग्नाईट कोयले में 1.9 अरब टन कोयला नेवेली क्षेत्र में है जो संपूर्ण निचय का 90 प्रतिशत है। 2001–2002 में लिग्नाइट कोयले का उत्पादन 115.7 लाख टन होने का अनुमान है।

टिप्पणी



1. रानीगाँव	2. झरिया	3. चन्द्रपुर
4. बोकारो	5. कर्णपुरा	6. गिरिडीह
7. सिंगरौली	8. ताता पानी	9. कोरबा
10. हिमगिर	11. तालचिर	12. सिंगरैनी
13. पेरावाटी पेराघाटी	14. काटापल्ली	15. माकुम
16. काम्पटी	17. वेनेला	18. पलाना
19. करेवा	20. पाननधो	

चित्र क्र. 2.9: भारत के प्रमुख कोयला क्षेत्र

9. असम–मेघालय – इस क्षेत्र में टर्शरी शैलों वाला कोयला पाया जाता है। इसकी निर्यात राशि 230 करोड़ मीटरी टन है। इस क्षेत्र में कोयले की खदानों की संख्या 15 है जिनसे देश के उत्पादन का 1.5% कोयला निकाला जाता है। प्रमुख कोयला खदानें लखीमपुर, खासी, जैन्तिया, मिकिर व शिवसागर जनपदों में हैं।

टिप्पणी

चूँकि इस क्षेत्र के कोयले में गंधक का अंश होता है इसलिए यह बॉयलरों में प्रयोग योग्य नहीं है। लेकिन इसे महीन करके इस कार्य में लगाया जाता है। असम में प्राप्त कोयले में राख का अंश बहुत कम होता है इसलिए यह घरेलू एवं औद्योगिक कार्यों के लिए अत्यधिक उपयुक्त होता है, किन्तु गंधक का अंश 2.5% से 8% तक पाया जाता है। **केंद्रीय ईंधन अनुसंधानशाला, जीयालगोड़ा** में कोयले को उपरोक्त कार्यों के लिए उपयोगी बनाने के प्रयोग किए जा रहे हैं। भारत को विदेशों से गंधक का आयात करना पड़ता है। यदि असम के कोयले से गंधक की प्राप्ति होने लगेगी तो देश को गंधक तो मिलेगा ही, साथ ही साथ अच्छा कोयला भी सुलभ हो सकेगा। मेघालय में सोमेश्वरी नदी के आर–पार दरांगिरि में लगभग 51 वर्ग किमी. क्षेत्र में कोयले का उत्पादन होता है। यहाँ का कोयला अच्छा है, लेकिन रेलमार्ग से दूर होने से इसका पूर्ण उपयोग नहीं हो पा रहा है। **तुरा** (Tura) क्षेत्र में भी कोयले की अच्छी राशि है। **खासी** एवं **जैन्तिया** पहाड़ी क्षेत्र में कोयला यत्र–तत्र पाया जाता है। चेरापूँजी पठार से कोयला प्राप्त होता है। कोयला का अनुमानित भंडार मेघालय में 3 अरब मीटरी टन है। नागंस्टन (Nogston) एवं लैंग्रिम (Langrim) कोयला क्षेत्र महत्त्वपूर्ण हैं।

डिब्रुगढ़ एवं शिवसागर जनपद की सीमा पर नाजिरा, जयपुर एवं माकूम के कोयला क्षेत्र हैं। नाजिरा में कोयले की तहें काफी तिरछी हैं तथा 25 किमी. की दूरी में विस्तृत हैं। जयपुर के पूरब में डिब्रुगढ़ एवं शिवसागर की दक्षिणी सीमा पर माकूम कोयला क्षेत्र है। इसे **नामडांग लेडो** (Namdang Ledo) कोयला क्षेत्र भी कहते हैं। माकूम क्षेत्र की खदानें उत्तर–पूर्वी रेलमार्ग द्वारा डिब्रूगढ़ से संबंधित हैं। माकूम क्षेत्र से निकलने वाले कोयले की उपयोगिता ब्रह्मपुत्र नदी में चलने वाली स्टीम–बोटों एवं रेल यातायात के लिए है। टिराप (Tirap) और नामडांग (Namdang) नदियों के बीच में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कोयला क्षेत्र है। लगभग 8 किमी. की दूरी तक कोयले की तहें 5 से 15 मी. मोटी हैं। मार्घेरिटा के समीप आजकल कोयला निकाला जा रहा है। **मार्घेरिटा** के ऊपर डिहिंग नदी के बायें किनारे की एक सहायक नदी की नामचिक की घाटी में उत्तम कोटि का कोयला सुलभ है। इस प्रदेश में कोल इंडिया की 5 खानें हैं।

10. जम्मू एवं कश्मीर – जम्मू के रियांसी जनपद में टरशियरी कल्प की शैलों में उत्तम कोटि का ऐंथ्रासाइट कोयला मिलता है। **मिडिल मिस** के अनुसार यहाँ 10 करोड़ मीटरी टन कोयले का निचय है। कोयले की 3.4 प्रमुख खानें हैं। यहाँ के कोयले में कार्बन की मात्रा 60 से 80% तक पाई जाती है। कश्मीर की पुरानी कदेबा परिपाटी (Older Karewa series) की शैलों में भूरा कोयला पाया जाता है।

11. राजस्थान – राजस्थान के बीकानेर जनपद में पलना नामक स्थान पर लिग्नाइट कोयला मिलता है। कोयले की परतों की मोटाई 2 मीटर तक है। यह घटिया किस्म का कायेला है। इसका उपयोग रेलों में होता है। अभी हाल में जोधपुर के उत्तर–पश्चिमी भाग में लिग्नाइट कोयले की 3 मीटर मोटी परत का पता लगा है। जयपुर में 2 करोड़ मीटर टन कोयले के निचय का अनुमान है।

12. गुजरात – भारतीय सर्वेक्षण विभाग ने पता लगाया है कि इस राज्य के मेहसाना एवं कलोल क्षेत्रों में एक खरब टन कोयले का भंडार है। वर्तमान उत्पादन 7 लाख टन है।

कोयला उद्योग की समस्याएँ तथा उनके निदान के उपाय (Problems of Coal Industry and their Solutions)

टिप्पणी

1. भारत में श्रेष्ठ कोयले के भंडार सीमित हैं, इसलिए अच्छे कोयले का उत्पादन भी कम होता है। भारतीय कोयले में नमी का अंश अधिक है, अतः यह जलने में अच्छा नहीं होता है।

सारणी क्र. 2.19

भारत में कोयले के उत्पादन में प्रगति

वर्ष	मात्रा (मिलियन टन)
1970–71	76.3
1980–81	119.0
1990–91	225.1
1991–92	243.9
1992–93	253.7
1993–94	264.1
1994–95	273.1
1995–96	292.0
1996–97	308.2
1997–98	319.0
1998–99	293.5
1999–2000	310.9
2000–2001	323.0
2001–2002	227.2
2002–2003 (अनुमानित)	363.3

2. खान की खुदाई का ढंग पुराना है। इसके फलस्वरूप व्यय भी अधिक पड़ता है। संयुक्त राज्य अमेरीका में अधिकांश कोयला खानों को नवीन वैज्ञानिक मशीनों से युक्त कर दिया गया है। जबकि हमारे देश में सभी कार्य हाथ से ही करना पड़ता है। कोयला निकालने का ढंग तो दोषपूर्ण है ही, साथ ही साथ खदानों में बीच–बीच में कोयले के स्तंभ को छोड़ना पड़ता है, जिससे ऊपरी धरातल क्षतिग्रस्त न होने पाए। अधिकांश खानों में 'तख्ते एवं खम्भे' (Board and Pillar) वाले ढंग से कोयला निकाला जाता है। कभी–कभी थोड़ी सी हलचल से खान की छतें ध्वस्त हो जाती हैं, जिससे जन–धन की पर्याप्त हानि होती है। इसके स्थान पर रेत भरने वाला ढंग काफी लाभकर है। देश की कुछ खदानों में इसका उपयोग होने लगा है।

3. कोयले का असमान वितरण भी एक समस्या है। भारत का लगभग 98% कोयला बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश एवं उड़ीसा राज्यों में ही है। दूसरे, औद्योगिक क्षेत्रों को कोयला भेजने में काफी व्यय पड़ता है।

4. कोयले के परिवहन के लिए जल–परिवहन ही सबसे सस्ता होता है किंतु भारतीय कोयला क्षेत्र में जल–परिवहन सुविधाएँ अप्राप्य हैं। भारतीय कोयला क्षेत्र में तो पीने योग्य पर्याप्त जल मिलना भी एक समस्या है।

टिप्पणी

5. भारतीय कोयला क्षेत्र समुद्र से दूर स्थित है, इसलिए कोयला निर्यात में भी कठिनाई होती है, क्योंकि पत्तन तक कोयला पहुँचाने के लिए रेलों पर आश्रित रहना पड़ता है। इस प्रकार निर्यात किए जाने वाले कोयले का मूल्य बढ़ जाता है।

6. रानीगंज और झरिया में जमीन के अंदर की आग के कारण अत्यधिक कोयले की क्षति हो रही है। फलस्वरूप दुर्घटनाएँ भी बढ़ रही हैं। आग बुझाने के लिए ऐसे क्षेत्रों के भीतर बालू भर देना एकमात्र उपाय है। **चासनाला खान दुर्घटना** विश्व की अद्वितीय भयंकर दुर्घटना है। छठी योजना में अग्नि शमन की व्यवस्था की गई है।

7. होडग्रोव महोदय ने ठीक ही कहा है कि कोयला एक ऐसा मूल्यवान रसायन है, जिसे प्राथमिक औद्योगिक सभ्यता ही ईंधन के रूप में प्रयुक्त कर सकती है। **शालीमार कोलटार प्रोडक्ट्स** ने कोयले से लाभदायक वस्तुओं को प्राप्त करने की दिशा में कदम उठाया है। असम राज्य के कोयले से गंधक उत्पादन की व्यवस्था भी की जा रही है।

8. खोदते समय बहुतसा कोयला चूर हो जाता है, जो यों ही छोड़ दिया जाता है। चूर्ण कोयले के उपयोग पर जोर देना चाहिए। इधर कुछ दिनों से चूर कोयले की थकिया तैयार की जाने लगी है और इसका उपयोग भी होने लगा है।

9. अंतरजात खदानों पर विशेष बल दिया जा रहा है, जिससे खुली कोयला खदान तथा अंतरजात खदान में संतुलन रखा जा सके। सन 1984–85 में यह संबंध 56.44 तथा 40.51 था। खदानों से कोयला निकालने की नई विधि तथा कम्प्यूटर का प्रयोग बढ़ रहा है।

कोयले का विदेश व्यापार (Foreign Trade of Coal)

भारत में कोयले का उत्पादन अपनी माँग से अधिक नहीं है, फिर भी विदेशों को निर्यात होता है। म्यांमार, श्रीलंका, नेपाल, भूटान तथा जापान हमारे कोयले के ग्राहक हैं। कम वाष्पशील कोयले के निर्यात का कार्यक्रम दक्षिण कोरिया गणतंत्र तथा बेल्जियम को चल रहा है।

कोयला उद्योग का भविष्य (Future of Coal Industry)

पंचवर्षीय योजनाओं के फलस्वरूप कोयला उद्योग का युक्तियुक्त संगठन हुआ है। नये कोयला क्षेत्रों का पता लगाया गया है। निजी क्षेत्र में भी नये कोयले के संरक्षण उत्पादन की ओर जागरूकता परिलक्षित हो रही है। कोयले के उत्पादन को बढ़ाने के लिए श्रमिकों को प्राविधिक शिक्षा दी जा रही है। कारगली, दुग्धा, गिरिडीह, भोजुडीह, कुरासिया आदि स्थानों पर ट्रेनिंग केंद्र चल रहे हैं।

कोकिंग कोयले की माँग की पूर्ति के लिए जमदोबा, पश्चिमी बोकारो, चासनाला तथा दुर्गापुर (पश्चिम बंगाल) के धुलाई के कारखाने निजी क्षेत्र में चल रहे हैं। राष्ट्रीय कोयला विकास निगम ने सार्वजनिक क्षेत्र में कारगली, दुग्धा, पाथरडीह, लोप्ना तथा भोजुडीह में कारखाने खोले हैं। एसोसिएटेड सीमेंट कंपनी ने एक धुलाई का कारखाना नवरोजाबाद में खोला है। कोयला धोने की क्षमता को बढ़ाने के लिए कथारा, सवांग, सुदामाडिह तथा गिडि में 5 कोयला धोने के कारखाने बढ़ाए गए हैं। इस प्रकार

कोकिंग कोयले की धुलाई के 15 केंद्र चल रहे हैं। सामान्य कोयले का भी एक छोटा धुलाई केंद्र है। कोकिंग कोयले की धुलाई केंद्रों की क्षमता 32.4 करोड़ टन है। कांधला में एक धुलाई केंद्र बन रहा है।

टिप्पणी

2.5.2 पेट्रोलियम (खनिज तेल) (Petroleum (Mineral Oil))

आधुनिक युग में खनिज तेल का अत्यधिक महत्त्व है। यह वलित पर्वतों के निकटवर्ती क्षेत्रों की अवसादी शैलों (Sedimentary rocks) से प्राप्त होता है। बालू पत्थर, काला चूना पत्थर तथा मिट्टी के पत्थर (shale) के छिद्रों में यह मिलता है। भूवैज्ञानिकों के मतानुसार यह पदार्थ अवसादी शैलों के मध्य पड़े जल–जीवों तथा जलीय वनस्पतियों का भूगर्भ की उष्णता तथा दबाव के कारण हजारों वर्षों की क्रिया के फलस्वरूप परिवर्तित रूप है। यह अवसादी शैलों के अनुनत ढाल (dip slope) की ओर एकत्र रहता है। यह गहराई में प्राप्त होता है जो कभी–कभी 3 किमी. से भी अधिक होती है। इससे तेल शुद्धिशाला में पेट्रोल, मिट्टी का तेल, मोल, गैस, कोलतार प्राप्त होते हैं।

खनिज तेल शक्ति का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। इसमें साधारणतया 80 प्रतिशत कार्बन, 1 प्रतिशत हाइड्रोजन तथा 7 प्रतिशत ऑक्सीजन रहता है। वैज्ञानिक प्रगति के साथ खनिज तेल की उपयोगिता बढ़ती जा रही है। डीजल इंजन, वायुयान तथा मोटर के लिए यह चालक शक्ति है। ट्रेक्टर तथा रासायनिक उद्योगों का श्रेय खनिज तेल को ही है। ताप एवं प्रकाश भी इससे मिलता है।

खनिज तेल प्रतिदिन अधिक प्रचलित होता जा रहा है। इसके निम्न कारण हैं:

(1) इसकी ढुलाई आसान है, (2) इसका प्रत्येक अंश उपयोगी है, (3) कोयले से खनिज तेल का प्रति इकाई ताप–बिंदु अधिक ऊँचा होता है। अतः इसके प्रयोग से यंत्रों की गति में वृद्धि हो जाती है, (4) इसके प्रयोग में कम श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती हैं।

खनिज तेल के तीन वर्ग (Three Class of Mineral Oil)

1. **पैराफिन युक्त खनिज तेल (Paraffin Base Crude Oil)** – इससे पैराफिन मोम (Lubricating Oil) मिलता है। असम का खनिज तेल इसी श्रेणी में है।
2. **ऐस्फाल्ट युक्त खनिज तेल (Asphaltic Base Crude Oil)** – इसमें पैराफिन मोम की मात्रा होती ही नहीं या अल्पतम मात्रा होती है। इसमें ऐस्फॉल्ट की मात्रा अधिक होती है। दक्षिण अमेरिका का खनिज तेल इस श्रेणी में है।
3. **मिश्रित आधार खनिज तेल (Mixed Base Crude Oil)** – इसमें पैराफिन मोम तथा ऐस्फाल्टिक दोनों पदार्थ मिलते हैं। ऐसा खनिज तेल इण्डोनेशिया में है।

भारत में प्रति व्यक्ति खनिज तेल की वार्षिक खपत अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। भारत की जनसंख्या विश्व का सातवाँ भाग है किंतु खनिज तेल की खपत विश्व का 1/60 वाँ भाग है। भारत में ज्ञात क्षेत्रों का निचय 600 करोड़ मीटरी टन है। **अंतर्राष्ट्रीय भूतात्विक सम्मेलन** के अनुसार निचय 620 करोड़ मीटरी टन है। प्राथमिक रूप से निकालने योग्य डेढ़ अरब टन तेल है। प्राकृतिक गैस का भंडार

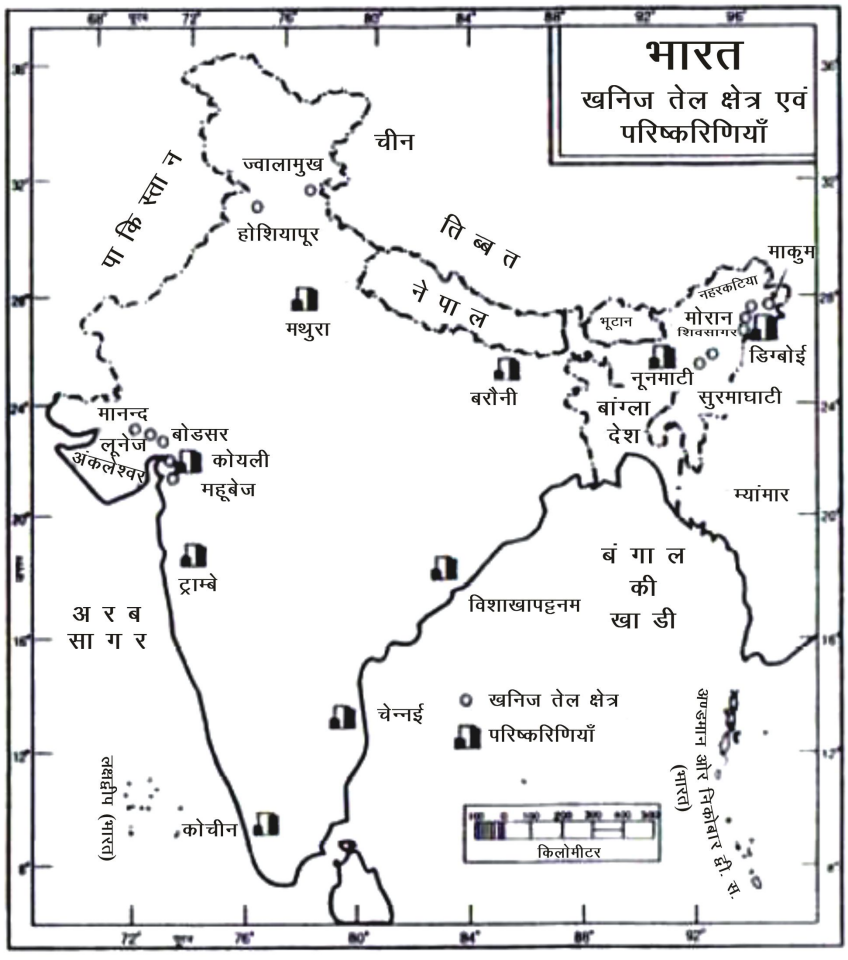
टिप्पणी

350 खरब घन मीटर है। भारत में खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैस का प्रामाणिक निचय विश्व का 0.55 प्रतिशत है। रूस में 34.83 मीटरी टन, संयुक्त राज्य अमेरिका में 16.32 मीटरी टन तथा चीन में 2.86 मीटरी टन प्रति व्यक्ति निचय है। वर्तमान दर मं खपत 15.20 वर्षों के लिए पर्याप्त है।

भारत सरकार ने सन 1956 में **तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग** (O.N.G.C.) तथा सन 1959 में **ऑयल इंडिया** संस्थाओं को बनाया जो राष्ट्र के विभिन्न भागों में अनुसंधान कार्य संपन्न कर रही हैं। अभी तक की खोज के आधार पर देश में खनिज तेल का दो–तिहाई भंडार तट से सुदूर अवसादी शैलों में है। तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग भारत के अलावा इसकी शाखा **हैड्रोकार्बन इंडिया लिमिटेड** (H.I.L.) के द्वारा ईरान, इराक तथा तन्जानिया में अनुसंधान काम कर रहा है।

खनिज तेल के क्षेत्र (Regions of Mineral Oil)

असम – भारत में केवल इस राज्य में खनिज तेल मिलता था। इस राज्य में तृतीय महाकल्प (Tertiary era) की शैलों में एक 1,200 किमी. लंबी तेल मेखला है जो राज्य की उत्तर–पूर्वी सीमा से प्रारंभ होकर ब्रह्मपुत्र तथा सुरमा नदियों की घाटियों के पूर्वी छोर तक विस्तृत है। इस पेटी में नवजीवन महाकल्प की आदि नूतन युग (Eocene age), अल्प नूतन युग (Oilgocene age) तथा मध्य नूतन युग (Miocene age) की शैलें पाई जाती हैं।



चित्र क्र. 2.10: भारत के खनिज क्षेत्र एवं परिष्करिणियाँ

टिप्पणी

माकूम–डिगबोई क्षेत्र – डिब्रुगढ़ जनपद ब्रह्मपुत्र की घाटी में पड़ता है, जिसमें डिगबोई तथा वाप्पापुंग–हंसापुंग का कुआँ क्षेत्र 4 किमी. लंबा है। इनमें 305 मीटर की गहराई पर तेल प्राप्त किया जाता है। मार्घेरिटा में नहारपांग स्थान पर सन 1866 में कुएँ खोदने का कार्य किया गया था और सन् 1892 में उत्पादन प्रारंभ हुआ। **असम तेल कंपनी** द्वारा यहाँ तेल निकाला जाता है। पहले मार्घेरिटा में एक छोटी शुद्धिशाला में तेल साफ किया जाने लगा। बाद में **डिगबोई** शुद्धिशाला स्थापित हुई जिसमें 64 किलोलीटर तेल प्रतिदिन साफ किया जाता है।

असम तेल कंपनी के समक्ष आर्थिक कठिनाइयाँ थीं। **बर्मा तेल कंपनी** ने इसको अपने अंतर्गत कर लिया और **डिगबोई** शुद्धिशाला को नवीनतम वैज्ञानिक यंत्रों से सुसज्जित कर दिया। यहाँ से तेल डिब्रूगढ़ जाता है जहाँ से ब्रह्मपुत्र नदी की नावों से कोलकाता पहुँचाया जाता है। उत्तर–पूर्वी सीमांत रेल्वे इस क्षेत्र की सेवा करती है।

सुरमा घाटी में पथरिया, मसीमपुर तथा बदरपुर क्षेत्र में तेल के कुएँ हैं। बदरपुर क्षेत्र में हल्का तेल मिलता है। इस क्षेत्र में अल्प मात्रा में तेल मिल रहा है। यहाँ 60 तेलकूप काम कर रहे हैं।

नए तेल स्त्रोतों के खोज कार्य (Search for New Oil Sources)

देश की क्रमशः बढ़ती माँग को दृष्टि में रखकर तेल स्त्रोतों की खोजबीन जोरों से हो रही है। इस कार्य में उत्साहपूर्वक सफलता मिली है। इसके लिए गुरुत्वाकर्षणमापी (Gravimeter), चुंकबत्वमापी (Magnetometer) तथा भूकम्पमापी (Seismograph) यंत्रों का प्रयोग हो रहा है। इसके लिए भारत सरकार ने सन् 1956 में **तेल एवं प्राकृतिक गैस विभाग** पृथक् से खोल दिया है। सन् 1956 में **प्राकृतिक गैस एवं तेल आयोग** स्थापित हुआ। इसका मुख्य कार्यालय देहरादून है। ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा रूमानिया से आवश्यक यंत्र तथा विशेषज्ञ मँगाए गए हैं, साथ ही भूगर्भशास्त्र, भू–भौतिक शास्त्र तथा भौतिक शास्त्र के विद्वानों को इस कार्य के लिए विदेशों में प्रशिक्षित किया गया है।

वैज्ञानिक स्वर्गीय डॉ. शान्तिस्वरूप भटनागर ने बताया था कि देश में 1,024 हजार वर्ग किमी. क्षेत्र में खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैस का भंडार मिल सकता है।

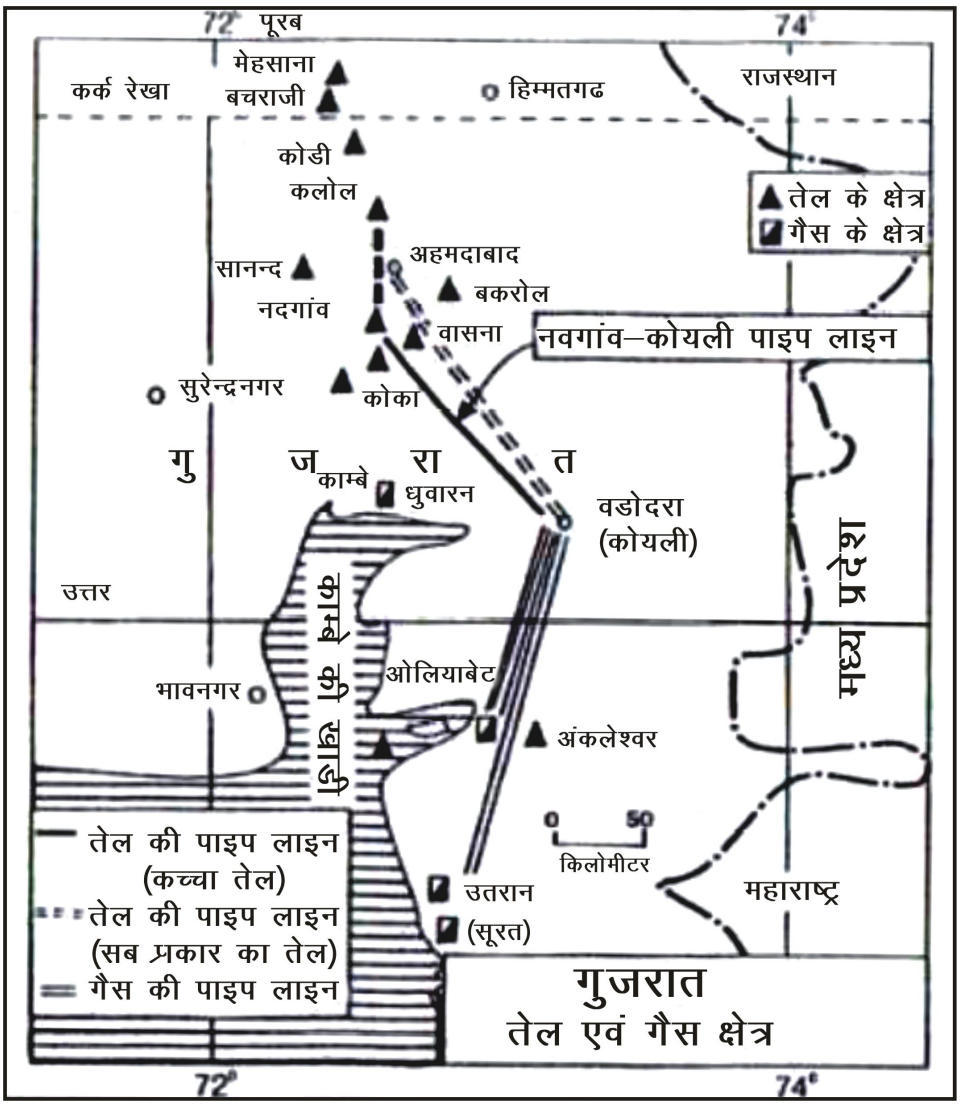
नहरकटिया मोरेन एवं हुग्रीजन – नहरकटिया (डिब्रूगढ़) डिगबोई से 32 किमी. दक्षिण–पश्चिम दिशा में डिहिंग नदी के किनारे पर है। नहरकटिया में 300 मीटर गहराई पर तेल स्त्रोत मिले हैं। मोरेन तथा जोराजान (शिवसागर) में 400 मीटर की गहराई पर तेल स्त्रोत मिले हैं। खनिज तेल में उपलभ्य भंडार का अनुमान 8.4 करोड़ मीटरी टन लगाया गया है। इस क्षेत्र से 28.2 लाख मीटरी टन वार्षिक उत्पादन होता है। नहरकटिया में 60 तेलकूप तथा मोरेन हुग्रीजन में 22 तेलकूपों से खनिज तेल प्राप्त होता है।

खोज कार्य तथा शुद्धिशालाओं के स्थापनार्थ सन् 1959 में भारत सरकार तथा बर्मा ऑयल कंपनी में एक समझौता हुआ जिसके फलस्वरूप ऑयल इंडिया लिमिटेड, शिलांग की स्थापना हुई। इसको रूपी कंपनी (The Rupee Co.) की संज्ञा प्रदान की गई। इसका प्रधान कार्यालय **डिगबोई** बना। इस क्षेत्र का तेल मूनमाटी तथा बरौनी

शुद्धिशालाओं को दिया जा रहा है। हल्दिया से बरौनी नूनमाटी–डिगबोई पाइप लाइन बनकर तैयार हो गई है।

टिप्पणी

शिवसागर – इस क्षेत्र में भी 366 मीटर गहराई तक खुदाई का प्रबंध किया गया है। कंपीय परीक्षण से पता चला है कि बहुत गहराई पर रुद्रसागर में तेल है। लकबा एवं तिओक में भी तेल है।



चित्र क्र. 2.11: गुजरात के तेल क्षेत्र एवं पाइप लाइनें

अन्य क्षेत्र – हिमाचल प्रदेश के ज्वालामुखी (कांगड़ा) जनपद में प्राकृतिक गैस की परत मिली है। यहाँ रूमानियाँ के रोटरी वेधन यंत्र (Rotary drill) का उपयोग हो रहा है। होशियारपुर तथा जनौरी (पंजाब) स्थानों पर भी अन्वेषण कार्य हो रहा है। राजस्थान के जैसलमेर क्षेत्र में भी कोलंबो योजना के अंतर्गत वायु चुंबकीय (Aero-magnetic) सर्वेक्षण हो रहा है। इसी योजना के अंतर्गत गंगा घाटी में भी वायु–चुंबकीय सर्वेक्षण हो रहा है। यहाँ तेल का पता लगाने के लिए भू–भौतिक विधियों से काम लिया जा रहा है। विशेषज्ञों की राय में गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़ जनपदों में राप्ती, घाघरा, गोर्रा तथा टोंस नदियों के समीप तेल की प्राप्ती की आशा है।

टिप्पणी

गुजरात क्षेत्र – गुजरात राज्य के 15,360 वर्ग किमी. क्षेत्र में कच्छ, राजकोट, सूरत तथा मेहसाणा में सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि सूरत से अमरेली (राजकोट) तक तेल की एक पेटी है। कच्छ के भिरांदियारा तथा धारी क्षेत्र में भी खनिज तेल का पता लगाया है।

दक्षिण गुजरात में लूनेज स्थान (खेड़ा) पर खनिज तेल का भंडार मिला है। इसमें रूसी तथा रूमानियाँ के विशेषज्ञों की सहायता ली जा रही है। सोखड़ा में 1,780 मीटर तथा भरूच में 1,680 मीटर की गहराई पर तेल स्त्रोत मिला है। वड़ोदरा से 6 किमी दूर वाडसर में खनिज तेल तथा गैस स्त्रोत मिला है।

अंकलेश्वर (भरूच) में रूसी विशेषज्ञों की देख–रेख में खुदाई के फलस्वरूप तेल का भारी भंडार मिला है जिसको स्वर्गीय पं. जवाहरलाल नेहरू ने बसुधारा (Fountain of prosperity) का नाम दिया है। इसका वार्षिक उत्पादन 42 लाख टन खनिज तेल, 70 लाख घनमीटर प्राकृतिक गैस है।

सूरत से 56 किमी. दूर महूवेज में 600 मीटर की गहराई पर कीचड़ मिश्रित तेल के फव्वारे का दर्शन हुआ है।

उत्तरी गुजरात में तेल क्षेत्र अहमदाबाद में वासना, बकरोल एवं सानन्द और मेहसाणा में कलोल, कीढ़ी एवं बचराची हैं। अन्य स्थान नवगाँव, कोसम्बा, कठना, इन्दूरा, सन्थेल तथा डबका हैं जहाँ खनिज तेल मिला है।

सारणी क्र. 2.20

खनिज तेल के उत्पादन में प्रगति

वर्ग	मात्रा (मिलियन टन)
1991–92	30.4
1992–93	27.0
1993–94	27.0
1994–95	32.2
1995–96	35.15
1996–97	32.9
1997–98	33.9
2000–2001	32.0
2001–2002 (अनुमानित)	32.0

भावनगर से 45 किमी. दूर अरब सागर में अलियाबेट टापू पर खनिज तेल निकाला जा रहा है। मुंबई हाई में सागर सम्राट की सहायता से भी तेल निकाला जा रहा है जहाँ का भंडार 12.5 करोड़ टन अनुमानित है। हीरा तेल क्षेत्र को विकसित किया जा रहा है, जहाँ के उत्पादन की दर 12.5 लाख टन होने की आशा है। पन्ना तेल क्षेत्र का विकास हो रहा है।

इस प्रकार स्थलीय क्षेत्र से 89 लाख मीटरी टन तथा अपतट क्षेत्र से 202 लाख मीटरी टन, कुल 291 लाख मीटरी टन खनिज तेल का उत्पादन होता है। गोदावरी

बेसिन में भी खनिज तेल का उत्पादन प्रारंभ हो गया है। तंजावूर जनपद (तामिलनाडु) से तेल निकाला जा रहा है।

गुजरात में 28 लाख टन खनिज तेल का वार्षिक उत्पादन हो रहा है।

टिप्पणी

खनिज तेल का विदेश व्यापार (Foreign Trade of Mineral Oil)

भारत को ईरान, इराक, सऊदी अरब, हिन्देशिया तथा बर्मा से खनिज तेल आयात करना पड़ता है। खनिज तेल तथा उसके सामानों के आयात का मूल्य सारणी में दिया गया है। खनिज तेल के आयात में कठिनाई से विश्व के सम्मुख आर्थिक संकट पैदा हो गया है। देश की माँग का 65 प्रतिशत आयात होता है। सन् 1979–80 तक केवल 50 प्रतिशत माँग का तेल आयात हुआ है जिसकी मात्रा 165 लाख टन थी, जिसमें 110 लाख टन अरब एवं खाड़ी देशें से है। सन् 1991–92 के खनिज तेल का जितना देश में उपभोग था उसका आधा भाग ही उत्पादित किया जा रहा था। शेष का आयात किया गया है।

सारणी क्र. 2.21

वर्ग	आयात का मूल्य (करोड़ रुपये में)
1991–92	130.38
1992–93	17,142
1993–94	18,046
1994–95	18,613
1995–96	25,173
1996–97	35,629
1997–98	30,538
1999–2000	55,608.67
2000–2001	72,686.00

खनिज तेल का भविष्य (Future of Mineral Oil)

भारत में तेल क्षेत्रों की खोज से अनुमान है कि तेल सभी क्षेत्रों में है। तेल खुदाई की आवश्यकता है। तेल आयोग इधर सचेष्ट है। धनबाद के खदान महाविद्यालय में वेधन (Drilling) की शिक्षा दी जा रही है। इस खनिज में भारत का भविष्य उज्ज्वल प्रतीत होता है। गौहाटी–बरौनी–हल्दिया और कानपुर–बरौनी–हल्दिया में पाइप लाइनें बिछा दी गई हैं। इसमें 6 पम्पिंग स्टेशन हैं जिससे बरौनी से तेल का प्रवाह अजस्त्र रह सके। ये स्टेशन बरौनी, आसनसोल, हल्दिया, पटना, इलाहाबाद तथा कानपुर हैं। इस पाइप लाइन को 77 डूबी नदियों तथा 7 रेल पुलों को पार करना पड़ रहा है। आवश्यकता पड़ने पर हल्दिया पोताश्रय से बरौनी को तेल पहुँचाया जाएगा। इससे रेल का बोझ कम हो गया है। गुजरात पाइप लाइन प्रणाली में खम्भात–धुवरन गैस लाइन, अंकलेश्वर–उत्तरान गैस लाइन, अंकलेश्वर–वडोदरा गैस लाइन, अंकलेश्वर कोयली तेल लाइन तथा कोयली–अहमदाबाद खनिज उत्पादन पाइप लाइन बन गई है। भारत के पश्चिमी तट पर अरब सागर में 'सागर सम्राट' तेल की खोज कर रहा है।

टिप्पणी

बंबई हाई (Bombay High) तथा बेसिन तेल क्षेत्रों से अन्तःसमुद्री नलिकाओं द्वारा तटीय स्थान उरान को तेल एवं गैस पहुँचाया जाएगा जहाँ से इन्हें स्थानीय शुद्धिशालाओं को प्रेषित किया जाएगा। यहीं से बुचर टापू को तेल भेजकर जलयानों में अन्य शुद्धिशालाओं को ढोया जाएगा। वेधन जलयान का निर्माण भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड में हो रहा हैं। मझगाँव डॉक प्लेटफॉर्म का निर्माण हो रहा है। गैस पाइप लाइन को उमराट (गुजरात) सर लपरनी (महाराष्ट्र) तक ले जाने का प्रश्न अनिर्णीत है। हजीरा, सवाईमाधोपुर तथा हजीरा–जगदीशपुर तथा हजीरा–बबराला गैस पाइप लाइन बन रही है। इस गैस लाइन का उत्तर प्रदेश के लिए बहुत महत्त्व है। खनिज तेल उत्पादों के परिवहन के लिए चार पाइप लाइनें–मुंबई–पुणे, मुंबई–मनमाड, कोच्चिन–कोयम्बतूर–इरोड तथा चेन्नई–बैंगलूर का निर्माण होगा।

भारतीय तेल निगम – यह सार्वजनिक क्षेत्र का प्रतिष्ठान है जो अमेरीका को छोड़कर विश्व का सबसे बड़ा संस्थान है। यह शोधनशालाओं के उत्पादों के वितरण की व्यवस्था कर रहा है। स्नेहक तेल के विकास के लिए फरीदाबाद (हरियाणा) में एक अनुसंधानशाला एवं इसके निमित्त अहमदाबाद तथा देहरादून में क्रमशः संचाय संस्थान (Reservoir Institute) तथा वेधन प्रायोगिकी (Drilling Technology) संस्थान स्थापित किए जाएँगे। इस योजना में खनिज तेल के चतुर्मुखी उपयोग के लिए 43 अरब रूपए का प्रावधान है।

खनिज तेल की शोधनशालाएँ (Refineries of Petroleum)

अशुद्ध तेल को शुद्धिशालाओं में ले जाकर आसवन विधि (Distillation method) से तेल से विभिन्न वस्तुओं को अलग किया जाता है। तेल को गैस रूप प्रदान करके गैस में मिले हुए पदार्थ पेट्रो, मिट्टी का तेल, ज्वलनशील गैस, कोलतार आदि अपने भार तथा हिमांक (Freezing point) के अनुसार अलग–अलग भागों में जमते हैं। भारत में तेल शोधन की वर्तमान क्षमता 378 लाख टन है। 13 शुद्धिशालाओं में 12 सरकारी क्षेत्र तथा एक निजी क्षेत्र में है।

तेल शुद्धिशालाएँ (Oil Refineries)

1. डिगबोई शुद्धिशाला – इस शुद्धिशाला में गत 95 वर्षों से कार्य हो रहा है। इसकी स्थापना असम तेल कंपनी द्वारा सन् 1809 में हुई थी। इसको डिगबोई तथा नहरकटिया के तेल कूपों से खनिज तेल प्राप्त होता है। यह एकमात्र निजी क्षेत्र की शुद्धिशाला है।

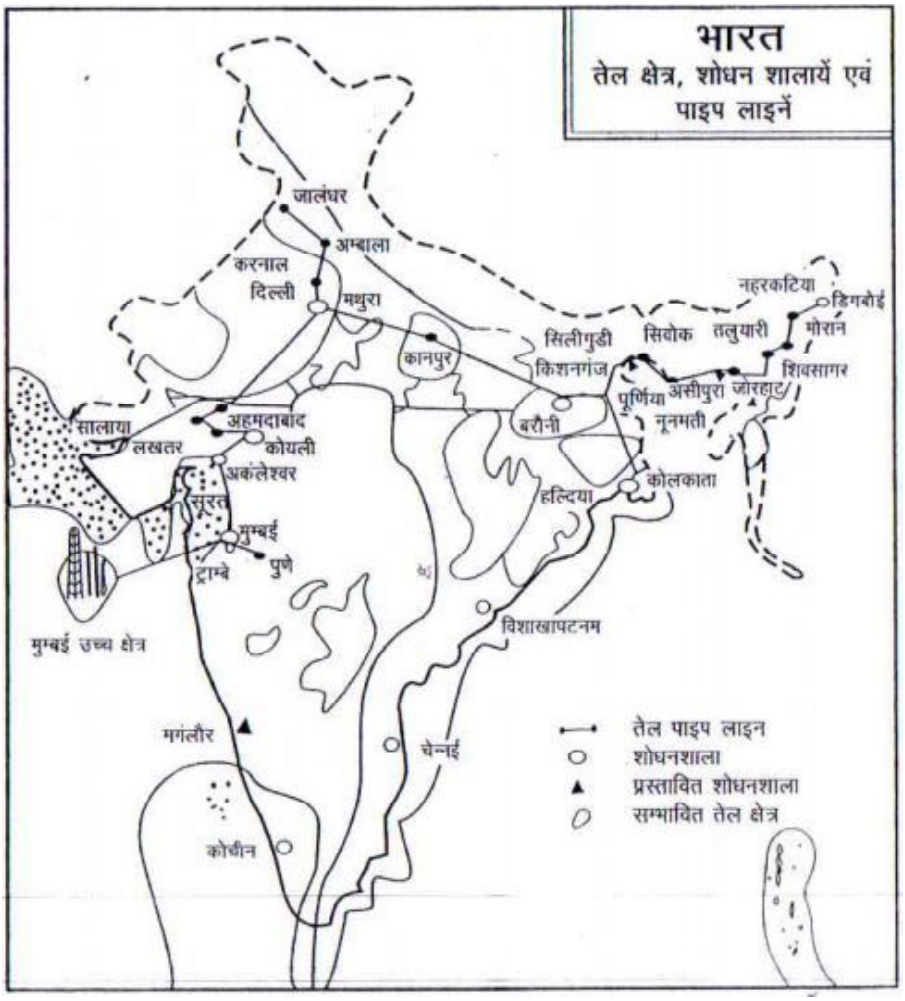
भारतीय मुद्रा की बचत को दृष्टि में रखकर भारत सरकार ने देश में ही तेल की शुद्धि कराने के लिए स्टैंडर्ड वैकुअम ऑयल कंपनी (न्यूयॉर्क) तथा बर्मा तेल कंपनी (लंदन) से करार किया जिसके फलस्वरूप प्रत्येक ने ट्रॉम्बे में एक–एक शुद्धिशाला स्थापित की है। इसके बाद ही कालटैक्स कंपनी इंडिया लिमिटेड ने विशाखापट्टनम में एक शुद्धिशाला स्थापित की है। इन तीन शुद्धिशालाओं की क्षमता 38.7 लाख मीटरी टन खनिज तेल साफ करने की है। सन् 1958 में इंडियन रिफाइनरीज प्राइवेट लिमिटेड नामक एक सरकारी कंपनी स्थापित हुई जिसने शुद्धिशालाएँ स्थापित की हैं।

टिप्पणी

2. कालटैक्स तेल शुद्धिशाला लिमिटेड विशाखापट्टनम – यह आधुनिकतम एवं कुशलतम शुद्धिशाला है। यहाँ सन् 1957 से कालटैक्स शुद्धिशाला के नाम से शुद्धि का कार्य प्रारंभ हुआ। यहाँ मध्य–पूरब तथा हिन्देशिया से आयात किए गए विदेशी खनिज तेल को शुद्ध किया जाता है। यह भारत की अच्छी शोधनशाला है। यह अब सार्वजनिक क्षेत्र की शुद्धिशाला है जिसको सन 1976 में सरकार ने नियंत्रण में ले लिया है। भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड इसका संचालन करता है।

3. हिंदुस्तान पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड (H.P.C.L.) – संयुक्त राज्य अमेरिका की स्टैण्डर्ड वैकुअम कंपनी द्वारा निर्मित एक शुद्धिशाला ट्रॉम्बे में स्थापित की गई। इसको भारत सरकार ने सन् 1974 में अपने नियंत्रण में ले लिया है। इसकी वार्षिक शोधन क्षमता 55 लाख मीटरी टन है।

यह भारत की तीसरी बड़ी शुद्धिशाला है। इसका नाम सन् 1962 से (I.S.O.) (Standard Refinery Co. of India Ltd.) था। ट्रॉम्बे में शुद्धिशालाओं की स्थापना के मूल में मुंबई पत्तन की निकटता, भीतरी भागों से रेलों का संबंध, विदेशों से तेल एवं मशीनों के आयात में सुविधा तथा पर्याप्त मात्रा में समुद्री जल की प्राप्ति है। इसका नाम हिन्दुस्तान पेट्रोलियम निगम लिमिटेड हो गया है।



चित्र क्र. 2.12: तेल क्षेत्र शोधनशालाएँ एवं पाइप लाइनें

टिप्पणी

4. बर्मा तेल शुद्धिशाला लिमिटेड, ट्रॉम्बे – बर्मा तेल कंपनी ट्रॉम्बे में एक शुद्धिशाला स्थापित की गई है। यह भारत की दूसरी बड़ी शुद्धिशाला है जिसकी वार्षिक शोधन क्षमता 60 लाख मीटरी टन है। यहाँ फारस की खाड़ी तथा गुजरात के अंकलेश्वर क्षेत्र से खनिज तेल आता है। इससे मोटर आसव, मिट्टी का तेल, डीजल तेल आदि वस्तुएँ प्रति वर्ष उपलब्ध होती हैं। इस कंपनी को भारत सरकार ने अपने नियंत्रण में ले लिया है। इसका नाम **भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड** है। सन् 1985 में इसका विस्तार किया गया है जिससे भारी विदेशी मुद्रा की बचत होगी।

5. अंबालाकुलम (कोच्चिन) शुद्धिशाला लिमिटेड – इस शुद्धिशाला के निर्माण के लिए भारत सरकार, संयुक्त राज्य अमेरिका की फिलिप्स खनिज तेल कंपनी तथा कोलकाता की मैसर्स डल्कन ब्रदर्स एण्ड कंपनी के मध्य करारनामा हुआ। इसकी उत्पादन क्षमता 45 लाख मीटरी टन वार्षिक है। यहाँ किरोसिन, ईंधन तेल, डीजल तेल तथ नेप्था का उत्पादन हो रहा है। **भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन** इसका संचालन करता है।

6. इंडियन शुद्धिशाला लिमिटेड – सन् 1958 में तेल एवं पेट्रोल की बढ़ती हुई माँग को देखकर इस शुद्धिशाला का जन्म हुआ। भारत तेल निगम नूनमाटी, बरौनी, कोयली तथा हल्दिया की शुद्धिशालाओं की व्यवस्था करता है। कोच्चिन, ट्रॉम्बे तथा चेन्नई की शुद्धिशालाओं की व्यवस्था तीन अलग–अलग कंपनियाँ करती है।

बरौनी शुद्धिशाला – यह शुद्धिशाला सन् 1958 में स्थापित हुई और इसका कार्य सन् 1965 में पूर्ण हो गया। इसमें सोवियत सरकार का सहयोग है। इसको नहरकटिया क्षेत्र से खनिज तेल मिलता है। इसकी वार्षिक शोधन क्षमता 33 लाख मीटरी टन है।

नूनमाटी शुद्धिशाला – यह शुद्धिशाला रूमानियाँ सरकार की सहायता से बनी है। इसमें सन् 1962 से तेल साफ हो रहा है। इसकी उत्पादन क्षमता 13.5 लाख मीटरी टन है। इसको असम से खनिज तेल मिलता है।

कोयली शुद्धिशाला – वडोदरा से 16 किमी. दूर बाजवा रेल्वे स्टेशन के पास कोयली स्थान पर यह शुद्धिशाला बनाई गई है। इसकी मूल क्षमता 20 लाख मीटरी टन थी किन्तु इसका विस्तार करके इसकी उत्पादन क्षमता 43 लाख मीटरी टन हो गई। अंकलेश्वर तेल क्षेत्र तथा खंभात गैस क्षेत्र से पाइप लाइन डालने के लिए इटली की मैसर्स स्नाम सैपेम (E.N.I.) से करारनामा था। पाइप लाइन का कार्य पूरा हो गया है। आजकल इसकी क्षमता 95 लाख मीटरी टन हो गई है। केंद्रीय सरकार ने जवाहरनगर में एक इंडियन पेट्रोकेमिकल कारपोरेशन लिमिटेड की स्थापना की है।

हल्दिया (पश्चिम बंगाल) शुद्धिशाला – भारत में खनिज तेल के उत्पादों की बढ़ती माँग को दृष्टि में रखकर योजना आयोग ने हल्दिया में शुद्धिशाला की आवश्यकताओं को स्वीकार किया। पंचम पंचवर्षीय योजना में हल्दिया शोधनशाला पूर्ण हो गई। हल्दिया की उत्पादन क्षमता 25 लाख मीटरी टन वार्षिक है। हल्दिया के एक विभाग में पेट्रोल, डीजल, फर्नेस तेल का उत्पादन हो रहा है।

7. मद्रास शुद्धिशाला लिमिटेड का कारखाना मनाली में प्रारंभ हो गया है। इसकी क्षमता 56 लाख मीटरी टन है।

8. मथुरा में 75 लाख टन क्षमता की शुद्धिशाला कार्यरत है।

9. बोंगई गाँव में 10 लाख टन क्षमता की शुद्धिशाला उत्पादन कर रही है। सलावा–कोयली–मथुरा पाइप लाइन पूर्ण है।

टिप्पणी

2001 को शोधन क्षमता 11 करोड़ 25 लाख 40 हजार टन प्रति वर्ष पहुँच गई जिसके भविष्य में और बढ़ने की संभावना है।

सार्वजनिक क्षेत्र के तेलशोधक कारखाने – वर्तमान में 13 तेलशोधक कारखाने सार्वजनिक क्षेत्र में कार्यरत हैं –

सारणी क्र. 2.22

रिफायनरी	उत्पादन आरंभ वर्ष	क्षमता (लाख टन में)
आई.ओ.सी., डिगबोई	1901	5
एच.पी.सी.एल., मुंबई	1954	35
बी.पी.सी.एल., मुंबई	1955	60
एच.पी.सी.एल., विशाखापट्टनम	1957	45
आई.ओ.सी., गुवाहाटी	1962	84
आई.ओ.सी., बरौनी	1964	33
आइ.ओ.सी., कोयली	1965	73
सी.आर.एल., कोचीन	1966	45
एम.आर.एल., चेन्नई	1969	56
आई.ओ.सी., हल्दिया	1975	25
बी.आर.पी.एल., असम	1979	10
आई.ओ.सी., मथुरा	1982	60
मंगलौर रिफाइनरी	1996	3
नुमालीगढ़ कारखाना	–	30
पानीपत कारखाना	–	60
हल्दिया कारखाना	–	10
विजाग कारखाना	–	30

सारणी क्र. 2.23

तेल शोधन क्षमता में प्रगति

पंचवर्षीय योजना	क्षमता (लाख टन)
द्वितीय (1956–61)	62.0
तृतीय (1961–66)	102.0
चतुर्थ (1969–74)	240.0
पंचम (1974–78)	318.0
छठी (1980–85)	455.5
सातवीं (1985–90)	540.5
आठवीं (1992–97)	540.5
नवीं (1997–2002)	600.0

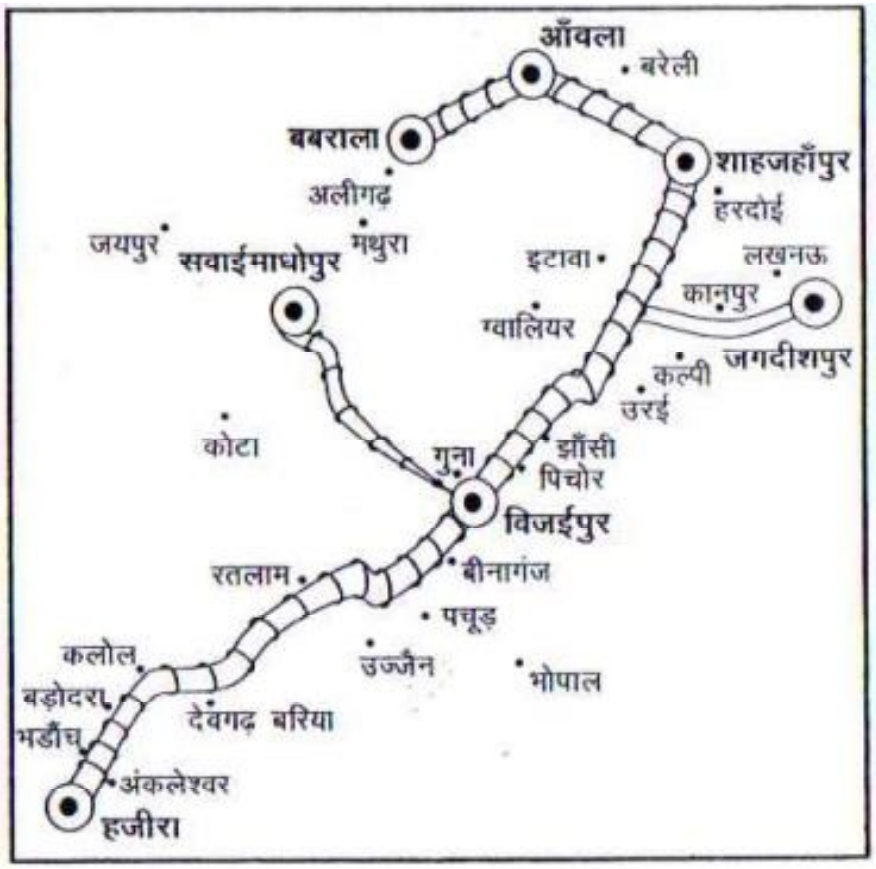
खनिज तेल उत्पाद (Mineral Oil Products)

टिप्पणी

इस समय भारत में तेल के उत्पादन की मात्रा बढ़ गई है। किरोसिन तेल तथा स्नेहक तेल (Lubricant) को छोड़कर अन्य उत्पादनों में देश आत्मनिर्भर हो गया है। उपर्युक्त वस्तुएँ आयात करनी पड़ती है। हलका आसुत स्प्रिट (Light distilled spirit) का आधिक्य हो गया है जिसका निर्यात हो रहा है। सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंत में इनका उत्पादन 48.7 लाख मीटरी टन था। 1991–92 में खनिज तेल उत्पादों का उत्पादन 483.5 लाख टन था जबकि उपभोग 568.4 लाख टन था। इस प्रकार उत्पादन से अधिक माँग को आयात द्वारा पूरा किया जा रहा है। सन् 2000–2001 में कच्चे तेल और पेट्रोलियम उत्पादों का अधिशेष आयात 573.0 लाख टन था जिसकी कीमत 72,686.00 करोड़ रुपये हो गई।

2.5.3 प्राकृतिक गैस (Natural Gas)

प्राकृतिक गैस खनिज तेल प्राप्ति के क्षेत्रों में ही मिलती है। आज पेट्रो रसायन उद्योग, उर्वरक तथा विद्युत उत्पादन में प्राकृतिक गैस की उपयोगिता प्रमाणित हो चुकी है। नाइट्रोजन उत्पादन में प्राकृतिक गैस का प्रयोग कच्चे माल के रूप में होता है। खाना पकाने की गैस (एल.पी.जी.) में भी प्राकृतिक गैस का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इथेन, प्रोपेन आदि पदार्थ जिनका उपयोग पेट्रो रसायन में किया जाता है, प्राकृतिक गैस की सहायता से ही निकाले जाते हैं। आज प्राकृतिक गैस का 60% भाग उर्वरक कारखानों, 20% विद्युत उत्पादन 15% आंतरिक प्रयोग और 3% अन्य उद्योगों में हो रहा है।



चित्र क्र. 2.13: हजीरा–जगदीशपुर तथा हजीरा बबराला गैस पाइप लाइन

टिप्पणी

आज प्राकृतिक गैस के भंडार विभिन्न क्षेत्रों में हैं जिसका अधिक से अधिक उपयोग कम लागत पर हो रहा है। ऐसा अनुमान है कि हमारे देश में प्राकृतिक गैस का भंडार 750 करोड़ घन मीटर है। परंतु भंडार को देखते हुए प्राकृतिक गैस का उत्पादन कम है। सन् 2001–2002 में लगभग 29.60 अरब घन मीटर प्राकृतिक गैस का उत्पादन हुआ। भारतवर्ष में त्रिपुरा, गुजरात और पश्चिमी तट के समीप प्राकृतिक गैस के भंडार हैं। कावेरी और गोदावरी क्षेत्र में भी प्राकृतिक गैस के भंडार होने के अनुमान हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन दोनों क्षेत्रों में 1.2 खरब घन मीटर प्राकृतिक गैस का भंडार होने का अनुमान है।

सारणी क्र. 2.24

भारत में प्राकृतिक गैस का उपयोग

वर्ष	उत्पादन (मिलियन क्यूबिक मीटर में)
1998–99	25,705
1999–2000	26,885
2000–2001	27,860
2001–2002	27,863
2002–2003	29,902

उपरोक्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि हमारे देश में प्राकृतिक गैस का उत्पादन एवं उपभोग बढ़ रहा है। 2002–2003 में इसका उपयोग 29,902 मिलियन क्यूबिक मीटर होने की संभावना है जबकि 1970–71 में यह मात्र 1,445 मिलियन घन मीटर थी।

देश में प्राकृतिक गैस के उत्पादन एवं उपभोग की क्रिया के मध्य सामंजस्य न होने के कारण बहुत सी प्राकृतिक गैस व्यर्थ चली जाती है क्योंकि अधिकतर गैस क्षेत्र पश्चिमी अपतटीय क्षेत्र और पूर्वोत्तर असम और त्रिपुरा में हैं।

यही कारण है कि सरकार ने देश में उपलब्ध गैस के प्रयोग के लिए एक महत्त्वाकांक्षी योजना तैयार की है। आज दक्षिण की गैस हजीरा–विजयपुर जगदीशपुर पाइप लाइन की सहायता से उत्तर प्रदेश पहुँचायी जाती है। यह पाइप लाइन 1750 किलोमीटर लम्बी है और गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश होती हुई उत्तर प्रदेश पहुँचती है। आज प्राकृतिक गैस की खोज तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग तथा ऑयल इंडिया लिमिटेड करती है। भारत सरकार का एक संस्थान GAIL (Gas Authority of India Ltd.) उत्तर प्रदेश में दिबियापुर में कार्यरत है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. निम्नलिखित में से कौनसा कोयला उत्तम प्रकार का होता है?
   (अ) बिटुमिनस (ब) एन्थ्रेसाई
   (स) लिगनाइट (द) पीट
2. भारत में लिगनाइट कोयला अधिकतर किस राज्य में मिलता है?
   (अ) आसाम (ब) तामिलनाडु
   (स) उड़ीसा (द) झारखंड

टिप्पणी

3. खनिज तेल निम्नलिखित में से किन शैलों से प्राप्त होता है?
   (अ) आग्नेय (ब) परतदार
   (स) परिवर्तित (द) उपरोक्त सभी
4. भारतवर्ष में लगभग कितने भूतापीय गर्म झरनों की पहचान कर ली गई है?
   (अ) 320 (ब) 340
   (स) 210 (द) 150
5. एशिया की विशालतम पवन ऊर्जा परियोजना कहाँ स्थित है?
   (अ) तामिलनाडु (ब) केरल
   (स) बिहार (द) राजस्थान

2.6 अपरम्पागत ऊर्जा स्त्रोत (Non-conventional Sources of Energy)

भारत में बिजली के उत्पादन कार्य के दौरान ग्रीन हाऊस गैसों का सबसे अधिक उत्पादन होता है। इसमें उत्सर्जित कार्बन का अंश 48% होता है। अतः ऊर्जा की बढ़ती हुई जरूरतों को पूरा करने के लिए जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता को यद्यपि पूरी तरह समाप्त न करके इस निर्भरता को कम करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है और बहुराष्ट्रीय निगमों, बहुपक्षीय एजेंसियों जैसे विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक आदि द्वारा अक्षय ऊर्जा स्त्रोतों के विकास की ओर काम किया गया है। भारत में इस हेतु 12 मार्च, 1981 को ऊर्जा के आंतरिक साधनों का आयोग (CASE) तथा 6 सितम्बर 1982 को ऊर्जा मंत्रालय में गैर–परंपरागत ऊर्जा स्त्रोत विभाग (DNES) स्थापित किये गये। 1987 में विश्व बैंक की सहायता से भारतीय नाव्यकरणीय ऊर्जा विकास एजेन्सी (IREDA) की स्थापना की गई। आज भारत की पहचान नाव्यकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के क्षेत्र में मार्गदर्शक के रूप में की जाती है।

आज इस दिशा में अग्रलिखित उपलब्धियाँ उल्लेखनीय हैं –

पवन ऊर्जा कार्यक्रम (Wind Energy Programme)

भारतवर्ष में कम से कम 45,000 मेगावाट पवन ऊर्जा की क्षमता आँकी गई है परंतु संभावित राज्यों में ग्रिड की स्थिति को देखते हुए यह क्षमता 13,000 मेगावाट तक ही सीमित है। इस क्षमता के साथ भारत पवन ऊर्जा संसार में चौथे स्थान पर है। इस कार्यक्रम की एक उल्लेखनीय विशेषता वाणिज्यिक पवन विद्युत परियोजनाओं को स्थापित करने में उद्यमियों की रूचि रही है। 31.3.2002 तक भारत में पवन ऊर्जा का उत्पादन 1628 मेगावाट रहा। एशिया में विशालतम् (150 मेगावाट उत्पादन क्षमता) परियोजना मुम्पंडाल (तामिलनाडु) में अवस्थित है। देश में पवन ऊर्जा के उत्पादन के लिए उपयुक्त क्षेत्रों की तलाश जारी है, देश में 219 केंद्रों की पहचान पवन ऊर्जा परियोजनाओं के लिए की गई है जो उपयुक्त हो सकते हैं। ये केन्द्र तामिलनाडु, आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और लक्षद्वीप में हैं जिनसे 3,000 मेगावाट क्षमता की पवन ऊर्जा उत्पादित होने की संभावना है।

सौर ऊर्जा कार्यक्रम (Solar Energy Programme)

टिप्पणी

भारत एक उष्ण कटिबंधीय देश है। यहाँ हर साल लगभग 300 दिन धूप निकलती है। इससे 50,000 किलोवाट सौर ऊर्जा प्राप्त होती है। प्रतिवर्ग किलोमीटर इलाके में 20 मेगावाट सौर बिजली का उत्पादन किया जाता है। सौर ऊर्जा का प्रयोग पानी गर्म करने, सौर कुकर बनाने एवं फसलें पकाने लिए किया जाता है। इस समय सौर ऊर्जा को दो विभिन्न माध्यमों से प्रयोग में लाया जा रहा है – (1) सौर तापीय माध्यम, (2) सौर फोटो वोल्टेइक माध्यम। भारत उन 6 देशों में से है जिन्होंने पाल्सिलिकॉन पदार्थ के निर्माण की प्रौद्योगिकी विकसित की है।

1. सौर तापीय ऊर्जा – सौर ऊर्जा को सौर संग्राहकों और रिसीवरों की सहायता से ताप ऊर्जा में बदला जा सकता हैं। इसका प्रयोग पानी गरम करने, जगह गरम करने, खाना पकाने, सुखाने, पानी को लवण मुक्त करने, रेफ्रीजरेशन प्रणालियों आदि में किया जाता है। अब तक करीब 6,50,000 वर्गमीटर, संग्राहक क्षेत्र स्थापित किया जा चुका है जिसमें लगभग 80,000 घरों में 50 से 100 लीटर क्षमता के घरेलू वाटर हीटर से लेकर प्रतिदिन 2,40,000 लीटर तक की गरम पानी की क्षमता वाली औद्योगिक एवं व्यावसायिक प्रणालियाँ शामिल हैं। इस कार्य को प्रोत्साहन देने के लिए **भारतीय अक्षय ऊर्जा विकास संस्था** ने उत्कृष्ट कार्य किया है।

2. सौर फोटोवोल्टिक कार्यक्रम (Photovoltaic Programme) – सौर फोटोवोल्टिक प्रौद्योगिकी से सौर विकिरण को बिजली में बदलने में मदद मिलती है। इसमें टरबाइन आदि जैसे चालक पुर्जों की जरूरत नहीं पड़ती और न केवल प्रकाश, जल, पंपिंग और दूरसंचार जैसे प्रयोजनों के लिए। आज यह प्रणाली गाँवों, अस्पतालों, अस्थायी गृहों आदि बिजली संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने वाले विद्युत संयंत्रों के लिए ऊर्जा का स्त्रोत साबित हुई है। आज देश में 96 मेगावाट क्षमता की 9,80,000 से अधिक फोटोवोल्टिक प्रणालियाँ स्थापित की गई हैं। ग्रामीण दूर–दराज के इलाके, व्यावसायिक उद्देश्य, आवास और सड़क पर रोशनी, पानी पंप करने तथा दूरसंचार प्रणाली के लिए आज देश में 40 से अधिक प्रणालियाँ काम कर रही हैं। सौर ऊर्जा से 6,35,000 से अधिक घरों में बिजली तथा पंप से पानी की सुविधा, करीब 2,20,000 ग्रामीण रेडियो टेलीफोन चल रहे हैं। मार्च 2002 तक करीब 4,22,000 सौर लालटेन, 2,12,000 गृह विद्युत प्रणालियाँ, 41,403 सड़क प्रणालियाँ, 4,500 जल पंपिंग प्रणालियाँ तथा 1.5 मेगावाट क्षमता वाले नॉन–ग्रिड बिजली संयंत्र स्थापित किये जा चुके हैं।

बायोमास से ऊर्जा (Energy from Biomass)

बायोमास ऊर्जा पर राष्ट्रीय कार्यक्रम का उद्देश्य विविध प्रकार की बायोमास सामग्री का अधिकतम उपयोग करना है। इनमें वन और कृषि उद्योग आधारित अवशिष्ट, ऊर्जा समर्पित वृक्षारोपण के अलावा दक्ष और आधुनिक तकनीकों से परिवर्तन के माध्यम से वन और कृषि अवशिष्टों से ऊर्जा उत्पादन शामिल है। इन तकनीकों में दहन या भट्टी में डालना, गैसीकरण आदि शामिल हैं। इनके लिए गैस/भाप टरबाइन, दोहरा ईंधन इंजन/गैस इंजन या इनका मिश्रण, जिनका उपयोग सिर्फ बिजली उत्पादन या ऊर्जा के एक से अधिक प्रकारों से सहउत्पादन के लिए और एक मेगावाट ऊर्जा क्षमता वाले ग्रिड के लिए किया जाता है।

देश में बायोमास उत्पादन की अनुमानित क्षमता 19,500 मेगावाट है। इसमें देश की वर्तमान चीनी मिलों में गन्ने की खोई पर आधारित 3,500 मेगावाट उत्पादन की

टिप्पणी

अतिरिक्त क्षमता शामिल है। देश में आज तक 381 मेगावाट की बायोमास आधारित परियोजनाओं की स्थापना का काम पूरा किया जा चुका है। 440 मेगावाट क्षमता की बायोमास परियोजनाओं की स्थापना का काम जारी है। 14 राज्यों ने राज्य बिजली बोर्ड से बिजली की पुनर्खरीद और वितरित बिजली को सुरक्षित रखने की नीति भी घोषित कर दी है।

बायोमास कार्यक्रम (Biomass Programme)

बायोमास गैसीकरण कार्यक्रम के तहत औद्योगिक उपयोगों के लिए ताप ऊर्जा उत्पन्न करने, पानी की पंपिंग और 500 किलोवाट तक बिजली पैदा करने के लिए बायोमास गैसीफायर विकसित किये गये हैं। इन गैसीफायरों में लकड़ी के टुकड़ों और दूसरे बायोमास का उपयोग किया जाता है। कुल 51.3 मेगावाट की क्षमता के बायोमास गैसीफायर अब तक स्थापित किये जा चुके हैं।

ब्रिकेटिंग कार्यक्रम के अंतर्गत ब्रिकेट बनाने के लिए कृषि और वन्य अवशेषों का उपयोग किया जा रहा है।

लघु पन–बिजली (Small Hydel Power)

देश में लघु पन–बिजली क्षमताओं का लगभग 15,000 मेगावाट का आँकलन किया गया है। मार्च 2002 के अंत तक कुल 1438 मेगावाट की लघु जल परियोजनाएँ, जिनमें प्रत्येक की क्षमता 25 मेगावाट तक है, स्थापित की जा चुकी हैं। 510 मेगावाट से अधिक की परियोजनाएँ निर्माणाधीन हैं। 13 राज्यों ने छोटी पन–बिजली परियोजनाओं की स्थापना के लिए निजी क्षेत्र को आमंत्रित करने के लिए अपनी नई नीतियों की घोषणा कर दी है। गैर–परंपरागत ऊर्जा मंत्रालय को 25 मेगावाट तक की लघु पन–बिजली परियोजनाओं की जिम्मेदारी दी गई है। लघु जल परियोजनाएँ, सामुदायिक भागीदारी के जरिए यू.एन.डी.पी/जी.ई.एफ. पर्वतीय जल परियोजना के अंतर्गत भी स्थापित की जा रही हैं तथा अति लघु जल विद्युत के पोर्टेबल सेटों को भी प्रोत्साहन दिया जा रहा है। इस कार्यक्रम के तहत पुरानी लघु जल परियोजनाओं को नया रूप देने तथा उनके आधुनिकीकरण और जल मिलों के उन्नयन का काम भी किया जा रहा है। देश में लघु जल कार्यक्रम को प्रोत्साहन देने का एक शीर्ष संस्थान **आल्टरनेट हाइड्रो एनर्जी सेंटर** पिछले डेढ़ दशक से भी अधिक समय से रुड़की विश्वविद्यालय में काम कर रहा है।

सारणी क्र. 2.25

पुनरोपयोगी ऊर्जा क्षमता और उपलब्धियाँ

क्र.	स्रोत प्रणाली	अनुमानित क्षमता	स्थिति 31.3.2002 को
1.	बायोगैस संयंत्र (संख्या)	120 लाख	33.6 लाख
2.	उन्नत चूल्हे (संख्या)	12 करोड़	350 लाख
3.	सौर जल–तापन प्रणाली		6,50,000 वर्ग मी. संग्राहक क्षेत्र
4.	सौर फोटोवोल्टेइक प्रणाली	20 मेगावाट/वर्ग किमी	96 मेगावाट (40 मेगावाट के निर्यात सहित)
5.	बायोमास ऊर्जा	19,500 मेगावाट	
	1. बायोमास गैसीफायर्स (अकेले अपने इस्तेमाल वाले)		51.3 मेगावाट

टिप्पणी

	2. बायोगैस ज्वलन / गैसीफायर्स पर आधारित विद्युत उत्पाद		132 मेगावाट
	3. पन्ना की भूमि आधारित सह उत्पादन		340 मेगावाट
6.	पवन ऊर्जा	45,000 मेगावाट	1628 मेगावाट
7.	लघु पन–बिजली	15,000 मेगावाट	1438 मेगावाट
8.	सौर फोटोवोल्टेइक ऊर्जा		2.0 मेगावाट ग्रिड से संबंद्ध 884 किलोवाट नॉनग्रिड से संबंद्ध
9.	समेकित ग्रामीण ऊर्जा कार्यक्रम	860 खंड	
10.	ऊर्जा पार्क		189 संख्या
11.	पवन पंप		793 संख्या
12.	ऐरोजनरेटर / हाइब्रिड प्रणाली		126 किलोवाट
13.	सौर पी. वी. पम्प		4500 संख्या
14.	सौर कुकर		5,20,000 संख्या
15.	अभिशिष्ट से प्राप्त ऊर्जा		22 मेगावाट

स्रोतः भारत 2003।

शहरी तथा औद्योगिक कचरे से ऊर्जा

(Energy from Urban and Industrial Wastes)

मंत्रालय द्वारा प्रायोजित की गई अनुसंधान परियोजनाओं से नगरपालिका जल–मल अवशिष्ट, सब्जी मंडी के कचरे, चमड़ा उद्योग, डिस्टिलरियों, चीनी मिलों, लुग्दी व कागज उद्योग आदि के कचरे के विधायन और उपचार के लिए प्रौद्योगिकियों का विकास हुआ है, जो उपयोग के लिए तत्काल उपलब्ध हैं। कचरे के उपचार की संभावनाओं और महत्त्व को देखते हुए, देश में कचरा प्रबंध प्रणालियों में सुधार के रूप में उचित प्रौद्योगिकियों के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए मंत्रालय ने 1995 में शहरी, नगरपालिका और औद्योगिक कचरे से ऊर्जा प्राप्ति का राष्ट्रीय कार्यक्रम शुरू किया।

(1) ऊर्जा हासिल करने के लिए कचरों के इस्तेमाल को बढ़ावा देने, उसका विकास करने, उसका प्रदर्शन करने और उसे फैलाने में मदद के लिए वित्तीय प्रोत्साहन के साथ ही उपयुक्त वातावरण बनाना, (2) कचरे को ऊर्जा में परिवर्तित करने की टेक्नोलॉजी अपनाकर कचरा प्रबंध व्यवहार में सुधार लाना और (3) शहरी नगरीय और औद्योगिक क्षेत्रों से प्राप्त कचरों के इस्तेमाल के जरिए परियोजनाओं की स्थापना को बढ़ावा देना।

गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय में एक शीर्षस्थ निकाय के रूप में **राष्ट्रीय जैव–ऊर्जा बोर्ड** – नेशनल बायो–एनर्जी बोर्ड (एन.बी.बी.) गठित किया गया है, जो यू.एन.डी.पी / जी.ई.एफ. से सहायता प्राप्त परियोजना उच्च गति की बायोमिथेनेशन प्रक्रियाओं के विकास के क्रियान्वयन के लिए नीतिगत मार्गदर्शन और निर्देशन करने तथा देश में जैव–ऊर्जा विकास के लिए काम करता है।

नई प्रौद्योगिकियाँ (Neo Technologies)

गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्त्रोत मंत्रालय नई और उभरती हुई अक्षय ऊर्जा प्रौद्योगिकियों जैसे फ्यूल सेल, हाइड्रोजन ऊर्जा, इलेक्ट्रिकल वाहनों के लिए भू–तापीय ऊर्जा और

समुद्री ऊर्जा, संबंधी कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने में लगा है। इस काम में कई शोध और शिक्षण संस्थाएँ, विश्वविद्यालय, सी. एस. आई. आर. प्रयोगशालाएँ और उद्योग आदि लगे हुए है।

टिप्पणी

फ्यूल सेल्स (Fuel Cells)

फ्यूल सेल हाइड्रोजन और ऑक्सीजन गैसों के बीच अभिक्रिया के जरिए बिजली पैदा करता है। हाइड्रोजन फ्यूल सेल के लिए प्रमुख ईंधन है, जिसे ऊर्जा के नवीकरणीय स्त्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है। इसका स्वरूप मोड्यूलर होने के कारण फ्यूल सेल वितरित बिजली उत्पादन के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है।

एम.एन.ई.एस. द्वारा वित्त पोषित परियोजना के तौर पर बिजली उत्पादन के लिए हैद्राबाद में भेल ने 50 किलोवाट (2 × 25) पी.ए.एफ.सी. संयंत्र का विकास किया। बिजली उत्पादन और इसके स्वतः प्रयोग के लिए एक पूर्व वाणिज्यिक प्रोटोन एक्सचेंज मेंबरेन ईंधन सेल (पाँच किलोवाट) का भी विकास किया गया। मंत्रालय प्रत्यक्ष मेथानॉल ईंधन सेलों और ठोस ऑक्साइड ईंधन सेलों के बारे में अनुसंधान और विकास परियोजनाओं को भी समर्थन दे रहा है।

देश में फ्यूल सेल प्रणालियों के उत्पादन को व्यावसायिक बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं। बड़े पैमाने पर फ्यूल सेल का प्रयोग करके दुर्लभ जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता कम की जा सकती है और वायु को स्वच्छ एवं प्रदूषणरहित बनाया जा सकता है।

हाइड्रोजन ऊर्जा (Hydrogen Energy)

हाइड्रोजन ऊर्जा एक स्वच्छ और प्रभावी ऊर्जा माध्यम है। इसका इस्तेमाल व्यापक रूप में और जीवाश्म ईंधन के विकल्प के रूप में किया जा सकता है।

मंत्रालय हाइड्रोजन को ईंधन के रूप में इस्तेमाल और उसके उत्पादन तथा भंडारण के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान और विकास परियोजनाएँ चला रहा है। परिणामस्वरूप बिजली पैदा करने के लिए फ्यूल सेल में हाइड्रोजन के इस्तेमाल को प्रदर्शित किया गया है। हाइड्रोजन पर आधारित छोटे जैनरेटर, दुपहिया वाहन और केटालिटिक बर्नरों को विकसित और प्रदर्शित किया गया है। मंत्रालय ने हाइड्रोजन से चलने वाली 50 मोटर साइकिलों के प्रदर्शन और फील्ड परीक्षण के लिए एक प्रायोगिक परियोजना शुरू की है। मंत्रालय हाइड्रोजन ईंधन के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास परियोजनाएँ लागू करने के लिए वित्तीय समर्थन देकर औद्योगिक भागीदारी को प्रोत्साहन दे रहा है।

विद्युत वाहन (Battery Operated Vehicles)

विद्युत वाहनों को पेट्रोल या डीजल इंजन के स्थान पर एक इलेक्ट्रिक मोटर द्वारा चलाया जाता है। मोटर को रीचार्जेबल बैटरियों या फ्यूल सेलों से बिजली मिलती है। विद्युत वाहन पर्यावरण की दृष्टि से स्वच्छ, शोर मुक्त, ऊर्जा की दृष्टि से कार्यक्षम, स्थायी यातायात की व्यवस्था कर सकते हैं। बैटरी संचालित विद्युत वाहनों का एक महत्त्वपूर्ण घटक रिचार्जेबल बैटरियाँ है।

मंत्रालय राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में नोडल एजेंसियों और विभागों के जरिए बैटरी चलित वाहनों के प्रदर्शन कार्यक्रम को लागू कर रहा है। इस कार्यक्रम के तहत बैटरी से चलने वाले दस सीटों और अधिक यात्री ढोने वाले देश में ही तैयार इलेक्ट्रिक वाहनों पर सब्सिडी (बिक्री कर, उत्पाद शुल्क और इस तरह के अन्य शुल्कों को छोड़कर वाहन की लागत पर 50 प्रतिशत) देने का प्रावधान है।

टिप्पणी

मंत्रालय ने विद्युत वाहन चलाने के लिए आधुनिक, उच्च ऊर्जा संघनित बैटरियों और फ्यूल सेलों के विकास के लिए, अनुसंधान और विकास परियोजनाएँ मंजूर की हैं। मंत्रालय बैटरी संचालित साइकिल रिक्शा, तिपहिया वाहनों के विकास और यात्री कारों के व्यापक परीक्षण की योजनाओं को भी सहायता दे रहा है।

मंत्रालय वास्तविक प्रदर्शन, मूल्यांकन और जागरूकता बढ़ाने के लिए आगरा, दिल्ली और देश के अन्य शहरों में बैटरी से चलने वाले तीन सौ तिपहिया वाहनों के प्रदर्शन के लिए एक पायलट परियोजना को भी समर्थन दे रहा है। भेल, स्कूटर्स इंडिया लिमिटेड सहित कुछ कंपनियाँ इलेक्ट्रिक वाहनों का निर्माण और आपूर्ति कर रही है।

भूतापीय ऊर्जा (Geothermal Energy)

भूतापीय ऊर्जा धरती के भीतरी भाग में ताप ऊर्जा का एक विस्तृत भंडार है। भारतीय भू–सर्वेक्षण विभाग द्वारा देश भर में 340 भू–तापीय गरम झरनों की पहचान कर ली गई है। छोटे पैमाने पर विद्युत उत्पादन और ताप संबंधी उपयोगों के लिए भू–तापीय ऊर्जा के इस्तेमाल का प्रदर्शन किया जा रहा है। हाल ही में छत्तीसगढ़ के तत्तापानी भूतापीय क्षेत्रों में 300 किलोवाट क्षमता का भू–तापीय बिजली संयंत्र लगाने की मंजूरी एन. एच. पी. सी. को दी गई। जम्मू–कश्मीर के पूगा भूतापीय क्षेत्रों में जलाशय की क्षमता का मूल्यांकन करने और बिजली संयंत्र लगाने की सम्भाव्यता की जाँच का काम राष्ट्रीय भू–वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद द्वारा किया जा रहा है।

अन्य स्थलों का विकास थर्मल प्रयोग के लिए किया जा सकता है। स्थलों के भू–ताप विशेषताओं के मूल्यांकन के बाद मंत्रालय इन स्थलों को बिजली उत्पादन के तौर पर विकसित करने की योजना बना रहा है। इस तरह के भू–ताप अनुसंधान और खोज देश के अन्य संभावित भू–ताप क्षेत्रों में भी किये जाने का प्रस्ताव है।

समुद्री ऊर्जा (Tidal Energy)

उष्णकटिबंधीय देश होने के नाते भारत में समुद्री ऊर्जा की अपार संभावनाएँ हैं। समुद्री ऊर्जा के विभिन्न रूपों में समुद्री लहरें, समुद्री ताप ऊर्जा परिवर्तन, ज्वार और भाटा शामिल हैं।

समुद्री ताप और ज्वार–भाटे से पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए बिजली का उत्पादन किया जा सकता है। हालांकि वर्तमान में विकसित तकनीक से बड़े पैमाने पर विकास के लिए सिर्फ ज्वार का इस्तेमाल किया जा सकता है। एक तकनीकी–आर्थिक व्यवहार्यता रिपोर्ट के आधार पर पश्चिम बंगाल के सुंदरवन क्षेत्र में दुर्गादुआनी क्रीक में तीन मेगावाट की एक छोटी ज्वार विद्युत परियोजना स्थापित करने के लिए विस्तृत रिपोर्ट तैयार की जा रही है। बंगलोर के मैसर्स मेकॉन लिमिटेड द्वारा भाटा ऊर्जा तकनीक और खोज के अन्य क्षेत्रों पर आगे के अनुसंधान के लिए स्थिति–रिपोर्ट तैयार की जा रही है।

जैव इंधन (Bio Fuel)

आयातित पेट्रोलियम उत्पादों के संरक्षण और पर्यावरण के मुद्दों को हल करने के लिए विश्व स्तर पर अनेक उपाय किये गये हैं। ऊर्जा के लिए विश्वव्यापी माँग और पर्यावरण सुरक्षा के प्रति चिंता को देखते हुए वाहनों और डीजल इंजनों में पेट्रोल और डीजल के स्थान पर वैकल्पिक ईंधन की खोज की आवश्यकता जताई जा रही है। वैकल्पिक ईंधन के विकास के लिए देश में अनेक विकासात्मक गतिविधियाँ चलाई जा रही हैं।

टिप्पणी

विभिन्न वनस्पति तेलों को जैव डीजल में परिवर्तित करने के लिए टेक्नोलॉजी के विकास के वास्ते देश में अनेक अनुसंधान और विकास परियोजनाएँ चलाई गई हैं। मंत्रालय द्वारा वित्त पोषित अनेक परियोजनाओं के तहत् देश में पेट्रोल और डीजल इथानोल मिलाकर उसके परीक्षण की अनेक योजनाएँ भी शुरू की गई। परिवहन क्षेत्र में इन जैव ईंधन के इस्तेमाल के बारे में एक संचालनात्मक कार्यक्रम शुरू करने की कोशिश भी की जा रही है।

अपारंपरिक ऊर्जा स्त्रोत मंत्रालय ईंधन प्रकोष्ठ, हाइड्रोजन ऊर्जा इलेक्ट्रिक वाहन, भू–ताप ऊर्जा और ज्वार ऊर्जा जैसी नई और उभरती हुई ऊर्जा टेक्नोलॉजी के बारे में कार्यक्रम और परियोजनाएँ लागू कर रहा है। इन प्रयासों में अनेक अनुसंधान और शिक्षण संस्थान, विश्वविद्यालय, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान केन्द्र प्रयोगशालाएँ और उद्योग शामिल हैं।

पुनरोपयोगी ऊर्जा कार्यक्रमों को नई दिशा
(New Directions to Non-conventional Programme)

पुनरोपयोगी ऊर्जा स्त्रोतों से ऊर्जा प्राप्ति के लिए निजी/विदेशी प्रत्यक्ष पूँजी निवेश को बढ़ावा देने के लिए कई नीतिगत पहल की गई, जिनमें मंत्रालय द्वारा लागू किये जा रहे व्यापक कार्यक्रमों के तहत कर संबंधी एवं वित्तीय प्रोत्साहन का प्रावधान तथा पुनरोपयोगी ऊर्जा परियोजनाओं में सीधी विदेशी पूँजी निवेश सहित निजी निवेश के लिए प्रक्रिया को सरल बनाना शामिल है। वित्तीय प्रोत्साहनों में परियोजना की स्थापना से पहले वर्ष में शत् प्रतिशत् अवमूल्यन, उत्पादन शुल्क एवं बिक्री कर माफ तथा पुनरोपयोगी ऊर्जा परियोजनाओं में प्रयुक्त होने वाली सामग्री, कलपुर्जों और उपकरणों के आयात पर रियायती सीमा शुल्क शामिल हैं। इसके अलावा सरकार मंत्रालय से वित्तीय प्रोत्साहन जैसे – ब्याज सब्सिडी और पूँजी सब्सिडी तथा इरेडा से रियायती ऋण उपलब्ध कराती है। विभिन्न पुनरोपयोगी ऊर्जा परियोजनाओं के लिए अब तक चौदह राज्यों ने ऐसी नीतियों की घोषणा की है।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक वर्ष 2012 में देश में कुल स्थापित विद्युत उत्पादन क्षमता का लगभग 10 प्रतिशत पुनरोपयोगी ऊर्जा पर आधारित होने की संभावना है। इस क्षेत्र में त्वरित विकास के लिए एक व्यापक पुनरोपयोगी ऊर्जा नीति तैयार की जा रही है। इस नीति के प्रमुख उद्देश्य हैं – (1) न्यूनतम ग्रामीण ऊर्जा की जरूरत को पूरा करना, (2) शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि, उद्योग, व्यवसाय और घरेलू कार्यों के लिए विकेंद्रीकृत ऑफ ग्रिड बिजली की आपूर्ति करना और (3) ग्रिड की गुणवत्ता वाली बिजली का उत्पादन और आपूर्ति सुनिश्चित करना।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

6. दसवीं पंचवर्षीय योजना में देश में वन क्षेत्र कितने प्रतिशत करने का लक्ष्य है?
   (अ) 25% (ब) 20%
   (स) 19% (द) 22%
7. भारतवर्ष में शीतोष्ण कटिबंधीय वन कितने प्रतिशत भाग पर मिलते है?
   (अ) 5% (ब) 7%
   (स) 10% (द) 12%

टिप्पणी

8. जिन वनों से मनुष्य को लकड़ी काटने और पशुओं के चराने की अनुमति दी जाती है, उन्हे क्या कहते हैं?
   (अ) सुरक्षित वन (ब) संरक्षित वन
   (स) सामुदायिक वन (द) राजकीय वन
9. स्वामित्व के आधार पर वनों का वर्गीकरण कितने वर्गों में किया गया है?
   (अ) चार (ब) तीन
   (स) पाँच (द) छ
10. मानसूनी वनों की सबसे कठोर कौन लकड़ी है?
   (अ) साल (ब) शीशम
   (स) सागवान (द) चंदन

2.7 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (ब)
2. (ब)
3. (ब)
4. (ब)
5. (अ)
6. (अ)
7. (ब)
8. (ब)
9. (ब)
10. (ब)

2.8 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में प्रमुख संसाधनों का वर्णन कर उनकी वर्तमान स्थिती तथा उनकी उपयोगिता से परिचय कराया गया जिससे विद्यार्थी प्रमुख प्राकृतिक संसाधनों से अवगत हो तथा समयानुसार उनका उपयोग कर सकें।

2.9 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- संसाधन
- संरक्षण
- वितरण
- विदोहन
- अन्तर्राष्ट्रीय आयात और निर्यात

2.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self-Assessment Questions and Exercises)

टिप्पणी

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. प्रशासनिक दृष्टिकोण से वनों का वर्गीकरण कीजिए।
2. अर्द्ध उष्ण कटिबंधीय वनों का वर्णन कीजिए।
3. उष्ण कटिबंधीय शुष्क वनों का वर्णन कीजिए।
4. राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में वनों का महत्त्व बताइए।
5. वनों से प्राप्त गौण उपजों का वर्णन कीजिए।
6. भारत सरकार की वन नीति का वर्णन कीजिए।
7. कोयले के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
8. बिहार और झारखंड के कोयला उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
9. मध्य प्रदेश के कोयला उत्पादक क्षेत्रों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
10. असम के खनिज तेल उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
11. खनिज तेल शोधन शालाओं के नाम बताइए।
12. प्राकृतिक गैस का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
13. जल विद्युत शक्ति का महत्त्व बताइए।
14. पवन ऊर्जा कार्यक्रम या सौर ऊर्जा कार्यक्रम का वर्णन कीजिए।
15. गैर पारंपरिक ऊर्जा स्त्रोतों की नई प्रौद्योगिकी का वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. भारत में कोयला के उत्पादन, वितरण का भौगोलिक विवरण कीजिए।
2. भारत में खनिज तेल के उत्पादन एवं व्यापार का विवरण दीजिए।
3. भारत में अणु शक्ति के उत्पादन के विकास को बताइए।
4. भारत में जल शक्ति का महत्त्च, जल शक्ति के क्षेत्र और उसके उपयोग की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।
5. भारत में जल विद्युत विकास का वर्णन कीजिए।
6. भारत में अणु शक्ति के विकास पर एक भौगोलिक टिप्पणी लिखिए।
7. ऊर्जा के गैर–परंपरागत साधनों का वर्णन कीजिए।
8. भारत में शक्ति के साधनों के विकास पर एक लेख लिखिए।
9. भारत में वनारोपण के आर्थिक महत्त्व का मूल्यांकन कीजिए।
10. औद्योगिक संसाधन के रूप में भारतीय वनों पर व्याख्यात्मक टिप्पणी लिखिए।
11. भारतीय वनों का वर्गीकरण कीजिए। व्याख्या कीजिए कि वर्षा का प्रभाव अधिक महत्त्वपूर्ण होता है।
12. भारत के सदाबहार वन प्रदेशों का वर्णन कीजिए।
13. भारत की वनस्पति का विवरण दीजिए।

14. भारतीय वनों के वर्गीकरण के बारे में लिखिए। इनके संरक्षण की क्यों विशेष आवश्यकता है?
15. भारत को वनस्पति प्रदेशों में विभाजित कीजिए तथा उनके वितरण एवं विशेषताओं की विवेचना कीजिए।
16. भारत के वन संसाधनों का परीक्षण कीजिए तथा वनों के प्रबंध एवं विकास कार्यों की विवेचना कीजिए।

टिप्पणी

2.11 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. बन्सल सुरेश चंद्र 1996 भारत का बृहत् भुगोल, मिनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
2. अहमद ई. 1992 जीओग्राफी ऑफ हिमालया, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना।
3. चौहान व्ही.एस. एवं गौतम अल्का 2001 भारतवर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ।
4. दत्त रुद्र एवं सुंदरम के.पी.एम. 2005 भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चांद ॲन्ड कम्पनी लिमिटेड न्यू दिल्ली।
5. गौतम अल्का 2007 भारत का बृहत् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, अलाहाबाद।
6. गील के.एस 1993 इव्हॉल्यूशन ऑफ द इंडियन इकॉनॉमी एन.सी.आर.टी. ई. न्यू दिल्ली।
7. हुसैन माजिद एवं सिंह. रमेश 2009 भारत का भूगोल, Tata McGraw-Hill Publishing Co. New Delhi.
8. कुमार प्रमिला 1996 मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
9. मामोरिया चतुर्भुज 1996 आधुनिक भारत का बृहत् भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन आग्रा।
10. मिश्र जगदिश प्रसाद 1997 भारत का भूगोल, विद्यासागर अलाहाबाद।
11. ओझा शिवसागर 2001 भारत का भूगोल, भौगोलिक अध्ययन संस्था अलाहाबाद।
12. पालिवाल कमलेश 2000 इकॉनॉमी जीओग्राफी इंडिया ए किताब महल अलाहाबाद।
13. प्रकाश बी.एस 1990 इंडियाः इकॉनॉमी जीओग्राफी एन.सी.ई.आर.टी. न्यू दिल्ली।
14. राव बी.पी. 1995 भारतः एक भौगोलिक समिक्षा, वसुंधरा प्रकाशन गोरखपुर।
15. सिंह गोपाल भारत का भूगोल, आत्माराम ॲन्ड सन्स दिल्ली।
16. तिवारी विजय कुमार 1997 भारत का बृहत् भूगोल भाग 1 एवं 2, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, मुंबई।
17. वर्मा रामविलास भारत का भौगोलिक विवेचन, किताब घर कानपुर।
18. गर्व्हमेंट ऑफ इंडिया 2000 नॅशनल पोल्यूशन पॉलिसी 2000, प्लानिंग कमिशन ऑफ इंडिया न्यू दिल्ली।
19. चंदन आ.सी 1980 इंट्रोडक्शन टू पॉप्यूलेशन जीओग्राफी, कल्याणी पब्लिशर्स न्यू दिल्ली।
20. वर्मा मित्रा वेद 1964, एज्युकेशन इन एशियन इंडिया, आर्या बुक डेपो न्यू दिल्ली।

Annexure – 1

टिप्पणी

Surface & Ground Water Resources in River Basins

River basin	Catchment Area (Sq.km)	Mean annual flow (BCM)	Utilizable flow (BCM)	Storage		Replenish-able ground water (BCM)
				Volume (BCM)	% of Annual flow	
Indus	321289	73.31	46.0	16.28	22.21	31.23
Ganga	861452	525.02	250.0	42.06	8.01	209.85
Brahmaputra	194413	537.24	24.0	2.36	0.40	
Barak & others	41723	48.36				
Godavari	312812	110.54	76.3	25.12	22.72	37.50
Krishna	258948	78.12	58.0	41.80	53.51	26.65
Cauvery	81155	21.36	19.0	8.59	40.22	10.15
Pennar	55213	6.32	6.9	2.64	41.77	5.10
East flowing: between Mahanadi and Pennar	86643	22.52	13.1	1.42	6.31	14.17
East flowing: between Pennar and Kanyakumari	100139	16.46	16.5	1.83	11.12	18.11
Mahanadi	141589	66.88	50.0	12.33	18.44	17.72
Brahmani-Baitarni	51822	28.48	18.3	4.64	16.29	6.70
Subernarekha	29196	12.37	6.8	0.67	5.42	5.13
Sabarmati	21674	3.81	1.9	1.30	34.12	2.98
Mahi	34842	11.02	3.1	4.72	42.83	3.12
West flowing: Kachchh, Saurashtra and Luni	321851	15.10	15.0	4.72	31.26	11.90
Narmada	98796	45.64	34.5	16.97	37.18	12.90
Tapi	65145	14.88	14.5	9.40	63.17	7.36
West flowing: Tapi to Tadri	55940	87.41	11.9	11.26	12.88	12.38
West flowing: Tadri to Kanyakumari	56177	113.5	24.3	10.23	9.01	-
Minor rivers draining into Bangladesh and Myanmar	36202	31.0	-	0.31	1.00	0.40
Total	**1808144**	**1869.35**	**690.1**	**218.90**	**11.71**	**432.64**

Source: *Central Water Commission, Ministry of Water Resources*

Water Resources in India, Indian National Committee on Irrigation and Drainage

Annexure – 2

टिप्पणी

State wise Ultimate Irrigation Potential

(Unit: '000 Hectares)

Sl.	State/UT	Major & Medium Surface Water	Minor Irrigation		Total
			Surface Water	Ground Water	
1	2	3	4	5	7
1.	Andhra Pradesh	5000	2300	3960	11260
2.	Arunanchal Pradesh	0	150	18	168
3.	Assam	970	1000	900	2870
4.	Bihar	5224	1544	4120	10888
5.	Chhatisgarh	1147	81	490	1718
6.	Goa	62	25	-	87
7.	Gujrat	3000	347	2756	6103
8.	Haryana	3000	50	1462	4512
9.	Himachal Pradesh	50	235	68	353
10.	Jammu & Kashmir	250	400	708	1358
11.	Jharkhand	1276	354	830	2460
12.	Karnataka	2500	900	2574	5974
13.	Kerala	1000	800	879	2679
14.	Madhya Pradesh	4853	2111	9250	16214
15.	Maharashtra	4100	1200	3652	8952
16.	Manipur	135	100	369	604
17.	Meghalaya	20	85	63	168
18.	Mizoram	0	65	5	70
19.	Nagaland	10	70	5	85
20.	Orissa	3600	1000	4203	8803
21	Punjab	3000	50	2917	5967
22.	Rajasthan	2750	600	1778	5128
23.	Sikkim	20	50	0	70
24.	Tamil Nadu	1500	1200	2832	5532
25	Tripura	100	100	81	281
26.	Uttar Pradesh	12154	1186	16295	29635
27.	Uttrakhand	346	14	504	864
28.	West Bengal	2300	1300	3318	6918
Total States		58367	17317	64066	139750
Total UTs		98	20	26	144
Grand Total		**58465**	**17337**	**64092**	**139894**

Source: *Central Water Commission, Ministry of Water Resources*

इकाई 3 भारत का सांस्कृतिक भू – दृश्य (Cultural Landscape of India)

टिप्पणी

संरचना (Structure)

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 जनसंख्या
3.3 भारतीय अर्थव्यवस्था – कृषि विशेषताएँ
  3.3.1 गेहूँ
  3.3.2 चावल
  3.3.3 कपास
  3.3.4 रबड़
  3.3.5 गन्ना
3.4 औद्योगिक विकास
  3.4.1 लोहा एवं इस्पात उद्योग
  3.4.2 वस्त्र उद्योग
3.5 अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार
3.6 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
3.7 सारांश
3.8 मुख्य शब्दावली
3.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.10 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय (Introduction)

किसी भी राष्ट्र का विकास उसके प्राकृतिक और मानवी संसाधनों पर निर्भर करता है। मानव ही प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करते हुए देश के आर्थिक विकास में योगदान देता है। राष्ट्र की प्रगति प्राकृतिक और मानवी संसाधनों के उचित अनुपात पर बहुत निर्भर करती है। संसाधनों की अपेक्षा यदि जनसंख्या का घनत्व अधिक हो तो देश के आर्थिक विकास की दर धीमी होती है। अतः जनसंख्या का क्षेत्रीय वितरण, घनत्व एवं संरचना की जानकारी आवश्यक है।

3.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों को जनांकिकीय विशेषताओं से अवगत कराना है।

3.2 जनसंख्या (Population)

भारत का क्षेत्रफल विश्व का 2.4 प्रतिशत है परंतु यहाँ विश्व की 17.5 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। चीन के बाद भारत विश्व का अधिकतम आबादी वाला देश है। इन दोनों ही देशों की जनसंख्या अनुकूलतम सीमा को पार करके विस्फोटक

टिप्पणी

स्थिति पर पहुँच गई है। एक ओर रूस और फ्रांस जनसंख्या में विस्तारवादी नीति अपना रहे हैं तो भारत और चीन जैसे सघन आबादीवाले कृषि प्रधान देश जनसंख्या की निषेधात्मक एवं प्रतिबंधात्मक नीति अपना रहे हैं। भारत जैसे विकासोन्मुख देश के लिए बढ़ती हुई आबादी बेरोजगारी, भुखमरी, निम्न जीवन स्तर जैसी देश–व्यापी समस्याओं की जननी है।

जनसंख्या वितरण को नियन्त्रित करने वाले कारक (Factors Controlling Population Distribution)

आर्थिक विकास व्यवस्था तकनीकी विकास, सामाजिक संगठन, सरकारी नीति आदिकारक जनसंख्या वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जनसंख्या वितरण को प्रभावित करनेवाले कारक निम्नलिखित है –

1. जलवायु – जलवायु मानव बसाव को नियंत्रित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारक है। अति शीतल, अति उष्ण तथा अति आर्द्र जलवायु मानव निवास तथा उसके क्रिया–कलापों के लिए अनुपयुक्त होती है। इसी कारण हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र, राजस्थान का शुष्क मरुस्थल एवं पूर्वी हिमालय बहुत कम आबाद है। तराई के क्षेत्र, अस्वास्थ्यकर जलवायु के कारण कम आबाद है।

2. धरातल – जटिल भू–आकृति वाले क्षेत्रों में अल्प जनसंख्या मिलती है। विषम् धरातल वाले क्षेत्रों में कृषि योग्य भूमि की कमी, कृषि कार्यों में कठिनाई, परिवहन की बाधा तथा एकाकीपन के कारण आबादी कम पाई जाती है। इसलिए ऊबड़–खाबड़ पर्वतीय एवं पठारी भागों में जनसंख्या का संकेन्द्रण कम मिलता है।

3. जल प्राप्ति – जल मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं में सबसे महत्वपूर्ण है। जल मानव जीवन और क्रिया कलापों की आधार है। जलापूर्ति वर्षा जल, नदी, भूमिगत जल एवं सिंचाई के साधनों द्वारा होती है। उत्तरी भारत में (असम के अपवाद सहित) वर्षा की मात्रा के साथ जनसंख्या का घनत्व पूर्व से पश्चिम की ओर घटता जाता है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अपेक्षाकृत शुष्क प्रदेशों में वर्षा की कमी की पूर्ति जल तल धरातल के निकट प्राप्त होने के कारण हो जाती है। राजस्थान के शुष्क उत्तर–पश्चिमी भाग में नहर द्वारा जलापूर्ति होने के कारण अपेक्षाकृत घनी आबादी मिलती है। नदियाँ ही जल प्राप्ति का सबसे महत्वपूर्ण साधन है। इसके जल का उपयोग सिंचाई, पेय जल, औद्योगिक कार्यो, जल विद्युत उत्पादन, परिवहन आदि अनेक कार्यों में होता है। यही कारण है प्राचीन काल से ही नदी घाटियों और डेल्टाओ में घनी जनसंख्या का जमाव रहता है।

4. खनिज संसाधन – भौतिक कारकों के प्रतिकूल होने पर भी आर्थिक संसाधन सुलभ होने पर जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है। खनिज सम्पन्न क्षेत्रों में औद्योगिक एवं आर्थिक विकास की उत्तम संभावनाएँ मनुष्य के लिए आकर्षक होती है। इसी कारण झारखंड में छोटा नागपुर का पठार, कर्नाटक में कोलार क्षेत्र घनी जनसंख्या से आबाद है।

5. परिवहन की सुविधा – मैदानी भागों में पर्वतों तथा पठारों की अपेक्षा परिवहन की सुविधायें मिलती हैं। इसलिए मैदान अधिक सघन आबाद होते हैं। भारत में जी.टी. रोड के किनारे अधिक आबादी मिलती है।

टिप्पणी

6. सामाजिक – मनोवैज्ञानिक कारक – जनसंख्या के संकेन्द्रण में सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कारकों की भी निश्चित भूमिका होती है। पर्वतीय तथा आदिवासी क्षेत्रों में सांस्कृतिक कारकों के अलगाव की प्रवृत्ति तथा धार्मिक कारकों से जन्मभूमि के प्रति प्रेम के कारण स्थानान्तरण पर प्रतिबंध मिलता है। दक्षिणी तथा पूर्वी भारत (बिहार, बंगाल, उड़ीसा, झारखंड, तामिलनाडू, आन्ध्र प्रदेश) में गेहूँ की अपेक्षा चावल अधिक प्रिय आहार है। इस विशेष अभिरुचि का सम्बन्ध इन प्रदेशों में उच्च प्रजनन से है।

7. राजनीतिक एवं आर्थिक कारक – राजनीतिक उथल–पुथल, असंतोष, आदि राजनीतिक कारक तथा औद्योगिकरण, नगरीकरण आदि आर्थिक कारक भी जनसंख्या वितरण की क्षेत्रीय भिन्नताओं के लिए उत्तरदायी है। सीमावर्ती राज्यों में आंतकवाद के कारण स्थानान्तरण की दर तीव्र हुई है।

भारत में जनसंख्या वितरण प्रारूप
(Distribution Pattern of Population in India)

भारत का क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किलोमीटर है तथा इसकी जनसंख्या 2011 की जनगणना के अन्तिम आँकडों के अनुसार 121.5 करोड़ हो गई जबकि 2001 की जनगणना के अनुसार 102.87 करोड़ थी। क्षेत्रफल की दृष्टि से एशिया में भारत का चौथा स्थान है, जबकि जनसंख्या की दृष्टि से दूसरा स्थान है। सन् 1991–2001 की अवधि में भारत की जनसंख्या में 18.01 करोड़ की वृद्धि हुई तथा जनसंख्या की यह वृद्धि 1.95% प्रति वर्ष रही। जबकि सन् 1981–1991 के दशक में यह वार्षिक वृद्धी दर 2.14% प्रतिशत थी। सन् 1991 और 2001 की जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर 21.34% प्रतिशत हो गई जबकि 1981–1991 के दर्शक में यह वृद्धि दर 23.86% प्रतिशत थी। इससे स्पष्ट है कि भारतवर्ष में जनसंख्या वृद्धि दर में गिरावट का सिलसिला शुरू हो चुका है। परन्तु भारत विश्व का दूसरा बड़ा देश है जिसकी आबादी एक अरब को पार कर गई है। निम्नलिखित सारणी से भारत में जनसंख्या का वितरण स्पष्ट होता है।

सारणी क्र. 3.1

भारत में राज्यवार जनसंख्या वितरण, वर्ष 2011

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	जनसंख्या (करोड़ में)	कुल जनसंख्या का %
1. उत्तर प्रदेश	19.98	16.5
2. महाराष्ट्र	11.23	9.3
3. बिहार	10.40	8.6
4. पश्चिम बंगाल	9.13	7.5
5. आन्ध्र प्रदेश एवं तेलंगाना	8.45	7.0
6. मध्य प्रदेश	7.25	6.0
7. तमिलनाडु	7.21	6.0
8. राजस्थान	6.85	5.7
9. कर्नाटक	6.10	5.0

टिप्पणी

10. गुजरात	6.03	5.0
11. ओडिशा	4.19	3.5
12. केरल	3.34	2.8
13. झारखण्ड	3.29	2.7
14. असम	3.11	2.6
15. पंजाब	2.77	2.3
16. छत्तीसगढ़	2.55	2.1
17. हरियाणा	2.53	2.1
18. दिल्ली	1.67	1.4
19. जम्मू–कश्मीर	1.25	1.0
20. उत्तराखण्ड	1.0	0.8
21. हिमाचल प्रदेश	0.68	0.56
22. त्रिपुरा	0.367	0.3
23. मेघालय	0.296	0.2
24. मणिपुर	0.25	0.2
25. नागालैण्ड	0.19	0.16
26. गोवा	0.145	0.12
27. अरुणाचल प्रदेश	0.13	0.11
28. पुडुच्चेरी	0.124	0.10
केन्द्रशासित प्रदेश		
29. मिजोरम	0.109	0.09
30. चण्डीगढ़	0.10	0.09
31. सिक्किम	0.061	0.05
32. अण्डमान एवं निकोबार	0.038	0.03
33. दादरा नगर हवेली	0.034	0.03
34. दमन दीव	0.02	0.02
35. लक्षद्वीप	0.006	0.01
भारत	121.05	100.00

स्रोतः भारत की जनगणना के अन्तिम आँकड़ें.

वर्ष 1891 से 1921 तक के तीस वर्षों में केवल 1.20 करोड़ की वृद्धि हुई किन्तु वर्ष 1921 के उपरान्त जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि होना प्रारम्भ हो गया। अतः वर्ष 1921 का Great Divide की संज्ञा दी गयी है क्योंकि जहाँ वर्ष 1921 से 1951 के मध्य यह वृद्धि 11 करोड़ रही, वहीं स्वतन्त्रता के पश्चात् वर्ष 1951 से होने वाली वृद्धि दर ने पूर्व सभी अनुमानों को पीछे छोड़ दिया। वर्ष 1951 और वर्ष 1961 के बीच 7.8 करोड़ की वृद्धि हुई। वर्ष 1961 से 1971 के बीच वृद्धि की मात्रा 10.18 करोड़ एवं 1971

टिप्पणी

से 1981 में मध्य 13.5 करोड़ वृद्धि अनुभव की गई। वर्ष 1981–91 तथा वर्ष 1991–2001 के बीच यह वृद्धि क्रमशः 16.3 तथा 18.23 करोड़ हुई जो कि अपने आप में एक रिकॉर्ड है। 2001 में देश की जनसंख्या 102.87 करोड़ थी। वर्तमान में 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 121.05 करोड़ है।

सारणी क्र. 3.2

भारत में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर 1901–2011

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दशाब्दी अन्तर (करोड़ में)	प्रति दशक वृद्धि दर (%)
1901	23.84	——	——
1911	25.21	1.36	+5.75
1921	25.13	–0.07	–0.31
1931	27.90	2.76	+11.60
1941	31.87	3.96	+14.22
1951	36.11	4.24	+13.31
1961	43.92	7.76	+21.51
1971	54.82	10.89	+24.80
1981	68.33	13.52	+24.66
1991	84.63	16.30	+23.85
2001	102.86	18.23	+21.54
2011	121.05	18.18	+17.7

वर्ष 1971–81 में वृद्धि की दर 24.66 तथा औसत वार्षिक दर 2.2% थी, जबकि वर्ष 1981–91 के मध्य पहली बार यह वृद्धि दर घटकर 23.85 प्रतिशत रह गयी। जबकि 1961–71 में वृद्धि की यह दर 24.8% तथा 1951–61 में 21.5% थी। सन् 1901 से 1921 तक भारत में अकाल, महामारी, प्लेग, इन्फ्लुएंजा, हैजा आदि बीमारियों, रजवाड़ों में होने वाले युद्ध एवं प्रथम विश्व–युद्ध के कारण जनसंख्या में अपार क्षति होने के कारण जनसंख्या में ऋणात्मक वृद्धि अनुभव की गई। सन् 1921 से 1951 की अवधि में तथा सन् 1943 के बंगाल के भीषण अकाल को छोड़कर अन्य कोई देशव्यापी महामारी नहीं फैली। सन् 1951 के बाद देश के विभिन्न भागों में यातायात के साधनों और सिंचाई के क्षेत्रफल में वृद्धि, स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं में सुधार और विकास, अनुशासित एवं विश्वसनीय प्रशासन तथा कृषि और औद्योगिक क्षेत्र में आशाजनक विकास के फलस्वरूप जीविकोपार्जन के साधनों में वृद्धि हुई। फलतः जनसंख्या में भी वृद्धि हुई। सन् 1951 से 2011 के बीच देश में नियोजित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विकास हुआ और जनसंख्या में 84.95 करोड़ की विशाल वृद्धि हुई।

जनसंख्या वृद्धि की अवस्थाएँ (Stages of Population Growth)

1. धीमी वृद्धि की अवधि (1901–1921) – 1921 से पूर्व जनसंख्या की वृद्धि धीमी रही क्योंकि इस अवधि में जन्म एवं मृत्यु दर दोनों उच्च थीं। मृत्यु–दर उच्च होने का

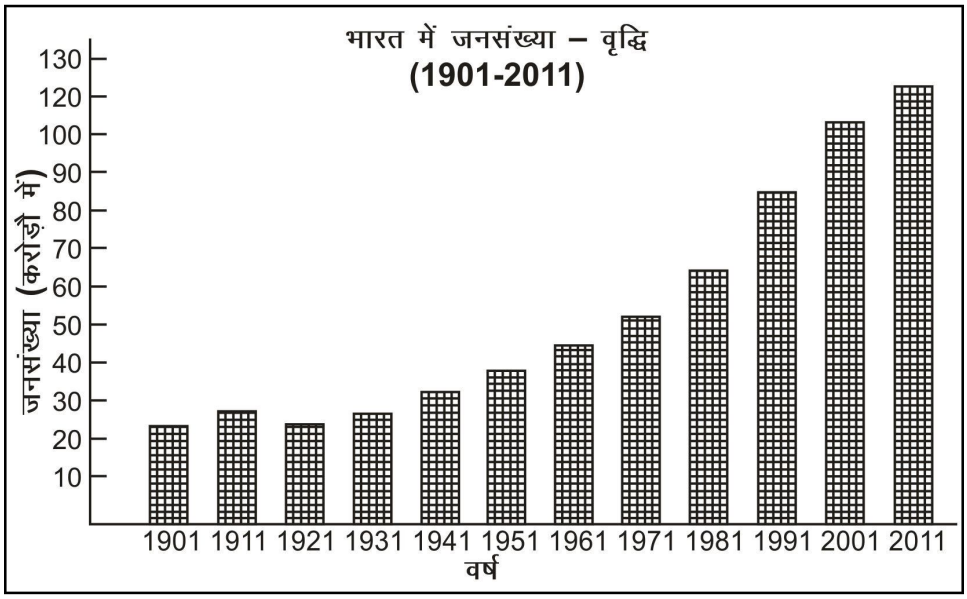
टिप्पणी

प्रमुख कारण चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, महामारी एवं विश्व युद्ध था।

2. निरन्तर वृद्धि की अवधि (1921–1951) – इस अवधि में लगातार वृद्धि हुई, किन्तु मन्द गति से चिकित्सा सुविधाओं की उपलब्धता, कृषि और औद्योगिक विकास तथा परिवहन सुविधाओं के कारण मृत्यु–दर में कमी आयी।

3. तीव्र वृद्धि की अवधि (1951–1981) – इस अवधि में जनसंख्या लगभग दो गुनी हो गयी। पंचवर्षीय योजनाओं तथा चिकित्सा सुविधाओं में सुधार के कारण मृत्यु–दर मे गिरावट आयी। अतः जनसंख्या में वृद्धि हुई।

4. घटती वृद्धि की अवधि – 1981 के बाद भारत में जनसंख्या में वृद्धि तो हुई किन्तु वृद्धि–दर में क्रमिक ऱ्हास हुआ।



चित्र क्र. 3.1: भारत में जनसंख्या वृद्धि

भारत के तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण

(Causes of Rapid Population Growth in India)

1. निम्न मृत्यु–दर – सन् 1921 के पश्चात् मृत्यु–इर में तेजी से गिरावट आती रही, जबकि जन्म–दर में 1961 के पश्चात् ही स्पष्टतः कमी हुई। वर्ष 1981–91 की अवधि में प्रति 1,000 व्यक्तियों के पीछे जन्म–दर 49.2 तथा मृत्यु–दर 41.2 थी। मलेरिया (जिसके कारण पहले प्रति वर्ष लगभग 20 लाख व्यक्ति कालकवलित हो जाते थे), हैजा, इन्फ्लुएंजा आदि महामारियों पर पूर्ण नियन्त्रण, पीने योग्य जल की किस्म में सुधार, स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार, नयी औषधियों का विकास तथा एण्टीबायोटिक दवाइयों का बढ़ता हुआ उपयोग, स्वच्छता में वृद्धि, खाद्यान्नों के वितरण में सुधार तथा अकालों पर रोकथाम के कारण मृत्यु–दर में तेजी से गिरावट आना तथा जन्म–दर में कोई विशेष परिवर्तन न होना जनसंख्या की वृद्धि के मुख्य कारण रहे हैं।

टिप्पणी

2. उच्च जन्म दर – भारत में जन्म–दर अधिक है। सन् 1971 में यह 41.4 प्रति 1,000 और सन् 1981 में 33.8 रही, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, जापान, फ्रांस और ऑस्ट्रेलिया में यह दर 13 से 16 प्रति 1,000 है। भारत में जन्म–दर ऊँची होने का प्रमुख कारण जलवायु का गर्म होना है। यहाँ लड़के और लड़कियाँ शीघ्र वयस्क हो जाते हैं। अतः छोटी अवस्था में ही सन्तानोत्पत्ति होने लगती है।

भारतीय स्त्री अपने प्रजनन काल (15 से 45 वर्ष की आयु तक) में 6–7 बच्चों की माँ बनती है, जबकि जापानी स्त्री 4–5, अमेरिकी 2 बच्चों की माँ बनती है। दूसरे शब्दों में, भारतीय स्त्रियों की प्रजनन क्षमता अधिक है। हिन्दू स्त्रियों की अपेक्षा मुस्लिम स्त्रियों के बच्चे अधिक होते हैं – ये क्रमशः 7 और 8 (कानपुर में), 4–5 और 4–6 (मध्य प्रदेश) में हैं।

3. विवाह की अनिवार्यता – भारत में विवाह सार्वभौमिक है अर्थात् सभी व्यक्ति चाहे वे अपाहिज, रोगी अथवा दरिद्र हों तो भी विवाह करते हैं। इसके साथ ही सन्तान उत्पन्न करना एक धार्मिक कार्य माना जाता है। निःसन्तान व्यक्तियों को प्रायः अनादर की दृष्टि से देखा जाता है।

सामान्यतः यदि लड़कियों का विवाह 18 से 21 वर्ष के मध्य किया जाये तो उसके 4 से भी कम बच्चे सम्भावित रह जाते हैं। इसलिए सरकार ने वर्ष 1976 में 'शारदा एक्ट' में संशोधन कर विवाह की उम्र में भी वृद्धि कर दी है और अब यह लड़कियों के लिए 18 वर्ष एवं लड़कों के लिए 21 वर्ष है।

सारणी क्र. 3.3

भारत में जन्म एवं मृत्यु दर (प्रति 1000 व्यक्तियों के पीछे)

दशाब्दी	जन्म–दर	मृत्यु–दर
1901–10	49.2	42.6
1911–20	48.1	47.3
1921–30	46.4	36.3
1931–40	45.2	31.2
1941–50	39.9	27.4
1950–51	39.9	27.4
1960–61	41.7	22.8
1999–2000	26.1	8.7
2008–2009	22.8	7.6
2010–2011	21.1	7.4

Source: Economic Survey, 2011-12.

4. निर्धनता (निम्न जीवन स्तर) – देश की आर्थिक अवनत दशा तथा दरिद्रता ने भी जनसंख्या की वृद्धि को अब तक प्रोत्साहन दिया है। एडम स्मिथ के अनुसार, ''दीनता और निर्धनता सन्तानोत्पत्ति के लिए सबसे अनुकूल दशा होती है।'' यह कथन भारत के लिए अब तक पूर्ण रुप से लागू रहा है। अब शनैः–शनैः स्थिति में बदलाव आने लगा है।

5. अशिक्षा – देशवासियों में शिक्षा की कमी रही है। 1981 में 36 प्रतिशत किन्तु 1991 में 52.51 प्रतिशत व्यक्ति शिक्षित थे। इनमें पुरुषों का प्रतिशत 1991 में 64.13 से अधिक रही। राष्ट्रीय औसत 21.34 प्रतिशत रहा।

टिप्पणी

सामान्यतः जनसंख्या में वृद्धि की दर से अधिक ऊँची दर से यदि अर्थव्यवस्था में उन्नति नहीं होती है तो देश आर्थिक दृष्टि से बहुत कमजोर हो जाता है और अर्थव्यवस्था को सशक्त करने के सभी प्रयास, योजनाएँ एवं विनियोग अर्थहीन हो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में जनसंख्या के गुणात्मक पहलू का भी अधःपतन हो जाता है। उच्च जन्म–दर के साथ–साथ जब स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं के विकास से मृत्यु–दर कम हो एवं औसत आयु में वृद्धि हो तो स्थिति क्रमशः जनसंख्या विस्फोट की ओर अग्रसर होती है। भारत सभी विकसनशील देशों में जनांकिकी संक्रमण के प्रतिरूप पर चल रहा है जो उच्च जन्मदर एवं उच्च मृत्यु–दर के आरम्भिक स्तर से निकलकर उच्च जन्म–दर एवं निम्न मृत्यु–दर के मध्यवर्ती परिवर्तन चरण पर है तथा यह निम्न जन्म–दर निम्न मृत्यु–दर के चरण पर जाने से पूर्व जनसंख्या वृद्धि को उच्च दरों में प्रतिबिम्बित होती है। अतः नारी शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देना अनिवार्य है।

6. मनोरंजन के साधनों की कमी – देश में अभी तक सस्ते और स्वास्थ्यवर्द्धक मनोरंजन के साधनों का अभाव पाया जाता रहा है। अतः इससे भी सन्तानोत्पत्ति की भावना को ही अधिक बल मिलता है।

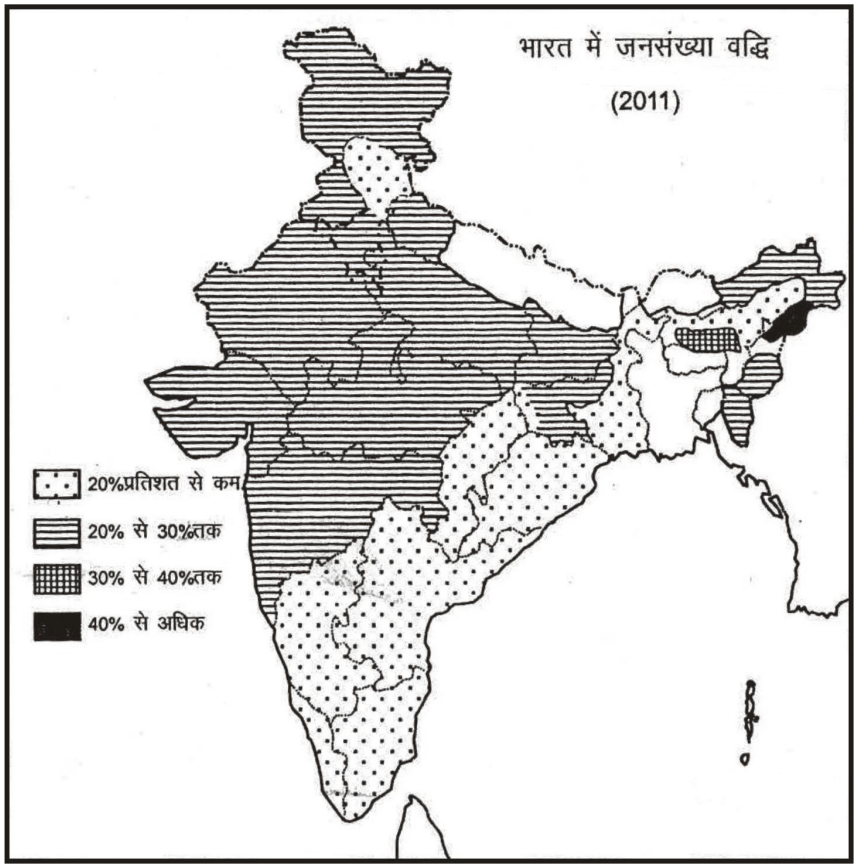
7. आयु संरचना – 1901–91 की अवधि में स्त्री और पुरुष दोनों की ही जीवन अवधि में वृद्धि हुई है। 1891–1901 में एक स्त्री और पुरुष की औसत आयु केवल 23 और 23.60 वर्ष की थी। 1921–30 में यह आयु क्रमशः 26.59 वर्ष और 26.91 वर्ष थी। 1961 में यह क्रमशः 45.60 और 47.10 वर्ष हो गयी। इससे सन्तानोत्पत्ति काल में कुछ वृद्धि हुई। अतः जनसंख्या की वृद्धि में तीव्र गति होना स्वाभाविक है। पिछले तीन दशकों में इनमें और बढ़ोत्तरी हुई है। 1981 एवं 1991 में औसत आयु पुरुषों की क्रमशः 54.1 व 55.9 वर्ष एवं महिलाओं में क्रमशः 54.7 व 55.9 वर्ष रही। इस प्रकार इसमें गुणात्मक सुधार होता रहा है। 2001–2011 में जन्म के समय प्रत्याशित आयु 62.7 वर्ष है। इसमें पुरुषों की 63.87 वर्ष तथा स्त्रियों की 66.91 वर्ष है।

जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याएँ – जनसंख्या वृद्धि एक विश्वव्यापी समस्या है। भारत की जनसंख्या वृद्धि आर्थिक प्रगति में बाधक सिद्ध हो रही है, क्योंकि इसके द्वारा बहुत–सी समस्याएँ पैदा कर दी गयी हैं जो निम्नलिखित हैं –

(1) खाद्यान्न पूर्ति की समस्या – खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ाने के बावजूद भी खाद्यान्नों में कमी दिखायी देती है जिसकी पूर्ति करने के लिए अरबों रुपयों का खाद्यान्न आयात करना पड़ता है और इस प्रकार वह विदेशी मुद्रा जो पूँजीगत माल क्रय करने के काम में आनी चाहिए थी जिससे हजारों व्यक्तियों को रोजगार मिल सकता था वह खाद्यान्न पूर्ति करने में लगानी पड़ती है।

भारत की 2001–2011 की जनसंख्या वृद्धि को नीचे मानचित्र में दर्शाया गया है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 3.2: भारत में जनसंख्या वृद्धि

(2) आय, बचत व विनियोग की दरों में कमी – एक देश की जनसंख्या वृद्धि उस देश की आय, बचत व विनियोग पर प्रभाव डालती है। आर्थिक विकास के फलस्वरूप जिस आय का सृजन होता है उसकी बढ़ी हुई जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए व्यय कर देना पड़ता है।

(3) जनोपयोगी सेवाओं के भार में वृद्धि – जब जनसंख्या में वृद्धि हो जाती है तो उसका दबाव जनोपयोगी संस्थाओं जैसे–अस्पताल, रेलें, परिवहन साधन, विद्युत, जल, मकान, आदि पर पड़ता है तथा सरकार को कानून व व्यवस्था तथा सुरक्षा पर अधिक व्यय करना पड़ता है, जिससे विकास कार्यों के लिए धन नहीं बचता है।

(4) श्रम–शक्ति में वृद्धि – जनसंख्या वृद्धि कार्यशील जनसंख्या में वृद्धि करती है, लेकिन रोजगार साधन उस गति से नहीं बढ़ पाते हैं और इस प्रकार देश में रोजगार की समस्या जो कि पहले से ही होती हैं, और जटिल हो जाती है।

(5) आश्रितता के भार में वृद्धि – तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या देश के आश्रितता के भार में वृद्धि करती है। 1961 की जनगणना के अनुसार भारत में 57.3 प्रतिशत जनसंख्या आश्रित जनसंख्या थी। इसमें भी वृद्धि हो गयी और यह बढ़कर 66.2 प्रतिशत हो गयी है।

(6) भूमि पर अधिक दबाव।

(7) बेरोजगारी में वृद्धि।

टिप्पणी

समस्या का समाधान (Solution of the Problem)

बढ़ती हुई जनसंख्या को रोकना आज की पहली एवं सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है, अन्यथा जनसंख्या समस्या के सभी प्रयास बेकार व बेमाने हो जायेंगे। जनसंख्या समाधान के लिए निम्नलिखित उपाय सुझाये गये है –

(1) सीमित परिवार (Limited Family) – प्रत्येक देश की आर्थिक क्षमता के अनुसार ही वहाँ जनसंख्या होनी चाहिए। अतः परिवारों में सन्तान की संख्या प्रति परिवार एक या अधिक से अधिक दो सन्तान तक ही अनिवार्यतः सीमित की जानी चाहिए। इसके लिए गर्भ निरोधक गोलियाँ, अन्य विधियाँ एवं बन्ध्याकरण ऑपरेशन (पुरूष व महिलाओं का) निश्चित समय पर निरन्तर अपनाया जाना अनिवार्य है। ऐसी व्यवस्था का विरोध करने वालों का सामाजिक बहिष्कार एवं सरकारी सुविधा से वंचित किया जाना ही एकमात्र उपाय है।

(2) विवाह आयु में वृद्धि (Increasement in the Age of Marriage) – विवाह की आयु लड़कियों के लिए 20 वर्ष एवं लड़कों के लिए 23 से 25 वर्ष की जानी चाहिए।

(3) सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में विस्तार (Extention of Public Health Services) – सार्वजनिक स्वास्थ्य के प्रति प्रत्येक नागरिक को जागरुक बनाने के लिए प्राथमिक कक्षाओं से ही इसकी अनिवार्य शिक्षा दी जाये क्योंकि अधिकांश बीमारियों व कई घातक बिमारियाँ जल व वायु के प्रदूषण (Pollution) से बढ़ती है। हमारी आदतों में एक खान–पान में भी परिवर्तन आना चाहिए। इसके लिए किया गया सरकारी खर्च एक प्रकार से विकास के आधार पर खर्च है। इसमें लाभ–ही–लाभ है।

(4) सन्तति सुधार (Progeny Improvement) – भारत में अधिकांश महिलाओं की मौतें सन्तान पैदा करते समय हाती हैं। अतः देश को मजबूत आधार देने एवं उत्तम सन्तान व निरोग जनसंख्या बनाये रखने के लिए गर्भवती महिला एवं जच्चा–बच्चा दोनों की स्थिति में सुधार अनिवार्य है। इसके लिए सभी प्रकार के रक्षक टीके माँ एवं होने वाले बच्चे दोनों को यथासमय लगाना अनिवार्य किया जाना चाहिए। यही नहीं, समाज में जो व्यक्ति मिर्गी, पागलपन, छूत की भयंकर बीमारी, कैन्सर, एड्स, शारीरिक अयोग्यता आदि का रोगी है तो ऐसे व्यक्तियों के विवाह पर एवं सन्तान पैदा करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाना चाहिए।

(5) सामान्य शिक्षा एवं महिला शिक्षा का प्रसार (Expansion of General Education and Female Education) – देश में प्रतिवर्ष शिक्षित से अशिक्षितों की संख्या अधिक बढ़ती जा रही है। भारत में सभी प्रयासों के बावजूद प्रत्येक अगली जनगणना में पिछली जनगणना से सभी आयु वर्ग के अधिक संख्या में अशिक्षित पाये जाते हैं। प्राथमिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा एवं महिला शिक्षा सभी को मुफ्त दी जानी चाहिए। इसके लिए सुविधाएँ दी जानी चाहिए। यदि एक लड़की व एक महिला शिक्षित होगी तो निश्चित रुप से वह दस को शिक्षित करेगी, सारे परिवार व समाज की व्यवस्था सुधारने में सहायक होगी। उसे व परिवार को अच्छे–बुरे का ज्ञान शीघ्र हो जायेगा। इससे परिवार कल्याण कार्यक्रम निचले एवं ग्रामीण स्तर तक लागू किया जा सकेगा।

टिप्पणी

(6) भूमि का उपयोग (Use of Land) – भूमि का उचित उपयोग इसी में है कि उसे प्राकृतिक रूप से पोषक रखकर, कम–से–कम रासायनिक उर्वरक व जहरीली दवा देकर उसकी उत्पादकता को जैव विधि–तंत्र (बायो–टेक्नोलॉजी) से बढ़ाया जाये। भूमि के प्रत्येक छोटे–छोटे हिस्सों का भी उपयोग किया जाये। इसके लिए वैज्ञानिक एवं विकसित विधियाँ काम में ली जाएँ।

जनसंख्या का घनत्व (Density of Population)

जनसंख्या के वितरण को उसके घनत्व द्वारा अधिक सुचारू रूप से व्यक्त किया जाता है। जनसंख्या का घनत्व एक ऐसा मापक है जिसके द्वारा मानव एवं भूमि के निरन्तर परिवर्तनशील सम्बन्धों का ज्ञान प्राप्त होता है।

अन्य देशों की भाँति भारत में जनसंख्या का प्रति वर्ग किलोमीटर घनत्व देश के विभिन्न भागों में अलग–अलग है। सम्पूर्ण देश का घनत्व 1981 में 216 व्यक्ति वर्ग किलोमीटर था जो 2001 में बढ़कर 325 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया। वर्तमान में 2011 की जनगणना के अनुसार देश का जनघनत्व 382 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। यह जापान और जावा देशों की तुलना में, जहाँ घनत्व क्रमशः 330,610 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, कम है, परन्तु अन्य अनेक देशों की तुलना में यह पर्याप्त है।

भारत के विभिन्न राज्यों में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या–घनत्व का वितरण इस प्रकार है –

सारणी क्र. 3.4

भारत में जनसंख्या घनत्व – 2011

क्र.	राज्य / केन्द्र शासित प्रदेश	घनत्व (व्यक्ति / प्रति वर्ग किमी.)	क्र.	राज्य / केन्द्र शासित प्रदेश	घनत्व (व्यक्ति / प्रति वर्ग किमी.)
1	बिहार	1,102	20	उत्तराखण्ड	189
2	पश्चिम बंगाल	1,029	21	मेघालय	132
3	केरल	859	22	जम्मू–कश्मीर	124
4	उत्तर प्रदेश	828	23	हिमाचल प्रदेश	123
5	हरियाणा	573	24	मणिपुर	122
6	तमिलनाडु	555	25	नागालैण्ड	119
7	पंजाब	550	26	सिक्किम	86
8	झारखण्ड	414	27	मिजोरम	52
9	असम	397	28	अरुणाचल प्रदेश	17
10	गोआ	394		**केन्द्रशासित प्रदेश**	
11	महाराष्ट्र	365	1	दिल्ली	11,297
12	त्रिपुरा	350	2	चंडीगढ़	9,252
13	कर्नाटक	319	3	पुदुच्चेरी	2,598
14	आंध्र प्रदेश	308	4	दमन तथा दीव	2,169

टिप्पणी

15	गुजरात	308	5	लक्षद्वीप	2,013
16	उड़ीसा	269	6	दादरा एवं नगर हवेली	698
17	मध्य प्रदेश	236	7	अण्डमान एवं निकोबार	46
18	राजस्थान	201			
19	छत्तीसगढ़	189		भारत	382

भारत के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों के घनत्व में अत्याधिक अन्तर पाया जाता है। 2011 के जनसंख्या घनत्व के आधार पर भारत को चार भागों में बाँटा जा सकता है –

(क) निम्न घनत्व वाले क्षेत्रों के अन्तर्गत सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम एवं अण्डमान निकोबार द्वीप समूह आते हैं। यहाँ प्रति वर्ग किलोमीटर 100 से कम व्यक्ति पाये जाते हैं।

(ख) मध्यम घनत्व वाले क्षेत्रों के अन्तर्गत उत्तराखण्ड, नागालैण्ड, छत्तीसगढ़, जम्मू–कश्मीर, असम, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, त्रिपुरा, उड़ीसा, मेघालय, राजस्थान, गोआ, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश आते हैं। इनमें जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर 101 से 400 व्यक्तियों तक पाया जाता है।

(ग) अधिक घनत्व वाले क्षेत्रों में पंजाब, हरियाणा, झारखण्ड तथा तमिलनाडु सम्मिलित हैं। इनमें जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर 401 से 700 व्यक्ति तक पाया जाता है।

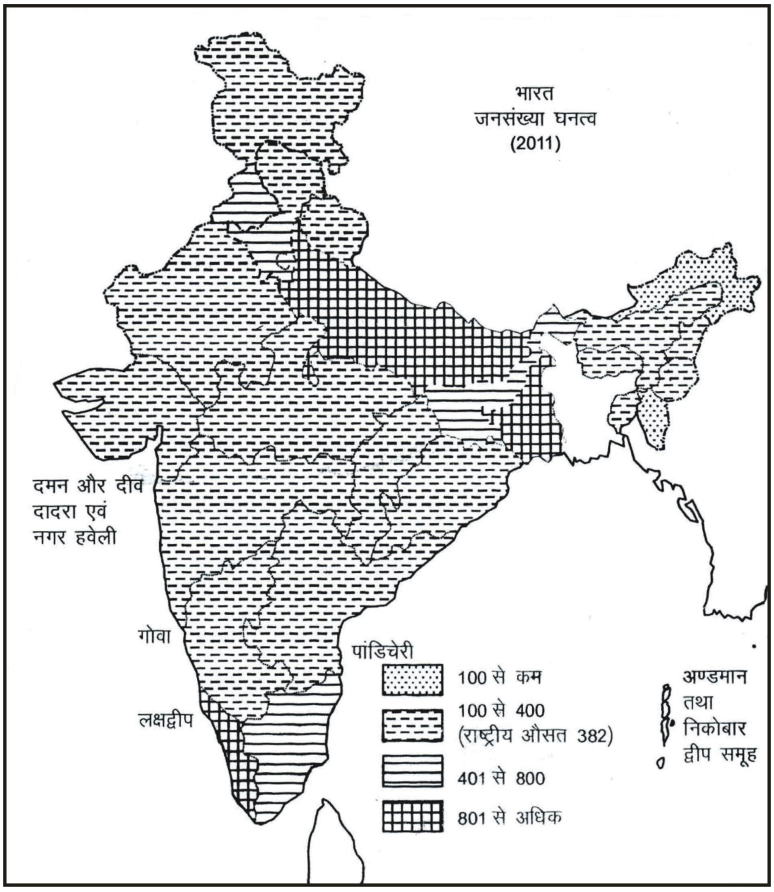
(घ) सघन जनसंख्या वाले क्षेत्रों में बिहार, केरल, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, चण्डीगढ़, दिल्ली, पुदुच्चेरी, लक्षद्वीप, दमन–दीव तथा दादर नगर हवेली आते हैं। यहाँ का घनत्व 700 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से अधिक है। इनमें सबसे अधिक घनत्व महानगर दिल्ली का 11,320 एवं चण्डीगढ़ का 9,258 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

सारणी क्र. 3.5

भारत में जनसंख्या घनत्व (1901–2011)

जनगणना वर्ष	घनत्व (प्रति वर्ग किलोमीटर)	जनगणना वर्ष	घनत्व (प्रति वर्ग किलोमीटर)
1901	77	1961	142
1911	82	1971	177
1921	81	1981	216
1931	90	1991	267
1941	103	2001	325
1951	117	2011	382

टिप्पणी



चित्र क्र. 3.3: भारत का जनघनत्व

जनसंख्य का घनत्व भूमि पर जनसंख्या के दबाव का सही परिचायक नहीं है, क्योंकि कृषि योग्य भूमि ही मानव का भरण–पोषण करती है। यदि कृषि भूमि पर विचार किया जाए तो एक नया तथ्य सामने आता है। विरल जनसंख्या वाला राज्य मध्य प्रदेश सघन जनसंख्या वाला राज्य बन जाता है क्योंकि इस राज्य का अधिकतर भाग पहाड़ी, ऊबड़–खाबड़ और वनों से ढँका है। घनत्व से केवल सामान्य दशा का पता चलता है। इससे न केवल कृषीय भूमि का ज्ञान होता है, अपितु घनत्व में प्रादेशिक भिन्नता के लिए उत्तरदायी, सामाजिक, आर्थिक और जनांकिकीय कारकों के प्रभाव का भी परिचय मिलता है।

नगरीकरण, औद्योगीकरण तथा कृषि–इतर क्रियाकलाप और इनके परिणामस्वरुप होने वाला लोगों का आप्रवासन भी घनत्व के प्रतिरूपों को बदल देते हैं। पश्चिम बंगाल, केरल और दिल्ली इन कारकों के प्रभाव को प्रदर्शित करने वाले विशिष्ट उदाहरण हैं।

जनसंख्या की दृष्टि से भारत विश्व का दूसरा बड़ा देश है, किन्तु भारत की दो–तिहाई जनसंख्या उसके 40 प्रतिशत भाग (मुख्यतः उत्तरी मैदान और तटीय मैदानों) में केन्द्रित है। उत्तरी मैदान का क्षेत्रफल सम्पूर्ण भारत का 18 प्रतिशत है परन्तु वहाँ देश की 38 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। दक्षिण के पठारी भाग का घनत्व तटीय व मैदानी भागों की तुलना में बहुत कम है। पश्चिमी राजस्थान, जम्मू–कश्मीर, कच्छ का क्षेत्र, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश एवं नागालैण्ड सबसे विरल बसाव के प्रदेश हैं।

सघन जमाव कोलकाता में हुगली के किनारे, वृहत्तर मुम्बई व महानगर दिल्ली में पाया जाता है।

टिप्पणी

जनसंख्या के वितरण से सम्बन्धित विशेषताएँ
(Features Related to Population Distribution)

जनसंख्या के वितरण सम्बन्धी कुछ मुख्य तथ्य निम्नलिखित हैं –

(1) उत्तरी मैदान में घनत्व अधिक होना – इसके निम्न कारण है – (i) यह मैदान सतलज, गंगा और अन्य नदियों द्वारा लायी गयी उपजाऊ मिट्टी का बना है। (ii) यहाँ की औसत वर्षा पर्याप्त नहीं है, वर्षा के अभाव में सिंचाई को नहरों द्वारा पूरा किया जाता है। (iii) जलवायु कृषि एवं मानव की आर्थिक क्रियाओं के लिए उपयुक्त है। (iv) समतल धरातल होने के कारण यातायात के मार्गों की अधिकता पायी जाती है। (v) इसे क्षेत्र में अनेक प्रकार के उद्योगों का विकास हुआ है – सूती, ऊनी वस्त्र, जूट, कागज, इन्जीनियरी, पेट्रो–रसायन, विद्युत आदि उद्योग। (vi) व्यापार के लिए पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

(2) जनसंख्या का घनत्व वर्षा की मात्रा के साथ घटता–बढ़ता है – भारत में जनसंख्या का घनत्व वर्षा के वितरण के साथ घटता–बढ़ता है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में यह घनत्व अधिक होता है। पूरब से पश्चिम की ओर बढ़ने पर वर्षा की कमी के साथ–साथ घनत्व भी कम होता जाता है, किन्तु इसके कुछ अपवाद भी है। यद्यपि पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा पंजाब के भागों में वर्षा की मात्रा बहुत कम है किन्तु सिंचाई के कारण घनत्व घटने की अपेक्षा बढ़ गया है। इसी प्रकार छोटा नागपुर के पठारी भाग में भी खनिज पदार्थों की उपलब्धता के कारण घनत्व में साधारणतः वृद्धि पायी जाती है, किन्तु इसके विपरीत सुदूर–पूर्वी भारत एवं हिमालय की तलहटी में अधिक वर्षा होते हुए भी घनत्व अपेक्षाकृत कम है। इसके निम्नानुसार कारण हैं – यहाँ वनों की अधिकता है, कृषि–योग्य भूमि का अभाव है, केवल नदी घाटियों में ही कृषि की जाती है, जलवायु स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है एवं सुदूर–पूर्वी भारत में निरन्तर संघर्ष की स्थिति बनी रही है। पहले नागा, मिजोरम, त्रिपुरा संघर्षरत रहे। अब असम में उल्फा के आन्दोलन ने विकास को अवरुद्ध कर दिया है।

(3) उत्तरी मैदान की अपेक्षा दक्षिण के पठार पर जनसंख्या का घनत्व कम होना – दक्षिण के पठार पर जनसंख्या का घनत्व कम है क्योंकि (i) इसका धरातल अधिक ऊँचा–नीचा है जिसके कारण कृषि करना असुविधाजनक होता है। (ii) यातायात के मार्गों का अभाव पाया जाता है। (iii) वर्षा अधिकांश भागों में औसत से भी कम होती है। (iv) डेल्टा प्रदेशों को छोड़कर सिंचाई की सुविधाओं का अभाव है।

(4) भारत के पूर्वी और पश्चिमी तट घने बसे होना – तटीय भाग पठारों से निकलने वाली नदियों द्वारा लायी गयी बारीक कॉप मिट्टी से बना है। समुद्र के निकट होने के कारण जलवायु सम रहती है। उपजाऊ भूमि और जल की प्राप्ति के अनुसार चावल का उत्पादन सबसे अधिक किया जाता है। इसके अतिरिक्त, यातायात के लिए नहरों को एक–दूसरे से जोड़कर नावें चलायी जाती हैं। इन्हीं सब कारणों से तटीय भागों में चावल और नारियल के कुंजों के बीच अधिक जनसंख्या निवास करती है। कोंकण व मालाबार का तट इसके विशिष्ट उदाहरण हैं।

टिप्पणी

(5) भारत के कम घनत्व वाले प्रदेशों के अन्तर्गत पहाड़ी क्षेत्र, कम वर्षा वाले अथवा पठारी क्षेत्र सम्मिलित होना – हिमाचल प्रदेश, असम, जम्मू–कश्मीर, नगालैण्ड आदि के पार्वतीय क्षेत्रों में समतल और उपजाऊ भूमि का अभाव पाया जाता है। अधिकांश भाग वनों से ढँके रहते हैं। पहाड़ी भागों में परिवहन के मार्गों का बनाना भी कठिन होता है तथा कृषि भूमि के अभाव में लोग बिखरे हुए रहते हैं। जीविकोपार्जन के साधनों के अभाव में भेड़–बकरियाँ पालकर, लकड़ियाँ काटकर या शिकार करके ये अपना जीवन निर्वाह करते हैं। ये व्यवसाय स्वयं से अधिक जनसंख्या को आकर्षित नहीं करते।

राजस्थान के पश्चिमी भाग मे थार का मरुस्थल है जहाँ गंगा व भाखड़ा एवं इन्दिरा गाँधी नहरों के निकटवर्ती भागों को छोड़कर जनसंख्या का घनत्व बहुत कम पाया जाता है। अधिकांश भागों में रेतीले टीले और कंटीली झाड़ियाँ मिलती है। वर्षा का सर्वथा अभाव रहता है अतएव कृषि उत्पादन कठिनता से किया जाता है। रेतीले टीलों के कारण आवागमन के मार्गों का अभाव पाया जाता है, अस्तु, जहाँ–जहाँ जल मिल जाता है, वहीं छोटी–छोटी झोपड़ियाँ बनाकर लोग रहने लगते हैं। ऊँट, भेड़ और पशुपालन में लगे रहने के कारण इन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना पड़ता है, फलतः जनसंख्या का जमाव नहीं हो पाता है।

(6) भारत के अत्यधिक घनत्व वाले भागों के अन्तर्गत प्रमुख राज्य एवं केन्द्र–शासित प्रदेश ये राज्य हैं – दिल्ली, पुडुच्चेरी, लक्षद्वीप, बिहार एवं केरल।

दिल्ली में सबसे अधिक घनत्व के कारण निम्नलिखित हैं – (i) इस राज्य का अधिकांश भाग शहरी जनसंख्या का है जो अनेक नागरिक एवं सामाजिक सुविधाओं के कारण घना बसा है। (ii) दिल्ली नगर भारत की राजधानी है जहाँ अनेक मन्त्रालयों एवं विदेशी दूतावासों, व्यवसायों और उद्योगपतियों के कार्यालय केन्द्रित हैं। अतः जनसंख्या का केन्द्रित होना स्वाभाविक ही है। परिवहन और व्यापार की पूर्ण सुविधाएँ उपलब्ध है। (iii) भारत के प्रत्येक भाग से यह रेलमार्गों, सड़कों अथवा वायुमार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। (iv) देश विभाजन के फलस्वरूप लाखों शरणार्थी अन्यत्र न जाकर यहीं बस गये हैं।

केरल राज्य में भी घनत्व अधिक पाया जाता है। इसके निम्नांकित कारण हैं – (i) यहाँ चावल का उत्पादन अधिक होता है। (ii) तटीय भागों में मिट्टी अधिक उपजाऊ है तथा वर्षा भी पर्याप्त होती है। अतः चावल, रबड़, कहवा, नारियल, गर्म मसाले, सुपारी आदि का व्यावसायिक उत्पादन किया जाता है। (iii) शिक्षा का प्रसार अधिक है तथा रहन–सहन का मापदण्ड भी उच्चस्तीय है। (iv) स्वच्छता अधिक होने से रोग कम होते हैं अतः मृत्यु–दर भी कम है। मोनोजाइट, थोरियम और मूल्यवान खनिज पदार्थों के मिलने के कारण अनेक प्रकार के उद्योग स्थापित हो गये हैं।

पश्चिम बंगाल का उत्तर–पूर्वी भाग तराई युक्त एवं दक्षिणी बंगाल अधिक घनत्व के क्षेत्र हैं क्योंकि (i) इस भाग में कोलकाता और इसके समीपवर्ती औद्योगिक क्षेत्र अधिक घने बसे हैं। हुगली नदी के किनारे किनारे अनेक प्रकार के उद्योगों का स्थानीयकरण हुआ है। (ii) नदियों एवं नहरों तथा रेलमार्गों की अधिकता के कारण आवागमन की उत्तम सुविधा पायी जाती है। (iii) इन भागों की मिट्टी अधिक उपजाऊ है जिसमें चावल, गन्ना, जूट आदि पैदा किये जाते हैं। (iv) इस क्षेत्र में व्यापार भी अधिक बढ़ा है क्योंकि उद्योगों की अधिकता पायी जाती है।

टिप्पणी

राज्यानुसार जनसंख्या वितरण से स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश सभी राज्यों के शीर्ष पर है जहाँ की जनसंख्या 1995.81 लाख है। इसके बाद क्रमशः महाराष्ट्र, बिहार, पश्चिम बंगाल, आन्ध्र प्रदेश तथा मध्य प्रदेश का स्थान आता है जहाँ जनसंख्या क्रमशः 1123.7 लाख, 1038.0 लाख, 913.4 लाख, 846.6 लाख तथा 725.9 लाख है। यदि भारत की जनसंख्या में इनका प्रतिशत देखा जाये तो यह क्रमशः 16.49, 9.29, 8.58, 7.55, 7. 81, 7.37 तथा 5.95 है। यदि क्षेत्रफल और जनसंख्या का अनुपात देखा जाये तो यह विषमता वाला है क्योंकि राजस्थान सबसे बड़ा राज्य है जहाँ जनसंख्या 686 लाख है जो देश की जनसंख्या का 5.67 प्रतिशत है। क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्य प्रदेश का द्वितीय स्थान आता है किन्तु यहाँ जनसंख्या 725.9 लाख है जो देश की जनसंख्या का 6.00 प्रतिशत है। उत्तर प्रदेश का क्षेत्रफल देश के क्षेत्रफल का मात्र 7.26 प्रतिशत है किन्तु यहाँ देश की जनसंख्या का 16.49 प्रतिशत भाग निवास करता है। इन राज्यों में जनसंख्या का दबाव राष्ट्रीय औसत से कम है। जम्मू–कश्मीर का क्षेत्रफल देश के कुल क्षेत्रफल का 6.76 प्रतिशत है किन्तु यहाँ देश की जनसंख्या का केवल 1.04 प्रतिशत भाग निवास करता है। अरुणाचल प्रदेश का क्षेत्रफल देश के क्षेत्रफल का 2.55 प्रतिशत है, जबकि यहाँ जनसंख्या देश की जनसंख्या का मात्र 0.11 प्रतिशत है।

सारणी क्र. 3.6

भारत में लिंगानुपात (स्त्री–पुरुष अनुपात)

जनगणना वर्ष	स्त्रि–पुरुष अनुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाएँ)
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	926
2001	933
2011	943

सारणी से स्पष्ट है कि भारत में लिंगानुपात में सामान्य गिरावट आई है। सन् 1941–1951 की अवधि में लिंगानुपात में मामूली वृद्धि हुई है। इस अवधि में लिंगानुपात 945 से 946 हो गया। जबकि 1951 से 1971 तक लिंगानुपात में गिरावट आई है। सन् 1981 में लिंगानुपात 1971 की तुलना में 930 से बढ़कर 934 हो गया। जबकि 1991 में पुनः गिरकर 926 हो गया, 2011 में लिंगानुपात बढ़कर 933 हो गया। 2011 में यह 943 हो गया। इससे यह प्रतीत होता है कि भारत में स्त्री–पुरुष अनुपात में सुधार आया है।

टिप्पणी

2011 की जनगणना में एक तरफ भारत में वयस्क लिंगानुपात में सुधार हो रहा है तो वहीं दूसरी तरफ अवयस्क अथवा 6 वर्ष से कम आयु के सन्दर्भ में लिंगानुपात में कमी हो रही है। जबकि 0–6 वर्ष के बालकों के लिंगानुपात में बराबर गिरावट का क्रम जारी है। 1961 में जहाँ यह लिंगानुपात 1000 बच्चों पर 976 था, वहीं यह 2011 में 1,000 बच्चों पर 919 हो गया है। (यह 1971 में 964, 1981 में 962, 1991 में 945, 2001 में 927 था।)

सारणी क्र. 3.7

भारत में राज्यवार लिंगानुपात

राज्य / केन्द्र शासित प्रदेश	लिंगानुपात		
	2001	2011	2001 से 2011 के महप लिंगानुपात परिवर्तन
केरल	1058	1084	+26
तमिलनाडु	986	905	+9
छत्तीसगढ़	990	991	+1
मध्य प्रदेश	920	930	+10
उड़ीसा	972	978	+6
गुजरात	918	921	–3
महाराष्ट्र	922	925	+3
आंध्र प्रदेश	978	992	+14
कर्नाटक	964	968	+4
गोवा	960	968	+8
उत्तर प्रदेश	898	908	+10
बिहार	921	916	–5
झारखंड	941	947	+6
उत्तरांचल	964	963	–1
मेघालय	975	986	+11
मणिपुर	978	997	+9
त्रिपुरा	950	961	+11
असम	932	954	+22
अरुणाचल प्रदेश	901	920	+19
पश्चिम बंगाल	934	947	+13
हिमाचल प्रदेश	961	977	+16
हरियाणा	874	893	+19
पंजाब	900	883	–17

टिप्पणी

जम्मू कश्मीर			
मिजोरम	938	975	+37
नगालैण्ड	909	937	+22
सिक्किम	975	889	+14
राजस्थान	928	922	+4
केंन्द्रशासित प्रदेश			
दिल्ली	821	866	+45
चण्डीगढ़	773	818	+45
पुदुच्चेरी	1001	1038	+37
दमन एवं दीव	709	618	–19
लक्षद्वीप	947	946	–1
अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह	846	878	+32
दादरा एवं नगर हवेली	811	775	–36

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि 2011 में गुजरात, उत्तर प्रदेश, पंजाब, दमन व दीव, लक्षद्वीप तथा दादरा व नगर हवेली में स्त्री–पुरुष अनुपात में 2001 की तुलना में गिरावट आयी है। जबकि शेष राज्यों में स्त्री–पुरुष अनुपात में वृद्धि हुई है।

जनगणना 2011 के अनुसार लिंगानुपात वाले शीर्ष 5 राज्य है – केरल (1084), पुडुच्चेरी (1038), मणिपुर (997), आन्ध्र प्रदेश (992) तथा छत्तीसगढ़ (991) है। इसके विपरीत न्यूनतम लिंगानुपात वाले शीर्ष 5 राज्य है – दमन व दीव (618), दादरा व नगर हवेली (775), चण्डीगढ़ (818), दिल्ली (866) तथा अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह में (878) है।

साक्षरता दर (Literacy Rate)

किसी भी देश की जनसंख्या का गुणात्मक अध्ययन तथा समाज की सर्वांगीण प्रगति उस देश की शिक्षा के स्तर पर निर्भर करती है। यदि देश में साक्षरता का प्रतिशत अधिक होगा तो इससे देश के विकास में पर्याप्त मदद मिलेगी। देश में साक्षरता का प्रतिशत बढ़ने पर (विशेषतः महिलाओं में) देश की सामजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक स्थिति में सुधार होता है और संतति निग्रह तथा नियोजित परिवार की भावना उत्पन्न होती है।

साक्षरता से आशय 7 वर्ष से अधिक उम्र के उन व्यक्तियों से है जो किसी भी भाषा को पढ़ एवं लिख सकते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरता दर 73.0% है, जिसमें पुरुषों की साक्षरता दर 80.9% तथा महिलाओं की साक्षरता दर 64.6% है। 2001 की तुलना में कुल साक्षरता 8.76 प्रतिशत अधिक है। पुरुष साक्षरता दर में 15.7% तथा स्त्री साक्षरता दर में 10.72% की बढ़ोतरी हुई है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.8

भारत में साक्षरता का प्रतिशत

जनगणना वर्ष	कुल	पुरुष	स्त्री	स्त्री–पुरुष में साक्षरता दर का अन्तर
1901	5.35	9.83	0.60	9.23
1911	5.92	10.56	1.05	9.57
1921	7.16	12.21	1.81	10.40
1931	9.50	15.59	2.93	12.60
1941	16.10	24.90	7.30	17.60
1951	18.33	27.16	8.86	18.30
1961	28.30	40.40	15.35	25.05
1971	34.45	45.90	21.97	23.98
1981	43.56	56.38	29.75	26.62
1991	52.21	64.13	39.29	24.84
2001	64.38	75.20	53.60	21.60
2011	73.0	80.9	64.6	16.30

सारणी से स्पष्ट है कि भारत में साक्षरता दर में निरन्तर वृद्धि हो रही है। परन्तु देश में अभी भी 27 प्रतिशत लोग अशिक्षित हैं। जहाँ तक पुरुषों की साक्षरता का प्रश्न है, देश में अभी भी 19.1 प्रतिशत पुरुष निरक्षर हैं। स्त्रियों की स्थिति तो बहुत ही असन्तोषजनक है। देश में लगभग 35.4 प्रतिशत महिलाएँ अभी भी अशिक्षित हैं।

सारणी क्र. 3.9

भारत के विभिन्न राज्यों में साक्षरता की स्थिति (2001 एवं 2011)

राज्य	साक्षरता दर 2001			साक्षरता दर 2011		
	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला
केरल	90.9	94.2	87.7	94.0	96.1	92.1
मिजोरम	88.8	90.7	86.7	91.3	93.3	89.3
गोवा	82.0	88.4	75.4	88.7	92.6	84.7
महाराष्ट्र	76.9	86.0	67.0	82.3	88.4	75.9
हिमाचल प्रदेश	76.5	85.3	67.4	82.8	89.5	75.9
त्रिपुरा	73.2	81.0	64.9	82.7	91.5	82.7
तमिलनाडु	73.5	82.4	64.4	80.3	86.8	73.4
उत्तराखण्ड	71.6	53.3	59.6	78.8	87.4	70.0
गुजरात	69.1	79.7	57.8	78.0	85.8	69.7

टिप्पणी

पंजाब	69.7	75.2	63.4	75.8	80.4	70.7
सिक्किम	69.8	76.0	60.4	83.4	86.6	75.6
पं. बंगाल	68.6	77.0	59.6	76.3	81.7	70.5
मणिपुर	68.87	77.87	59.70	79.2	86.1	72.01
हरियाणा	67.9	78.5	55.7	75.6	84.1	65.9
नगालैंड	66.6	71.2	61.5	79.6	82.8	76.1
कर्नाटक	66.6	76.1	56.6	75.4	82.5	68.1
छत्तीसगढ़	64.7	77.4	51.9	75.4	80.3	60.2
असम	63.6	71.3	54.6	72.2	72.8	66.3
मध्य प्रदेश	63.7	76.1	50.3	69.3	78.7	59.2
ओडिशा	63.4	75.3	50.5	72.9	81.6	64.0
मेघालय	62.6	65.4	59.6	74.4	76.0	72.9
आन्ध्र प्रदेश	60.5	70.3	50.4	67.0	74.9	59.1
राजस्थान	60.4	75.7	43.9	66.1	79.2	52.1
उत्तर प्रदेश	56.3	68.8	42.2	67.7	77.3	52.2
अरुणाचल प्रदेश	54.3	6.8	43.5	65.4	72.6	57.7
जम्मू कश्मीर	55.5	66.6	43.0	66.2	76.8	56.4
झारखण्ड	53.6	67.3	38.9	66.4	76.8	55.4
बिहार	47.0	59.7	33.1	61.8	71.2	51.5
लक्षद्वीप	86.7	92.5	80.5	91.8	95.6	87.9
दिल्ली	81.7	87.3	74.7	86.2	90.9	80.8
चण्डीगढ़	81.9	86.1	76.5	86.0	90.0	81.2
पुदुच्चेरी	81.2	88.6	73.9	85.8	91.3	80.7
अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	81.3	86.3	75.2	85.6	90.3	82.4
दमन एवं दीव	78.2	86.8	65.6	87.1	91.5	79.5
दादरा एवं नगर हवेली	57.6	71.2	40.2	76.2	85.2	64.3
भारत	64.38	75.20	53.63	73.0	80.9	64.6

टिप्पणी

यदि हम साक्षरता की सारणी को देखें तो प्रतीत होता है कि –

(1) 2001–11 में 1991–2001 के मध्य साक्षरता में 8.62% की बढ़ोतरी हुई है। जहाँ तक पुरुष साक्षरता का प्रतिशत है, यह बढ़ोतरी 5.70% है, जबकि महिलाओं की साक्षरता में यह बढ़ोतरी 10.97% रही है।

(2) 2001 की जनगणना में साक्षरता की दृष्टि से केरल राज्य प्रथम स्थान पर है। यहाँ साक्षरता 94.0% है। 2001 में यह साक्षरता 90.9% थी अर्थात् 2011 में 3.1% की बढ़ोतरी हुई है।

(3) 2001 की जनगणना के अनुसार पाँच सर्वाधिक साक्षरता वाले राज्य 1. केरल 94.0%, 2. मिजोरम 91.3%, 3. त्रिपुरा 87.2%, 4. गोवा 88.7%, 5. हिमाचल प्रदेश 82.8% हैं।

(4) 20011 की जनगणना के अनुसार पाँच सर्वाधिक पुरुष साक्षरता वाले राज्य हैं – 1. केरल 96.1%, 2. मिजोरम 93.3%, 3. गोवा 92.6%, 4. त्रिपुरा 91.5%, 5. हिमाचल प्रदेश 89.5% हैं।

(5) 2011 की जनगणना के अनुसार पाँच सर्वाधिक महिला साक्षरता वाले राज्य – 1. केरल 92.1%, 2. मिजोरम 89.3%, 3. गोवा 84.7%, 4. त्रिपुरा 82.7%, 5. नागालैण्ड 76.1% हैं।

(6) जहाँ तक निम्नतम साक्षरता का प्रश्न है, बिहार राज्य (2001 में भी) प्रथम स्थान पर है। 2011 की जनगणना के अनुसार बिहार राज्य की कुल साक्षरता 61.8% है। यहाँ पुरुष साक्षरता 71.2% है।

ग्रामीण जनसंख्या (Rural Population)

2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 121.05 करोड़ है। इसमें 83.84 करोड़ व्यक्ति गाँवों में निवास कर रहे हैं। यह कुल जनसंख्या 68.8 का प्रतिशत है।

ग्रामीण जनसंख्या वितरण में पर्याप्त भिन्नता देखने को मिलती है। यहाँ हिमाचल प्रदेश सबसे अधिक ग्रामीण राज्य है जहाँ वर्ष 2011 में ग्रामीण जनसंख्या 90.0 प्रतिशत रही। सबसे कम ग्रामीण जनसंख्या दिल्ली में ग्रामीण राज्य है जहाँ कुल जनसंख्या का मात्र 2.5 प्रतिशत लोग ग्रामीण है।

सन् 2011 में भारत राष्ट्र में ग्रामीण जनसंख्या का औसत 68.8 प्रतिशत रहा। इस राष्ट्रीय औसत से अधिक ग्रामीण जनसंख्या वाले राज्य हैं – हिमाचल प्रदेश, बिहार, सिक्किम, असम, ओडिशा, त्रिपुरा, नागालैण्ड, मेघालय, छत्तीसगढ़, अरुणाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, दादरा एवं नागर हवेली, राजस्थान, मणिपुर, जम्मू–कश्मीर, उत्तराखण्ड, केरल, मध्य प्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश आदि हैं। शेष राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश इस राष्ट्रीय औसत से कम ग्रामीण जनसंख्या वाले हैं। प्रदेश की कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का न्यूनतम प्रतिशत गोवा (37.8), तमिलनाडु (51.6), तथा केरल (52.3), राज्यों के अतिरिक्त चण्डीगढ़ (2.7), दिल्ली (2.5), लक्षद्वीप (21.9), दमन व दीव (24.8) तथा पुदुच्चेरी (31.7) नामक केन्द्र शासित प्रदेशों में रहा। इस जनसंख्या को निम्नलिखित सारणी में दर्शाया गया है –

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.10

भारत में ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या, सन् 2011

राज्य	नगरीय जनसंख्या का %	ग्रामीण जनसंख्या का %
जम्मू कश्मीर	27.21	72.79
हिमाचल प्रदेश	10.04	89.96
पंजाब	37.49	62.51
उत्तराखण्ड	30.55	69.45
हरियाणा	34.79	65.21
राजस्थान	24.89	75.11
उत्तर प्रदेश	22.28	77.72
बिहार	11.30	88.70
सिक्किम	24.97	75.03
अरुणाचल प्रदेश	22.67	77.33
नागालैण्ड	28.97	71.03
मणिपुर	30.21	69.79
मिजोरम	51.51	48.49
त्रिपुरा	26.18	73.82
मेघालय	20.08	79.92
झारखण्ड	24.05	75.95
ओडिशा	16.68	83.32
छत्तीसगढ़	23.24	76.76
मध्य प्रदेश	27.63	72.37
महाराष्ट्र	45.23	54.77
आन्ध्र प्रदेश	33.49	66.51
कर्नाटक	38.37	61.63
गोवा	62.17	37.83
केरल	47.72	52.28
तमिलनाडु	48.45	51.55
असम	14.08	85.92
पश्चिम बंगाल	31.89	68.11
गुजरात	42.58	57.42
केन्द्र शासित प्रदेश		
दिल्ली	97.50	2.50
चण्डीगढ़	97.25	2.75

दमन एवं दीव	75.16	24.84
दादरा एवं नगर हवेली	53.38	46.62
लक्षद्वीप	78.08	21.92
पुदुच्चेरी	68.31	31.69
अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	65.63	34.37
भारत	**31.16**	**68.84**

भारत में नगरीय एवं ग्रामीण जनसंख्या 2011 की सारणी से निम्न तत्व सामने आते हैं – 2011 में भारत की नगरीय जनसंख्या 31.16% है जो कि 2001 में 27.82% थी। यह जनसंख्या का प्रतिशत चीन, रूस, यू.एस.ए. और इंडोनेशिया छोड़कर विश्व के समस्त देशों की जनसंख्या के प्रतिशत से अधिक है। यह जनसंख्या का प्रतिशत 1961–71, में 34.66%, 1971–81 में 24.60%, 1981–91 में 25.71%, 1991–2001 में 27.82%, 2001–2011 में 31.16% है अर्थात् 1971–81 से लगभग 7% नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई है।

अतएव हम यह कह सकते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों की ओर प्रवास हो रहा है।

सबसे अधिक नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत गोवा राज्य में हैं। यहाँ लगभग 62.17% नगरीय जनसंख्या है। इसके बाद तमिलनाडु 48.45%, केरल 47.72%, महाराष्ट्र 45.23% है।

भारत में नगरीकरण की प्रवृत्ति (Trend of Urbanisation in India)

भारत में नगरीकरण की प्रवृत्ति धीमी रही है। इसका प्रमुख कारण कृषि–प्रधान अर्थव्यवस्था तथा सुखद ग्रामीण अनुभूति रही है। 1901 में भारत में केवल 11% जनसंख्या नगरीय थी जो 1931 में बढ़कर 11.97%, 1941 में 13.9% तथा 1951 में बढ़कर 17.9% हो गयी। 1961 के बाद देश में नगरीकरण की प्रवृत्ति में तेजी आयी जब देश की अर्थव्यवस्था में सामाजिक मान्यता, प्राकृतिक प्रकोप का नियन्त्रण और शिक्षा तथा परिवहन का नवीन दौर हुआ। 1991 में देश की नगरीय जनसंख्या 25. 72% हो गयी। इसके बाद 2011 की जनगणना के अनुसार नगरीय जनसंख्या 31. 2% हो गयी।

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.11

भारत में नगरीकरण की वर्तमान प्रकृति

वर्ष	नगर समूह / नगरों की संख्या	कुल जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या प्रतिशत	नगरीय जनसंख्या की दशकीय वृद्धि
1901	1,627	23,63,96,327	2,51,51,873	10.84	—
1911	1,815	25,20,93,390	2,59,41,633	10.36	0.35
1921	1,949	25,13,21,213	2,80,86,167	11.18	8.27
1931	2,072	27,89,77,238	3,34,55,989	11.97	19.12
1941	2,250	31,86,60,580	4,41,53,297	13.86	31.97
1951	2,843	36,10,86,090	6,24,43,709	17.29	41.42
1961	2,365	43,92,34,771	7,89,36,603	17.97	26.41
1971	2,590	54,81,59,852	10,91,13,977	19.91	38.23
1981	3,378	68,33,29,097	15,94,62,547	23.34	46.14
1991	3,768	84,43,24,322	21,71,77,625	25.72	36.19
2001	5,161	1,02,87,37,436	28,53,54,954	27.78	31.50
2011	7,935	1,21,05,69,573	37,71,06,125	31.2	31.80

भारत में महानगर (Metropolitan Cities in India)

वर्ष 2011 में भारत के वृहत् महानगरों की जनसंख्या का अवरोही क्रम निम्नवत् रहा –

1. वृहत्तर मुम्बई (184.14 लाख), 2. दिल्ली (163.15 लाख), 3. कोलकाता (141. 13 लाख), 4. चेन्नई (86.96 लाख), 5. बेंगलुरु (बंगलौर) (84.99 लाख), 6. हैदराबाद (77.49 लाख)।

वर्ष 2001 में भारत में नगरों की कुल संख्या 5,161 थी जो वर्ष 2011 में बढ़कर 7,933 हो गई।

2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले 53 महानगर हैं जिनकी जनसंख्या निम्न सारणी में दी जा रही हैं –

सारणी क्र. 3.12

भारत में दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले महानगर, 2011

क्र. सं.	नाम	कुल जनसंख्या (2011 लाख में)	क्र.सं.	नाम	कुल जनसंख्या (2011 लाख में)
1	मुम्बई	184.14	28	लुधियाना	16.14
2	दिल्ली	163.15	29	नासिक	15.63
3	कोलकाता	141.13	30	विजयवाड़ा	14.91

टिप्पणी

4	चेन्नई	86.96	31	मदुरै	14.62
5	बेंगलुरु	84.99	32	वाराणसी	14.35
6	हैदराबाद	77.49	33	मेरठ	14.25
7	अहमदाबाद	63.52	34	फरीदाबाद	14.05
8	पुणे	50.50	35	राजकोट	13.91
9	सूरत	45.85	36	जमशेदपुर	13.37
10	जयपुर	30.37	37	श्रीनगर	12.73
11	कानपुर	29.20	38	जबलपुर	12.67
12	लखनऊ	29.01	39	आसनसोल	12.43
13	नागपुर	24.98	40	वसई–विरार	12.21
14	गाजियाबाद	23.58	41	इलाहाबाद	12.17
15	इन्दौर	21.67	42	धनबाद	11.95
16	कोयम्बटूर	21.51	43	औरंगाबाद	11.89
17	कोच्चि	21.18	44	अमृतसर	11.84
18	पटना	20.47	45	जोधपुर	11.38
19	कोझीकोड	20.31	46	राँची	11.26
20	भोपाल	18.83	47	रायपुर	11.23
21	त्रिचुर	18.55	48	कोल्लमड	11.10
22	वड़ोदरा	18.17	49	ग्वालियर	11.02
23	आगरा	17.46	50	दुर्ग भिलाई नगर	10.64
24	विशाखापट्टनम	17.30	51	चण्डीगढ़	10.26
25	मलप्पुरम	16.99	52	तिरुचिरापल्ली	10.22
26	तिरुवनन्तपुरम	16.87	53	कोटा	10.01
27	कन्नूर	16.43			

स्रोतः भारत की जनगणना 2011.

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. भारत में 2001–2011 में जनसंख्या वृद्धि हुई –
   (अ) 17.7% (ब) 20.6%
   (स) 19.76% (द) 18.6%
2. जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में कौन सा स्थान है?
   (अ) प्रथम (ब) द्वितीय
   (स) तृतीय (द) चतुर्थ

टिप्पणी

3. देश में सर्वाधिक जनसंख्या वाला राज्य कौन सा है?
   (अ) मध्य प्रदेश (ब) महाराष्ट्र
   (स) उत्तर प्रदेश (द) तमिलनाडु
4. 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरता दर है –
   (अ) 70.85% (ब) 73.01%
   (स) 75.85% (द) 80.0%
5. भारत का सबसे बड़ा नगर है –
   (अ) मुम्बई (ब) दिल्ली
   (स) कोलकाता (द) चेन्नई
6. देश की जनसंख्या में पुरुष–महिला अनुपात क्या है ?
   (अ) 1000–930 (ब) 1000935
   (स) 1000–964 (द) 1000–955
7. भारत में प्रतिवर्ग किलोमीटर जनसंख्या घनत्व है –
   (अ) 382 (ब) 330
   (स) 335 (द) 367

3.3 भारतीय अर्थव्यवस्था – कृषि विशेषताएँ (Indian Economics – Agricultural Characteristics)

अति प्राचीन कृषि–प्रधान देशों में भारत का प्रमुख स्थान है। इतिहास इसका साक्षी है। कि जब संसार के अधिकांश मानव असभ्य थे, उस समय भारतवासी कृषि–व्यवस्था में निपुण थे। वर्तमान उन्नतशील राष्ट्रों में निवासियों का जब जीवनयापन आखेट पर ही अवलम्बित था, उस समय भारतवासी कृषि के द्वारा भी अपना जीवन–निर्वाह करते थे।

इतिहास बताता है कि पाषाण युग के उत्तरार्द्ध में भारतवासी खेती करने लगे थे। शिकार तथा मत्स्याखेट के साथ खेती बाड़ी एवं पशुपालन उनका प्रमुख उद्यम बन गया था। इस समय माँस–मछली के प्रयोग के साथ अन्न, तरकारी, दूध, शहद तथा फल–फूल भी उनके भोजन के अंग थे। इसके बाद 'ताम्र युग' आया और भारत में क्रमशः सभ्यता का विकास होता गया। **मोहनजोदडो एवं हड़प्पा** (तत्कालीन भारत के अंग) के खण्डहरों को खुदाई से ज्ञात होता है कि इस युग में भारत सभ्य एवं सम्पन्न था। बड़े बड़े नगर बस गये थे जिनमें पक्के भवन, सुन्दर जल–निकास, आकर्षक आभूषण तथा अनेक प्रकार के अस्त्र–शस्त्र मौजूद थे। इतनी बड़ी जनसंख्या के भरण–पोषण के निमित्त उत्पादन की विशेष विधि उपयोग की जाती थी। इस युग में गाय–बैल का विशेष महत्व था। खेती में सिंचाई का भी प्रयोग होता था, किन्तु कृषि के विकसित साधनों के प्रयोग का ज्ञान नहीं था। ऐसा अनुमान है कि हल का भी प्रयोग उस समय नहीं होता था। इस प्रकार खेती एवं पशुपालन की प्रारंभिक अवस्था ही थीं।

आर्य युग आया। इसका मुख्य उद्यम कृषि एवं पशुपालन था। इनकी सभ्यता गाय–बैल की संख्या पर आँकी जाती थी। ये लोग गाय–बैल, भेड़, घोड़े, कुत्ते तथा

गधे पालते थे। इनके कारण भारत में कृषि का विकास तीव्रता से हुआ। इस युग में जुताई, सिंचाई, कटाई एवं ओसाई आदि कृषि क्रियाएँ की जाने लगीं।

भारतीय कृषि की विशेषताएँ (Characteristics of Indian Agriculture)

टिप्पणी

भारतीय कृषि की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं –

1. जनसंख्या की निर्भरता – भारत की लगभग 70% जनसंख्या कृषि द्वारा अपनी जीविका प्राप्त करती है। **परोक्ष** रूप से कृषि पर आधारित उद्योगों, कृषि पदार्थों के परिवहन एवं व्यापार द्वारा भी बहुत से लोगों को **आजीविका** मिलती है। इस प्रकार कृषि देशवासियों के जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन है।

2. कृषि पर जलवायु का प्रभाव – भारत की जलवायु वर्षभर कृषि उत्पादन के अनुकूल रहती है। कृषि में तापमान का योगदान उल्लेखनीय है जो वर्ष भर कृषि उपजों के लिए अनुकूल रहता है।

3. फसलों की विविधता – भारत में जलवायु की विविधता के कारण उष्ण, उत्पादन एवं शीतोष्ण कटिबन्धी फसलें उगाई जाती हैं।

4. राष्ट्रीय आय में योगदान – देश में कुल आय का 25% कृषि द्वारा प्राप्त होता है।

5. खाद्यान्नों की प्रधानता – भारतीय कृषि में खाद्यान्नों की प्रधानता है। कुल कृषित भूमि के 7% भाग पर खाद्यान्न फसलें तथा 28% भाग पर व्यापारिक फसलें उगाई जाती हैं।

6. कृषिगत भूमि का प्रतिशत – देश में लगभग 46% भूमि पर कृषि की जाती है। कृषि भूमि का यह प्रतिशत विश्व के अनेक विकसित देशों (रूस 10.8%, अमेरिका 16.3%, कनाडा 4.3%, जापान 14.0% चीन 11.8%) की तुलना में बहुत अधिक है।

7. सिंचित भूमि – चीन के बाद भारत में विश्व में सबसे अधिक कृषि सिंचाई द्वारा की जाती है। देश में लगभग 37.5% भूमि पर सिंचाई द्वारा कृषि की जाती है।

8. रबी, खरीफ और जायद की फसलें – अधिकांशतः देश में एक वर्ष में दो फसलें (रबी और खरीफ) होती है, कहीं–कहीं वर्ष में तीन (जाद फसल) फसलें भी प्राप्त की जाती हैं। रबी की फसल में गेहूँ चना, जौ, सरसों, अलसी, खरीफ की फसल में धान, बाजरा, मक्का, कपास, तिल, मूंगफली, जायद की फसल में फल और सब्जियाँ होती है।

9. प्रति व्यक्ति कृषित भूमि का क्षेत्रफल – जनसंख्या की भारी वृद्धि के कारण प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल घट रहा है। सन् 1951 में प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल 0.75 हेक्टेयर था जो सन् 1991 में प्रति व्यक्ति 0.29 हेक्टेयर हो गया, जबकि विश्व में प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि का औसत 4. 5 हेक्टेयर है, कनाडा में 2.12 अर्जेन्टाइना 1.25 रूस 1.08 संयुक्त राज्य अमेरिका 0.89 ऑस्ट्रेलिया 3.49।

10. चारा फसलों की कमी – भारतीय कृषि में पशुओं का विशेष महत्व है, यहाँ देश की केवल 4% भूमि पर ही चारा फसलें उगाई जाती हैं।

टिप्पणी

11. कृषि के प्राचीन ढंग – भारत में कृषि कार्य अभी भी पुराने– और पिछड़े ढंग से किया जाता है। निर्धन किसान आधुनिक तन्त्रों का कम ही प्रयोग करता है। आज भी बैल और लकड़ी के हल से खेत की जुताई का व्यापक प्रचलन है।

12. कृषि सम्बन्धी समस्याएँ – घटिया बीज, उर्वरकों और सिंचाई के साधनों की कमी भूमि अपरदन, कीटाणु और कृषि रोगों प्रकोप, पूँजी की कमी, भूमि की उर्वरता की कमी, पशुओं की दयनीय दशा आदि कारणों से कृषि उत्पादन कम होता है।

भारतीय कृषि के दोष एवं उनका निराकरण
(Demerits of Indian Agriculture and their Solutions)

भारतीय कृषि की उपर्युक्त विशेषताओं के अध्ययन से कृषि–व्यवस्था के कतिपय दोष स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। जिनका निराकरण राष्ट्र–हित में अविलम्ब होना चाहिए।

1. घटिया बीज – अच्छे बीज का प्रयोग उपज को बढ़ाता है। रोगग्रस्त होने की कम सम्भावना होती है। इस दिशा में सरकारी प्रयास सराहनीय रहा है। अधिक उपज देने वाले उत्तम बीज के फार्मों का बहुत विस्तार किया गया है जिससे घटिया बीज का प्रयोग समाप्त हो जाय। खाद्यान्न एवं कृषि संस्था (F.A.O.) द्वारा उत्तम बीज उत्पन्न करने तथा वितरण के अच्छे प्रयास किये गये हैं।

2. खाद की कमी – भारत में खादों का उपयोग बहुत कम होता है। फलतः भूमि में नाइट्रोजन (Nitrogen) की बहुत कमी पड़ जाती है। देश में रासायनिक खादों का उत्पादन अभी निकट भूत में ही प्रारम्भ हुआ है। यहाँ की मिट्टी में औसत रूप में 0.03 से 0.07% तक नाइट्रोजन और 6% कार्बन पाया जाता है जबकि यूरोप एवं अमेरिका की मिट्टी में नाईट्रोजन का अंश 0.1 से 0.17 तक और कार्बन का अंश 3% मिलता है। इस प्रकार भारतीय मिट्टी में नाइट्रोजन तथा वनस्पति अंश की कमी पायी जाती है। भारत में खाद का उपयोग बहुत बढ़ रहा है।

3. मिट्टी का अपरदन – भारत में 800 लाख हेक्टेयर भूमि अपरदन से प्रभावित है। इसमें 400 लाख हेक्टेयर में खेती होती है, 200 लाख हेक्टेयर परती भूमि तथा अकृषित भूमि है और शेष 200 लाख हेक्टेयर मरुभूमि है, जो मुख्यतः राजस्थान में पड़ती है। वर्षा की मात्रा एवं तीव्रता, अनियन्त्रित पशुचारण तथा वायुवेग से मिट्टी का अपरदन हो रहा है। इसकी रोकथाम आवश्यक है।

भूमि संरक्षण का कार्यक्रम सन् 1953 में प्रारम्भ हुआ, जिसके लिए **राष्ट्रीय मिट्टी संरक्षण कार्यक्रम** (National Soil Conservation Programme) का श्रीगणेश हुआ। केन्द्रीय मिट्टी संरक्षण बोर्ड द्वारा विभिन्न राज्यों में यह कार्य सम्पन्न किया जा रहा है। इसके लिए कई समितियों का निर्माण हुआ है।

इस कार्यक्रम के सफलतापूर्वक संचालन के लिए **जोधपुर** में **केन्द्रीय ऊसर अनुसन्धानशाला** स्थापित की गयी। देश में 10 अनुसन्धान केन्द्र कार्य कर रहे हैं। (1) ओत्तकमन्दु (तमिलनाडु) नीलगिरी तथा अन्य पहाड़ियों पर अपरदन नियन्त्रण, (2) बेल्लारि (कर्नाटक) काली मिट्टी में संरक्षण का अध्ययन, (3) कोटा (राजस्थान) चम्बल एवं यमुना खड्ड (Ravine) में अपरदन पर नियन्त्रण, (4) जोधपुर (राजस्थान)

टिप्पणी

मरुस्थल में वनारोपन, (5) **देहरादुन** (उत्तरांचल) शिवालिक पर्वतों में वनारोपण, (6) वासद (गुजरात) गुजरात की कीटर भूमि में अपरदन की रोकथाम, (7) चण्डीगढ, (8) छत्रा, (9) आगरा (गुना की बीहड), (10) इब्राहिम–पत्तनम (आन्ध्र प्रदेश) लाल मिट्टी की समस्याओं का निराकरण करता है।

अखिल भारतीय मिट्टी और भूमि उपयोग सर्वेक्षण (All India Soil and Land-use Survey) का कार्यक्रम भी चल रहा है। इसके चार मण्डल हैं जिनके केन्द्र दिल्ली, नागपूर, बंगलोर तथा हरिन्घाट है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना तक भूमि–संरक्षण कार्य अपरदन नियन्त्रण तक सीमित था जो बिखरे कृषिक भागों में होता था। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में यह कार्य जल–विभाजक–आधार पर किया गया है। सन् 1998–99 के अंत तक 50.3 लाख हेक्टेयर भूमि पर परिष्करण कार्य किया गया। नदी–घाटी परियोजनाओं के जल–विभाजक क्षेत्रों में मिट्टी तथा जल–संरक्षण का भी कार्य हुआ है। इसके अतिरिक्त 20 लाख हेक्टेयर अपरदित भूमि में वृक्षारोपण एवं घास के चरागाहों का विकास किया गया है। सूखे क्षेत्रों में अल्प सिंचाई कार्यक्रम को चलाया गया है। जहाँ मिट्टी–संरक्षण कार्यक्रम से जल–स्तर ऊँचा था वहाँ पक्के कुएँ खोदे गये है। समोच्च रेखा बाँध, नियन्त्रित चराई तथा चरागाहों को विकसित किया गया है।

4. छोटे खेत तथा रोगग्रस्त फसलें – भारत में खेतों के छोटे एवं बिखरे होने के कारण नवीन ढंग से कृषि नहीं हो पाती हैं। साथ ही किसानों की शक्ति तथा समय का भी अपव्यय होता है। इसके समाधान के लिए चकबन्दी तथा सहकारी कृषि–व्यवस्था उपयोगी है। इस दिशा में भी सरकारी प्रयास हो रहे हैं। कृषि गणना के अनुसार आधे खेत एक हेक्टेयर से कम तथा 28 लाख खेत 10 हेक्टेयर का इससे अधिक विस्तार वाले हैं।

अनेक रोगों तथा कीड़ों से फसलों की बर्बादी हो जाती है। सरकार अच्छी खत्तियों को बनाने तथा सुरक्षित अन्न भण्डार के लिए प्रयत्नशील है। रोग एवं कीडों से बचाव के लिए अन्वेषण कार्य किये जा रहे हैं। वायुयान द्वारा कीटाणुनाशक दवाओं को छिड़कने की व्यवस्था की गयी है। पौध–संरक्षण निर्देशालय द्वारा फसलों को रोग तथा कीटाणुओं से रक्षा के उपाय प्रचारित किये जाते हैं।

5. भारतीय किसानों का भाग्यवादी एवं रूढ़िवादी ढंग – भारतीय किसान परिश्रम की अपेक्षा भाग्य पर अधिक विश्वास करता है। इसी कारण वह कम पुरूषार्थ करता है। रूढ़िवादी होने के कारण कृषि के नये ढंगों का प्रयोग नहीं करता है। अशिक्षित एवं अप्रशिक्षित होने के कारण उनको नये ढंगों तथा नये कृषि यन्त्रों का ज्ञान भी नहीं रहता है। इसके लिए भारतीय कृषि अनुसन्धानशाला, दिल्ली, केन्द्रीय आलू अनुसन्धानशाला, शिमला, केन्द्रीय धान अनुसंधानशाला, कटक, गन्ना उत्पादन संस्था, कोयम्बटूर, केन्द्रीय तरकारी उत्पादक संस्था, कुल्लू (हिमाचल प्रदेश) तथा सहानी संस्थान, लखनऊ स्थापित किये गये हैं। देश में 2.2 कृषि विश्वविद्यालय हैं: (पन्तनगर उत्तरांचल), कानपुर, फैजाबाद (उत्तर प्रदेश), पटना (बिहार), राँची (झारखंड), कलणी (पश्चिम बंगाल), जोरहट (असम), लुधियाना (पंजाब), हिसार (हरियाणा), रोहरी (राजस्थान), जबलपुर (मध्य प्रदेश), अहमदाबाद (गुजरात), रत्नागिरि, अकोला, परभणी (महाराष्ट्र), कोयम्बटूर (तमिलनाडु) बेंगलुरू (कर्नाटक) तथा त्रिचूर (केरल)।

टिप्पणी

6. सिंचाई तथा पूँजी की अपर्याप्तता – सिंचाई की अपर्याप्तता तथा पूँजी की कमी की समस्या के समाधान के लिए भी प्रयास चल रहे हैं। सिंचाई के साधनों का विस्तार किया जा रहा है और ऋण के लिए सहकारी बैंक स्थापित हो रहे हैं।

7. पशु समस्या – भारतीय कृषि पशुओं पर आधारित है। पशुओं की संख्या भी अधिक है किन्तु पशु निर्बल एवं कम उपयोगी है। इनके लिए चारे की अपर्याप्त व्यवस्था रहती है। अब पशु संवर्धन के प्रयास चल रहे हैं।

8. भूमि सुधार – पंचवर्षीय योजनाओं में राष्ट्रीय विकास के कार्यक्रम में भूमि स्वामित्व तथा कृषि के रूप पर विशेष ध्यान है। मध्यवर्ती लोगों का उन्मुलन किया गया है। जोतों का सीमा निर्धारण हो रहा है। भूमि का स्वामित्व कृषकों को दिया गया है। **आचार्य विनोबा भावे** के भूदान आन्दोलन में 'भूमि सबकी होनी चाहिए' सिद्धान्त का प्रतिपादन हो रहा है।

भारत में कृषि के प्रकार (Agricultural Types in India)

प्राकृतिक दशा, जलवायु तथा मिट्टी की विभिन्नता के कारण भारत में कई प्रकार की कृषि होती है। कृषि की निम्न पद्धतियाँ है –

1. तर कृषि (Wet Cultivation) – दक्षिणी बंगाल, मालाबार तट तथा मध्य एवं पूर्वी हिमालय के क्षेत्र में जहाँ 200 सेंमी. से अधिक वार्षिक वर्षा होती है, वर्ष में एक से अधिक बार फसल होती है। इन भागों में गन्ना, धान, जूट की फसलें भी बिना सिंचाई के उत्पन्न की जाती हैं।

2. आर्द्र कृषि (Humid Cultivation) – यह खेती काँप तथा काली मिट्टी के प्रदेशो में 100 से 200 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में की जाती है। ऐसे क्षेत्र गंगा का मध्यवर्ती मैदान तथा मध्य प्रदेश है – जहाँ प्रायः दो फसलें होती हैं। कभी–कभी ज्यादा फसलें भी उत्पन्न कर ली जाती हैं।

3. सिंचित कृषि (Irrigation Cultivation) – 50 से 100 सेमी. वार्षिक वाले भागों में सिंचाई द्वारा खेती होती है। गंगा के पश्चिमी मैदान, उत्तरी तमिलनाडु तथा दक्षिणी भारत की नदियों के डेल्टाई प्रदेशों में सिंचाई द्वारा गेहूँ, चावल, गन्ना की फसलें पैदा होती हैं। किसी क्षेत्र में एक और किसी में दो फसले पैदा होती हैं।

4. शुष्क कृषि (Dry Cultivation) – यह खेती भारत के 50 सेंमी. से कम वार्षिक वर्षा के क्षेत्रों में की जाती है। ऐसे क्षेत्र पश्चिमी उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा गुजरात में हैं। इस खेती में पहले खेत जोत दिये जाते हैं, जिससे वर्षा का जल भूमि में समा जाय। इन पर पटेला फेर दिया जाता हैं जिससे सूर्य की गर्मी से पानी भाप बनकर न उड़ सके। जब मिट्टी गीली हो जाती है, तो ज्वार, बाजरा, जौ, गेहूँ आदि अनाज बो दिये जाते हैं। इस प्रकार की खेती से 2–3 वर्षो में एक ही फसल पैदा हो पाती है।

5. झुमिंग कृषि (Jhuming Cultivation) – यह खेती असम, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा पश्चिमी घाट में की जाती है। इस प्रणाली में पहले वन जलाकर साफ कर दिया जाता है और पहली वर्षा के पश्चात् उस राखयुक्त मिट्टी में मोटे अनाज बिखेर कर बो दिये जाते हैं। दो–तीन साल तक खेती करने के पश्चात् भूमि छोड़ दी जाती

टिप्पणी

है और नयी भूमि पर खेती की जाती है। इसको असम में **झुमिंग,** मध्यप्रदेश में **डाह्या,** हिमालय में **खील,** पश्चिमी घाट में **कुमारी** तथा दक्षिण–पूर्वी **राजस्थान** में **बालरा** कहते हैं।

6. पहाड़ी कृषि (Hill Farming)– पहाड़ी ढालों पर सीढियों के आकार में छोटे–छोटे खेत बनाकर इस प्रकार की खेती होती है। इस में आलू, चाय, धान, बड़े परिश्रम से पैदा किये जाते हैं। यह खेती असम तथा हिमालय के पहाड़ी ढालों पर की जाती है।

भारत में हरित क्रान्ति (Green Revolution in India)

भारत के अर्थतन्त्र का मूल आधार कृषि है। देश में कृषि विकास के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण कदम चतुर्थ योजना के प्रारम्भ (1966) में **हरित क्रान्ति** (Green Revolution) के नाम से उठाया गया था जिसके परिणामस्वरूप खाद्यान्न उत्पादन आश्चर्यजनक गति से बढ़ा है तथा कृषि के क्षेत्र में फैली निराशा का अन्तु हुआ है और अनिश्चतता समाप्त हुई है।

हरित क्रान्ति का आशय उन्नत साधनों व सुधरी हुई नई तकनीक के प्रयोग से कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि करना है। इस प्रकार हरित क्रान्ति में मुख्य रूप से दो बातें आती हैं – (1) एक तो उत्पादन तकनीक में सुधार, तथा (2) दूसरे, कृषि उत्पादन में वृद्धि। उत्पादन तकनीकी में सुधार से आशय हल के स्थान पर ट्रैक्टर से जुताई करने, मानसून पर निर्भर न रहकर ट्यूबवैल से सिंचाई व्यवस्था करने व उगत को जानवरों के पैरों से अलग न करके थ्रेशर मशीन का उपयोग करने आदि से है। जबकि कृषि उत्पन्न में वृद्धि का अर्थ अच्छे बीज देने, अच्छी रासायनिक खाद का प्रयोग करने व उचित समय पर पानी व्यवस्था करने आदि से तथा फसलों को कीटाणुओं से बचाने से है।

हरित क्रान्ति का भारतीय कृषि पर प्रभाव

(Impact of Green Revolution on Indian Ariculture)

भारत में विगत ढाई दशकों के दौरान हरित क्रान्ति का प्रचलन तेजी से बढ़ा है। हरित क्रान्ति अथवा नयी कृषि नीति से भारतीय कृषि में उत्पादन, भण्डारण, उचित मूल्य की प्राप्ति और वितरण के क्षेत्र में सार्थक उपलब्धियाँ मिली हैं।

हरित क्रान्ति के भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव का समुचित मूल्यांकन विभिन्न फसलों के उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभाव से किया जा सकता है। सबसे अधिक वृद्धि गेहूँ के उत्पादन में हुई है। वर्ष 1960–61 में गेहूँ का उत्पादन 11.4 मिलियन टन था जो 1990–91 में बढ़कर 63.3 मिलियन टन और 2000–2001 में 71.4 मिलियन टन हो गया। आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2009–2010 के दौरान गेहूँ का उत्पादन 80.7 मिलियन टन के रिकॉर्ड स्तर पर पहुँच गया। हरित क्रान्ति से गेहूँ के अतिरिक्त अन्य फसलों (चावल, दलहन, तिलहन, गन्ना, कपास आदि) के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। यद्यपि अन्य फसलों के उत्पादन की यह वृद्धि गेहूँ की तुलना में कम है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.13

खाद्यान्नों के अंतर्गत क्षेत्र एवं उत्पादन

वर्ष	क्षेत्र (मिली. हेक्टेयर)	उत्पादन (मिली.टन)
1960–61	115.6	82.0
1970–71	108.4	124.3
1980–81	129.6	126.7
1990–91	176.4	127.8
2000–01	121.0	196.08
2006–07	123.7	203.08
2008–09	122.8	219.90
2009–10	121.3	203.45
2010–11	–	226.25
2011–12	–	242.20
2012–13	–	238.79
2013–14	–	245.79
2014–15	–	233.74

Source: Economic Survey India, 2015.

हरित क्रान्ति के कारण होने वाली उत्पादन वृद्धि के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय तथ्य है कि अनेक फसलों के उत्पादन में जो आरंभिक वृद्धि हुई थी वह निरन्तर स्थायी नहीं रह सकी। इस वृद्धि में उतार–चढ़ाव आते रहे और गेहूँ का उत्पादन भी इससे प्रभावित हुआ, किन्तु हरित क्रान्ति से देश की कृषि में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। उत्पादन में वृद्धि हुई है। साथ ही देश खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़कर 245.79 मिलियन टन के रिकार्ड स्तर पहुँच गया, किन्तु वर्ष 2014–2015 में यह घटकर 233. 74 मिलियन टन रह गया।

हरित क्रान्ति का देश के अर्थतंत्र में प्रभावों का विवेचन निम्नांकित बिन्दुओं द्वारा किया जा सकता –

(1) खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि – हरित क्रान्ति का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है। विशेषरूप से गेहूँ, बाजरा, चावल, मक्का व ज्वार में आशातीत वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप खाद्यान्नों में भारत आत्मनिर्भर–सा हो गया है।

(2) कृषि के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन – हरित क्रान्ति से कृषि के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन हुआ है तथा व्यावसायिक कृषि का विकास हुआ है, जबकि पहले सिर्फ आत्मनिर्भरता की दृष्टि से कृषि की जाती थी।

(3) कृषि बचतों में वृद्धि – उन्नतबीज, रासायनिक खादें, उत्तम सिंचाई साधन व मशीनों के प्रयोग से उत्पादन बढ़ा है, जिससे कृषक के पास बचतों की मात्रा

टिप्पणी

में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। यह बचत देश के विकास में प्रयुक्त होती है। औद्योगिक क्षेत्र में भी इससे प्रगति हुई है तथा उत्पादन बढ़ा है।

(4) आत्मविश्वास तथा आत्मनिर्भरता में वृद्धि – हरित क्रान्ति योजनाओं के क्रियान्वयन से कृषक जनता व सरकार सभी में यह विश्वास जाग्रत हो गया है कि भारत कृषि पदार्थों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर ही नहीं हो सकता है बल्कि निर्यात भी कर सकता है।

(5) खाद्यान्न के आयात में कमी – प्रो. एम.एल. दांतवाला के मत में, ''हरित क्रान्ति ने सांस लेने योग्य राहत का समय दिया है। इससे खाद्यान्नों की कमी से छुटकारा मिलेगा तथा अर्थशास्त्रियों व नियोजकों का ध्यान पुनः भारतीय योजनाओं की ओर लगेगा।'' वास्तव में हरित क्रान्ति होने से खाद्यान्नों का आयात पूर्णतः बन्द कर दिया गया था, लेकिन बाद के कई वर्षों में खाद्यान्नों का उत्पादन कम होने के कारण कुछ खाद्यान्नों का आयात किया गया है।

(6) रोजगार के अवसरों में वृद्धि – हरित क्रान्ति से देश में रोजगार अवसरों में वृद्धि हुई है। खाद, पानी, यन्त्रों आदि के सम्बन्ध में लोगों को रोजगार मिला है।

(7) रासायनिक उर्वरकों के उपभोग में वृद्धि – हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों के उपभोग की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है। 1960–61 में रासयनिक खाद का उपयोग प्रति हेक्टेयर 1.9 किग्रा. होता था जो अब बढ़कर 95 किग्रा. हो गया है। इसी प्रकार 1960–61 में रासायनिक खादों की कुल खपत 3 लाख टन थी जो 2009–10 में बढ़कर 351 लाख टन हो गई है।

(8) उन्नत किस्म के बीजों के प्रयोग में वृद्धि – अधिक उपज देने वाले किस्मों के बीजों का उपयोग बढ़ा है और नयी–नयी किस्मों की खोज की गई है; जैसे गेहूँ में सोनोरा 64, लरमा, सेजो 64–A, कल्याण सोना, चावल में छोटा बासमती, नयी जय, पदमा, रत्ना, जिया, विजया, कृष्णा आदि। अभी तक अधिक उपज देने वाला कार्यक्रम गेहूँ, धान, बाजरा, मक्का व ज्वार पर ही लागू किया गया है, लेकिन गेहूँ में सबसे अधिक सफलता मिली है।

(9) बहुफसली कार्यक्रम – बहुफसली कार्यक्रम का उद्देश्य एक ही भूमि पर वर्ष में एक से अधिक फसल उगाकर उत्पादन बढ़ाना है। इसके लिये इस समय 57 अग्रगामी परियोजनाएँ चलाई जा रही है; जिनमें दो या तीन फसलों को पैदा करने से सम्बन्धित प्रयोग एवं प्रदर्शन किये जाते हैं। इस समय भारत की कुल सिंचित भूमि के 65 प्रतिशत भाग पर यह कार्यक्रम लागू है।

(10) आधुनिक कृषि उपकरणों का प्रयोग – वर्तमान में कृषि क्रान्ति में आधुनिक उपकरणों जैसे – ट्रैक्टर, थ्रेशर, हारवेस्टर, बुलडोजर आदि ने काफी योगदान दिया है। 1960–61 में भारत में 21 हजार ट्रैक्टर थे, लेकिन आज इनकी संख्या 12 लाख से अधिक है। इसी प्रकार बिजली से चलने वाले पंप सेटों की संख्या 1960–61 में 47 हजार थी, लेकिन आज इनकी संख्या 182 लाख से अधिक है, सरकार की नीति इन उपकरणों के प्रयोग में वृद्धि करने की है।

हरित क्रान्ति के अन्य प्रमुख आर्थिक परिणाम तथा नीतिगत कार्य निम्नलिखित हैं जिनका भारत भर में तेजी से विकास हुआ है–

टिप्पणी

(1) कृषि सेवा केन्द्र – तकनीकि व्यक्तियों में व्यावसायिक साहस की क्षमता को विकसित करने के उद्देश्य से कृषि सेवा केन्द्र स्थापित करने की योजना लागू की गई है। इस योजना में पहले व्यक्तियों को तकनीकि प्रशिक्षण दिया जाता है और फिर इनसे कृषि सेवा केन्द्र स्थापित करने के लिये कहा जाता है। इसके लिये उन्हें राष्ट्रीयकृत बैंकों से वित्तीय सहायता दिलाई जाती है।

(2) कृषि उद्योग निगम – सरकारी नीति के अनुसार 21 राज्यों में कृषि उद्योग निगमों की स्थापना की गई है। इन निगमों का कार्य कृषि उपकरण, मशीनरी की पूर्ति तथा उपज में प्रसंस्करण (Procuring) एवं भण्डारण को प्रोत्साहन देना है। इसके लिये यह निगम किराया क्रय पद्धति के आधार पर ट्रैक्टर, पंप सेट, शक्ति टिलर व अन्य मशीनरी को वितरित करते हैं।

(3) विभिन्न निगमों की स्थापना – हरित क्रान्ति की सहायता मुख्य रुप से दो बातों पर निर्भर करती है – एक तो अधिक उपज देने वाली किस्में व दूसरे उत्तम सुधारे हुए बीज।

इसके लिए 4000 कृषि फार्म स्थापित किए गये हैं और 1963 में एक निगम राष्ट्रीय बीज निगम नाम से स्थापित किया गया है। 1963 में **राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम** भी बनाया गया है जिसके मुख्य उद्देश्य कृषि उपज का विपणन, प्रसंस्करण एवं भण्डारण करना है। विश्व बैंक की सहायता से एक **राष्ट्रीय बीज परियोजना** भी प्रारम्भ की गई है जिसके अन्तर्गत कई बीज निगम बनाए गये हैं। कृषक की वित्तीय आवश्यकतों की पूर्ति के लिए 1963 में एक कृषि पुनर्वित्त निगम भी बनाया गया जिसे 1982 में राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक में मिला दिया गया हैं। कृषि के लिए ही खाद्य निगम, उर्वरक साख गारण्टी निगम, ग्रामीण विद्युतीकरण निगम आदि भी स्थापित किये गए है।

(4) भू–संरक्षण – हरित क्रान्ति के अन्तर्गत भू–संरक्षण का कार्यक्रम अपनाया गया है जिसके दो अंग हैं – एक तो कृषि योग्य भूमि को क्षरण से रोकना, दूसरे ऊबड़–खाबड़ भूमि को समतल बनाकर खेती योग्य बनाना। यह कार्यक्रम राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश में तेजी से लागू किया गया है।

(5) कृषि शिक्षा एवं अनुसन्धान – सरकार की नीति के अनुसार कृषि शिक्षा विस्तार करने के लिए पहला विश्वविद्यालय 1960 में पन्तनगर में बनाया गया था, लेकिन अब इनकी संख्या बढ़ते बढ़ते 35 हो गई है। इनमें पन्तनगर, लुधियाना, उदयपुर व भुवनेश्वर के कृषि विश्वविद्यालय प्रमुख हैं। इनमें अतिरिक्त एक केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय इम्फाल में, 4 राष्ट्रीय संस्थान व 3 अन्य केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में भी कृषि शिक्षा के कार्यक्रम हैं। विश्वविद्यालयों से 193 कृषि महाविद्यालय सम्बद्ध हैं। यह विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय कृषि के क्षेत्र में अपनी भूमिका निभा रहें हैं। कृषि अनुसन्धान करने के लिये भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् है जिसके पास 53 अनुसन्धान केन्द्र और प्रयोगशालाएँ हैं। इसके अतिरिक्त देश में 261 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं, जो प्रशिक्षण व शिक्षण का कार्य करते हैं।

टिप्पणी

प्रमुख फसलें (Main Crops)

देश में पैदा होने वाली कृषि फसलों को निम्नानुसार तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है –

(1) खाद्यान्न फसलें (Cereal crops) – गेहूँ, चावल, जौ, मक्का, चना, मटर, दालें, ज्वार, बाजरा आदि।

(2) औद्योगिक फसलें (Industrial crops) – गन्ना, कपास, जूट, तिलहन, तम्बाकू आदि।

(3) पेय एवं बागाती फसलें (Beverage and Plantation crops) – चाय, कहवा, रबड़, सिनकोना, गरम मसाले आदि। सभी फसलों की पैदावार के तीन मौसम या उपज अवधियाँ (Harvesting Seasons) हैं –

(i) रबी की फसलें (Rabi crops) – ये शीतकालीन फसलें होती हैं। गेहूँ, जौ, चना, मटर, सरसों, अरहर, मसूर आदि इस अवधि की प्रमुख फसलें हैं।

(ii) खरीफ की फसलें (Kharif crops) – ये वर्षाकालीन फसलें हैं, जो मई–जुलाई तक बोयी जाती है। चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का, कपास, तिल, मूँगफली आदि इस ऋतु की मुख्य फसलें हैं।

(iii) जायद फसलें (Zaid crops) – ये ग्रीष्मकालीन फसलें हैं। ये कम महत्वपूर्ण होती हैं। इसके अन्तर्गत साग–सब्जियाँ, चारा व तरबूज, खरबूजा आदि फसलें उगायी जाती हैं।

खाद्यान्न फसलें (Cereal Crops)

3.3.1 गेहूँ (Wheat)

गेहूँ एक उपोष्ण कटिबंधी उपज है, भारत में गेहूँ शीतकालीन उपज है जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, रूस और युरोपीय देशों में यह बसन्तकालीन उपज है। विश्व के गेहूँ उत्पादक देशों में भारत का पाँचवाँ स्थान है। यह समस्त बोई हुई भूमि के 10% भाग पर बोया जाता है। शीतकाल में तुषार, ओले और झंझावात से गेहूँ को हानि होती है। गेहूँ पकने में तीन से छः महीने लगते हैं। गेहूँ दक्षिण भारत में शीघ्र पकता है। सितम्बर–अक्टूबर में बोकर यह फरवरी में काट लिया जाता है। उत्तरी भारत में यह अक्टूबर–नवम्बर में बोया जाता है और अप्रैल में काटा जाता है।

भारत में प्राचीन काल से गेहूँ की खेती होती आ रही है। सिन्धू की घाटी में से 3 हजार वर्ष पूर्व का गेहूँ मिला था। ये गेहूँ के दाने पंजाब में उत्पन्न होने वाले गेहूँ की जाति के हैं। यह भारत का द्वितीय खाद्यान्न है। संसार के गेहूँ उत्पादकों में क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का छठा स्थान है किन्तु उत्पादन की मात्रा की दृष्टि से इसका पाँचवाँ स्थान है। इसकी कृषि कुल खेतिहार भूमि के 10% पर की जाती है। यह रबी की फसल है, किन्तु देश के विभिन्न भागों में बोआई एवं कटाई के समय में अन्तर पड़ जाता है जो निम्न प्रकार है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.14

राज्य	बोआई का समय	कटाई का समय
राजस्थान	नवम्बर–दिसम्बर	मार्च–अप्रैल
बिहार एवं झारखण्ड	अक्टूबर–नवम्बर	मार्च–अप्रैल
महाराष्ट्र	अक्टूबर–नवम्बर	मार्च
मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़	अक्टूबर–नवम्बर	फरवरी–मार्च
पंजाब हरियाणा	अक्टूबर–दिसम्बर	मार्च–मई
उत्तर प्रदेश	अक्टूबर	मार्च–अप्रैल
जम्मू व कश्मीर	अक्टूबर–नवम्बर	अप्रैल–मई

भारत में 1 हेक्टेयर गेहूँ 25 व्यक्तियों पर बोया जाता है, जबकि कनाडा एवं ऑस्ट्रेलिया में 1 व्यक्ति पर 1 हेक्टेयर और संयुक्त राज्य अमेरिका में 10 व्यक्तियों पर 1 हेक्टेयर गेहूँ बोया जाता है। इस समय 750 लाख व्यक्ति खेती में लगे हैं।

गेहूँ की किस्में – भारत में प्रधानतः दो प्रकार का गेहूँ उत्पन्न होता है। 1. चमकीला सूडौल मुलायम और सफेद, इसे साधारण रोटी का गेहूँ या बलगेसर कहते हैं। यह उत्तरी भारत में अधिक उत्पन्न होता है। 2. मैकरानी गेहूँ – यह लाल छोटे दाने वाला और कठोर होता है। इसकी पैदावार वर्षा पर निर्भर रहती है। मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश और तामिलनाडु में यह अधिक उत्पन्न होता है। गेहूँ की प्रति हेक्टेयर पैदावार बढाने के लिए गेहूँ की बोनी मैक्सिको किस्में जैसे शरबती, सोनार कल्याण सोना, हीरा आदि बोई जाती है।

गेहूँ की उपज की भौगोलिक दशाएँ
(Geographical Condition for Wheat Crops)

तापमान – यह समशीतोष्ण कटिबन्ध की पैदावार है। गेहूँ अनेक प्रकार की जलवायु में पैदा हो सकता है। बोते समय सर्द एवं शुष्क, बढ़ते समय सर्द एवं नम और पकते समय उष्ण एवं शुष्क मौसम उत्तम होता है। बोते समय तापमान 10° सेंग्रे. बढ़ते समय 16° सेंग्रे. तथा पकते समय 22° सेंग्रे. उपयुक्त होता है।

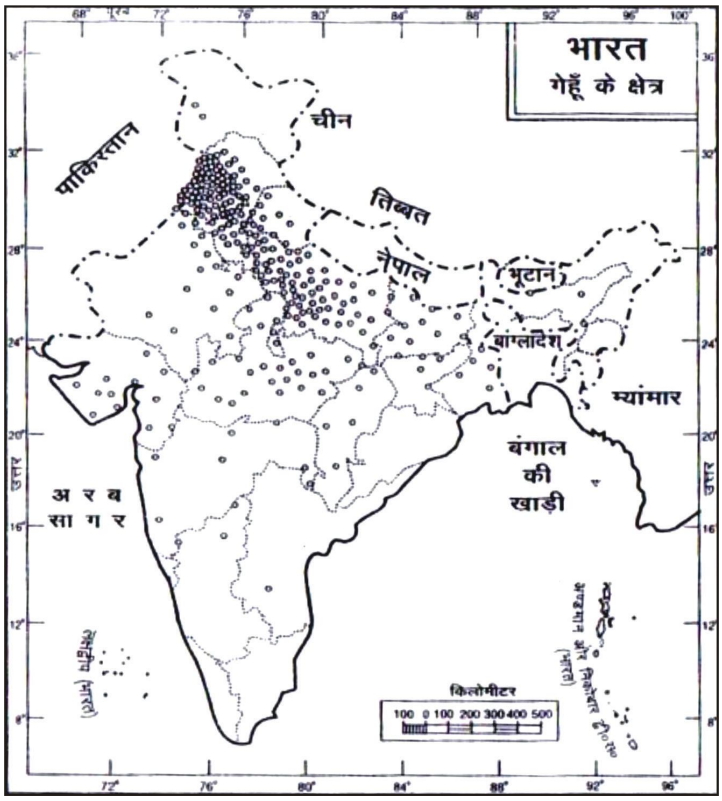
वर्षा – गेहूँ बोने से कुछ समय पूर्व साधारण वर्षा लाभप्रद होती है। इससे गेहूँ जल्दी बढ़ने लगता है। 250 मिमी. से 750 मिमी. तक वर्षा उपयुक्त होती है। 100 सेंमी. से अधिक वर्षा पौधों को नष्ट कर देती हैं। दिन पूर्व की वर्षा लाभदायक होती है। दानों के पकने से पहले होने वाली वर्षा से दाने फूल जाते हैं।

मिट्टी – इसकी उपज के लिए दोमट तथा चिकनी मिट्टी लाभप्रद होती है। घास के मैदानों की गहरी भूरी मिट्टी भी उपयोगी होती है। काली मिट्टी में भी अच्छी पैदावार होती है। इसके लिए उत्तम मिट्टीयाँ चाहिए जिसमें पानी रखने की क्षमता अधिक हो और पानी का निकास भी आसानी से हो जाता हो। अधिक कड़ी तथा अधिक नम मिट्टी गेहूँ की फसल के लिए उपयुक्त नहीं होती है। कड़ी मिट्टी के प्रायद्वीपी भाग तथा नम मिट्टी के पश्चिम बंगाल में गेहूँ पैदा नही होता है। मिट्टी में शोरा एवं अमोनिया सल्फेट

टिप्पणी

की खाद बहुत लाभदायक होती है। गेहूँ क्षेत्र समतल होने चाहिए जिसमें कृषि यन्त्रों का अधिक उपयोग हो सके।

गेहूँ की प्रति हेक्टेयर उपज – भारत में उपज के कम होने का मुख्य कारण उत्तम बीज का अभाव, किसानों की आर्थिक कठिनाईयाँ, कृषि–शिक्षा एवं अनुसन्धान के लाभों से कृषकों का वंचित होना, आधुनिक कृषि का कम प्रचलन है। पश्चिमी यूरोप के घनी खेती वाले क्षेत्रों की प्रति हेक्टेयर उपज भारत से तिगुनी है। भारत का प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन 2,583 किग्रा. है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अर्जेंटिना में गेहूँ की खेती विस्तृत है और उन पर कम श्रम एवं कम पूँजी लगाने पर भी पर्याप्त गेहूँ पैदा हो जाता है। वहाँ घनी खेती प्रचलित नहीं है।



चित्र क्र. 3.4: भारत में गेहूँ के क्षेत्र

गेहूँ की उपज के क्षेत्र (Area of Wheat Production)

गेहूँ के प्रमुख उत्पादन क्षेत्र सतलज एवं ऊपरी गंगा घाटी के प्रदेश हैं। उत्तर प्रदेश पंजाब, बिहार, मध्य प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान तथा गुजरात गेहूँ की उपज वाले राज्य हैं। गेहूँ के 93 प्रतिशत क्षेत्र में अधिक उपज वाली उन्नत किस्मों की खेती होती है। विश्व में गेहूँ का पाँचवाँ बड़ा उत्पादक भारत है।

1. उत्तर प्रदेश – इस राज्य में पूरे देश के गेहूँ के क्षेत्र का 35% भाग पाया जाता है। यह भूमि उत्तर प्रदेश की कुल खेती की भूमि का 24% है। गंगा–यमुना तथा गंगा–घाघरा क्षेत्र गेहूँ की उपज के लिए प्रसिद्ध हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में सिंचाई की सुविधा के फलस्वरूप गेहूँ का अच्छा उत्पादन होता हैं। यह राज्य गेहूँ के उत्पादन

टिप्पणी

में प्रथम है। प्रति हेक्टेयर उपज 3,113 किग्रा. है क्योंकि केवल 33% भूमि पर खेती होती है। मेरठ, मुजफ्फरनगर, इटावा, सहारनपुर, मुरादाबाद तथा सुल्तानपुर मुख्य उत्पादक जनपद हैं।

2. पंजाब – यह राज्य गेहूँ के उत्पादन में द्वितीय है। इसके कुल खेतिहर भूमि के 45% पर गेहूँ की उपज होती है। फिर भी यह क्षेत्रफल उत्तर प्रदेश की गेहूँ की खेती का तिहाई ही है। इस प्रदेश का 70 प्रतिशत भूमि पर अच्छे किस्मों की गेहूँ की खेती होती है। अतः प्रति हेक्टेयर उपज भारत में सबसे अधिक 4,693 किग्रा. होती है।

सिंचाई की सुविधा होने से पैदावार अच्छी होती है। नयी योजनाओं के फलस्वरूप इन क्षेत्रों में गेहूँ की खेती का प्रसार किया जा रहा है। अमृतसर, लुधियाना, **फीरोजपुर, जालन्धर** प्रमुख जनपद है जहाँ गेहूँ अधिक पैदा होता है। उर्वरा मिट्टी, शीतल शुष्क वायु, जाड़े की वर्षा तथा सिंचाई की सुविधा के कारण पंजाब भारत में गेहूँ का भण्डार माना जाता है। देश का 22.2% गेहूँ यहाँ पैदा होता हैं।

3. हरियाणा – यह भारत में तीसरा बड़ा उत्पादक राज्य है। प्रति हेक्टेयर उपज 4,624 किग्रा. है। इसका उत्पादन करनाल, रोहतक, हिसार तथा अम्बाला में होता है।

सारणी क्र. 3.15

भारत के प्रमुख गेहूँ उत्पादक राज्य एवं उत्पादन

क्र.	राज्य	उत्पादन (लाख मी. टन)	क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	प्रति हेक्टेयर उत्पाद (किग्रा.)
1	उत्तर प्रदेश	300.00	96.370	3,113
2	पंजाब	164.720	35.100	4,693
3	हरियाणा	116.300	25.150	4,624
4	मध्य प्रदेश	76.271	43.410	1,757
5	राजस्थान	72.145	27.792	2,910
6	बिहार	40.976	21.035	1,948
7	महाराष्ट्र	23.010	13.070	1,761
8	गुजरात	40.195	12.740	3,155
9	उत्तराखण्ड	8.780	3.792	2,316
10	पश्चिम बंगाल	8.744	3.168	2,760

स्रोतः आर्थिक सर्वे भारत 2015.

4. मध्य प्रदेश – गेहूँ के उत्पादन में मध्य प्रदेश का चौथा स्थान है। कुल कृषित भूमि के 20% पर गेहूँ की खेती होती है। सिंचाई की सुविधा में कमी तथा

टिप्पणी

अपेक्षाकृत कम उर्वरा भूमि के कारण पैदावार कम होती है। यहाँ भारत का लगभग 9% गेहूँ उत्पन्न किया जाता है। सागर तथा होशंगाबाद जिले प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है। अन्य जबलपुर, निमाड़, सिहोर, देवास, उज्जैन तथा रीवा है। प्रति हेक्टेयर 1,757 किग्रा. उत्पादन है।

5. अन्य राज्य – बिहार, राजस्थान एवं गुजरात में भी गेहूँ पैदा होता हैं। इनमें प्रति हेक्टेयर उत्पन्न क्रमशः 1,948 किग्रा. 2,910 किग्रा. तथा 3,155 किग्रा. है।

उत्पादन एवं व्यापार (Production and Trade)

विगत वर्षों में गेहूँ के उत्पादन क्षेत्र व उत्पादन में उल्लेखनीय प्रगति हुइ है सारणी से प्रकट होता है कि इन वर्षों में जहाँ गेहूँ के उत्पादन क्षेत्र में लगभग ढाई गुना वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर इसके उत्पादन में लगभग 9 गुनी वृद्धि हुई है। निकट भविष्य में इसके उत्पादन में और अधिक वृद्धि होने की आशा है। 2014–15 में देश में कुल 267.0 लाख हेक्टेयर भूमि में गेहूँ बोया गया तथा कुल उत्पादन 957.6 लाख टन हुआ।

सारणी क्र. 3.16

भारत में गेहूँ का क्षेत्र व उत्पादन

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर में)	उत्पादन (लाख टन में)	उपज प्रति है. (किग्रा)
1950–51	97.5	68.2	670
1960–61	129.3	109.2	852
1970–71	182.4	238.3	1,307
1980–81	222.8	363.0	1,630
1990–91	242.0	551.0	2,278
2000–01	257.3	696.81	2,708
2001–02	263.50	727.66	2,761
2007–08	252.40	693.2	2,747
2008–09	259.2	806.0	2,891
2013–14	257.8	958.5	—
2017–18	321.8	1027.66	—

Source: Economic Survey India 2017-18.

सन् 1977 के बाद से भारत गेहूँ के उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया है। यहाँ तक कि अब भारत से प्रचुर मात्रा में विदेशों को गेहूँ निर्यात भी किया जाता है।

गेहूँ की विशेषताएँ – गेहूँ की निम्नलिखित विशेषताएँ है –

(1) यह जाड़े की फसल है जबकि विश्व के अन्य बड़े गेहूँ उत्पादक देशों में यह जाड़े की फसल नहीं है। (2) यह बिखेर कर नहीं, बल्कि हल से बोया जाता हैं जिससे किसानों के अधिक धन का सम्बोधन होता है। (3) तापमान की वृद्धि क्रमिक न होने

टिप्पणी

से फसल जल्दी पक जाती है। अतः गेहूँ अच्छी किस्म का नहीं रह जाता है। (4) तापमान की वृद्धि के साथ शुष्क हवाएँ चलती हैं। फलतः दाना जल्दी सूख जाता है जिससे सुडौल नहीं रहता है। (5) खलिहान में गेहूँ मे मिट्टी मिल जाती है जिससे विश्व के बाजार में भारतीय गेहूँ की उपेक्षा रहती है। (6) शीतकाल में वर्षा के अभाव में सिंचाई का सहारा लेना पड़ता है।

3.3.2 चावल (Rice)

चावल भारत का मुख्य खाद्यान्न है जिस पर 70% भारतवासी जीवनयापन करते हैं। भारत में कई शताब्दियों से चावल की कृषि हो रही है। इस पौधे का प्रत्येक भाग उपयोगी होता है। हिन्दुओं के मांगलिक कार्यों में अक्षत के रूप में चावल का उपयोग इसकी प्राचीनता का प्रतिपोषक है।

भारत की मुख्य कृषि उपज चावल है। यह खरीफ की फसल है। कुल–भूमि के 25% भूमि पर चावल पैदा होता है। हमारा देश संसार का द्वितीय चावल उत्पादक देश है जहाँ सभी खाद्यान्नों का 40% केवल चावल का उत्पादन होता है। विश्व के उत्पादन का 11.4% चावल भारत में पैदा होता है।

चावल की उपज की भौगोलिक दशाएँ (Geographical Conditions for Rice Crops)

यह उष्ण कटिबन्धी फसल है। इसके लिए निम्नलिखित भौगोलिक परिस्थितीयाँ विशेष लाभप्रद होती हैं –

तापमान – इसके लिए उष्णार्द्र जलवायु विशेष उपयुक्त होती है। बोते समय 20° से. तापमान, बढ़ते समय 24° से. तथा पकते समय 27° से. तापमान की आवश्यकता पड़ती है। उष्ण कटिबन्ध में 19° से. से कम तापमान में चावल की खेती नहीं होती है।

वर्षा – चावल की खेती के लिए वर्षा का अधिक महत्व होता है। इसकी खेती 75 सेमी. से लेकर 200 सेमी. वर्षा वाले क्षेत्र में होती है। जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

मिट्टी – इसके लिए जलोढ़ मिट्टी अधिक उपयुक्त होती है क्योंकि इसमें जल धारण करने की अधिक शक्ति है। इस प्रकार की मिट्टी नदियों के डेल्टाई प्रदेश, बाढ़ प्रदेश तथा समुद्रतटी मैदानी में उपलब्ध होती है। इन भागों में भूमि समतल होती है जो चावल की खेती के लिए बहुत सुविधाजनक होती है, जिसमें वर्षा एवं सिंचाई द्वारा प्राप्त जल पर्याप्त समय तक खेतों में पड़ा रह सके। चिकनी मिट्टी जिसमें पानी धीरे–धीरे समाता रहे और नमी काफी देर तक बनी रहे, उत्तम होती है। 1 मीटर की गहराई पर मिट्टी की ऐसी तह होनी चाहिऐ, जिसमें पानी न छन सके।

पहाड़ी क्षेत्रों में चावल की खेती करने में बड़ी असुविधा होती है। इसलिए ढालों पर सीढियाँ बनानी पडती है और सीढियों के किनारे ऊँची–ऊँची मेड़ें बना ली जाती हैं ताकि पानी रुक सके।

श्रमिक – चावल की खेती के लिए कुशल एवं अधिक श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती है। जुताई, बोवाई, पौधारोपन, कटाई आदि कार्य कृषक करते हैं। अतः इसकी खेती का अधिक महत्व घने बसे प्रदेशों में होता है।

खाद – खाद की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। विशेषतः नाइट्रोजन तथा सल्फ्युरिक अम्ल की। अमोनिया सल्फेट खाद भी अच्छी होती है।

चावल के प्रकार (Types of Rice)

टिप्पणी

भारत में चावल की चार हजार से अधिक किस्में है। क्षेत्रों की प्राकृतिक दशा के अनुसार चावल के दो प्रकार हैं :

(1) मैदानी चावल – भारत में इस प्रकार के चावल का अधिक प्रचलन है।

(2) पहाड़ी चावल – यह सीढ़ीनुमा खेतों में बोया जाता है। यह एकमात्र वर्षा पर निर्भर करता है। फसल के कटने के समय के आधार पर चावल के तीन प्रकार होते है –

1. कुवाँरी चावल – यह फसल मानसून के पहले बोयी जाती है और क्वार में काट ली जाती है। इसकी एक किस्म 60 दिन के भीतर ही तैयार हो जाती है, जिसको साठी कहते हैं। यह लगभग 13 प्रतिशत भूमि पर बोया जाता है और समस्त उपज का 10% उत्पादन होता है।

2. अगहानी चावल – मानसून के प्रारम्भ में इसका पौधा तैयार कर लेते है, जो रोप देने पर अगहन तक तैयार हो जाता है। यह चावल की मुख्य फसल है। यह 86% चावल की भूमि पर बोया जाता है और कुल फसल का 87% उत्पादन होता है।

3. ग्रीष्मकालीन चावल – यह फसल दिसम्बर–जनवरी में बोयी तथा अप्रैल–मई में काटी जाती है। यह चावल 1 प्रतिशत क्षेत्र में बोया जाता है और कुल का 3 प्रतिशत उत्पादन होता है।

चावल की फसलें – भारत में चावल की तीन फसलें उगायी जाती हैं। अमन मई–जून में बो दिया जाता है और सितम्बर–अक्टूबर में काट लिया जाता है। इससे 37 प्रतिशत उत्पादन होता है। अमन जून से अगस्त तक बो दिया जाता है और दोबारा नवम्बर से जनवरी तक बो दिया जाता है और मार्च से मई तक काट लिया जाता है। इसकी उपज 1 प्रतिशत है।

चावल बोने की विधियाँ – भारत में चावल दाने छींटकर, हल चलाकर तथा बीज के आरोपण द्वारा बोया जाता है। आरोपण विधि सर्वोत्तम होती है यद्यपि इसमें अधिक श्रमिक तथा खाद की आवश्यकता पड़ती है। भारतीय कृषि अनुसन्धान विभाग ने चावल की नयी किस्मों का पता लगाया है। उत्तर प्रदेश के कई स्थानों पर जपानी विधि का प्रयोग हो रहा है। ताईचुँग, नेटिव–1 ताईचुंग 65, तैनात–3 आदि किस्में बोयी जा रही हैं।

जापानी विधि – यह एक सरल विधि है जिसमें बहुमूल्य मशीनों का प्रयोग नही होता है। इसमें उत्तम बीजों का प्रयोग होता है। उच्च भूमिपर क्यारियों में बोया जाता है और कुछ बड़ा हो जाने पर 25 सेमी की दूरी पर क्यारियों में पौधे लगा दिये जाते हैं जिसमें खाद देने एवं निराने में सुविधा हो। कम्पोस्ट तथा अमोनिया सल्फेट की खाद अधिक से अधिक प्रयोग की जाती है। बीहड़ में 20 वर्ग मीटर में 40 किग्रा. गोबर–कूड़े की खाद डाली जाती है। इसके बाद इसमें 20 वर्ग मीटर में 1 किग्रा. के हिसाब से उर्वरक डाले जाते है। इस प्रकार इस विधि में खादों का अधिक उपयोग

होता है। इस विधि में परीक्षण करने के बाद बीज रोपे जाते हैं। सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था भी आवश्यक होती है। भारत में इस विधी का प्रथम प्रयास सन् 1953 में प्रारम्भ हुआ।

टिप्पणी

चावल की उपज के क्षेत्र (Rice Growing Areas)

संसार के चावल के उत्पादकों में भारत द्वितीय स्थान पर है। यहाँ की प्रति हेक्टेयर उपज 2150 किग्रा. है जो अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। प्रति हेक्टेयर उपज जापान में 58 क्विण्टल, संयुक्त राज्य अमेरिका में 40 क्विण्टल तथा चीन में 33 क्विण्टल हैं। भारत की नयी किस्मों का उत्पादन 5 हजार से 12 हजार किग्रा. प्रति हेक्टेयर है। नयी किस्मों की उपज 195 लाख हेक्टेयेर में हो रही।

चावल की प्रति हेक्टेयर उपज भूमि को उर्वरता, वर्षा एवं सिंचाई के साधनों पर निर्भर करती है। कम उपज के अन्य कारण खादों एवं उर्वरको का कम प्रयोग, सिंचाई के साधनों की अपर्याप्तता, उत्तम बीजों का कम प्रयोग, कृषि के आधुनिकतम ढंग का अभाव, रोगों से मुक्ति की व्यवस्था का अभाव तथा किसानों की अशिक्षा है।

चावल के प्रमुख उत्पादक राज्य क्रमशः पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, तामिलनाडु, बिहार, पंजाब, उड़ीसा, छत्तीसगढ, मध्य प्रदेश तथा असम हैं।

1. पश्चिम बंगाल – चावल के खेती के क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत में इस राज्य का प्रथम स्थान है। यहाँ चावल की तीन फसलें होती हैं – अमन, ओस तथा बोरो। जाड़े की फसल अमन विशेष महत्व की होती है। यहाँ की 71 प्रतिशत भूमि पर धान उगाया जाता है जिसमे 17% पर उन्नत किस्में बोयी जाती हैं। 78% क्षेत्र में अमन, 27% क्षेत्र में ओस और 2% क्षेत्र में बोरो की फसल होती है। प्रति हेक्टेयर उपज की दृष्टि से बोरो की फसल सर्वोच्च स्थान रखती है।

2. उत्तर प्रदेश और उत्तरांचल – इस राज्य में धान के दो विस्तृत क्षेत्र हिमालय की तराई तथा पहाड़ी चौरस ढाल है। 12 प्रतिशत भूमि में उन्नत किस्में बोयी जाती हैं। प्रति हेक्टेयर उपज 1,750 किलाग्राम है। प्रमुख चावल उत्पादक जनपद देहरादून (उत्तरांचल) से देवरिया तक का तराई क्षेत्र में है। देश का 12.6% उत्पादन होता है। उत्पादन में इस राज्य का दूसरा स्थान है।

3. आन्ध्र प्रदेश – यह चावल का तीसरा बड़ा उत्पादक है। यहाँ कुर्नूल, कड़प्पा, गोदावरी, कृष्णा, नेल्लुरु तथा गुंटूर जनपदों में अच्छी उपज होती है। राज्य के 24 प्रतिशत कृषित भूमि पर चावल की खेती होती है। यहाँ चावल की दो फसलें होती हैं। प्रति हेक्टेयर औसत उपज 2,024 किया गया है। देश में पश्चिमी गोदावरी चौथा बड़ा उत्पादक जनपद है।

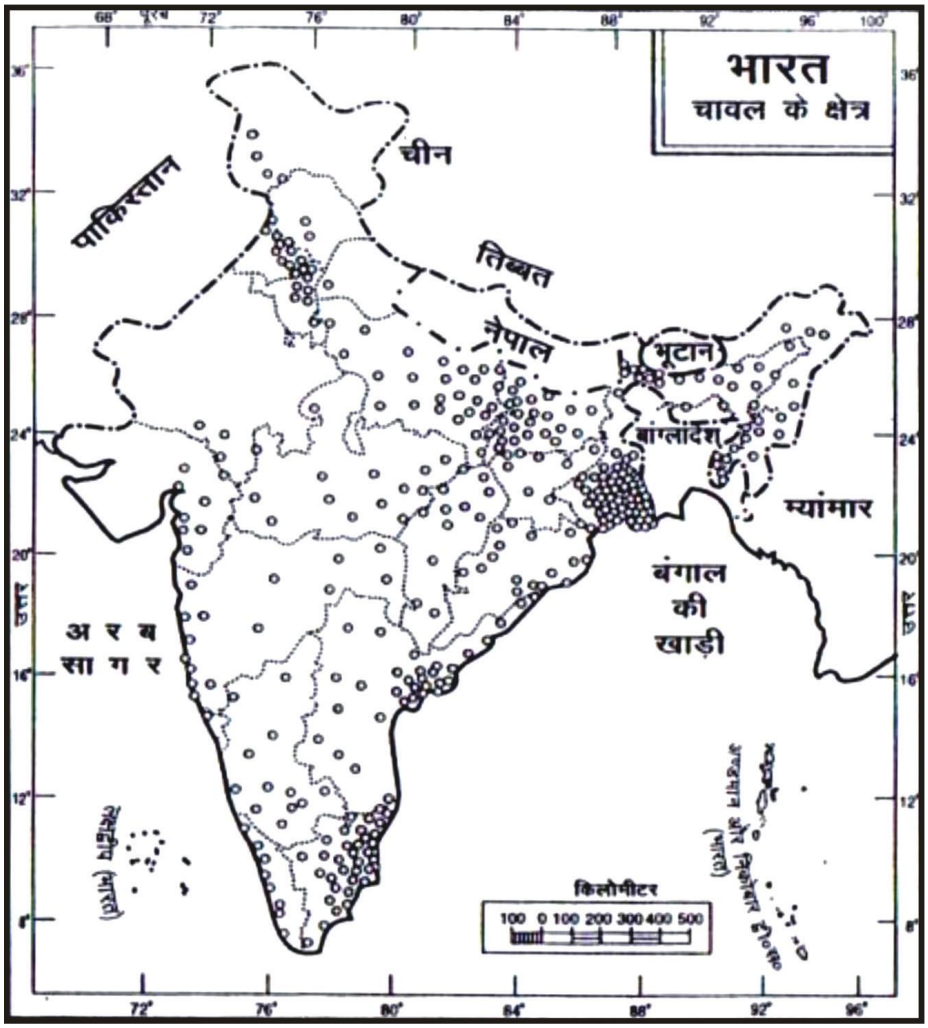
4. तमिलनाडु – इस राज्य के तंजावूर, चिंगलेपट, दक्षिण, अर्काट, रामनाथपुरम, तिरूच्चिरापल्लि तथा नीलगिरि जनपदों में चावल का उत्पादन होता है। यहाँ चावल की दो फसलें होती हैं। भारत के कुल उत्पादन का 8.8 प्रतिशत यहाँ पैदा होता है। प्रति हेक्टेयर औसत उपज 3,090 किग्रा. है। राज्य की 38 प्रतिशत कृषित भूमि पर इसकी खेती होती है। प्रति हेक्टेयर उपज में यह सभी राज्यों से आगे है। देश के चावल उत्पादक राज्यों में इसका चौथा स्थान है। देश में तंजावूर जनपद में सर्वाधिक चावल की उपज होती है।

टिप्पणी

5. बिहार और झारखंड – यहाँ चावल की दो किस्में होती हैं – शरद्कालीन तथा शीतकालीन। गंगा नदी के डेल्टा से पश्चिम की ओर वर्षा की कमी के कारण चावल का उत्पादन क्रमशः कम होता जाता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत में इस राज्य का प्रथम स्थान है। इस प्रदेश की प्रति हेक्टेयर उपज 1,210 किग्रा. है। यहाँ रांची (झारखंड), गया, मुंगेर, भागलपुर, चम्पारन, दरभंगा, सहरसा तथा पूर्णिया धान उत्पादक जिले हैं। यहाँ केवल एक फसल होती है। कृषित भूमि के 63 प्रतिशत में धान पैदा होता है। देश की 9.0 प्रतिशत उपज इस राज्य में होती है।

6. पंजाब – इस राज्य में सिंचाई एवं उर्वरक के प्रयोग से उत्तम किस्म का चावल पैदा होता है। उत्पादक जनपद गुरदासपुर, फिरोजपुर, लुधियाना, अमृतसर तथा पटियाला हैं। प्रति हेक्टेयर उपज 3,510 किलोग्राम है, जो देश में सर्वाधिक है।

7. उड़ीसा – भारत के चावल उत्पादक राज्यों में इसका सातवाँ स्थान है। कटक, पुरी, बालेश्वर, कोरापुट, ढेंकनाल तथा संबलपुर जनपद प्रमुख उत्पादक हैं। राज्य की 58 प्रतिशत कृषित भूमि पर इसकी खेती होती है। प्रति हेक्टेयर औसत उपज 430 किग्रा. है। इसमें चावल की गहन खेती होती है। देश में बालेश्वर जनपद दूसरा बड़ा उत्पादक है जहाँ 10 प्रतिशत भूमि में उन्नत किस्म की खेती होती है।



चित्र क्र. 3.5: भारत में चावल के क्षेत्र

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.17

भारत के प्रमुख चावल उत्पादक राज्य एवं उत्पादन 2015–16

क्र.	राज्य	उत्पादन क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में)	उत्पादन (मिली टन)
1	पश्चिम बंगाल	5.46	15.75
2	उत्तर प्रदेश	5.86	12.5
3	पंजाब	2.97	11.82
4	तमिलनाडु	2.04	7.98
5	आन्ध्र प्रदेश	2.16	7.49
6	बिहार	6.5	3.21
7	छत्तीसगढ़	3.8	6.09
8	उड़ीसा	3.94	5.87
9	असम	2.46	5.14
10	हरियाणा	1.35	4.14
	कुल	**44,662**	**104.32 मि.**

स्रोतः आर्थिक सर्वे भारत.

8. मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ – इस प्रदेश में समतल मैदानी भागों में कृषि होती है। जापानी विधि द्वारा यहाँ चावल पैदा करने में पर्याप्त सफलता मिली है। इस प्रदेश में 14 प्रतिशत भूमि पर उन्नत किस्म के चावल की खेती होती है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन 930 किग्रा. है। क्षेत्रफल की दृष्टि से इसका तृतीय स्थान तथा उत्पादन में आठवाँ है। रायपुर (छत्तीसगढ़), जबलपुर, गोंदिया तथा देवास मुख्य उत्पादक जनपद हैं। इस राज्य में दो फसलें होती है। राज्य में चावल का सर्वाधिक उत्पादन रायपुर में है।

सारणी क्र. 3.18

भारत में चावल का क्षेत्र व उत्पादन

वर्ष	क्षेत्रफल (मिली. हेक्टेयर में)	उत्पादन (मिली. टन में)	उपज प्रति हेक्टेयर (किग्रा)
1950–51	97	65	670
1960–61	341	346	1,013
1970–71	376	422	1,123
1980–81	396	600	1,250
1990–91	427	743	1,740
2000–01	447	857	1,901
2001–02	449	933	2,077

2007–08	404	757	1,874
2008–09	446.6	930.81	1,940
2010–11	428.6	959.5	2,239
2011–12	439.9	100.00	2,372
2012–13	435.0	103.04	—
2015–16	446.62	104.32	2,411

स्रोतः आर्थिक सर्वे भारत – 2017–18.

अन्य राज्य – महाराष्ट्र तथा गुजरात में भदई, कार्तिकी तथा अगहनी तीन फसलें होती हैं। असम में 80 प्रतिशत तथा जम्मु–कश्मीर में 10 प्रतिशत भूमि पर चावल की उन्नत खेती होती है। प्रति हेक्टेयर उपज, कर्नाटक में 2,010 किग्रा., महाराष्ट्र में 1,530 किग्रा. तथा हरियाण में, 2,730 किग्रा. है।

चावल का विदेशी व्यापार (Foreign Trade of Rice)

भारत चावल की उपज में आत्म–निर्भर नहीं है। प्रतिवर्ष अधिक मात्रा में चावल का आयात म्यांमार, थाईलैण्ड आदि देशों से करता है। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा तथा आन्ध्र प्रदेश आवश्यकता से अधिक चावल पैदा करते हैं। अधिक जनसंख्या वाले राज्यों में चावल का आयात करना पड़ता है। इनमें केरल, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, तथा पश्चिम बंगाल प्रमुख हैं। चावल का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी अधिक होता है। सोवियत संघ, इण्डोनेशिया तथा मारीशियस को चावल का निर्यात हो रहा है।

चावल का भविष्य (Future of Rice)

भारत सरकार चावल के उत्पादन को बढ़ाने के लिए अधिक आतुर है, क्योंकि यह देश का प्रमुख खाद्यान्न है। कटक में चावल अनुसन्धानशाला स्थापित की गयी है। जहाँ शोध कार्य हो रहे हैं। सिंचाई की सुविधाओं की वृद्धि तथा नवीन प्रणालियों के प्रयोग द्वारा खेती के कार्य हो रहे हैं। 76 केन्द्रों पर अनुसन्धान हा रहे है, जिससे प्रति हेक्टेयर पैदावार बढ़ायी जा सके। खाद के कई कारखाने खोले गये हैं। **डॉ. वर्न्स** के मतानुसार अच्छे बीजों तथा खाद के प्रयोग से फसल बढ़ायी जा सकती है। इस समय 305 लाख हेक्टेयर कृषित धान की भूमि में अधिक पैदावार वाली किस्में बोयी जा रही हैं।

3.3.3 कपास (Cotton)

कपास का जन्म स्थान भारत देश है। ऋग्वेद एवं मनुस्मृति में कपास के धागे का विवरण मिलता है। सिन्धु नदी की घाटी से सूती वस्त्रों के प्राप्त अवशेषों से भी ज्ञात होता है कि भारत में 5,000 वर्ष पूर्व भी सूती वस्त्रों का प्रयोग होता था। यूनानी विद्वान् **हेरोडोटस** तथा **मार्कोपोलो** क संस्मरणों एवं अभिलेखों से भारत में कपास के प्राचीन इतिहास पर प्रकाश पड़ता है। आज भी भारत की प्रमुख व्यापारिक उपज कपास है और विश्व के कपास उत्पादकों में संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, रूस तथा ब्राजील के पश्चात् पाँचवाँ स्थान भारत का ही है। विश्व की **कपास उत्पादक 33 प्रतिशत** भूमि

भारत में है किन्तु उपज केवल 8 प्रतिशत है। यहाँ कपास की भूमि में 25 प्रतिशत पर सिंचाई होती है। इसकी कृषि में 25 लाख व्यक्ति कार्य करते हैं। कपास के उत्पादन में 3 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य है।

टिप्पणी

कपास की उपज की भौगोलिक दशाएँ (Geographical Condition for Cotton Crops)

तापमान – यह उष्ण कटिबन्ध का पौधा है। इसके लिए 15° सेग्रे. से 21° सेग्रे. तापमान उत्तम होता है। पाला कपास के लिए हानिकारक होता है। कम से कम 200 दिन पालारहित होने चाहिए। अधिक तापमान के क्षेत्रों में भी इसकी कृषि हो सकती है।

वर्षा – कपास के लिए 75 से 100 सेमी. वर्षा उपयुक्त होती है। 50 सेमी. से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

कपास की बोआई प्रायः जुलाई तथा सितम्बर के मध्य होती है और मार्च – अप्रैल से इसकी चुनाई की जाती है किन्तु कपास के विभिन्न क्षेत्रों में बोआई एवं चुनाई का समय भिन्न–भिन्न होता है। इसके पौधे को बढ़ने के लिए उच्च तापमान एवं स्वच्छ आकाश आवश्क होता है। चुनने के समय स्वच्छ आकाश एवं शुष्क वायु चाहिए। इस समय सस्ते मजदूर विशेषतया औरतों की आवश्यकता पड़ती है।

भूमि – इसके लिए समतल भूमि चाहिए जिसमें जल का निकास ठीक से हो सके। खेतों में पानी लगने पर पौधों को हानि पहुँचती है।

मिट्टी – इसके लिए लावा की बनी काली मिट्टी तथा कछारी दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। भारत में इसकी उपज काली, कछारी एवं लाल मिट्टी में अच्छी होती है। मिट्टी में चूने का अंश अधिक होना चाहिए। काली मिट्टी इसके लिए सर्वश्रेष्ठ होती है, क्योंकि इसमें नमी रोकने की शक्ति होती है।

कपास के प्रकार

भारत में कई प्रकार की कपास पैदा होती है। रेशे के आधार पर लम्बे एवं महीन रेशे वाली या अमेरिकी कपास (2.5 सेमी. रेशा) तथा छोटे रेशे वाली देशी कपास (2.2 सेमी. रेशा) होती है। छोटे रेशे की कपास उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, तथा राजस्थान में पैदा होती है। बड़े रेशे की कपास गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब तथा तमिलनाडु में उत्पन्न होती है।

कपास की उपज के क्षेत्र (Cotton Growthy Areas)

भारत में कपास का उत्पादन गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, कर्नाटक, हरियाणा, राजस्थान, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश में होता है। भारत में कपास की 70% उपज दक्षिण भारत में होती है। कपास के उत्पादन में देश स्वावलंबी नहीं है क्योंकि प्रति हेक्टेयर उपज अन्य देशों की अपेक्षा कम है। मिस्त्र में 560 किग्रा., संयुक्त राज्य अमेरिका में 520 किग्रा. तथा भारत में 223 किग्रा. प्रति हेक्टेयर उपज होती है। उपज बढ़ाने के लिए उत्तम बीजों एवं खादों का प्रयोग आवश्यक है।

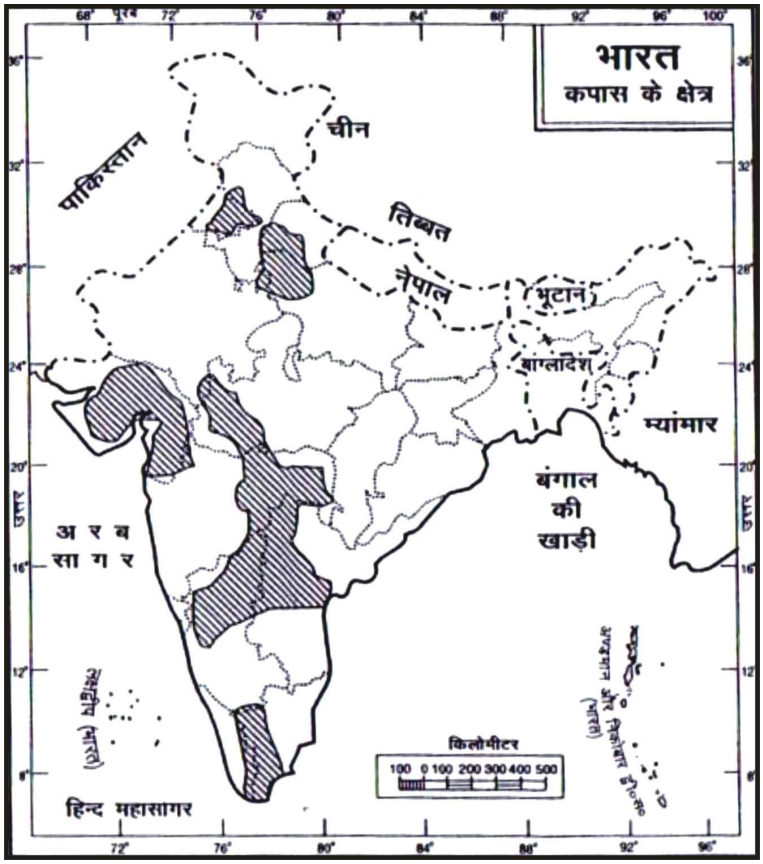
प्रति हेक्टेयर उपज कम होने के कई कारण हैं। कपास का अधिक उत्पादन दक्षिण भारत की काली मिट्टी में होता है। यहाँ यह फसल सस्यावर्तन विधि से की जाती

टिप्पणी

है। यहाँ सिंचाई नहीं होती है जबकि अनुभव से ज्ञात हो गया हैं कि सिंचित भूमि में कपास का उत्पादन अधिक होता है। सिंचित भूमि में प्रति हेक्टेयर उपज 310 किग्रा. तथा असिंचित भूमि में 75 किग्रा. है।

भारतीय केन्द्रीय कपास समिति का सुझाव है कि कपास उत्पादक क्षेत्रों में सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए। नए क्षेत्रों में कपास की फसल बोयी जाए। उत्तम बीज एवं खाद का प्रयोग बढ़ाना चाहिए। सहकारी समितियों द्वारा किसानों को कृषि यन्त्र तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान की जाएँ। कपास के रोगों से बचाव किया जाए। अच्छी कपास की खेती में वृद्धि की जा रही है।

भारत में कपास के कुल उत्पादन क्षेत्र का 17 प्रतिशत छोटे वाली और 51 प्रतिशत लम्बे रेशे वाली कपास है। कुल उत्पादन का 7 प्रतिशत छोटे रेशे वाली, 42 प्रतिशत मध्यम रेशो वाली और 51 प्रतिशत लम्बे रेशे वाली कपास है। उत्तम रेशे की कपास का उत्पादन आवश्यकता से अधिक है, मध्यम एवं लम्बे रेशे की कपास का उत्पादन कम है। अतः इसके उत्पादन में वृद्धि अनिवार्य प्रतीत होती है।



चित्र क्र. 3.6: भारत में कपास के क्षेत्र

1. पंजाब – राज्यों में उपज की दृष्टि से यह तृतीय स्थान पर है। यहाँ सिंचाई की सुविधा से प्रति हेक्टेयर उत्पादन अधिक होता है। भारत की लगभग 71 प्रतिशत उपज यहाँ होती है। लुधियाना, जालन्धर, भटिंडा तथा फीरोजपुर जनपद मुख्य उत्पादक हैं। प्रति हेक्टेयर उपज 500 किग्रा. है। यहाँ कपास की एक फसल होती है।

टिप्पणी

2. महाराष्ट्र – इस राज्य में भारत की 23 प्रतिशत कपास पैदा होती है। इसमें देशी कपास पैदा होती है जो गहरी मिट्टी में अच्छी होती है। इस राज्य में सोलापुर, अकोला, नासिक, नागपुर, यवतमाल तथा सांगली जनपद मुख्य उत्पादक हैं। यहाँ कपास की गहन कृषि होती है।

3. गुजरात – इस राज्य में देश की 23 प्रतिशत कपास पैदा होती हैं। भरूच, बड़ोदरा, अहमदाबाद तथा सूरत प्रमुख उत्पादक हैं। भरूच एवं सूरत में लम्बे रेशे की कपास पैदा होती है। यह राज्य लम्बे रेशे की कपास का सबसे बड़ा उत्पादक है। यहाँ कपास की सबसे गहन कृषि होती है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन 180 किलोग्राम है।

4. हरियाणा – इस राज्य के करनाल तथा अम्बाला जनपद में अच्छी कपास पैदा होती है। हिसार में उपज तीव्र गति से बढ़ रहा है। प्रति हेक्टेयर उपज 336 किलोग्राम है।

5. कर्नाटक – इस राज्य के बेलगाम, धारवाड़, शिवमोगा बेल्लारि तथा बीजापुर जनपदों में मिस्री कपास पैदा होती है। प्रति हेक्टेयर उपज 113 किग्रा. है। यहाँ दो फसलें पैदा होती हैं। देश का 6 प्रतिशत उत्पादन इस राज्य में होता है।

6. आन्ध्र प्रदेश – इस राज्य में अदिलाबाद, कुर्नुल, गुण्टुर तथा अनन्तपुर में कपास पैदा होता है। यहाँ गहन खेती होती है। प्रति हेक्टेयर उपज 157 किग्रा. है।

7. राजस्थान – इस राज्य के उत्तरी तथा दक्षिण–पूर्वी भाग में कपास का अच्छा उत्पादन होता है। गंगानगर, भीलवाड़ा, चितौड़गढ़, झालावाड़, अलवर तथा अजमेर उत्पादक जनपद हैं।

8. मध्य प्रदेश – इसका सातवाँ स्थान है। यहाँ देश की लगभग 5 प्रतिशत कपास पैदा होती है। उज्जैन, देवास, इन्दौर तथा धार उपज के प्रमुख जनपद हैं। यहाँ कपास की गहन कृषि होती है।

सारणी क्र. 3.19

भारत के प्रमुख कपास उत्पादक राज्य एवं उत्पादन : 2017–18

राज्य	उत्पादन (हजार गाँठ) (1 गाँठ = 170 किग्रा.)
गुजरात	12.37
महाराष्ट्र	65.46
आंध्र प्रदेश	20.38
राजस्थान	18.93
मध्य प्रदेश	18.69
हरियाणा	16.26
पंजाब	12.83
कर्नाटक	12.46
तमिलनाडु	4.88
ओडिशा	4.02

स्रोतः आर्थिक सर्वे भारत – 2018.

टिप्पणी

अन्य राज्य – तमिलनाडु के कोयम्बटूर, तिरुनेलवेली, मदुरई एवं रामनाथपुरम में इसकी खेती होती है। यहाँ कपास की दो फसले होतीं हैं। **उत्तर प्रदेश** में बिजनौर, आगरा, इटावा, मैनपुरी तथा कानपुर जनपदों में कपास की एक फसल हो रही है।

सारणी क्र. 3.20

विभिन्न वर्षों में भारत में कपास के अन्तर्गत क्षेत्र, उत्पादन एवं उपज

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर में)	उत्पादन (लाख 1 गाँठ में)	उपज (किलो / हे.में)
1950–51	58.82	30.44	88
1960–61	76.10	56.04	125
1970–71	76.05	47.63	106
1980–81	78.23	70.10	152
1990–91	74.40	98.42	225
2000–01	85.35	95.23	190
2001–02	91.32	99.97	186
2007–08	76.67	89.11	554
2008–09	76.00	126.30	524
2009–10	70.00	240	502
2010–11	74.12	330	517
2011–12	76.40	352	493
2012–13	—	338	518
2017–18	84.30	348.62	—

(1 गाँठ = 170 किग्रा)

स्रोतः आर्थिक सर्वे भारत – 2017–18.

कपास का विदेश व्यापार (Foreign Trade of Cotton)

भारत में कपास का उत्पादन माँग से कम है। उत्तम कपास की तो बहुत ही कमी है। अतः कपास का आयात पाकिस्तान एवं संयुक्त अरब गणराज्य से करना पड़ता है। छोटे रेशे के कपास का निर्यात भी संयुक्त राज्य अमेरिका, युनाइटेड किंगडम, जापान तथा फ्रांस को होता है जो कम्बल बनाने में प्रयोग होती है। अमरिकी कपास ऊन में नहीं मिलती है। इसलिए उससे सूती कम्बल नहीं बनते हैं।

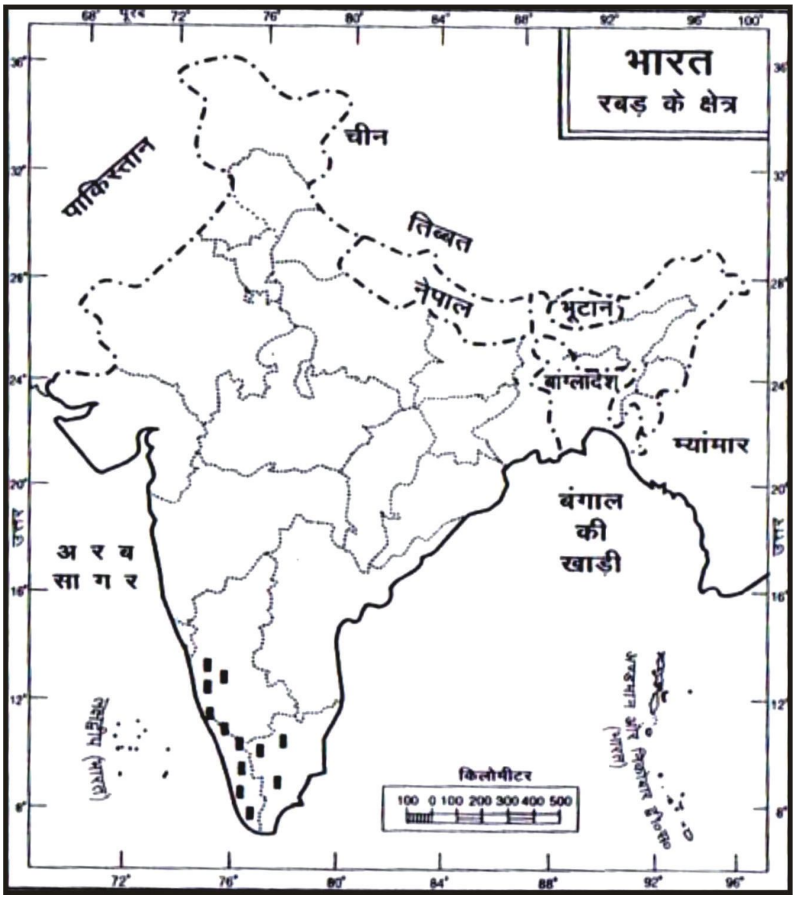
3.3.4 रबड़ (Rubber)

रबड़ के पौधे की जन्म भूमि दक्षिण अमेरिका का ब्राजील देश है। भारत में इसकी खेती का श्रेय ब्रिटेन के भारतीय मन्त्री **लॉर्ड सैलिसबरी** को है। सन् 1903 में केरल राज्य में यह पौधा लगाया गया। यह उष्ण कटिबन्ध का पौधा है।

टिप्पणी

रबड़ की उपज की भौगोलिक दशाएँ (Geographical Conditions of Rubber Crops)

तापमान – रबड़ के वृक्ष के लिए उष्णार्द्र जलवायु आवश्यक होती है। इसके लिए औसत तापमान 35° सेग्रे. लाभकारी होता है। 21° सेग्रे. से कम तापमान इस पौधे के लिए हानिकारक होता है। वार्षिक ताप–परिसर 15° सेग्रे. से अधिक नहीं होना चाहिए।



चित्र क्र. 3.7: भारत में रबड़ के क्षेत्र

वर्षा – इसके लिए 200 सेमी. से 250 समी. वार्षिक वर्षा उपयुक्त होती है। नित्य वर्षा तथा सूर्य का तीव्र प्रकाश अपेक्षित है। यह पौधा उष्णार्द्र जलवायु में बढ़ता है।

मिट्टी – इसकी उपज भिन्न भिन्न प्रकार की मिट्टियों में हो सकती है, किन्तु पानी के अच्छे निकास और गहरी दोमट मिट्टी के तटीय क्षेत्र सर्वोत्कृष्ट होते हैं। दक्षिण भारत की लाल, लैटेराईट तथा चिकनी एवं दोमट मिट्टी में इसकी पैदावार होती है। रबड़ उत्पादक देशों में 9 माह वर्षा होनी चाहिए। सस्ते एवं पर्याप्त श्रमिक आवश्यक होते हैं।

रबड़ के खेत (Rubber Farms)

भारत में रबड़ के पौधे रोपे जाते हैं या कलम लगाए जाते हैं। कलमी पौधों से अधिक रबड़ पैदा होते हैं। साधारण पौधे से प्रति हेक्टेयर 327 किग्रा. तथा कलमी पौधे से 872 किग्रा. दूध प्राप्त होता है। प्रायः वर्ष के बाद पौधे से दूध निकलने लगता

टिप्पणी

है। यह पौधा लगभग 1 मीटर प्रति वर्ष बढ़ता है। वर्ष में 200 से 300 दिन तक इन वृक्षों से दूध निकाला जाता है। गोलाई में काटकर रबड़ का दूध निकाला जाता है। प्रतिशत 300 से 450 मीटर ऊँचाई पर यह पौधा होता है। रबड़ की खेती में विभिन्न प्रकार के विकास किए जाते हैं। छठी पंचवर्षीय योजना में रबड़ की खेती की वृद्धि में 36 करोड़ रूपये व्यय किए गए।

रबड़ की उपज के क्षेत्र (Rubber Growing Areas)

भारत में विश्व के उत्पादन का केवल 1 प्रतिशत रबड़ पैदा होती है। रबड़ के प्रमुख उत्पादक राज्य केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल तथा अंदमान द्वीप हैं। विश्व के उत्पादकों में भारत का पाँचवाँ स्थान है। भारत में प्रति हेक्टेयर उपज 738 किलोग्राम है।

केरल – यह राज्य देश का 95 प्रतिशत रबड़ पैदा करता है। रबड़ की 93% खेती इस राज्य में होती है। 18 हजार हेक्टेयर में रबड़ के बाग लगाने की दस वर्षीय योजना चल रही है। मालाबार पहाड़ियों के पश्चिमी ढालों पर 300 से 700 मीटर ऊँचाई पर खेती होती है। कोट्टायम, कोजीकोड तथा एर्नाकुलम के उल्लेखनीय खेती होती है। रबड़ के खेत छोटे कृषकों के पास हैं।

तमिलनाडु – इस राज्य में कन्याकुमारी, कोयम्बटूर, सेलम, तिरून्नेलवेली तथा मदुरई में रबड़ के बाग हैं। देश की 3 प्रतिशत कृषि इस राज्य में होती है।

सारणी क्र. 3.21

भारत में रबड़ का क्षेत्र व उत्पादन

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर में)	उत्पादन (हजार मीटरी टन में)
1950–51	56	15.8
1960–61	70	25.7
1970–71	141	92.2
1980–81	194	153.1
1990–91	303	329.6
2000–01	400	630.4
2001–02	—	531.0
2002–03	408	449.0
2003–04	—	490.0
2004–05	—	532.1
2005–06	—	566.4
2007–08	—	612.7
2008–09	—	617.1

टिप्पणी

2009–10	—	825.3
2014–15	—	645.0
2015–16	—	562.0

Source: Rubber Borad, Kottayam & Monthly Rubber Statistical News 2017-18.

अन्य राज्य – कर्नाटक के कूर्ग एवं चिकमंगलूर जनपदों और त्रिपुरा में रबड़ की खेती होती है। देश की 2 प्रतिशत खेती अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में तथा 1 प्रतिशत कर्नाटक में होती है। गोवा, मेघालय, मिजोराम, मीधापूर तथा आसाम में भी रबड़ का उत्पादन हो रहा है । प्रति हेक्टेयर 1500 से 2000 किलोग्राम उपज के रबड़ के वृक्ष लगाए जा रहे हैं।

देश में 2.5 लाख रबड़ के खेत हैं जिनमें केवल 460 खेत 20 हेक्टेयर से बड़े है। शेष का क्षेत्रफल औसतन एक हक्टेयर है।

रबड़ का विदेश व्यापार – देश में रबड़ का उत्पादन कम है परन्तु माँग अधिक गति में बढ़ रही है। भारत रबड़ का आयात श्रीलंका, मलेशिया और इनण्डोनेशिया से करता है।

3.3.5 गन्ना (Sugar Cane)

गन्ना का मूल स्थान भारत है। पूर्वी भारत में गन्ने की खेती का वितरण वैदिक साहित्य में भी उपलब्ध है। चीन, जावा एवं अन्य देशों में गन्ने की खेती का विस्तार भारत से ही हुआ है।

गन्ने की उपज भौगोलिक दशाएँ (Geographical Conditions for Sugarcane Crop)

तापमान – गन्ना के लिए उष्णार्द्र जलवायु उपयुक्त होती है। आरम्भ में इसको 20° सेग्रे. तथा बढ़ोतरी के समय 20° सेग्रे. से 25° सेग्रे. तापमान लाभदायक होता है। 18° सेग्रे. से कम और 300 सेग्रे. से अधिक तापमान अनुपयुक्त होता है। अत्याधिक शीत एवं पाला इस फसल के लिए हानिकारक होता है।

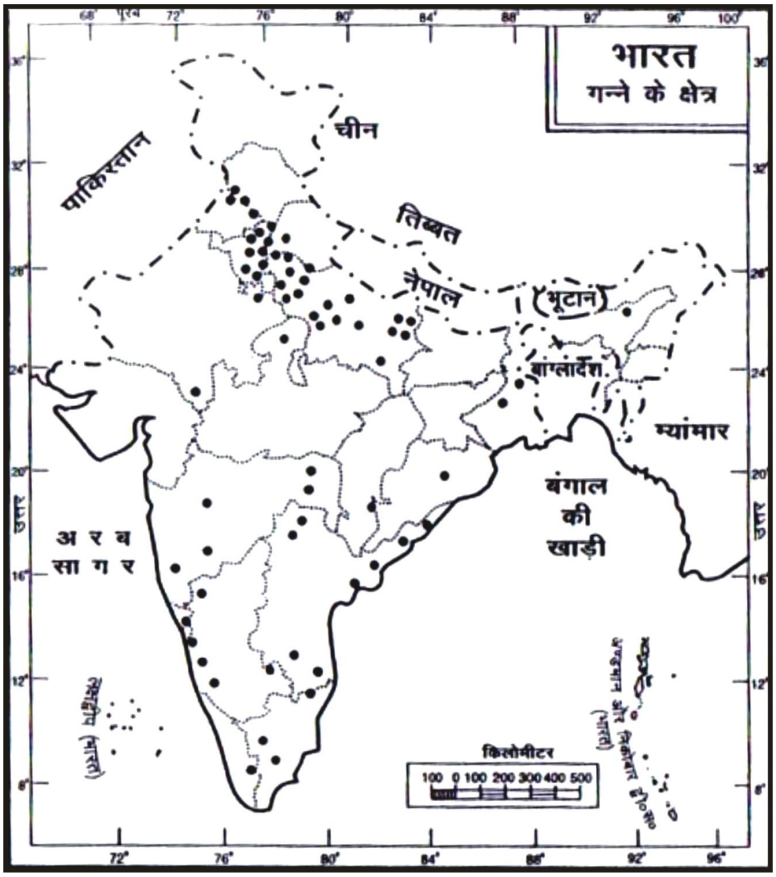
वर्षा – इसके लिए अधिक जल की आवश्यकता होती है। 100 सेमी. से 200 सेमी. वर्षा वाले क्षेत्रों में गन्ने की अच्छी खेती होती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों मे सिंचाई की जाती है। समुद्री वायु में गन्ना अधिक पैदा होता है।

मिट्टी – गन्ने के लिए गहरी दुमट एवं चिकनी मिट्टी उपयुक्त होती है किन्तु जीवांश से पूर्ण आर्द्र जलोढ़ भूमि में भी गन्ने की अच्छी पैदावार होती है। गन्ने की सिंचाई के लिए गुडाई तथा खाद की आवश्यकता पड़ती है, जिससे अधिक श्रम अपेक्षित होता है।

गन्ने की उपज के क्षेत्र

गन्ने की खेती में भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। विश्व के गन्ने के क्षेत्र का 37 प्रतिशत क्षेत्र भारत में है किन्तु उत्पादन की दृष्टि से भारत का द्वितीय स्थान है। इसका मुख्य कारण भारत में गन्ने का प्रति हेक्टेयर उत्पादन कम होना है। साथ ही गन्ने के रस की मात्रा में कमी भी है। सारणी से यह तथ्य स्पष्ट है –

टिप्पणी



चित्र क्र. 3.8: भारत में गन्ने के क्षेत्र

सारणी क्र. 3.22

प्रमुख गन्ने उत्पादक राज्य व उत्पादन

क्र.	राज्य	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर में)	कुल क्षेत्र का प्रतिशत	उत्पादन (लाख टन में)	कुल उत्पादन का प्रतिशत
1	उत्तर प्रदेश	1,852	42.47	1324.27	41.31
2	महाराष्ट्र	599	13.74	696.48	13.15
3	कर्नाटक	385	8.83	357.32	11.53
4	तमिलनाडु	284	6.51	339.19	10.75
5	आन्ध्र प्रदेश	234	5.37	155.67	5.46
6	गुजरात	203	4.65	126.90	5.00
7	पंजाब	154	3.53	59.19	3.30
8	बिहार	187	4.29	127.41	1.63
9	हरियाणा	180	4.13	74.37	2.84
10	उत्तराखण्ड	130	2.98	67.84	2.74
11	मध्य प्रदेश	53	1.22	38.63	0.74

Source: Deptt. of Agriculture and cooperation (Horticulture Division) 2013-14.

भारत के विभिन्न राज्यों में भी गन्ने का प्रति हेक्टेयर उत्पादन भिन्न–भिन्न है। भारत का औसत 58 टन प्रति हेक्टेयर है। बिहार 50 मीटरी टन, उत्तर प्रदेश 42 मीटरी

टन, कर्नाटक 84 मीटरी टन, आन्ध्र प्रदेश 88 मीटरी टन तथा महाराष्ट्र 86 मीटरी टन प्रति हेक्टेयर उत्पादन करता है। पाला से मुक्ति तथा समुद्री वायु की सुविधा से दक्षिण भारत में प्रति हेक्टेयर उपज अधिक होती है।

टिप्पणी

भारत में प्रति हेक्टेयर कम उपज के निम्न कारण है –

1. छोटे–छोटे खेत, बड़े फार्मों की संख्या कम, यन्त्रीकरण की कमी, खादों का अभाव आदि।
2. सिंचाई की अपर्याप्तता, फलतः गन्ने में कम रस निकलता है।
3. रेडराट का भयंकर रोग जो गन्ने को बर्बाद कर देता है।
4. गन्ने की अधिकांश खेती उत्तर भारत में है, जहाँ अधिक ठण्ड एवं अधिक वृष्टि तथा एकाएक तापमान बढ़ जाने की घटना गन्ने के लिए अनुपयुक्त सिद्ध होती है।

गन्ने के मुख्य उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडू, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, बिहार पंजाब तथा उड़ीसा है। उत्तर भारत में देश की 80 प्रतिशत उपज होती है।

1. **उत्तर प्रदेश** गन्ने के उत्पादकों में अग्रगण्य राज्य है। पूरे देश के 58 प्रतिशत गन्ने का क्षेत्र इसी राज्य में है। **हावर्ड** महोदय ने इस राज्य को तीन क्षेत्रों में विभाजित किया है – पहला क्षेत्र रूड़की से मेरठ तक, दुसरा बरेली के आस–पास, तीसरा फैजाबाद गोरखपूर। इन तीनों क्षेत्रों को दो पेटियों में विभक्त किया जाता है। पहली पेटी रामपुर से आरम्भ होकर बरेली, पीलीभीत, सीतापुर, खीरी गोंडा, फैजाबाद, आजमगढ़, जौनपुर, बलिया, देवरिया एवं गोरखपुर तक विस्तृत है। इस पेटी से तराई का क्षेत्र सम्बद्ध है। दूसरी पेटी गंगा–यमुना दोआब में स्थित है। यह मेरठ से इलाहाबाद तक विस्तृत है। इस पेटी का गन्ना ऊँचा मोटा तथा रसदार है। तराई के क्षेत्र में गन्ने की कृषि का विस्तार हो रहा है। यहाँ सिंचाई की कम आवश्कता पड़ती है। साथ ही यहाँ की मिट्टी में जीवांश एवं आर्द्रता परिपूर्ण है जो गन्ने की खेती के लिए आवश्यक है। इस प्रदेश में शुष्क ऋतु लम्बी होने से गन्ना अधिक समय तक खेतों में नहीं रखा जा सकता है। प्रति हेक्टेयर उपज 50 मीटरी टन है। इस राज्य में देश का 47 प्रतिशत गन्ना पैदा होता है। इसके कारण नदियों द्वारा जलोढ़ मिट्टी का जमाव, सिंचाई के लिए पर्याप्त जल की उपलब्धि, अधिक श्रमिकों की उपलब्धि तथा निकट के कारखानों में गन्ने की माँग है। अधिक जनसंख्या से चीनी की खपत भी अधिक होती है।
2. **महाराष्ट्र** का गन्ने के उत्पादन में द्वितीय स्थान है। अहमदनगर, नासिक, पुणे तथा सोलापूर प्रमुख उत्पादक जनपद हैं, यहाँ चीनी की उपलब्धि अधिक है। यहाँ प्रति हेक्टेयेर उपज 80 मीटरी टन है। इस राज्य में देश का 15 प्रतिशत गन्ना पैदा होता है।
3. **तमिलनाडु** के कोयम्बटूर, दक्षिण अर्काट तथा मदुराई जनपदों में गन्ने की खेती होती है। कोयम्बटूर में गन्ने की अनुसन्धानशाला है। यहाँ प्रति हेक्टेयर उपज 87 मीटरी टन सर्वाधिक है।

टिप्पणी

4. **कर्नाटक** राज्य में ऊपरी कावेरी बेसिन के पांड्या जनपद के कृष्ण राज सागर से सिंचित क्षेत्र तथा तुंगभद्रा नहर से सिंचित शिवमोगा एवं बेल्लारि जनपदों में गन्ने की अच्छी खेती होती है। बेलगाम में गन्ने की सर्वाधिक खेती होती है। यहाँ प्रति हेक्टेयर उपज 84 मीटरी टन है।
5. **आन्ध्र प्रदेश** का देश में पाँचवाँ स्थान है। गोदावरी तथा कृष्णा नदियों के डेल्टा क्षेत्र में उत्पादन होता है। यहाँ प्रति हेक्टेयर उत्पादन 88 मीटरी टन है।
6. **हरियाणा** राज्य में गन्ने की खेती रोहतक, करनाल तथा अम्बाला जनपदों में होती है। रोहतक जनपद में अधिक उपज होती है। यहाँ का गन्ना कम मीठा होता है। इसका कारण मिट्टी है जहाँ कैल्शियम की कमी है। यहाँ पूर्णतः सिंचित गन्ना पैदा होता है।
7. **बिहार** में देश का 2.5 प्रतिशत गन्ना पैदा किया जाता है। प्रधान गन्ना उत्पादक जनपद सारन, सीवान, भोजपुर, पश्चिमी चम्पारन, गोपालगंज, मुजफ्फरपुर, शाहाबाद, दरभंगा तथा भागलपुर है। जनपद उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र से सम्बद्ध है। यहाँ प्रति हेक्टेयर उपज 40 मीटरी टन है।
8. **पश्चिम बंगाल** के बर्दवान, नदिया तथा बीरभूम मुख्य गन्ना उत्पादक जिले हैं।
9. **पंजाब** के अमृतसर, जालन्धर, लुधियाना और **हरियाणा** के अम्बाला तथा रोहतक मुख्य उत्पादक जनपद हैं। यहाँ गन्ने का उत्पादन सिंचाई की सहायता से किया जाता है।

भारतीय गन्ना अधिकांश कोयम्बटूर गन्ना होता है, क्योंकि यह शुष्क जलवायु को सहन कर सकता है। भारत का गन्ना पतला होता है। भारत में अधिक काल तक वर्षा न होने के कारण सामान्यतः मोटा एवं रसदार गन्ना पैदा नहीं होता।

सारणी क्र. 3.23

भारत में गन्ने का क्षेत्र एवं उत्पादन

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन में)	उपज (प्रति हेक्टेयर टन)
1950–51	16.6	770	117
1960–61	24	1,100	125
1970–71	26	1,264	100
1990–91	37	2,410	225
2000–01	43.16	2959.56	68.6
2005–06	42	2811.7	66.92
2010–11	48.8	3423.8	70.09
2012–13	49.99	3,412	68.25
2013–14	50.12	3521.4	69.84
2014–15	50.32	3565.61	70.86

Source: Economic Survey of India, 2015 & Cooperation (Horticulture Division).

टिप्पणी

गन्ने की कृषि की समस्याएँ (Problems of Sugarcane Farming)

1. दक्षिण भारत में अधिक उत्पादन होता है, किन्तु खेती छोटे–छोटे टुकडों में होती है। इसलिए काटने एवं ढोने में बहुत व्यय पड़ता है। इसके लिए अधिक खाद, अच्छी सिंचाई तथा अधिक श्रमिक आवश्यक होते हैं।
2. भारत में गन्ने की खराब किस्में हैं और प्रति टन मूल्य अधिक है। इनसे प्रति टन कम चीनी प्राप्त होती है।
3. अन्य देशों में गन्ने की किस्म पर मूल्य निर्धारित होता है किन्तु किस्म की उपेक्षा करके वहाँ निम्न मूल्य निर्धारित होता है। इसलिए गन्ने का मूल्य अधिक पड़ता है।
4. सहकारी समितियों की मध्यस्थता के कारण गन्ना विकास का कार्य ढीला पड़ गया है। उत्पादन एवं उत्तमता में वृद्धि के लिए ठोस कदम की आवश्कता है।
5. यहाँ श्रम की दरें अधिक हैं किन्तु उत्पादन कम है। ऑस्ट्रेलिया में प्रति व्यक्ति उत्पादन 144 मीटरी टन चीनी है और भारत में केवल 11 मीटरी टन। फलतः चीनी का प्रति टन व्यय अधिक पड़ता है।
6. गन्ने की बोआई त्रुटिपूर्ण है जिसमें निराई में कठिनाई होती है। गन्ने के पौधों को वायु एवं प्रकाश की कमी पड़ती हैं। गन्ने में बीमारी भी लगती है।
7. गन्ने की ढुलाई में अधिक व्यय पड़ जाता है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. भारत में सर्वाधिक चावल पैदा करने वाला राज्य कौन सा है?
   (अ) प. बंगाल (ब) उडीसा
   (स) आन्ध्र प्रदेश (द) असम
2. देश में किस राज्य में सर्वाधिक गन्ना पैदा होता है?
   (अ) उत्तर प्रदेश (ब) पंजाब
   (स) तमिलनाडु (द) महाराष्ट्र
3. सर्वाधिक रबड़ पैदा करने वाला राज्य कौन सा है?
   (अ) महाराष्ट्र (ब) केरल
   (स) तमिलनाडु (द) असम

3.4 औद्योगिक विकास (Industrial Development)

भारत में औद्योगिकरण का विकास (Industrial Development in India)

भारत में औद्योगिकरण का विकास प्रथम विश्वयुद्ध काल में हुआ। राजनीतिक परिस्थितियों से विवश होकर एक द्वितीय महायुद्ध की आशंका का अनुभव करते हुए, ब्रिटिश सरकार ने औद्यागिक विकास में सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया।

द्वितीय यूरोपीय महायुद्ध भारत में औद्योगीकरण के लिए वरदान सिद्ध हुआ। युद्धकाल में जलयान, वायुयान एवं मोटर आदि के निर्माण उद्योगों की स्थापना हुई। युद्धोत्तर काल उद्योगों के लिए संकट काल था और भारतीय उद्योग पतन की ओर अग्रसर होने लगे।

टिप्पणी

भारत को सन् 1947 में स्वतन्त्रता मिली। राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेने के पश्चात् आर्थिक स्वतन्त्रता आवश्यक हो गयी। औद्योगिक नीति के तहत उद्योगों के तीन विभाग किये गये। प्रथम विभाग में अस्त्र–शस्त्र, आण्विक शक्ति, नदी घाटी योजनाएँ एवं रेल्वे, दूसरे विभाग में कोयला, लोहा–इस्पात, वायुयान, टेलीफोन, तार, जलयान निर्माण एवं खनिज और तीसरे विभाग में उद्योग धंधे रखे गये। **राष्ट्रीय योजना आयोग** (National Planning Commission) की स्थापना सन् 1950 में हुई।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में सन्तोषप्रद औद्योगिक कार्य हुए। इस योजना अवधि में सरकार ने **भिलाई, राउरकेला एवं दुर्गापुर** में इस्पात के कारखानों की नींव रखी। रेल इंजन कारखाना, **चित्तरंजन्** रेल डिब्बा कारखाना, **पेराम्बुर**, वायुयान निर्माण, **बेंगलुरू** की व्यवस्था हुई। सिन्द्री रासायनिक कारखाना का कार्य पूरा किया गया। बेंगलुरू में टेलीफोन बनाने के कारखाने का निर्माण किया गया। निजी क्षेत्र के अधिकांश उद्योग धातु उद्योग, कपड़ा उद्योग तथा इमारती उद्योग का पर्याप्त विकास किया गया। पेट्रोल शोधन, कास्टिक सोडा, रेयॉन का सूत, काँच की चादर आदि उद्योगों का पर्याप्त विकास किया गया। **राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम** की स्थापना हुई जिसमें समाजवादी समाज की रचना का उद्देश्य घोषित हुआ।

दूसरी पंचवर्षीय योजना उद्योग प्रधान थी। भारी विद्युत कारखाना **भोपाल** के पास स्थापित किया गया। उर्वरक के कारखाने नंगल, राऊरकेला तथा नेवेली में स्थापित किये गये। कुटीर उद्योगों को भी प्रोत्साहित किया गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में उद्योग एवं खनन को दूसरी प्राथमिकता दी गयी। यह निराशाजनक योजना रही, जिसके कारण चीनी आक्रमण, भारत–पाक युद्ध, निरन्तर कई वर्षो में बाढ़ एवं सूखा था। यह योजना समाजवादी लक्ष्य भी स्थापित नहीं कर सकी क्योंकि अर्थव्यवस्था मिश्रित हो गयी थी। इन्हीं विसंगतियों और असफलताओं के नाते यह योजना तीन वर्षों तक अधर में लटकी रही। यह संक्रमण अवधि वार्षिक योजना के नाम से जानी जाती है। फलतः चौथी योजना 1966 की जगह 1969 से प्रारम्भ हो सकी।

चौथी एवं पांचवी पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक स्थिति बहुत सन्तोषजनक नहीं रही। इस्पात, अलौह धातुएँ, अखबारी कागज, उर्वरक, तेल एवं पेट्रोल का आयात करना पड़ा। फिर भी कई औद्योगिक उत्पादन उत्साहवर्धक रहे। छठी पंचवर्षीय योजना कठिनाई से पार करती हुई सन् 1980 में प्रारम्भ हुई। इस योजना में औद्योगिक क्षेत्र को प्राथमिकता दी गयी। यह योजना अति महत्वाकांक्षी थी। इसमें तकनीकीकरण पर विशेष बल दिया गया। औद्योगिक क्षेत्र का निष्पादन कई कारणों से बुरी तरह प्रभावित रहा।

सातवीं पंचवर्षीय योजना अनुकूलतम परिस्थितियों में प्रारम्भ हुई। उद्योगों एवं खनिजों के विकास कें निमित्त अधिक परिव्यय निर्धारित था।

भारत को अकाल से बचाने का एकमात्र उपाय औद्योगिकरण है, ताकि लोगों को विभिन्न व्यवसायों से काम मिल सके। राजनीतिक परिवर्तनों के कारण आठवीं पंचवर्षीय योजना सन् 1991–92 में प्रारम्भ न हो सकी। यह 1 अप्रैल, 1992 में प्रारम्भ हो सकी। इस योजना का मुख्य केन्द्र बिन्दु मानव संसाधन, पेयजल तथा पर्याप्त खाद्य था। सरकार का प्राथमिक उत्तरदायित्व ऐसे मूल तत्वों की व्याख्या करना था जो मानव पूँजी का विकास करने में सहायक था।

टिप्पणी

सन् 1997–98 में औद्योगिक वृद्धि में मामूली सुधार था और यह वृद्धि 6.6% पर पहुँच गई थी परन्तु 98–99 में यह गिरकर 4% हो गई। इसका कारण खनन और विनिर्माण क्षेत्र में आई मंदी थी। 1999–2000 के दौरान औद्योगिक उत्पादन में विशेष सुधार हुआ। परन्तु नवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक यह वृद्धि दर 5.4% रही दसवीं पंचवर्षीय योजना के पहले वर्ष 2002–03 में औद्योगिक सूचकांक में 5.8% वृद्धि दर्ज की गई।

3.4.1 लोहा एवं इस्पात उद्योग (Iron and Steel Industry)

आज के उद्योग जगत में लोहा एवं इस्पात आधुनिक भौतिक सभ्यता की रीढ़ है। यह मूलभूत उद्योग (Key Industry) है। भारत की गत नौ पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में विभिन्न कारखाने स्थापित किये गये हैं और उनके आधुनिकीकरण के प्रयास चल रहे हैं और अधिक उत्पादन वृद्धि तथा उत्पादकता मूल्य घटाने के कार्यक्रम लागू किये जा रहे हैं।

उद्योगों की अवस्थापना के कारक

(क) भौगलिक कारक – कच्चे माल की प्राप्ति, जलवायु, शक्ति तथा परिवहन के साधन।

(ख) आर्थिक कारक – बाजार, श्रम तथा पूँजी।

(ग) मानवीय कारक – जीवन शक्ति तथा सांस्कृतिक विकास।

उद्योगों की स्थापना के अनुकूल तत्व

(1) कच्चे माल की निकटता। (2) शक्ति के स्त्रोत।
(3) अनुकूल जलवायु। (4) परिवहन की सुविधा।
(5) बाजार की निकटता। (6) कुशल एवं सस्ते श्रमिक।
(7) पूँजी की सुलभता। (8) बैकिंग प्रणाली की सुविधा।
(9) पूर्वारम्भ की सुविधा। (10) सरकारी आर्थिक नीति।

उद्योगों के केन्द्रीकरण से लाभ

(1) कुशल श्रमिकों की वृद्धि। (2) यन्त्रों का विकास।
(3) पूरक वस्तुओं का उपयोग। (4) सरकारी उद्योगों का विकास।
(5) स्थान की प्रसिद्धि।

उद्योग के केन्द्रीकरण से हानि

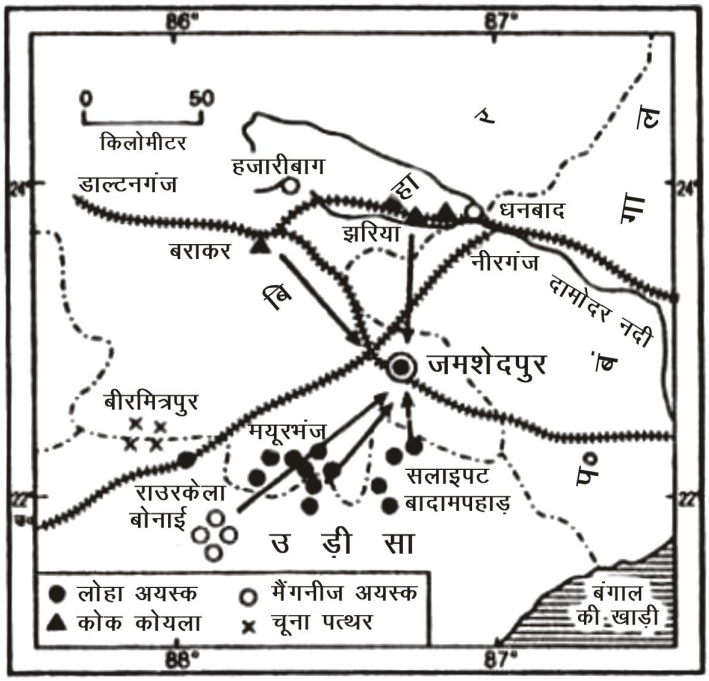
(1) सुरक्षा की दृष्टि से हानिकारक। (2) श्रमिक संघों की शक्ति का दुरुपयोग।
(3) आवास की कठिन समस्या। (4) उपयोग की वस्तुओं की कमी।
(5) सामाजिक कुरीतियों का प्रसार।

लोहा एवं इस्पात के कारखाने

(1) टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, जमशेदपुर – यह एशिया का सबसे बड़ा इस्पात कारखाना है। इस्पात के साथ वार्डर, सलाखें, चादर, रेल पटरियाँ तथा काँटेदार तार बनाये जाते हैं। यहाँ पाँच विशाल भट्टियाँ लगी हैं, जिनके लिए छः हजार मीटर टन लोहा अयस्क की आवश्यकता प्रतिदिन पड़ती है।

टिप्पणी

इसकी सफलता में निम्न सुविधाएँ सहायक हैं:



चित्र क्र. 3.9: जमशेदपुर की स्थिति

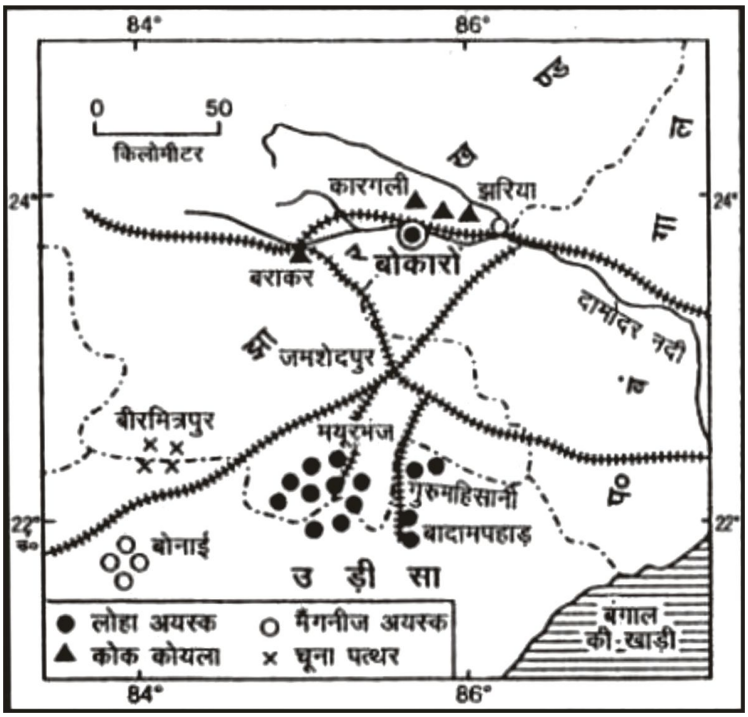
1. यह नगर स्वर्णरेखा एवं खारकोई नदियों के संगम स्थल के निकट है जो कोलकाता पत्तन से 246 किमी. की दूरी पर है। यहाँ आयात–निर्यात की पर्याप्त सुविधाएँ हैं।
2. आवश्यक कच्ची धातु सिंहभूम की कोल्हन, क्योंझर, की नोआमण्डी एवं मयूरभंज लौह–क्षेत्र से मिल जाती है। आधा अयस्क नोआमण्डी से आता है।
3. रानीगंज तथा झरिया कोयला क्षेत्र से जो यहाँ से केवल 216 किमी दूर है, कोयला मँगाया जाता है।
4. चूना पत्थर तथा डोलोमाइट सुन्दरगढ़ के पानपोश एवं बीरमित्रपुर तथा झारखण्ड के पलामू, हजारीबाग, रांची एवं सिंहभूम से आता है।
5. भट्टियों के भीतरी भाग पर लिपाई करने के काम आने वाली क्वार्टजाइट बालू यहाँ से केवल 10 किमी. दूर स्थित काली मती नदी से मँगायी जाती है।
6. मध्य प्रदेश तथा झारखण्ड से मैंगनीज अयस्क आसानी से मिल जाता है।
7. गंगा नदी के सघन बसे क्षेत्रों से कारखानों में काम करने वाले कुशल श्रमिक मिल जाते हैं। छोटा नागपुर के आदिवासी भी श्रमिक के रूप में कारखानों में काम करते हैं।
8. दक्षिण–पूर्वी रेल मार्ग पर स्थित होने से इसे परिवहन की सुविधाएँ प्राप्त हैं। रेलमार्ग की शाखाएँ लोहा तथा कोयला क्षेत्रों तक गयी हैं।

देश की बढ़ती हुई माँग ने इस्पात के इस बड़े केन्द्र के और भी विकास की ओर ध्यान आकर्षित किया। सन 1946 में संयुक्त राज्य अमेरिका की **आर्थर जी. मैकीह एण्ड कम्पनी** को सलाहकार अभियन्ता नियुक्त किया गया। सन् 1651 में प्रारम्भ होने वाले विस्तार एवं नवीनीकरण के कार्यों में **मैकीह एण्ड कम्पनी** के सुझावों को

आधार रखा गया। इस उद्योग का नवीनीकरण हो रहा है। दूसरा चरण सातवीं योजना में पूरा हो गया। इसकी उत्पादन क्षमता का 95 प्रतिशत होता है।

टिप्पणी

(2) इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, बर्द्धवान – इस कम्पनी के दो कारखाने कुल्टी तथा हीरापुर में हैं। कुल्टी दामोदर की सहायक बराकर नदी पर कोलकाता से केवल 224 किमी. पश्चिम में स्थित है। हीरापुर आसनसोल से 6 किमी. तथा **कुल्टी** से 11 किमी. की दूरी पर स्थित है। 1879 में **कुल्टी** में और सन् 1937 में **बर्नपुर** में निर्मित तीनों कारखानों का विलय सन् 1953 में **इस्को** में हो गया।



चित्र क्र. 3.10: इस्को के कारखानों की स्थिति

इस कारखानों को निम्न सुविधाएँ हैं:

1. सिंहभूमी जनपद के कोल्हन तथा उड़ीसा के मयूरभंज क्षेत्र से लोहा–अयस्क मिल जाता है। गुआ तथा चिरिया खानों से भी अयस्क आता है। झरिया (धनबाद) तथा रानीगंज (बर्दवान) से कोयला प्राप्त हो जाता है।
2. उड़ीसा के गंगापुर तथा पाराघाट से चूने का पत्थर मँगा लिया जाता है।
3. झारखण्ड तथा मध्य प्रदेश से अवश्यक मैंगनीज अयस्क सुलभ है। परिवहन की पर्याप्त सुविधा हैं।
4. गंगा नदी की घाटी से सस्ते एवं पर्याप्त श्रमिक मिल जाते हैं।

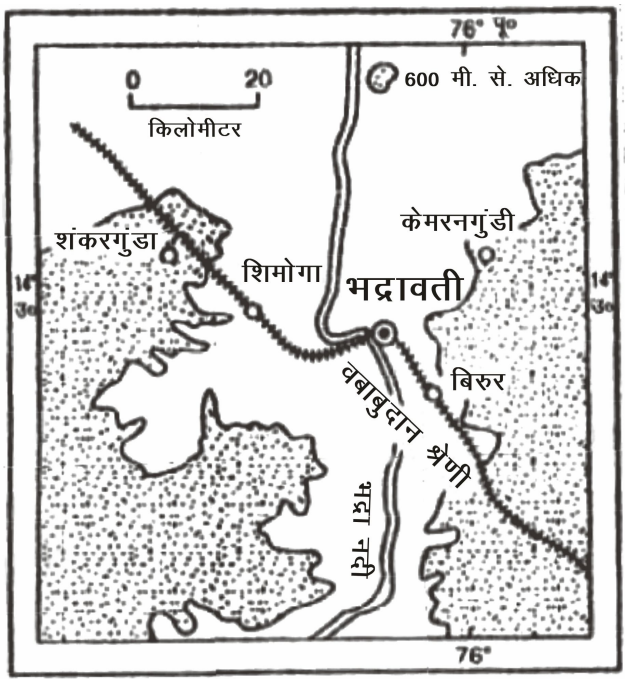
सन् 1976 में केन्द्रीय सरकार ने इस कारखाने को अपने हाथ में लिया। इसकी क्षमता 22 लाख टन की जा रही है।

(3) विश्वेश्वरैया आयरन एण्ड कम्पनी भद्रावती (शिवमोगा) कर्नाटक – यह कारखाना भद्रा नदी के किनारे शिवमोगा से 18 किमी. पूरब में स्थित है। इसमें मिश्रित धातु (Alloy) एवं विशिष्ट इस्पात का उत्पादन होता है। नरम इस्पात, फेरो

टिप्पणी

सिलिकन तथा स्पंज इस्पात अन्य उत्पादन हैं। यहाँ इस उद्योग के विकास की निम्न सुविधाएँ हैं –

1. लोहा अयस्क केमानगुण्डी (चित्रदुर्ग) की खानों से प्राप्त होता है। यह हेमाटाइट जाति का लोहा अयस्क है। यह खान भद्रावती से 42 किमी. दूर है।
2. समीपवर्ती वनाच्छादित क्षेत्र से लकड़ी प्राप्त हो जाती है जिससे विशेष प्रकार की भट्टियों में कोयला तैयार किया जाता है और कारखानो में प्रयोग किया जाता है। जोग प्रपात से जलविद्युत प्राप्त होती है।
3. चूने का पत्थर 21 किमी दूर भाण्डीगुड़ा से मँगाया जाता है।
4. यहाँ परिवहन की सुविधा है। दक्षिण केन्द्रीय रेलवे जाती है।



चित्र क्र. 3.11: भद्रावती इस्पात केन्द्र की स्थिति

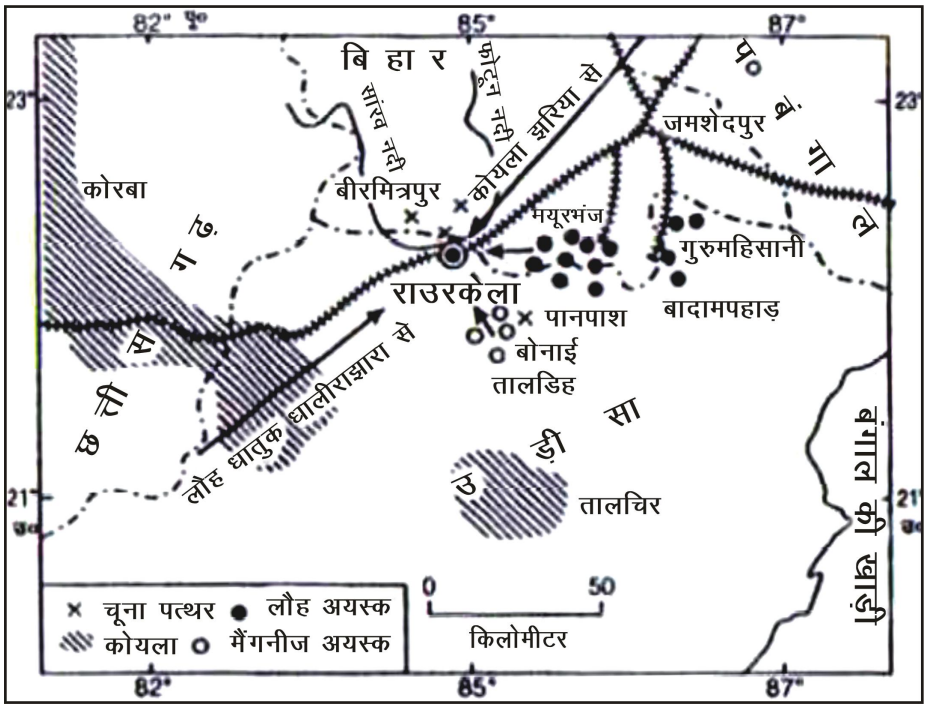
इस कारखाने की उत्पादन क्षमता सन् 1961 तक 1 लाख मीटरी टन वार्षिक थी। दरों का बढ़ना को दृष्टि में रखकर इसके विस्तार का निश्चय किया गया। कोयला के अभाव की पूर्ति के लिए एक विद्युत भट्टी का निर्माण किया गया है जो महात्मा गांधी जलविद्युत केन्द्र से विद्युत प्राप्त करती है। भद्रावती में फेरोसिलिकन के उत्पादन की भी व्यवस्था है जिससे प्रतिवर्ष 7 हजार मीटरी टन फेरोसिलिकन की उपलब्धि होती है जो भारतीय लौह इस्पात उद्योग की वर्तमान आवश्यकता के लिए पर्याप्त है। तृतीय पंचवर्षीय योजना में एल.डी. विधि से चलने वाला यन्त्र बिजली की भट्टी, ढाँचा मिल तथा ढलाई के कारखानों को बढ़ाया गया है। भारत सरकार मिश्रित इस्पात और औजार बनाने के यन्त्र को भी लगाने का विचार कर रही है। इस यन्त्र के लग जाने पर 15 लाख मीटरी टन इस्पात प्रतिवर्ष बनाया जायेगा। इसका प्रबन्ध भारतीय इस्पात प्राधिकरण के माध्यम से होता है। स्वत्वाधिकार भारत एवं कर्नाटक सरकार के अधीन है।

(4) हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड, राउरकेला (सुन्दरगढ़) उड़ीसा – सार्वजनिक क्षेत्र में निर्मित होने वाले इस्पात कारखानों में इसका प्रथम स्थान है। यह कारखाना जर्मनी की विशेषज्ञ फर्मों कूप तथा डीमाग की सहायता से बना है।

टिप्पणी

राउरकेला कोलकता से 411 किमी. दूर पश्चिम में दक्षिण–पूर्वी रेलवे के हावड़ा–मुम्बई मार्ग पर सुन्दरगढ़ जिले में स्थित है। यहाँ अग्रलिखित सुविधाएँ हैं:

1. यह स्थान कोइल तथा सांख नदियों के संगम पर स्थित है। इसलिए पर्याप्त जल मिल जाता है। ब्राह्मणी तथा सांख नदियों पर बाँध बनाकर सालभर पानी मिलने की व्यवस्था की गयी है। एक पहाड़ी श्रेणी द्वारा यह नगर भट्टियो की गर्मी तथा झुलस से बच जाता है।



चित्र क्र. 3.12: राउरकेला इस्पात कारखाने की स्थिति

2. बोनाई (सुन्दरगढ़) में लोहे का भण्डार है। 72 किमी. दूर बरबुआ स्थान पर नयी खदान का भी विकास किया जा रहा है।
3. झारखण्ड की बोकारो, कारगली तथा झरिया की खदानों से कोयला प्राप्त होता है। इस क्षेत्र में कोयला धोने की मशीनें भी लग गयी हैं। भोजुडीह तथा दुग्धा कारखानों से धुला हुआ कोयला मिल जाता है।
4. यहाँ चूने के पत्थर का बाहुल्य है। यहाँ से चूना अन्य इस्पात केन्द्रों को भी भेजा जाता है। यहाँ से 24 किमी. पर एशिया की सबसे बड़ी चूने की खान पुर्नापनी है जहाँ मशीनों से ही कार्य होता है। गाटिटनगर की खान से डोलोमाइट प्राप्त होता है।
5. दक्षिणी–पूर्वी रेलमार्ग से परिवहन की पूर्ण सुविधा है।

यह कारखाना सन् 1959 से कार्य कर रहा है। यहाँ डोलोमाइट किल्न, ब्लूमिंग तथा स्लैबिंग मिल, ऑक्सीजन उपकरण, इस्पात उत्पादन इकाई तथा एल.डी. विधि कार्यरत् हैं। इसमें तीन विशाल विद्युत भट्टियाँ हैं जिनमें प्रत्येक की प्रतिदिन उत्पादन क्षमता 1 हजार मीटरी टन कच्चा लोहा है। यहाँ की विशेषता है एल.डी. विधि। इस विधि से इस्पात बनाने में कम पूँजी की आवश्यकता पड़ती है और व्यय भी कम होता है क्योंकि प्रति घण्टे उत्पादन–गति अधिक है। इस विधि में पिघले कच्चे लोहे की सतह

टिप्पणी

पर ध्वनि की गति से शुद्ध ऑक्सीजन प्रवाहित की जाती है जिससे एक घण्टे में 60 मीटरी टन इस्पात का उत्पादन होता है। वायुमण्डल से भारी मात्रा में शुद्ध ऑक्सीजन प्राप्त करने के लिए प्रति घण्टा 9,900 घन मीटर ऑक्सीजन उत्पादित के रूप में प्राप्त होती है। कोक भट्टी से अलग की गयी हाइड्रोजन से नाइट्रोजन को मिला दिया जाता है। इस मिश्रण को चूने के साथ मिलाकर एक बहुत अच्छी उर्वरक अमोनिया नाइट्रेट तैयार होती है। यह एशिया भर में पहला और विश्व में तीसरा ऐसा कारखाना है।

इस कारखाने में दो ढलाई के कारखाने निर्मित हैं जिनसे एक गर्म ढलाई तथा दूसरे में ठण्डी ढलाई होती है। गर्म ढलाई से भारी चादरें तथा स्लैब और ठण्डी ढलाई से टिन तथा चादरें तैयार होती हैं। यहाँ भारी पट्ट, चौड़ी चादरें, बेलित चादरें तथा टिन पट्ट तैयार होते हैं। 2002 (अप्रेल से दिसम्बर) तक इस कारखाने में 1,083.8 हजार टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार हुआ। यह सबसे आधुनिक कारखाना है। हिन्दुस्तान इस्पात कारखानों के केन्द्रीय डिजायन ब्युरो को सारी योजना का भार सौंपा गया हैं। इस कारखाने की क्षमता 18 लाख टन इस्पात, टिन चादरें, प्लेट तैयार करने की है।

यह कारखाना भारत के संकेतक के रूप में सभी के लिए सुन्दर भविष्य का वरदान है।

(5) भिलाई (दुर्ग) झारखण्ड इस्पात कारखाना – सार्वजनिक क्षेत्र के इस्पात कारखानों की श्रृंखला में यह द्वितीय कारखाना है। यह कारखाना रूसी विशेषज्ञों के सहयोग से बनाया गया है। इसका निर्माण सन् 1957 में प्रारम्भ हुआ। यह नगर तांदुला नहर के किनारे नागपुर से 250 किमी. तथा रायपुर से 25 किमी. दूर कोलकाता–मुम्बई रेलमार्ग पर दुर्ग जिले में स्थित है। इस कारखाने की मशीनें, शिल्पिक सहायता तथा अन्य सहयोग सोवियत रूस से मिले हैं।

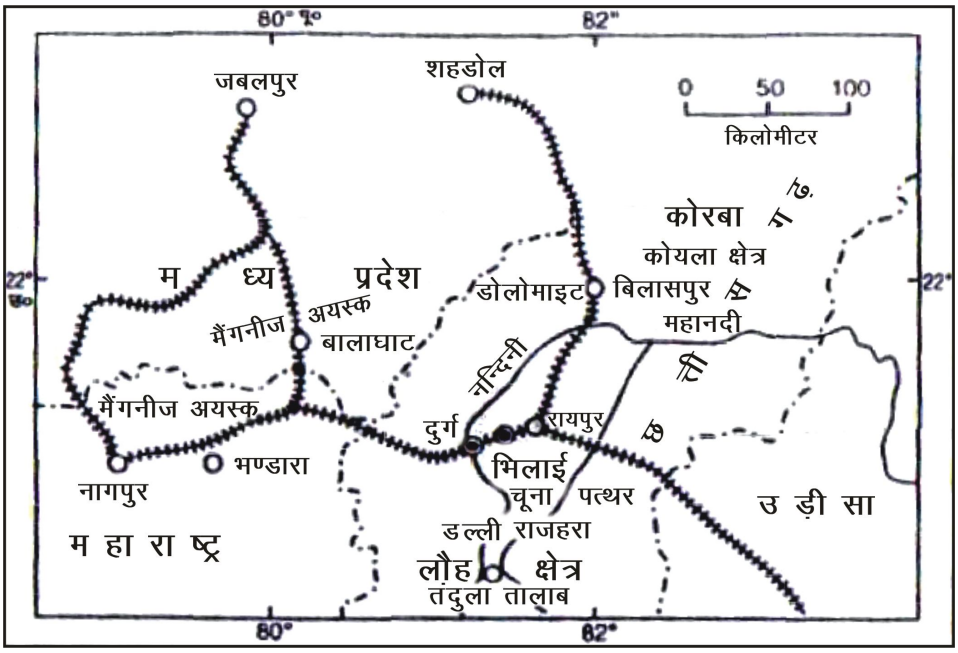
भिलाई की प्रथम कोक भट्टी सन् 1958 में ही उत्पादन करने लगी। यहाँ स्लीपर की छड़ें, भारी स्ट्रक्चरल, मर्चेण्ट बार्स तथा ब्लेड्स तैयार होते हैं।

इस कारखाने के लिए सुलभ भौगोलिक परिस्थितियाँ निम्न प्रकार हैं –

1. यहाँ से लगभग 80 किमी. दक्षिण की ओर स्थित राजहरा तथा नन्दिनी की खानों से लौह अयस्क सुलभ है। इस लौह–क्षेत्र को सोवियत यन्त्रों से सुसज्जित कर दिया गया है।
2. इस कारखाने के लिए झारखण्ड की बोकारो, कारगली एवं झरिया तथा छत्तीसगढ़ की कोरबा की कोयले की खानें कोयला प्रदान करती हैं। दुग्धा तथा कारगली कारखाने से धोया कोयला प्राप्त हो जाता है।
3. चूने का पत्थर यहाँ से लगभग 24 किमी. दूर स्थित नन्दिनी की खानों से मिल जाता है। बिलासपुर में हिरी की खदान से डोलोमाइट तथा बालोव क्षेत्र से क्वार्टजाइट प्राप्त होता है।
4. तांदुला तथा मरोदा जलाशयों से जल की प्राप्ति होती है। तांदुला जलाशय की तांदुला नहर द्वारा गोंदली जलागार में जल प्रवाहित करके आवश्यक मात्रा में जलापूर्ति की जा सकती हैं।
5. दक्षिण–पूर्वी रेलमार्ग द्वारा परिवहन की सुविधाएँ सुलभ हैं। कारखाने के लिए कच्चा माल लाने वाली मालगाड़ियों के लिए एक काफी बड़ा प्रांगण भी बनाया जा रहा है।

टिप्पणी

6. मैंगनीज अयस्क पश्चिम में स्थित भण्डारा (महाराष्ट्र) तथा बालाघाट (मध्यप्रदेश) जनपदों से प्राप्त किया जाता हैं।



चित्र क्र. 3.13: भिलाई इस्पात केन्द्र की स्थिति

इसकी क्षमता 40 लाख मीटरी टन तक की है। यह देश का सबसे बड़ा इस्पात का कारखाना है। यहाँ 2002 (अप्रेल से दिसम्बर) तक 2618.3 हजार टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार हुआ।

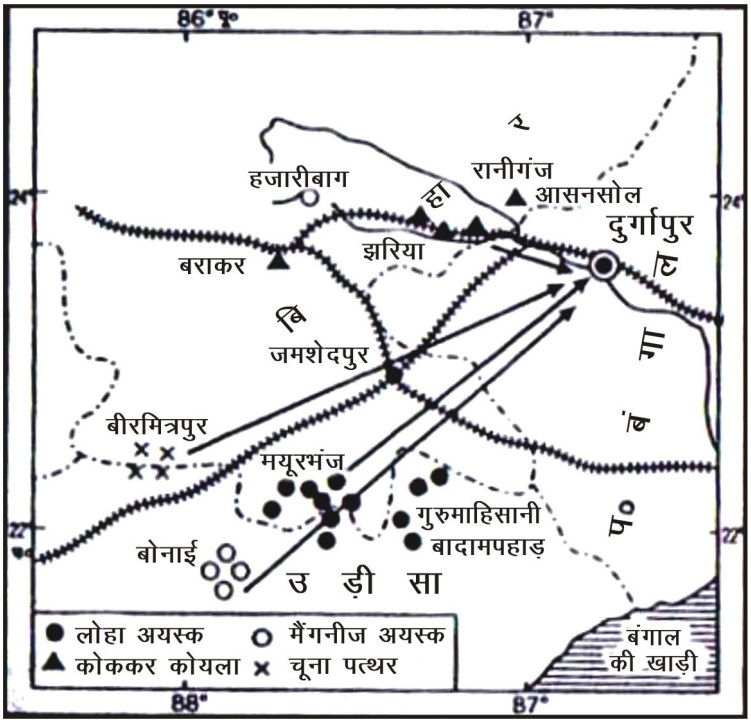
(6) दुर्गापुर (बीरभूम) पश्चिम बंगाल इस्पात कारखाना – तृतीय इस्पात कारखाने की स्थापना पश्चिम बंगाल के दुर्गापुर नामक स्थान पर की गयी है। यह ग्राण्ड ट्रंक रोड पर कोलकाता से लगभग 176 किमी. दूर है।

इस्पात के इस कारखाने को खोलने का निश्चय निम्नलिखित भौगोलिक सुविधाओं के आधार पर किया गया –

1. इस कारखाने के लिए लोहा अयस्क सिंहभूम की विख्यात गुआ क्षेत्र की बोलानी की खदानों से प्राप्त होता है। लोहा अयस्क दुर्गापुर के 320 किमी. के अर्द्धव्यास के अन्दर मिल जाता है।
2. कोयला तो इसके द्वार पर ही है। रानीगंज, झरिया तथा बराकर कोयला क्षेत्र से इसकी प्राप्ति होती है। इसका अपना कोयला धोने का कारखाना है। कारगली (हजारीबाग) से भी धोया कोयला मिल रहा है।
3. चूना अभी तो हाथीबाड़ी तथा बीरमित्रपुर से आता है किन्तु शीघ्र ही यह निकटवर्ती भाग से प्राप्त होने लगेगा।
4. डोलोमाइट बीरमित्रपुर (उड़ीसा) से मँगाया जाता है।
5. मैंगनीज अयस्क बराविल क्षेत्र (उड़ीसा) से प्राप्त हो जाता है।
6. आवश्यक जल दुर्गापुर बैरेज (दामोदर नदी) से प्राप्त होता है।

टिप्पणी

7. दुर्गापुर रेलों, सड़कों और नहरों के संगम पर स्थित है; जो इसे मुख्य कच्चे माल के स्त्रोतों और भावी बाजारों से सम्बद्ध करते हैं।
8. निकट के वाष्प बिजलीघर से पर्याप्त मात्रा में विद्युत उपलब्ध है।



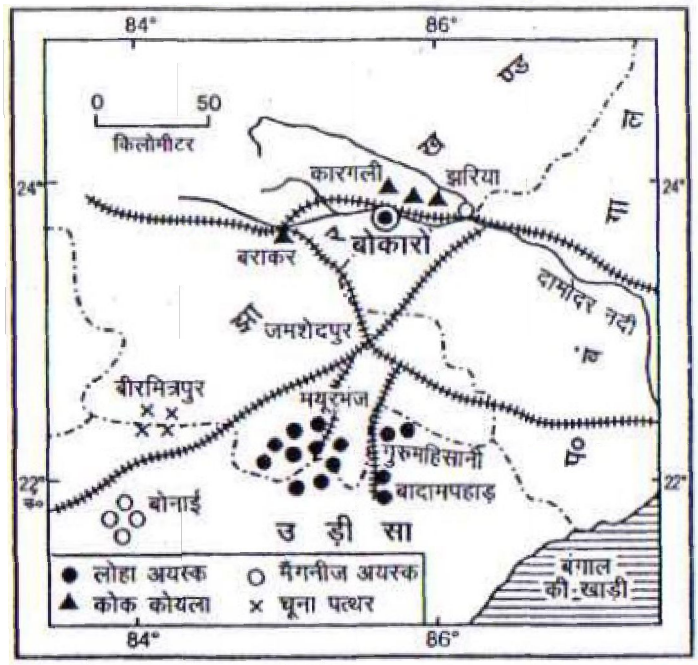
चित्र क्र. 3.14: दुर्गापुर इस्पात कारखाने की स्थिति

दुर्गापुर के विद्युत गृह का मुख्य कार्य धमन भट्टी का टर्बी बायलर तथा कोक ओवेन और उपोत्पाद के अन्य कारखानों के लिए ऊँचे ताप पर वाष्प तैयार करना है। इसके अतिरिक्त बाहर से विद्युत मिलना बन्द हो जाने पर यह कारखाने के संचालन के लिए पर्याप्त मात्रा में विद्युत भी तैयार करेगा। इसके लिए इसमें 5 हजार किलोवाट के जेनरेटर लगाये गये हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ भविष्य में 20,000 किलोवाट का एक और जेनरेटर लगाने की भी योजना है। यहाँ 2002 (अप्रेल से दिसम्बर तक) 1135.0 हजार टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार हुआ।

(7) बोकारो (हजारीबाग) झारखण्ड इस्पात कराखाना – चौथा इस्पात कारखाना बोकारो में स्थापित हुआ है। इसको रूसी तकनीकी सहायता उपलब्ध है। इसकी डिजाइन आधुनिकतम प्राविधिक प्रणाली पर आधारित है। यह एक परिष्कृत कारखाना है जो विश्व का एक बड़ा कारखाना है जिसकी सबसे बड़ी धमन भट्टी, सबसे ऊँची कोक ओवेन बैट्रियाँ तथा सबसे बड़ा सिटरिंग प्लाण्ट अपना सानी नहीं रखते हैं। विश्व की आधुनिकतम प्रायोगिक विधियाँ प्रयुक्त हैं। इसकी आर.सी.सी. चिमनी एशिया में सबसे ऊँची हैं।

अक्टूबर 1972 में प्रथम धमन भट्टी चालू हुई। इसकी वर्तमान क्षमता 10 लाख मीटरी टन है। यह कारखाना तकनीक, स्वावलम्बन, बढ़ते हुए उत्पादन, समृद्धि तथा देश के सुखद भविष्य का प्रतीक है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 3.15: बोकारो इस्पात केंद्र की स्थिति

निजी तथा सरकारी क्षेत्र के कारखानों में समन्वय स्थापित करने तथा विकास की दृष्टि से **इस्पात प्राधिकरण 'सेल'** का निर्माण सन् 1973 में भारत सरकार ने किया। इसकी ही सम्बद्ध कम्पनी **हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड** है जो भिलाई, दुर्गापुर तथा राउरकेला कारखानों का प्रबन्ध करती है। **बोकारो स्टील लिमिटेड** भी सेल (SAIL) की सहायिका है। इस्पात प्राधिकरण एक सार्वजनिक क्षेत्र का प्रतिष्ठान है जो संयुक्त राज्य अमेरिका को छोड़कर विश्व का सबसे बड़ा संस्थान है। यहाँ 2002 (अप्रेल से दिसम्बर तक) 2500.0 हजार टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार हुआ।

इन इस्पात संयन्त्रों के उत्पादन में 175 मिनी इस्पात संयन्त्रों से पूर्ति की जाती है जिनकी प्रतिस्थापित क्षमता 68 लाख टन है।

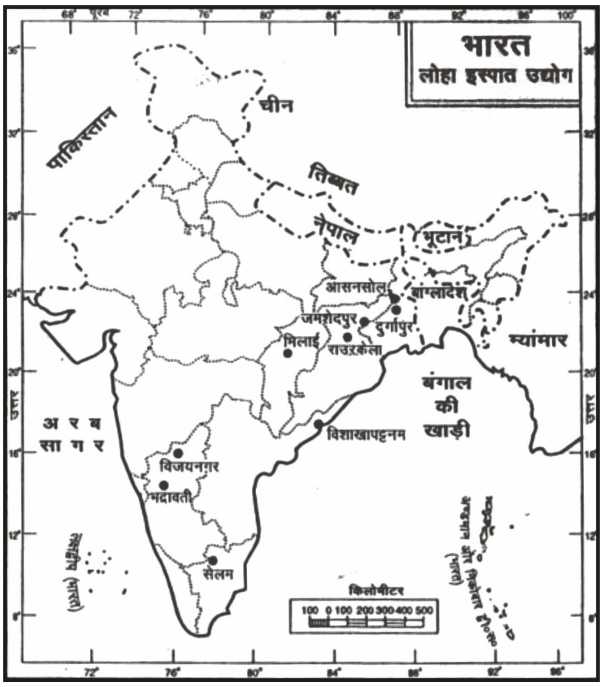
(8) सेलम इस्पात कारखाना – सेलम तामिलनाडु में यह कारखाना स्थापित किया गया हैं। यहाँ 1982 में उत्पादन प्रारम्भ हो गया है। यहाँ नेवेली से लिग्नाइट कोयला उपलब्ध होता है। यहाँ प्रतिवर्ष 70 हजार टन स्टेनलैस स्टील, 75 हजार टन सिलिकन इस्पात और 75 हजार टन अन्य विशिष्ट इस्पात उत्पादन की क्षमता है। यहाँ 2002 (अप्रेल से दिसम्बर तक) 61.5 हजार टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार हुआ।

(9) विशाखापट्टनम इस्पात कारखाना – यह कारखाना 1980 में भारत के छठे समेकित संयन्त्र के रूप में राष्ट्रीय इस्पात निगम तथा आन्ध्र प्रदेश सरकार के संयुक्त प्रयास के रूप में स्थापित किया गया। दक्षिणी क्षेत्र में यह प्रथम समेकित इस्पात संयंत्र है जो समुद्र तट पर स्थापित किया गया है। यह आधुनिकतम प्रौद्योगिकी पर आधारित है इसकी वार्षिक उत्पादन क्षमता 30 लाख टन है। यहाँ 2002 (अप्रेल से दिसम्बर तक) 61.5 हजार टन बिक्री योग्य इस्पात तैयार हुआ।

(10) विजयनगर इस्पात कारखाना – कर्नाटक के बेल्लारी जिले के हॉस्पेट के निकट पूर्णतया भारतीय तकनीकी से यह कारखाना स्थापित किया गया है। इसकी उत्पादन क्षमता 30 लाख टन इस्पात पिंड की है। इसके लिए कर्नाटक के उत्तम लोहे

टिप्पणी

के जमाव, निकट ही चूना पत्थर और डोलोमाइट, मध्य प्रदेश की कनहन घाटी और आन्ध्र प्रदेश की सिगरेनी से कोकिंग कोयला, तुंगभद्रा सजल एवं विद्युत शक्ति उपलब्ध होगी। पारादीप पत्तन के निकट दैतारी (उड़ीसा) में भी इस्पात संयंत्र स्थापित करने की योजना चालू है।



चित्र क्र. 3.16: भारत में लोहा एवं इस्पात केन्द्र

इस्पात का उत्पादन एवं उपयोग – पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत होने वाले विकास कार्यों के फलस्वरूप देश में लोहा और इस्पात की माँग में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। साथ ही साथ उत्पादन तथा उपभोग में भी वृद्धि हुई है। कुल उत्पादन की दृष्टि से भारत का स्थान विश्व में दसवाँ तथा प्रति व्यक्ति कच्चा इस्पात उत्पादन की दृष्टि से 27 वाँ है।

सारणी क्र. 3.24

भारत में इस्पात संयन्त्रों की क्षमता (हजार टन में)

संयन्त्र	कच्चा इस्पात	बिक्री योग्य इस्पात
भिलाई इस्पात संयन्त्र	3,925	3,153
दुर्गापुर इस्पात संयन्त्र	1,802	1,586
राउरकेला इस्पात संयन्त्र	1,900	1,671
बोकारो इस्पात संयन्त्र	4,360	3,780
सेलम इस्पात संयन्त्र	—	175
मिश्र इस्पात संयन्त्र	—	184
भारतीय लौह एवं इस्पात कम्पनी	300	242
योग	**12,287**	**10,791**

Source: Indian Minerals Year Book 2016.

टिप्पणी

कुल इस्पात के उत्पादन में लघु इस्पात कारखानों का योगदान 25% होगा।

सारणी क्र. 3.25

भारत में इस्पात संयन्त्रों में लोहा–इस्पात का उत्पादन 2016 तक (हजार टन में)

संयन्त्र	पिग लोहा
भिलाई	2,618.3
दुर्गापुर	1,135.0
राउरकेला	1,083.8
बोकारो	2,500.0
मिश्र इस्पात	70.6
सेलम इस्पात	61.5
विश्वेश्वरैया	59.5
कुल	**7,528.9**

Source: Indian Minerals Year Book 2016.

समन्वित इस्पात संयन्त्रों के अलावा इस्पात का उत्पादन छोटे–छोटे संयन्त्रों में भी किया जाता है। ये संयन्त्र इलैक्ट्रिक आर्क भट्टी और इन्डक्शन फर्नेस भट्टियों का भी इस्तेमाल करते हैं और इस्पात छीलन और स्पंज आयरन का कच्चे माल के रूप में उपयोग करते हैं जहाँ समन्वित इस्पात संयन्त्रों में आमतौर पर सामान्य इस्पात का बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है वहीं लघु संयन्त्र में सामान्य इस्पात के साथ–साथ स्टेनलैस स्टील और मिश्र धातु इस्पात का उत्पादन भी किया जाता है। सन् 1999–2000 में इस क्षेत्र ने 70.9 लाख टन (अस्थायी) कच्चे इस्पात का उत्पादन किया।

जुलाई 1991 में घोषित औद्योगिक नीति में लोहे और इस्पात को सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित उद्योग की सूची से निकाल दिया गया है और इसके लिए लाइसेन्स की अनिवार्यता भी समाप्त कर दी गई है। अब उद्यमी स्थान सम्बन्धी कुछ प्रतिबन्धों के तहत किसी भी क्षमता का इस्पात संयन्त्र लगा सकते हैं। लोहे और इस्पात को उच्च प्राथमिकता वाले उद्योगों की सूची में भी स्थान दिया गया है।

इस्पात का विदेश व्यापार (Foreign Trade of Steel)

भारत से लोहा एवं इस्पात का निर्यात होता है। संयुक्त अरब गणराज्य सबसे बड़ा ग्राहक है। निर्यात में विश्व के देशों में भारत का दूसरा स्थान है। निर्यात की वृद्धि में भारतीय इस्पात प्राधिकरण इण्टरनेशनल की सन् 1974 में स्थापना का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। आयात 5 लाख टन है।

भारत कच्चे लोहे का संसार में सबसे बड़ा निर्यातक है। निर्यात फारस की खाड़ी के देशों, संयुक्त अरब गणराज्य, सेवियत रूस, इराक, सूडान आदि देशों में होता है। इस्पात का आयात संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम तथा जर्मनी से होता है।

टिप्पणी

लौह–इस्पात उद्योग की समस्याएँ (Problems of Iron and Steel Industry)

वर्तमान काल में लोहा–इस्पात उद्योग के सन्मुख कुछ गम्भीर समस्याएँ हैं जिन पर विचार कर लेना आवष्यक है –

1. **वित्त की समस्या** – इस उद्योग के नवीनीकरण एवं विस्तार कार्य के लिए बड़ी मात्रा में धन की आवश्यकता है। इस बड़ी रकम की पूर्ति आन्तरिक साधनों से होनी असम्भव जान पड़ती है। भारत सरकार की समाजवादी व्यवस्था पर आधारित औद्योगिक नीति के कारण सार्वजनिक क्षेत्र को निजी क्षेत्र की अपेक्षा अधिक महत्व दिया है जिससे उद्योगपतियों को निजी क्षेत्र की स्थिरता पर सन्देह हो गया है।
2. **कर्मचारियों का अभाव** – इस्पात के कारखानों को चलाने के लिए दक्ष तथा योग्य कर्मचारियों की आवश्यकता है जिनका हमारे देश में अभाव है।
3. **कोककर कोयले की कमी** – लौह इस्पात उद्योग के लिए कोककर कोयले की आवश्यकता पड़ती है। नये कारखाने चालू हो जाने से ऐसे कोयले की माँग में और भी वृद्धि हो गयी है। इसके वर्तमान उत्पादन में वृद्धि करनी होगी। निजी क्षेत्रों तथा सार्वजनिक क्षेत्र में 14 कोयला धोने के कारखानों की व्यवस्था करके इस समस्या को सुलझाने का निश्चय किया गया है।
4. **परिवहन का अभाव** – इस उद्योग से सम्बन्धित कच्चे तथा पक्के मालों का स्थानान्तरण रेल मार्ग के द्वारा ही किया जाता है। वर्तमान काल में रेल के इंजनों व डिब्बों की कमी भी इस उद्योग के लिए एक समस्या बन गयी है।
5. **उत्पादन क्षमता का अपूर्ण उपयोग**– प्रायः सभी कारखानों में क्षमता से कम का उपयोग हो रहा है। पूर्ण क्षमता के उपयोग की अत्यन्त आवश्यकता है।
6. **इस्पात के मूल्य**– लोहा एवं इस्पात की संरचनात्मक वस्तुओं के मूल्य अन्य देशों से कम हैं। सरकार द्वारा मूल्य निर्धारण से समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

3.4.2 वस्त्र उद्योग (Textile Industry)

सूती वस्त्रोद्योग भारत का सर्वाधिक संगठित तथा सबसे महत्वपूर्ण उद्योग है। यह भारत की आर्थिक स्थिति का आलम्बन है। बुकेनन महोदय के शब्दों में, "सूती उद्योग भारत के प्राचीन युग का गौरव, अतीत एवं वर्तमान में कष्टों का कारण किन्तु सदा की आशा है।" इस उद्योग की क्षमता की दृष्टि से विश्व में भारत का द्वितीय स्थान है। श्रमिकों की संख्या की दृष्टि से भी भारत का तृतीय स्थान है। कपास के उपयोग की दृष्टि से चीन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चात् भारत का तीसरा स्थान है। वर्तमान समय में 1,866 मिलें हैं इनमें से 192 सार्वजनिक क्षेत्र में, 153 सहकारी क्षेत्र में तथा 1,521 निजी क्षेत्र में हैं।

सूती वस्त्र उद्योग का विकास – उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय सूती वस्त्रोद्योग ने एक नए रूप में जन्म लिया। सन् 1818 में हुगली नदी के किनारे घूसरी (कोलकाता) नामक स्थान पर आधुनिक ढंग की सबसे पहली सूती मिल स्थापित की गई, किन्तु इसे सफलता नही मिली। सन् 1851 में अंग्रेजों ने गुजरात के भरूच नामक नगर में सूती कपड़े की एक मिल स्थापित की, किन्तु यह भी सफलता प्राप्त नहीं कर सकी। इस उद्योग की वास्तविक नींव इसी वर्ष डाली गयी जबकि मुम्बई में

टिप्पणी

श्री कावसी नाना भाई डावर ने बोम्बे स्पिनिंग एण्ड वींविंग कम्पनी की स्थापना की। सन् 1861 में रणछोड़लाल छोटालाल रँहटीवाला ने अहमदाबाद में शाहपुर मिल्स की स्थापना की। इसे संचालित करने के लिए लंकाशायर से कारीगर बुलाए गए थे। सन् 1863 में इसी नगर में कैलिको मिल्स की स्थापना हुई। यहाँ महीन सूत और सिलाई के धागे अधिक मात्रा मे तैयार होने लगे। सन् 1861–65 का अमरिकी गृहयुद्ध भारतीय सूती वस्त्रोद्योग के लिए वरदान सिद्ध हुआ क्योंकि इंग्लैण्ड को अमरिकी कपास मिलनी बन्द हो गई। ऐसे संकट के समय भारत ने अधिक मात्रा में कपास निर्यात करना आरम्भ कर दिया तथा प्राप्त धन को इस उद्योग के विकास में लगा दिया गया। सन् 1869 में स्वेज मार्ग के खुल जाने से मशीनों के आयात में और भी सुविधा मिल गई।

प्रथम यूरोपीय महायुद्ध (सन् 1914) के प्रारम्भ हो जाने से ब्रिटेन से सूती वस्त्रों का आयात बन्द हो गया। साथ ही साथ युद्धजनित आवश्यकताएँ काफी बढ़ गयीं। विदेशी वस्त्रों का मूल्य काफी बढ़ गया, इसलिए भारतीय उपभोक्ताओं के समक्ष भारतीय मिलों द्वारा तैयार सूती वस्त्रों की ओर झुकने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। वस्त्रों का आयात घट गया। अतः भारतीय मिलों को उत्पादन बढ़ाना पड़ा। विदेशों से मशीनें, औजारों, रंगों, रसायनों आदि के आयात में होने वाली कठिनाइयों के होते हुए भी भारतीय सूती वस्त्रोद्योग ने अप्रत्याशित सफलता प्राप्त की।

इसके पश्चात् द्वितीय यूरोपीय महायुद्ध के श्रीगणेश काल तक इस उद्योग को संरक्षण प्राप्त हो गया। ब्रिटेन तथा जपानी माल पर संरक्षण कर लगा दिया गया। इधर कांग्रेस द्वारा संचालित विदेशी माल के बहिष्कार के आन्दोलन ने भी इस उद्योग को सहायता प्रदान की। यह क्रमशः विकास करता गया। सन् 1939 से 1947 के मध्य सूती वस्त्रों की माँग बढ़ गयी। विदेशी कपड़ो का आयात कम हो गया क्योंकि द्वितीय महायुद्ध की ज्वाला धधक उठी थी। मित्र देशों की सैनिक एवं असैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति का एकाधिकार भारत को मिल गया। इन परिस्थितियों में इस उद्योग के विकास का स्वर्णिम अवसर मिल गया। विदेशी मण्डियों जैसे पश्चिमी अफ्रीका, ईरान, इराक, मलाया, ऑस्ट्रेलिया से सम्पर्क स्थापित करने का मौका भी मिल गया।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल में देश में कपास के उत्पादन में वृद्धि तथा इस उद्योग की तत्कालीन कठिनाइयों को दूर करने का सफल प्रयास किया गया। कर्वे समिति तथा कानुनगो समिति की संस्तुतियों के अनुसार करघा उद्योग को भी प्रोत्साहन मिला। **सूती वस्त्र निर्यात प्रवर्तक परिषद्** की भी स्थापना हुई जिसके अन्तर्गत ब्रिटेन, ब्रिटिश अफ्रीका, सूडान, अदन, ऑस्ट्रेलिया, श्रीलंका तथा इथियोपिया को वस्त्र निर्यात किये गये। संसार के मुख्य निर्यातकों में जपान के पश्चात् भारत का ही स्थान था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजनाकाल में सरकारी नई नीति की घोषणा हुई जिसके अनुसार विद्युतचलित करघे सहकारी समितियों द्वारा लगाए जाने लगे, नए तकुओं के लगाने की आज्ञा दी गई जिनका उत्पादन निर्यात किया जा सके तथा अम्बर चरखे को अधिक प्रचलित किया गया। भारतीय वस्त्रों की खपत विदेशी बाजारों मे कम थी जिसके प्रमुख कारण मूल्य में अत्याधिक वृद्धि, उत्पादन शुल्क की दरों में परिवर्तन तथा घरेलू बाजार में खपत की कमी थी तबसे यह उद्योग प्रगति कर रहा है। सच्चे अर्थ में यह भारतीय उद्योग है जिसमें भारतीय पूँजी संगठन का पूर्ण संयोग है। **राष्ट्रीय कपड़ा निगम** 100 मिलों के आधुनिकीकरण तथा विकास कार्य की देखभाल कर रहा है। सूत उत्पादन में भारत का स्थान विश्व में चौथा है और वस्त्रोत्पादन में द्वितीय है।

टिप्पणी

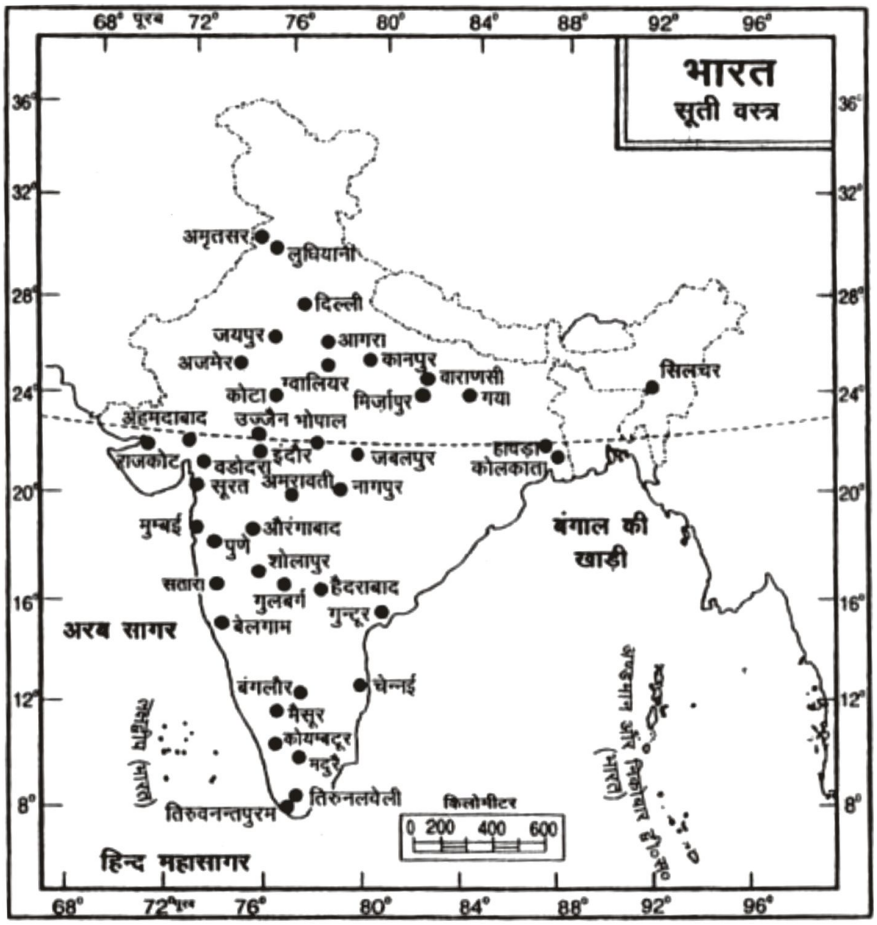
सूती वस्त्रोद्योग में अग्रणी राज्य निम्नांकित हैं:

महाराष्ट्र – कारखानों में वस्त्रोत्पादन की दृष्टि से इस राज्य का देश में प्रथम स्थान है। यहाँ 119 मिलें हैं। इस राज्य में 18 कताई की मिलें तथा शेष कताई एवं बुनाई की मिलें हैं। यहाँ की मिलों में अच्छे किस्म के कपड़े तैयार किए जाते हैं। केवल मुम्बई नगर में 54 मिलें हैं। जिनमें 6 केवल कताई का काम करती हैं और अन्य में दोनों कार्य होते हैं। इस राज्य में अन्य केन्द्र सोलापुर, पुणे, नागपुर, वर्धा, अमरावती, अकोला, औरगाबाद, आमलनेर, सतारा तथा थाणे हैं।

मुम्बई नगर में इस उद्योग की स्थापना एवं विकास के निम्नलिखित कारण हैं –

1. मुम्बई का पश्चिमी प्रदेश कपास का प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है। इसके अतिरिक्त संयुक्त अरब गणराज्य और संयुक्त राज्य अमेरिका से उत्तम कपास आसानी से मँगाई जा सकती है।
2. भारत में इस उद्योग की विधिवत् स्थापना सर्वप्रथम मुम्बई में ही हुई तथा यहाँ आशातीत सफलता भी मिली जिसके फलस्वरूप पूँजीपतियों ने अन्य कारखानों की स्थापना के लिए भी अधिक महत्व दिया।
3. मुम्बई भारत का सर्वश्रेष्ठ पत्तन है। साथ ही साथ यह अन्य भारतीय पत्तनों की अपेक्षा पश्चिमी राष्ट्रों से अधिक निकट भी है जिससे यूरोपीय देशों से सूती वस्त्रोद्योग सम्बन्धी मशीनें बहुत आसानी से मँगाई जा सकती है। इसके अतिरिक्त मुम्बई का सम्बन्ध रेलों द्वारा देश के भीतरी भागों से भी अपेक्षाकृत पहले हो सका जिससे देश के भीतरी भागों को भी तैयार माल भेजने की सुविधा प्राप्त हो सकी।
4. मुम्बई में देश के कोयला क्षेत्रों के दूर होने के कारण यान्त्रिक शक्ति की दृष्टि से इसे कठिनाई अवश्य थी, किन्तु अफ्रीका से कोयला आसानी से मँगाया जा सकता था। सन् 1914 तक मुम्बई के कारखाने विदेशों से आयात किये गये कोयला से चलाए जाते थे किन्तु इसके बाद टाटा जल विद्युत योजनाओं से सस्ती जल विद्युत प्राप्त होने लगी जिससे शक्ति सम्बन्धी उपरोक्त कठिनाई भी दूर हो गई।
5. वैसे तो जनसंख्या अधिक होने के कारण, सम्पूर्ण देश में श्रमिक आसानी से प्राप्त हो जाते हैं, मुम्बई के समीप इस दृष्टि से और सुविधा है। काली मिट्टी के उपजाऊ प्रदेश से पर्याप्त संख्या मे श्रमिक उपलब्ध हो जाते हैं।
6. समीपवर्ती भागों में जनसंख्या अधिक होने के कारण कपड़े की माँग भी अधिक है। देश के भीतरी भागों में उत्तम वस्त्रों की माँग भी होना स्वाभाविक ही है।
7. मुम्बई एक बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र है जहाँ पूँजी के लेन–देन के लिए बैंक तथा विदेशी कम्पनियों के कार्यालय हैं।
8. सबसे बड़ी सुविधा है यहाँ की उत्तम जलवायु। इस उद्योग के लिए नम जलवायु चाहिए क्योंकि शुष्क जलवायु में धागा टूट जाता है। समुद्र के निकट स्थित होने के कारण यहाँ प्राकृतिक नमी हैं। अतः कानपुर की तरह कृत्रिम नमी पैदा करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 3.17: भारत के सूती वस्त्र उद्योग के केन्द्र

मुम्बई में इस उद्योग की कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं:

1. यहाँ मिलों के प्रसार के लिए स्थानाभाव है।
2. इस नगर में आवास की समस्या बहुत कठिन है। श्रमिकों के लिए मकान मिलना असम्भव है।
3. मुम्बई का जीवन स्तर बहुत ऊँचा है। अतः दैनिक आवश्यकता की वस्तुएँ– दूध, घी, तरकारी–बहुत महँगी मिलती हैं।
4. यहाँ स्थानीय तथा सरकारी कर अधिक हैं।
5. श्रमिकों के असन्तोष के कारण हड़तालें हो जाती हैं।
6. देश के भीतर के उद्योगों से कठोर स्पर्धा भी करनी पड़ती है।

गुजरात – यह राज्य सूती वस्त्रोद्योग में द्वितीय है। यहाँ 118 मिलें हैं जिनमें 24 कताई की और शेष कताई एवं बुनाई की मिलें हैं। इस राज्य में भी महाराष्ट्र की तरह सभी सुविधाएँ प्राप्त हैं। **अहमदाबाद** भारत की सूती मिलों का सर्वश्रेष्ठ केन्द्र है। यहाँ मिलों की संख्या 69 है। इस नगर में देश के सूती वस्त्रोत्पादन का 25 प्रतिशत तैयार होता है। इस कारण बहुधा इसको 'भारत का मैनचेस्टर' कहकर पुकारा जाता है। इस नगर में सूती उद्योग के केन्द्रित होने के कारण निम्न हैं –

1. यह कपास के प्रमुख उत्पादन क्षेत्र में स्थित है। इसको मुम्बई से भी अधिक कपास की सुविधा है।

टिप्पणी

2. यहाँ कारखाने तथा बस्तियों के लिए सस्ती एवं पर्याप्त भूमि है।
3. यहाँ सस्ते मजदूर मिलते हैं क्योंकि यहाँ का जीवन–स्तर मुम्बई की अपेक्षा नीचा है।
4. श्रेष्ठ कपड़ा निर्माण करने के फलस्वरूप यह नगर विशिष्टता प्राप्त कर चुका है।
5. परिवहन के सस्ते एवं सुगम साधन उपलब्ध है।

इस राज्य के अन्य सूती केन्द्र वड़ोदरा, भरूच, सूरत, भावनगर, राजकोट आदि हैं।

तामिलनाडु – सूती वस्त्रोद्योग में इस राज्य का तृतीय स्थान है। इस राज्य में प्राचीन काल से ही सूती वस्त्रोद्योग कुटीर उद्योग के रूप में था। अतः यहाँ कुशल कारीगरों का अभाव नहीं था। कपास भी उपलब्ध थी किन्तु कोयले का अभाव था। इसी कारण यह उद्योग विलम्ब से विकसित हो सका। इस राज्य में 439 मिलें हैं।

जल विद्युत शक्ति की प्राप्ति के साथ ही साथ यहाँ यह उद्योग तेजी से आगे बढ़ा। इस राज्य के सूती वस्त्रोद्योग के इतिहास को यदि जल विद्युत शक्ति के विकास का इतिहास कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं। दक्षिणी भारत की चार प्रमुख जल विद्युत योजनाओं ने चार केन्द्रों को जीवन प्रदान किया। पाइकारा योजना ने कोयम्बटूर को, पेरियार योजना ने मदुरई को, पापनासम योजना ने तिरुनेलवेली को तथा मेटूर योजना ने सेलम को विकसित किया। जल विद्युत शक्ति के अतिरिक्त नेवेली लिग्नाइट योजना से भी इस राज्य को आशा हो गयी है। इसके कारखानों में सूत कातने का कार्य अधिक होता है। कोयम्बटूर इस राज्य का सबसे बड़ा सूती केन्द्र है, इसलिए इसे **मैनचेस्टर** (Manchester) कहकर पुकारा जाता है। यहाँ 99 कारखाने हैं। मदुरई जिले में 6 सूती कारखाने हैं तथा 2 चैन्नई नगर में। तिरुनेलवेली, तिरुच्चिरापल्लि, सेलम, पाण्डिचेरी, पेराम्बूर, तुतुक्कुडि इस राज्य के अन्य केन्द्र हैं।

पश्चिम बंगाल – इस राज्य का सूती वस्त्रोद्योग में कारखाने एवं श्रमिकों की संख्या की दृष्टि से चतुर्थ स्थान है। पश्चिम बंगाल में सूती वस्त्रोद्योग का केन्द्रित होना इस तथ्य को सिद्ध करता है कि इस उद्योग के विकास में सहायक परिस्थितियाँ निम्न प्रकार हैं –

1. परिवहन की सुविधा।
2. कोलकाता पत्तन से मशीनों एवं कच्चे माल के आयात में सुविधा।
3. झरिया एवं अन्य कोयला के क्षेत्र से निकटता।
4. सस्ते मजदूरों की प्रचुर संख्या में प्राप्ति।
5. लाभदायक जलवायु।
6. पश्चिम बंगाल, असम, बिहार एवं उत्तर प्रदेश का विस्तृत बाजार।

इस राज्य में 42 मीलें हैं जिसमें 23 कताई तथा शेष बुनाई की मीलें हैं। इस उद्योग के केन्द्र हावड़ा में 14 और श्रीरामपुर में 10 कारखाने हैं।

उत्तर प्रदेश – इस राज्य में कुल 51 मिलें हैं। इस प्रदेश में सूती वस्त्रोद्योग के विकास के निम्न कारण हैं –

टिप्पणी

1. उत्तर प्रदेश में कपड़े का एक विस्तृत बाजार है।
2. यहाँ स्थानीय कपास के साथ पंजाबी कपास भी उपलब्ध है।
3. सस्ते श्रमिक आसानी से उपलब्ध हैं।
4. उन्नत परिवहन की भी सुविधाएँ हैं।

इस प्रदेश की सबसे बड़ी असुविधा ईंधन की कमी है। **कानपुर** इस उद्योग का सर्वप्रथम केन्द्र है, जिसको 'उत्तरी भारत का मैनचस्टर' कहते हैं। कानपुर की स्थिति इसकी उन्नति के लिए उत्तरदायी है। अन्य सूती केन्द्र वाराणसी, आगरा, हाथरस, मुरादाबाद, रामपुर, लखनऊ, मोदीनगर एवं सहारनपुर है। देहरादून (उत्तरांचल) में भी सोवियत रूसी मशीनों से ससुज्जित एक कारखाना खोला गया है। कई कताई मिलों की आधारशिला रखी गई है।

सारणी क्र. 3.26

भारत के प्रमुख राज्यों में सूती वस्त्र मिलें व उत्पादन

राज्य	मिलों की संख्या	उत्पादन (दस लाख मीटर में)
तमिलनाडु	978	370
महाराष्ट्र	198	1,437
गुजरात	89	1,331
मध्य प्रदेश	59	367
उत्तर प्रदेश	68	287
उत्तरांचल	9	—
प. बंगाल	30	218
कर्नाटक	40	79
तेलंगाना	37	—
हरियाणा	71	32
राजस्थान	62	63
केरल	34	17
भारत	**1987**	

Source: Indian Cotton Mills Federation Bombay, 2014-15.

अन्य राज्यों के प्रमुख सूती केन्द्र

मध्य प्रदेश – यहाँ 26 मिले हैं, जिनके प्रमुख केन्द्र ग्वालियर, इन्दौर, उज्जैन, राजनान्दगाँव, सतना, जबलपुर, भोपाल, रतलाम तथा देवास हैं।

कर्नाटक – इस राज्य में भी 32 मिलें हैं। मैसूर, बैंगलौर, बेलगाम, मैंगलौर, बल्लारि तथा चित्रदुर्ग प्रमुख केन्द्र हैं।

आन्ध्र प्रदेश – इस राज्य में 53 कारखाने हैं जिनके केन्द्र हैदराबाद, वारंगल, गुंटूर, सिकन्दराबाद तथा पूर्वी गोदावरी हैं।

टिप्पणी

केरल – इस राज्य में 27 मिलें हैं जिनके केन्द्र कणान्नूर, तिरुवनन्तपुरम, अनन्तपुर, अलप्पे तथा चलापुरम हैं।

राजस्थान – इस राज्य में 21 मिलें हैं जिनके स्थान जयपुर, किशनगढ़, भीलवाड़ा, अजमेर तथा पाली हैं।

अन्य राज्य – हरियाणा में 13, पंजाब में 11, उड़ीसा में 6, बिहार में 6, दिल्ली में 5, पुदुच्चेरी में 5, असम में 2, जम्मू व कश्मीर तथा गोवा में एक–एक मिलें हैं।

सूती वस्त्रउद्योग का विदेश व्यापार (Foreign Trade of Cotton Textile)

भारत केवल श्रेष्ठ सूती वस्त्र का आयात थोड़ी मात्रा में करता है। इसका सूती वस्त्र का निर्यात कुल निर्यात का 5.5 प्रतिशत है। इसका व्यापार जर्मनी, ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, श्रीलंका, कीनिया तथा न्यूजीलैण्ड के साथ है।

सूती वस्त्र उद्योग की समस्याएँ (Problems of Cotton Textile Industry)

वस्त्रोद्योग के समक्ष उपस्थित समस्याओं के निदान के निमित्त कई जाँच समितियों के प्रतिवेदनों पर विचार हुआ, उनके सुझाव लागू किए गए। कई अन्वेषण संस्थाएँ भी चालू की गई हैं।

इस उद्योग की प्रमुख समस्याएँ निम्न प्रकार हैं :

1. मशीनों का आधुनिकीकरण, उत्पादन एवं उत्पाद की वृद्धि के लिए अति आवश्यक।
2. आवश्यक यन्त्रों के निर्माण की व्यवस्था तथा पूँजी का अभाव।
3. अन्वेषण कार्य की आवश्यकता।
4. स्वचलित करघों की संख्या में वृद्धि।
5. विदेशी प्रतिस्पर्धा।
6. सूती वस्त्रों के प्रति व्यक्ति उपभोग में कमी।
7. मिल एवं करघा उद्योग में समन्वयक का अभाव।
8. अलाभकर इकाइयों की समस्या।
9. वस्त्रों के मूल्य में कमी की आवश्यकता।
10. कच्चे माल की कमी।
11. विकेन्द्रीकरण–कुछ राज्यों का श्रमानुपात अन्य राज्यों से अधिक है। मुम्बई में यह उद्योग केन्द्रित है, किन्तु बिहार एवं उड़ीसा में चालक शक्ति के सामीप्य, घनी जनसंख्या के होते हुए भी यह उद्योग केन्द्रित नहीं है।
12. कारीगरों का प्रशिक्षण।
13. अनियमित विद्युत आपूर्ति, स्थापित क्षमता का अपूर्ण उपभोग तथा मिल एवं हाथकरघा क्षेत्र की प्रतिस्पर्धा।

टिप्पणी

अपनी प्रगती जाँचिए (Check Your Progress)

14. राष्ट्रीय योजना आयोग की स्थापना कब हुई थी?
    (अ) 1956 (ब) 1947
    (स) 1950 (द) 1960
15. भिलाई इस्पात कारखाना निम्न में से किसके सहयोग से बना?
    (अ) रूस (ब) जापान
    (स) ब्रिटेन (द) जर्मन
16. दुर्गापुर इस्पात कारखाना निम्न में से किसके सहयोग से बना?
    (अ) ब्रिटेन (ब) फ्रान्स
    (स) इटली (द) जर्मन
17. राउरकेला इस्पात कारखाना निम्न में से किसके सहयोग से बना?
    (अ) जर्मन (ब) फ्रांस
    (स) बेल्जियम् (द) इटली
18. सूती वस्त्र उत्पादन सबसे अधिक निम्न में से किस राज्य में होता है?
    (अ) महाराष्ट्र (ब) गुजरात
    (स) उड़ीसा (द) तामिलनाडु
19. दक्षिण भारत का मैनचेस्टर क्या है?
    (अ) कोयम्बटूर (ब) बंगलौर
    (स) सेलम् (द) पाण्डिचेरी
20. निम्नलिखित में से चीनी का प्रमुख उत्पादक राज्य है –
    (अ) उत्तर प्रदेश (ब) बिहार
    (स) तामिलनाडु (द) कर्नाटक

3.5 अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade)

किसी भी देश का व्यापार उसकी आर्थिक प्रगति का द्योतक एवं सभ्यता के विकास का मापदण्ड होता है। इसके माध्यम से एक देश या क्षेत्र की आन्तरिक वस्तुएँ दूसरे क्षेत्र या देश में खपती हैं तथा क्षेत्र या देश को आय प्राप्त होती है।

औद्योगिक आयोग के अनुसार ईसा से 3000 वर्ष पूर्व भी भारत से रोम, मिस्र, सीरिया, चीन, पूर्व और मध्यपूर्व के देशों को भारतीय मलमल, जरी के रेशमी वस्त्र, स्वर्ण एवं हीरों के आभूषण, गरम मसाले आदि पदार्थ निर्यात किये जाते थे, परन्तु 18 वीं शताब्दी के मध्य यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप भारतीय उद्योगों के साथ ही साथ विदेशी व्यापार को गहरा धक्का लगा। भारत कच्चे माल का निर्यातक एवं तैयार माल का आयातक बन गया। स्वतंत्रता से पूर्व भारत का विदेशी व्यापार ब्रिटेन के उपनिवेश एवं कृषि प्रधान देश के रूप में था। अपनी अधिकांश आवश्यकताओं के लिये वह ब्रिटेन तथा राष्ट्रमण्डलीय देशों पर निर्भर था।

टिप्पणी

1947 में स्वतन्त्रता एवं देश के विभाजन के बाद भारत के व्यापार में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। जूट, कपास और चावल उत्पादक क्षेत्रों के पाकिस्तान में चले जाने से भारत इन पदार्थों का आयातक बन गया, इससे देश का व्यापार संतुलन बिगड़ गया। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान भारत के व्यापार में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। स्वतंत्रता से पूर्व भारत लगभग 50 वस्तुओं का निर्यातक था। आज भारत लगभग 190 देशों को 7,500 वस्तुएँ निर्यात करता है तथा 140 देशों से 6,000 से अधिक वस्तुएँ आयात करता है। निर्यात में विविध प्रकार के कृषिकृत तथा औद्योगिक वस्तुएँ, हस्तशिल्प, हथकरघा, कुटीर और कला की वस्तुएँ शामिल हैं। यही नहीं विगत वर्षों से परियोजनाओं सम्बन्धी निर्यातों परामर्श, सिविल कंस्ट्रक्शन, व्यापारिक समझौते आदि की भी भारी प्रगति हुई है। देश की विकासशील अर्थव्यवस्था की आवश्यकता के अनुरूप आयातों में भी वृद्धि हुई है। विगत कुछ वर्षो में मूल्य वृद्धि के कारण व्यापार संतुलन प्रतिकूल होता जा रहा है। व्यावसायिक दृष्टिकोण से भारत के व्यापार को दो वर्गों में रखा जा सकता है – (i) आन्तरिक व्यापार, (ii) विदेशी व्यापार

(i) आन्तरिक व्यापार – भारत जैसे विशाल और विभिन्नताओं वाले देश में आन्तरिक व्यापार का बहुत महत्व है। भारत के सभी राज्य सभी संसाधनों से सम्पन्न नहीं है। कृषिकृत कच्चे माल, खाद्यान्न, पेय पदार्थ आदि से लेकर खनिज पदार्थ एवं उद्योगों का विशिष्ट क्षेत्रों में केन्द्रीयकरण पाया जाता है। जैसे जूट पश्चिमी बंगाल में कपास महाराष्ट्र व गुजरात में, गन्ना व चीनी उत्तर प्रदेश में, बिहार और महाराष्ट्र में चाय, असम में लौह धातु, उड़ीसा में खनिज, झारखंड में अधिक संकेन्द्रित हैं। अतः अन्य राज्यों की आवश्यकता की पूर्ति वस्तुओं के आदान–प्रदान पर ही निर्भर है। इसलिये आन्तरिक व्यापार महत्वपूर्ण है। यह रेल व सड़क मार्गों, नदियों एवं समुद्र तटीय मार्गों द्वारा सम्पन्न होता है। कोयला, लोहा, इस्पात, सीमेंट, खाद्यान्न जैसे गेहूँ, चावल, चना और दालें, मिट्टी का तेल, चीनी और गुड़ आदि का परिवहन होता है, जो कुल आन्तरिक व्यापार का 90% से अधिक है।

(i) तटवर्ती व्यापार – भारत जैसे विशाल देश में लघु तट रेखा एवं उत्तम पत्तन की कमी के कारण तटवर्ती व्यापार अधिक उन्नत नहीं है। तटवर्ती व्यापार की दृष्टि से भारत को 12 खण्डों में बाँटा गया है –

(i) पश्चिमी बंगाल, (ii) उड़ीसा, (iii) आन्ध्र प्रदेश, (iv) तमिलनाडु, (v) पाडिचेरी, (vi) केरल, (vii) कर्नाटक, (viii) गोवा, (xi) महाराष्ट्र, (x) गुजरात, (xi) अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह, (xii) लक्षद्वीप।

एक ही तटीय खण्ड में उपस्थित पत्तनों के मध्य व्यापार को परस्पर व्यापार कहा जाता है तथा एक ही तटखण्ड से दूसरे तटखण्ड के मध्य व्यापार को बाहरी व्यापार कहते हैं। इन्हीं परिस्थितियों के अनुसार तटवर्ती व्यापार में आयात और निर्यात भी होता है।

पुनर्निर्यात व्यापार – इस व्यापार के अन्तर्गत भारत विदेशों से वस्तुओं का आयात करके, उन्हें उन पड़ोसी देशों को निर्यात करता है, जिनके पास समुद्र तट नहीं है। हिन्द महासागर में महत्वपूर्ण केन्द्रीय स्थिति होने के कारण भारत दक्षिण–पूर्वी तथा दक्षिण–पश्चिमी एशियाई तथा पड़ोसी (सीमावर्ती) देशों को पुनर्निर्यात करने में समर्थ है। ऐसे व्यापार के विस्तार के लिए जहाजी बेड़ा विकसित होना चाहिए।

इस दिशा में काफी प्रयास की आवश्यकता है। पुनर्निर्यात व्यापार भूटान, नेपाल, अफगानिस्तान, इराक, ईरान आदि देशों के साथ होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade)

टिप्पणी

यद्यपि भारतवर्ष में संसार की 1/6 जनसंख्या निवास करती है, परन्तु विश्व निर्यात व्यापार में भारत का अंशदान बहुत कम है। भारत के विदेशी व्यापार की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं –

(i) समुद्री व्यापार की प्रधानता – भारत का 90% से अधिक व्यापार समुद्री मार्गो द्वारा होता है। तिब्बत, चीन, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, पाकिस्तान, म्यांमार, भुटान और नेपाल आदि देश अधिकांश निर्धन हैं तथा इनसे मिलने वाली अधिकांश सीमाएँ पर्वतीय हैं। अतः स्थल मार्ग अधिक विकसित नहीं है।

(ii) भारत को निर्यात करने वाले प्रमुख देश – भारत को निर्यात करने वाले प्रमुख देश अमेरिका, जापान, रूस, ब्रिटेन तथा जर्मनी हैं।

(iii) भारत के प्रमुख आयातक देश – संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, जापान और रूस हैं। भारत का 57.6% निर्यात आर्थिक सहयोग और विकास संगठन को, 10.6% पेट्रोलियम निर्यातक देश संगठन को, 3.0% पूर्वी यूरोपीय देशों को, 25.1% अन्य कम विकसित देशों को जिनमें अफ्रीका, एशिया, लैटिन अमेरिका आदि शामिल हैं, 3.6% अन्य देशों को निर्यात किया जाता है।

(iv) आर्थिक नियंत्रण एवं भुगतान के आधार पर निर्यात व्यापार निम्नलिखित देशों को होता है:

(अ) यूरोपीय स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र – इसके अन्तर्गत नॉर्वे, स्वीडन, स्विट्जरलैंड, फिनलैंड, ऑस्ट्रिया और पुर्तगाल आते हैं। यह व्यापार पर कोई बाह्य नियंत्रण नही लगाते।

(ब) यूरोपीय साझा व्यापार – इसके अन्तर्गत जर्मनी, नीदरलैंड, फ्रांस, इटली, डेनमार्क, बेल्जियम, लक्जमबर्ग, ब्रिटेन, आयरलैंड आते हैं। इन देशों द्वारा भारतीय माल पर ऊँचे तटकर एवं प्रबन्ध लगाये जाते हैं। फिर भी भारत को व्यापार संतुलन के लिए इन देशों से व्यापार सम्बन्ध रखने पड़ते हैं।

(स) इफेल – इसके अन्तर्गत पाकिस्तान, बांग्लादेश, म्यांमार, सिंगापुर, फिलीपीन्स, श्रीलंका, कोरिया, ताइवान, चीन, ईरान, थाइलैण्ड, ऑस्ट्रेलिया, न्युजीलैण्ड, हांगकांग, नेपाल, वियतनाम, मलेशिया, इण्डोनेशिया, जापान, अफगानिस्तान आदि देश आते हैं।

(द) रुपयों में भुगतान पाने वाले देश – बल्गेरिया, चैकस्लोवकिया, जर्मनी, हंगरी, पोलैण्ड, रूमानिया, यूगोस्लाविया तथा रूस के साथ व्यापार होता है।

(च) अफ्रीकी देश – केनिया, जाम्बिया, मोरक्को, कांगो गणतन्त्र, जायरे, आइवरी तट, मलागासी, घाना, तंजानिया आदि देशों के साथ व्यापार होता है।

(छ) अमेरीकी देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा के साथ व्यापार होता है।

टिप्पणी

(v) आयातों की प्रकृति में परिवर्तन – पहले भारत के आयातों में निर्मित माल की प्रधानता होती थी। अब खाद्यान्न, पेट्रोलियम एवं उसके उत्पादक, कच्चे माल और पूँजीगत वस्तुओं का आयात होने लगा है।

(vi) परम्परागत वस्तुओं का निर्यात – सूती एवं सिले–सिलाये वस्त्र, जूट का सामान, चाय, कहवा, तम्बाकू, काजू, नारियल व रेशे से निर्मित सामान, चमड़े की वस्तुएँ, मसाले, चमड़ा व खालें, वनस्पति तेल व खलियाँ, अभ्रक, मैंगनीज व लौह धातु आदि हैं। इसके अतिरिक्त साइकिलें, सिलाई मशीनें और पंखे, इंजीनियरिंग का सामान, मशीन और उपकरण, रेल के इंजन व उपकरण, इस्पात का फर्नीचर, चीनी, सीमेंट, होजरी, फल, हस्तनिर्मित वस्तुओं आदि का भी निर्यात होने लगा है।

(vii) व्यापार असंतुलन – द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् भारत का विदेशी व्यापार असंतुलित हो गया है। देश के औद्योगिक विकास के कारण निर्यात की अपेक्षा आयात पदार्थों के मूल्य अधिक होने से व्यापार संतुलन हमेशा देश के विपक्ष में होता गया। सन् 1950.51 में व्यापार मूल्य 1,214 करोड़ रूपये था, जो 2001–2002 में बढ़कर 4,51,390.40 करोड़ रूपये हो गया। 1990–91 से 2001–2002 के मध्य आयात निर्यात कुल व्यापार एवं व्यापार संतुलन की स्थिति निम्न सारणी से स्पष्ट है।

सारणी क्र. 3.27

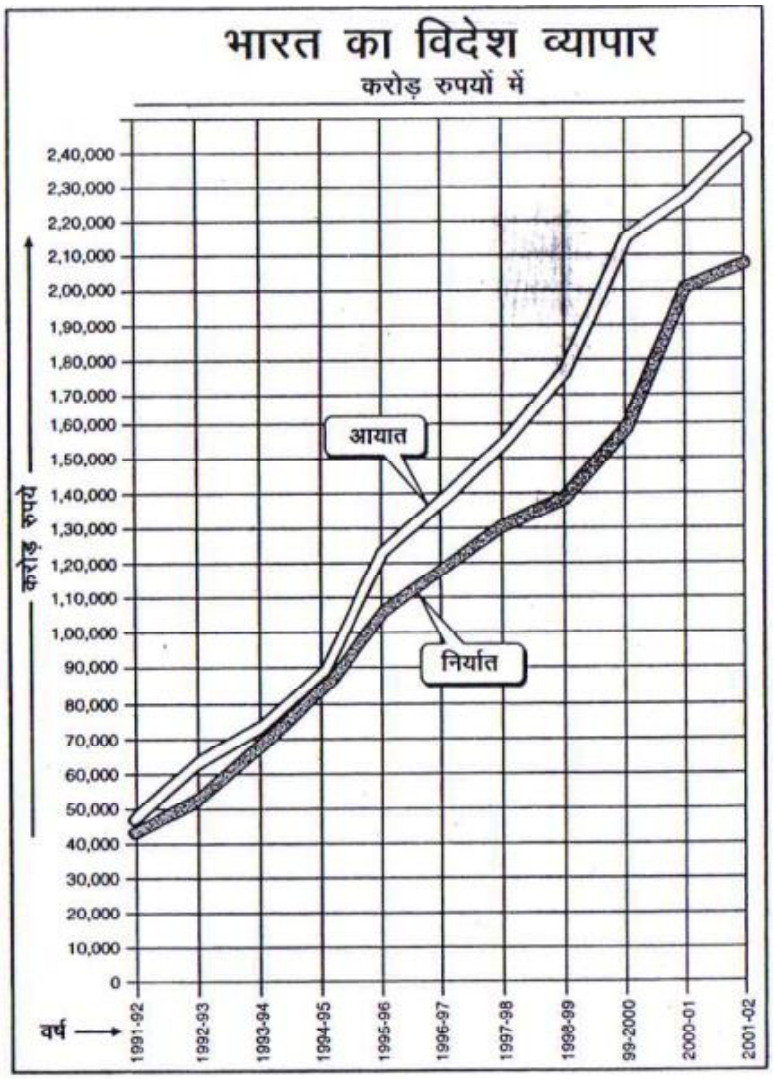
भारत का विदेशी व्यापार (करोड़ रूपये में)

वर्ष	निर्यात	आयात	विदेश व्यापार का कुल मूल्य	व्यापार संतुलन
1990–91	32,557.63	43,192.86	75,750.49	–10,635.23
1991–92	44,041.81	47,850.84	91,892.65	–3,809.03
1992–93	53,688.25	63,374.52	1,17.062.77	–9,686.27
1993–94	69,751.39	73,101.01	1,42,852.4	–3,349.62
1994–95	82,674.11	89,970.66	1,72,644.77	–7,296.55
1995–96	1,06,353.34	1,22,678.14	2,29,031,48	–16,324.80
1996–97	1,18,817.08	1,38,919.68	2,57,736.76	–20,102.60
1997–98	1,30,100.64	1,54,176.30	2,84,276.94	–24,075.66
1998–99	1,39,753.14	1,78,331.85	3,18,084.99	–38,578.71
1999–2000	1,59,561.00	2,15,236.00	3,74,297.00	–55,675.00
2000–2001	2,01,356.45	2,28,306.64	4,29,663.09	–26,950.19
2001–2002	2,07,745.56	2,43,644.84	4,51,390.40	–35,889.28
2002–2003 (अस्थायी)	2,50,131.00	2,87,303.00	5,37,433.00	–37,173.00

टिप्पणी

वर्ष 2002–2003 के दौरान भारत का कुल निर्यात 2,50,131.00 करोड़ रूपये का था, जबकि 2001–2002 में निर्यात 2,07,745.50 करोड़ रूपये का था। इस प्रकार इसमें 15% की वृद्धि हुई। इसी अवधि में आयात 2001.2002 में 2,43,644.84 करोड रूपये से बढ़कर 2002–2003 में 2,07,745.50 करोड़ रूपये हो गया और इसमें 18.76% की वृद्धि हुई। रूपये के हिसाब से व्यापार घाट़ा 2001–2002 में (–) 35,899.88 करोड़ रूपया था जो 2002–2003 में केवल (–) 37,173.00 करोड़ रूपया था।

भारत के व्यापार सम्बन्ध विश्व के सभी विकासोन्मुख तथा विकसित देशों से हैं। द्विपक्षीय वार्ताओं के माध्यम से आर्थिक तथा व्यापारिक सम्बन्ध विकसित किये जा रहें हैं। चित्र 3.21 में भारत के विदेशी व्यापार की दिशा का बोध होता है। विभिन्न क्षेत्रों एवं उपक्षेत्रों के साथ विगत वर्षों में भारत के व्यापार आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2001–02 में एशिया और ओसीनिया को भारत के व्यापार आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2001–02 में एशिया और ओसिनिया को भारत के कुल निर्यात का 38.40% निर्यात किया गया, जिसके बाद पश्चिमी यूरोप (24.17%) और अमेरिका (23.13%) का नंबर था। इसी अवधि ा के दौरान भारत ने सबसे ज्यादा आयात एशिया और ओसीनिया (30.34%) से किया। इसके बाद पश्चिम यूरोप (26%) और अमेरिका (9%) से आयात किया गया।



चित्र क्र. 3.18: भारत का विदेश व्यापार

टिप्पणी

प्रमुख आयात – घरेलू खपत, निवेश और उत्पादन की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए विभिन्न वस्तुओं का आयात किया जाता है। वर्ष 1999–2000 के दौरान समूल के रूप में थोक आयात में 35.2% बढ़ोतरी हुई, जो कुल आयात का 36.8% है। इसमें उर्वरक, अनाज, खाद्य तेल, अखबारी कागज, पेट्रोल तथा पेट्रोलियम पदार्थ शामिल हैं। आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में मोती, मूल्यवान रत्न, मशीनरी परियोजनागत सामान, औषधि, कार्बनिक और अकार्बनिक रसायन, कोयला, कोक तथा ब्रिकेट्स, कृत्रिम तेल आदि शामिल है। अग्रांकित सारणी में 2000–01 एवं 2001–02 के दौरान वस्तुओं के आयात के आँकड़े दिये गये हैं।

सारणी क्र. 3.28

प्रमुख वस्तुओं का आयात (करोड़ रूपये में)

वस्तु	2000–01	2001–02	प्रतिशत वृद्धि / कमी
(क) बड़ी मात्रा में आयात	95,477.61	94,524.19	–1.00
(1) अनाज	87.15	86.82	–0.38
(2) उर्वरक	3,434.72	3,210.93	–6.52
(3) अखबारी कागज	1,192.18	1,165.94	–2.20
(4) कच्चा पेट्रोलियम एवं पेट्रोलियम उत्पाद	71,496.52	66,769.86	–6.61
(5) खाद्य तेल	5,76.53	6,474.48	–8.33
(6) लुग्दी और बेकार कागज	1,286.92	1,403.39	–9.05
(7) अलौह धातु	2,438.75	3,082.34	–26.39
(ख) मोती, बेशकीमती एवं कम कीमती हीरे	21,963.49	22,045.14	0.37
	18,772.10	20,809.14	10.85
(ग) मशीनरी	3,413.54	2,689.58	–21.21
(घ) परियोजनागत सामान	88,679.92	1,03,576.53	16.80
(ड) अन्य, जिनमें हैं –			
(1) कार्बनिक एवं अकार्बनिक रसायन	11,164.73	13,217.52	18.39
(2) कोयला, कोक एवं ब्रिकेट	5,039.39	5,421.68	7.59
(3) औषधि एवं फार्मास्यूटिकल उत्पादक	1,711.81	2,001.06	16.90
(4) कृत्रिम रेजिन आदि	2,534.86	3,210.91	26.67

टिप्पणी

देश के आयात को दो वर्गों में रखा जा सकता है –

(i) वृहद् आयात – पेट्रोल, तेल, स्नेहक, लोहा और इस्पात, उर्वरक, अलौह धातुएँ, अयस्क तथा धातु स्क्रैप, कागज, गत्ता, लुग्दी, कोयला, खाद्यान्न, दालें व खाद्य तेल प्रमुख हैं।

(ii) गैर वृहद् आयात – पूँजीगत वस्तुएँ, मोती, जवाहरात, रसायन, व्यवसायिक उपकरण, प्लास्टिक सामग्री, अधातु खनिज आदि।

सारणी क्र. 3.29

वस्तुएँ	आयात के स्त्रोत
विद्युत उपकरण	ब्रिटेन, जापान, नीदरलैण्ड्स, संयुक्त राज्य अमेरिका, स्विट्जरलैण्ड, जर्मनी।
काँच का सामान	बेल्जियम, जर्मनी, फ्रांस, हॉलैण्ड, ब्रिटेन, इटली।
सूत व सूती वस्त्र	ब्रिटेन, जापान, इटली, बेल्जियम।
ऊनी वस्त्र	ब्रिटेन, जापान, इटली, बेल्जियम।
मोटर व बाइसिकल	ब्रिटेन, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, कनाडा, जर्मनी।
रबड़ का सामान	जर्मनी, इंग्लैण्ड, जपान, संयुक्त राज्य अमेरिका।
जूट	बांग्लादेश।

आयात नीति – आयात नीति के अन्तर्गत पूँजीगत सामान, कच्चा माल, मध्यवर्ती माल, घटक सामान, उपभोग्य वस्तुएँ, कलपुर्जे, सहायक पुर्जे, औजार और अन्य सामान बिना किसी बंदिश के आयात किये जा सकते है, बशर्ते कि ऐसा सामान आयात–निषेध सूची में शामिल न हो, ये वस्तुएँ कोई भी व्यक्ति आयात कर सकता है। चाहे वह वास्तविक उपभोक्ता हो या नही, परन्तु यदि इनमें से किसी वस्तु के आयात के लिये लाइसेंस की जरूरत पड़ती है तो वास्तविक उपभोक्ता को छोड़कर अन्य व्यक्ति तब तक इन वस्तुओं का आयात नहीं कर सकता जब तक की लाइसेंस अधिकारियों ने वास्तविक उपभोक्ता की दिशा में कोई व्यवस्था न दी हो। सभी प्रकार का पुराना दस साल से कम का सामान एस.आई.एल. वापस लौटा कर बिना लाइसेंस के आयात किया जा सकता है।

मुख्य निर्यात – भारतवर्ष से निर्यात होने वाली वस्तुओं में विविधीकरण की उत्तरोत्तर प्रगति हो रही है। पौध कृषि एवं संबद्ध उत्पाद, समुद्री उत्पाद, अयस्क एवं खनिज, चमड़ा और उससे बनी वस्तुएँ, खेल का सामान, रत्न और आभूषण, रसायन और सम्बद्ध उत्पाद, इंजीनियरी सामान, हस्तशिल्प, कालीन, पेट्रोलियम उत्पाद आदि सम्मिलित हैं।

टिप्पणी

सारणी क्र. 3.30

प्रमुख वस्तुओं का निर्यात (करोड़ रूपये में)

क्र.	वस्तु	2000–01	2001–02	प्रतिशत वृद्धि / कमी
1.	बागान उत्पाद	2,973.58	2,798.98	(-) 5.87
2.	कृषि एवं सहायक उत्पाद	17,726.23	19,290.43	8.82
3.	समुद्री उत्पाद	6,367.29	5,789.77	(-) 9.07
4.	अयस्क एवं खनिज	5,267.37	5,772.29	9.59
5.	चमड़े का सामान	8,883.05	9,087.92	2.31
6.	खेल का सामान	295.22	325.02	10.09
7.	रत्न और आभूषण	33,733.39	34,842.30	3.29
8.	रसायन एवं सहायक उत्पाद	28,219.60	30,040.47	6.45
9.	इंजीनियरी सामान	25,917.11	27,077.07	4.48
10.	इलेक्ट्रॉनिक्स सामान	5,116.36	5,622.74	9.90
11.	परियोजनागत सामान	116.90	86.72	(-) 25.82
12.	वस्त्र	48,853.06	45,866.26	(-) 5.87
13.	दस्तकारी सामान	3,022.07	2,613.09	;(-) 13.53
14.	गलीचे	2,657.39	2,400.65	(-) 9.66
15.	पेट्रोलियम उत्पाद	8,645.47	10,136.64	17.25
16.	अवर्गीकृत निर्यात	3,341.28	5,957.45	78.30

सन् 2001–2002 का निर्यात विश्लेषण (Analysis of Exports of 2001-02)

सन् 2001–2002 में भारत से 2,07,745.56 करोड़ रूपये का निर्यात हुआ, जबकि 2000–2001 में यह निर्यात 2,01,356.45 करोड़ रूपये का था, अर्थात् 6,389.11 करोड़ रूपये का अधिक निर्यात हुआ, जो लगभग 3.17% अधिक हैं। उत्पादों के निर्यात के लिये एशिया, यूरोपीय संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन और जर्मनी सबसे बड़ी मंडी रहे, जहाँ भारत का लगभग 80% निर्यात होता है। भारतवर्ष का सबसे अधिक निर्यात पेट्रोलियम उत्पादों का है जो 2000–2001 की तुलना में 2001–2002 में 17.25% अधिक रहा।

निर्यात प्रोत्साहन – शुरू में भारत की व्यापार नीति का मुख्य उद्देश्य देश के विकास की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए आयात को नियमित करना था तथा आयात प्रतिस्थापना उपायों के जरिये घरेलू उत्पादन को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता थी, परन्तु उदारीकरण का दौर शुरू होने के बाद व्यापार के जरिये विश्वव्यापीकरण और अर्थव्यवस्था की प्रगति के लिये निर्यात को मुख्य हथियार बनाने के महत्व को मान्यता मिली है।

टिप्पणी

निर्यात प्रोत्साहन अब सतत् रूप से जारी रहने वाला प्रयास है तथा इस देश में विशेष कदम उठाए गए हैं। हाल के वर्षों में इस क्षेत्र में सफलता भी मिली है। निर्यात को प्रोत्साहित करने और लाभांश में सुधार लाने के लिए कार्य–प्रणाली को चुस्त–दुरुस्त और सरल बनाने से व्यापार नीति के माहौल में और खुलापन आया है तथा निर्यात उत्पादन का आधार मजबूत हुआ है। इस प्रक्रिया सम्बन्धी जटिलताएँ दूर हुई हैं। विश्व आवागमन की सुविधा प्रदान करने के लिए आयात को धीरे धीरे उदार बनाया जा रहा है। भारत विश्व व्यापार के साथ व्यापक, अनुबंध, भारत–अमेरिका वाणिज्यिक गठबंधन, सार्क देशों के बीच व्यापार समझौते (साप्टा) का परिचालन, बैकांक अनुबंध और हिंद महासागर ब्लाक को प्रोत्साहित करने के प्रयास शामिल हैं। भारत और श्रीलंका के बीच 1998 में किया गया निःशुल्क व्यापार अनुबंध इस वर्ष से चालू हो गया है। बांग्लादेश– भारत–म्यामांर– श्रीलंका–थाईलैंड आर्थिक सहयोग भी प्रगति पर है। इस संगठन ने अप्रैल 2000 में नई दिल्ली में हुई अपनी बैठक में कार्य निपटाने का कार्यक्रम बनाने का फैसला किया ताकि इस क्षेत्र में निःशुल्क व्यापार अनुबंध के लिए आपसी विचारों और दृष्टिकोण को लागू किया जा सके।

आयात–निर्यात नीति (2000–2007) (Import-Export Policy)

भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय ने 31 मार्च 2002 को वर्ष 2000–2007 के लिए नई आयात–निर्यात नीति की घोषणा की। इस नीति का मुख्य उद्देश्य पिछली आयात–निर्यात नीति के लाभों को आगे बढ़ाना तथा 2007 तक भारत का निर्यात हिस्सा विश्व निर्यात में बढ़ा कर एक प्रतिशत करना है।

नई आयात–निर्यात नीति के मूल उद्देश निम्नलिखित हैं –

1. उदारीकरण की प्रक्रीया को जारी रखना।
2. आयात–निर्यात कार्य प्रणाली का सरलीकरण करना।
3. आयातकों और निर्यातकों की कार्य संपादन लागत को कम करना।
4. कृषि, चमड़ा, वस्त्र, कुटीर एवं दस्तकारी उद्योगों पर अधिक ध्यान देना।
5. आयात और निर्यात पर मात्रात्मक एवं भारात्मक प्रतिबंध हटाना।
6. इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के जरिये आवेदन पत्र देना और इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से ही लाइसेंस देना।
7. मानक, लेबलिंग और पेकेजिंग आदि में आयातित वस्तुओं को घरेलू उत्पादों के बराबर महत्व देना।

आशा है, इन सभी प्रयासों के संयुक्त प्रयास से सन् 2007 तक विश्व व्यापार में भारत का हिस्सा बढ़कर एक प्रतिशत हो जायेगा।

निर्यातोन्मुख इकाइयाँ (Export-Oriented Units)

जो इकाइयाँ अपने समूचे उत्पादित माल का निर्यात करना चाहती हैं, वे निर्यात प्रोसेसिंग जोन में अपनी इकाई स्थापित कर सकती हैं। इलेक्ट्रोनिक हार्डवेयर टेक्नोलोजी पार्क, साफ्टवेयर टेक्नोलोजी पार्क, निर्यातोन्मुख इकाइयाँ और निर्यात प्रोसेसिंग जोन विशेष क्षेत्र हैं जो व्यवहारिक रूप से घरेलू मूल्य क्षेत्र से अलग स्थापित किए गए हैं तथा इनका उद्देश्य कम लागत पर निर्यात उत्पादन के लिए अंतर्राष्ट्रीय

टिप्पणी

स्पर्धा का सामना कर सकने वाला निःशुल्क वातावरण तैयार करना है। ई.ओ.पी./ई. पी.जैड। ई.एच.टी.पी. योजना में हाल में की गई तब्दीली में (क) कर रियायत की अवधि 2010 तक करना, (ख) उच्च घरेलु पहुँच, (ग) निर्यात प्रतिशत के रूप में कुल विदेशी मुद्रा आय और न्यूनतम निर्यात प्रदर्शन को तर्कसंगत बनाना (घ) ई.पी.जैड में निजी गोदामों का विस्तार, ताकि इसमें निर्यात के लिए घरेलू सामान रखा जा सके, और (च) कुछ क्षेत्रों में सीधे निर्यात के लिए घरेलू इकाइयों की तरफ से काम करवाना आदि शामिल हैं।

निर्यात संसाधन क्षेत्र (Export Resources Area)

भारत में सात निर्यात संसाधन क्षेत्र हैं। ये कांडला (गुजरात), सांताक्रुज (महाराष्ट्र) कोच्चि (केरल), चेन्नई (तामिलनाडु), नोएडा (उत्तर प्रदेश), फाल्टा (पश्चिम बंगाल) और विशाखापट्टनम (आंध्र प्रदेश) में स्थित हैं। प्रत्येक निर्यात संसाधन क्षेत्र में मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई हैं। कस्टम क्लियरेंस की सुविधाएँ क्षेत्र–विशेष के भीतर ही प्रदान की जाती हैं। सरकार ने हाल में निजी, राज्य या संयुक्त क्षेत्र में निर्यात संवर्धन क्षेत्र स्थापित करने की अनुमति दी है। निजी संवर्धन क्षेत्रों के बारे में अंतर–मंत्रालय समिति ने मुंबई, चेन्नई, सूरत, तिरुनेलवेली और कांचीपुरम में इस तरह के क्षेत्र बनाने के प्रस्तावों को स्वीकृति दे दी है। ऐसी ही मंजुरी ग्रेटर नोएडा के लिए उत्तर प्रदेश सरकार ने दी है।

निर्यातोन्मुख उत्पादन के लिए आधारभूत सुविधाएँ जुटाने के कार्य में राज्य सरकारों को शामिल करने के लिए अगस्त 1994 में केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित एक निर्यात प्रोत्साहन औद्योगिक पार्क ई.पी.आई.पी. की योजना शुरू की गई थी। इसके तहत अब तक 20 औद्योगिक पार्कों के प्रस्तावों को मंजूरी दी गई है जिनमें से आठ पार्क पूरे हो चुके हैं।

वाणिज्यिक सम्बन्ध (Commercial Relations)

भारत से संबद्ध वाणिज्यिक कार्यालय भारतीय विदेश व्यापार और आर्थिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये वाणिज्यिक कार्यालय, वाणिज्य मंत्रालय के बजट नियंत्रण के अधीन कार्य करते हैं और भारत के विदेश–व्यापार संवर्धन की संभावनाओं और संबध देश की सामान्य/आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित जानकारी सरकार को उपलब्ध कराते हैं, जिससे वाणिज्यिक और आर्थिक नीति–निर्धारण में सरकार को मदद मिलती है। वाणिज्यिक प्रतिनिधियों को महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधियों की जानकारी देने के लिए मंत्रालय द्वारा एक मासिक न्यूज लैटर प्रकाशित किया जाता है।

दक्षिण–पूर्वी एशिया और आसियान देश (South-East Asia and ASEAN Countries)

आसियान देश (मलेशिया, इण्डोनेशिया, सिंगापुर, थाइलैण्ड, ब्रुनेई, फिलीपीन्स, वियतनाम, कम्बोडिया), ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि देशों से भारत के व्यापार सम्बन्धों में 1999–2000 की तुलना में वर्ष 2000–2001 में पाँच प्रतिशत की गिरावट आई है। इस दौरान आसियान देशों को भारत ने अधिक सामान निर्यात किया है। ऑस्ट्रेलिया के मामले में यह वृद्धि मात्र 0.85% रही है।

टिप्पणी

इन देशों को निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएँ तेल, रत्न एवं आभूषण, इलेक्ट्रॉनिक सामान, सूती वस्त्र एवं धागे, सिले–सिलाए कपड़े, मशीनरी एवं उपकरण, कच्चा और आधा तैयार लोहा एवं इस्पात, औषधि एवं फार्मास्यूटिकल उत्पाद, मांस, मांस उत्पाद, समुद्री उत्पाद, धातु की वस्तुएँ एवं कोलतार रसायन हैं, जबकि आयात की जाने वाली वस्तुएँ वनस्पति तेल, इलेक्ट्रॉनिक सामान, मशीनरी, लकड़ी एवं लकड़ी उत्पाद, अलौह धातु, धातु अयस्क, कच्ची ऊन, दालें आदि हैं। इस पूरे क्षेत्र में कुल निर्यात में 29.83% की वृद्धि हुई है जबकि आयात में लगभग 20% की गिरावट आई है, और इस तरह व्यापार असंतुलन काफी हो गया है जो भारत के खिलाफ है।

पश्चिमी यूरोप (Western Europe)

पश्चिमी यूरोप भारत का प्रमुख व्यापार भागीदार है जिसका 2000–2001 में भारत के कुल निर्यात का लगभग 24% हिस्सा था, जबकि आयात में यह हिस्सा केवल 26% था। पश्चिमी यूरोपीय क्षेत्र को भारत के कुल निर्यात का अधिकतर हिस्सा जर्मनी, ब्रिटेन, बेल्जियम, इटली, फ्रांस, नीदरलैण्ड, स्पेन, और स्विट्जरलैण्ड को जाता है। यहाँ से इन देशों को निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में रत्न और आभूषण, कपास, मानव निर्मित धागा, वस्त्र, सिले हुए कपड़े, मशीनरी एवं उपकरण, औषधि, फार्मास्युटिकल उत्पाद एवं रसायन, धातु की वस्तुएँ, चमड़े के वस्त्र, कार्बनिक, अकार्बनिक, कृषि रसायन, परिवहन उपकरण, हस्तशिल्प उत्पाद, गलीचे, समुद्री उत्पाद, प्लास्टिक उत्पाद आदि शामिल हैं, जबकि पश्चिमी यूरोप से हमारे देश में मुख्यतः आयात मोती, कीमती और कम कीमत के रत्न, सोना, चाँदी, मशीनरी, इलेक्ट्रॉनिक सामान, कार्बनिक रसायन, परिवहन, लोहा–इस्पात, औषधि, धातु की वस्तुएँ, रसायन सामग्री आदि हैं।

मध्य एव मध्य पूर्वी यूरोपीय देश (Central and Mid-Eastern European Countries)

भारत के अधिकतर मध्य एवं पूर्वी यूरोपीय देशों के साथ घनिष्ठ एवं बहुपक्षीय सम्बन्ध रहे हैं। पूर्वी यूरोपीय देशों में अल्बानिया, बोस्निया, हर्जेगोविना, बुल्गारिया, क्रोएशिया, चैकगणराज्य, हंगरी, मेसीडोनिया, पोलैण्ड, रोमानिया, यूगोस्लाविया, संघीय गणराज्य, स्लोवाक गणराज्य और स्लोवाकिया शामिल हैं। इन देशों के साथ भारत का मौजूदा व्यापार 45 करोड़ अमेरिकी डालर का है जबकि 1990–91 में यह व्यापार 78 करोड़ अमेरिकी डालर था। इस क्षेत्र में भारत का मुख्य व्यापार पोलैण्ड, हंगरी, चेकगणराज्य, रोमानिया और स्लोवाकिया से है। कॉमकेन देशों के विघटन के कारण इन देशों के साथ भारत के व्यापार में कमी आई है।

इन देशों के साथ व्यापार बढ़ाने के लिए सरकार ने (i) मुक्त परिवर्तनीय मुद्रा में व्यापार के लिए नये व्यापार समझौते, (ii) प्रति व्यापार व्यवस्था (iii) सरकारी एवं व्यापारिक प्रतिनिधि मंडलों का आदान–प्रदान, (iv) व्यापार मेले में भागीदारी, (v) आर्थिक एवं वाणिज्यिक सूचनाओं का आदान–प्रदान, (vi) नये राजनयिक मिशन एवं व्यापार केन्द्र खोलना जैसे कदम उठाये हैं।

अफ्रीका (Africa)

उपसहारा अफ्रीका क्षेत्र से भारत का 2001–2002 में कुल व्यापार का लगभग 4.44% व्यापार रहा। दक्षिणी अफ्रीका, नाइजीरिया, मारिशस, आईवरी कोस्ट, तंजानिया, केन्या,

टिप्पणी

घाना, इथियोपिया और सेनेगल से भारत का मुख्य व्यापार रहा। अप्रैल 2001 से फरवरी 2002 तक भारत के कुल अफ्रीकी व्यापार में इन देशों का हिस्सा 81.38% था। अप्रैल 2001 से मार्च 2002 में भारत के कुल विश्व निर्यात का 4.9% निर्यात उपसहारा अफ्रीका को हुआ जबकि आयात 4.12% था। इस क्षेत्र को भारत का निर्यात अप्रैल–फरवरी 2000–2001 में 162.61 करोड़ अमेरिकी डालर से बढ़कर अप्रैल–फरवरी 2001–2002 में 197.40 करोड़ अमेरिकी डालर हो गया (लगभग 21.47% वृद्धि)। इस क्षेत्र में भारत के आयात में 31.67% की वृद्धि हुई।

निर्यात की प्रमुख वस्तुओं में सूती धागा, वस्त्र, सिले–सिलाए कपड़े, मशीनरी उपकरण, धातु की वस्तुएँ, फार्मास्यूटिकल उत्पादन एवं रसायन, कच्चा एवं आधा तैयार लोहा एवं इस्पात, मानव निर्मित धागा, वस्त्र, सिले–सिलाए कपड़े, प्लास्टिक एवं लिनोलियम उत्पाद, कार्बनिक एवं कृषि रसायन शामिल हैं।

पश्चिमी एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका (West Asia and Northern Africa)

पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका में 19 देश हैं, जिन्हें तीन वर्गों में रखा गया है। पहले वर्ग के अन्तर्गत जी.सी.सी. देश हैं। इनमें बहरीन, कुवैत, ओमान, कतर, सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात हैं। दूसरें वर्ग में ईरान, इराक, इस्रायल, जोर्डन, लेबनान, यमन और सीरिया हैं। तीसरे वर्ग के अन्तर्गत उत्तरी अफ्रीकाई देश अल्जीरिया, मिस्र, लीबिया, मोरक्को, सुडान और ट्यूनीशिया हैं। इन सब देशों को भारत के निर्यात का हिस्सा 13% है। इन देशों से भारत का व्यापार मुक्त विदेशी मुद्रा से होता है।

वर्ष 2000–2001 के दौरान इन देशों को भारत का निर्यात 588.10 करोड़ अमेरिकी डॉलर का था जबकि 1999–2000 में यह व्यापार 454 करोड़ अमेरिकी डालर था। इस तरह निर्यात व्यापार में लगभग 22.9% की वृद्धि हुई। गैर तेल आयात 252.17 करोड़ अमेरिकी डालर तक पहुँच गया है जो 1999–2000 में (तेल आयात सहित) 1158.71 करोड़ अमेरिकी डालर था। इस क्षेत्र में निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में इंजीनियरी सामान, वस्त्र एवं सिले–सिलाये कपड़े, कृषि उत्पाद, रसायन आदि थी जबकि कच्चे तेल, उर्वरक, राक फास्फेट प्रमुख आयातक वस्तुएँ हैं।

अमेरिका (America)

अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापार भागीदार है। अमेरिका का भारत के निर्यात में 22.70% और आयात में 6.69% का हिस्सा है। परन्तु भारत का अमेरिका के आयात–निर्यात में केवल एक प्रतिशत हिस्सा है। सन् 2000–2001 में यह निर्यात 262.97 करोड़ अमेरिकी डॉलर था जो 2000–2001 के दौरान 315.56 करोड़ अमेरिकी डॉलर था (लगभग 16.13% कम) इस अवधि के दौरान भारत के निर्यात में अमेरिकी हिस्सा 19.4% था जबकि इससे पहले (2000–2001) की अवधि में यह 12.6% था।

कनाडा (Canada)

कनाडा को भारत के कुल निर्यात का 1.47% निर्यात किया गया जबकि कुल आयात का हिस्सा कनाडा से 0.78% रहा। भारत कनाडा द्विपक्षीय व्यापार 1991–92 में 42.20 करोड़ अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2000–2001 में 103.73 करोड़ अमेरिकी डॉलर

टिप्पणी

हो गया। अप्रैल–जुलाई 2001–2002 के दौरान भारत का कनाडा को निर्यात 18.39 करोड़ अमेरिकी डॉलर था जबकि 2000–2001 में यह 31.19 करोड़ अमेरिकी डॉलर था जबकि भारत का कनाडा से आयात 21.40 करोड़ अमेरिकी डालर था।

मैक्सिको (Mexico)

भारत के कुल निर्यात में से मैक्सिको को 0.55% निर्यात हुआ। अप्रैल–जुलाई 2001–02 के दौरान मैक्सिको को भारत का निर्यात 7.40 करोड़ अमेरिकी डॉलर था जबकि 2000–2001 में यह 5.60 करोड़ अमेरिकी डालर था अर्थात् लगभग 32.7% निर्यात की बढ़ोतरी हुई। इसके विपरीत 2001–2002 के दौरान मैक्सिको से भारत का आयात 1. 90 करोड़ अमेरिकी डॉलर था जबकि 2000–2001 में यह आयात 1.41 करोड़ अमेरिकी डॉलर था अर्थात् 33.98% की बढ़ोत्तरी थी।

लैटिन अमेरिका और कैरिबियाई देश (Latin America and Carribean Countries)

इस क्षेत्र में 43 देश हैं जिनसे भारत का व्यापार लगभग 5% है। ब्राजील, अर्जेन्टीना, चिली, पेरू, वेनेजुएला, कोलम्बिया, ट्रिनिडाड एवं टैबेगो भारत के प्रमुख व्यापार भागीदार हैं। इन देशों में निर्यात की जाने वाली महत्वपूर्ण वस्तुओं में वस्त्र एवं सिले–सिलाए कपड़े, साईकिल एवं इसके कलपुर्जे, मोपेड, डीजेल इंजन, मोटर वाहन कलपुर्जे, इंजीनियरिंग सामान, रसायन, टायर एवं ट्यूब शामिल हैं, जबकि लोहा इस्पात, उनके उत्पाद, अलौह धातुएँ, कच्चा खनिज, लुग्दी एवं बेकार कागज, कच्ची ऊन आदि आयात की जाने वाली वस्तुएँ हैं।

गैट, विश्व व्यापार संगठन और भारत का विदेशी व्यापार (GATT, WTO and Foreign Trade of INDIA)

टैरिफ और व्यापार पर सामान्य संधि (General Agreement of Tariff and Trade-GATT) – इस संगठन की स्थापना जिनेवा में 1948 में की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य सदस्य देशों की समृद्धि और विकास के लिए निर्बंध व्यापार (Free Trade) को बढ़ावा देना था। इसका मुख्य उद्देश्य वस्तु व्यापार में प्रतिस्पर्धा को सुनिश्चित करने के लिए व्यापार अवरोधकों की समाप्ति या उन्हें कम करना था। गैट के अधीन सात दौरों का उद्देश्य व्यापार अवरोधकों को कम करके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करना था। इसमें सदस्य देशों द्वारा लगाये गये गैट टैरिफ प्रतिबन्ध भी कम करने की योजना थी। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए GATT एक लाभदायक मंच के रूप में उभरा।

1948 के बाद GATT की स्थापना के बाद अब तक अनेक संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं। 1950 में जहाँ विश्व वस्तु व्यापार में कृषि का भाग 40% था वह 1987 में 13% रह गया। इसके साथ–साथ विकसित देशों के सकल घरेलू उत्पाद के विभिन्न क्षेत्रों के योगदान और रोजगार के ढाँचे में भी परिवर्तन हुए। विकसित देशों के सकल घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र का भाग तेजी से बढ़ा। यहाँ तक 1986 में यह 50% से 70% तक हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि उरुग्वे दौर में 15 क्षेत्रों में वार्ता करने का आदेश दिया गया। भाग 1 के अधीन वस्तु व्यापार के सम्बन्ध में निम्न क्षेत्रों में बातचीत करने का कार्य सौंपा गया। (i) टैरिफ (ii) गैर टैरिफ उपाय (iii) उष्ण कटिबंधीय वस्तुएँ,

टिप्पणी

(iv) प्राकृतिक संसाधन आधारित वस्तुएँ (v) टैक्सटाइल और कपड़े (vi) कृषि, (vii) गैट अनुच्छेद, (viii) बचाव उपाय (ix) बहुपक्षीय व्यापार वार्ताएँ, संधियाँ तथा व्यवस्थाएँ, (x) अर्थसहाय तथा प्रतितुलनकारी उपाय, (xi) विवाद निपटारा, (xii) बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार, (xiii) व्यापार सम्बन्धी निवेश उपाय, (xvi) गैट प्रणालियों की कार्यविधि।

यह आशा थी कि इन विषयों पर वार्ता चार वर्षों में पूरी हो जायेगी परन्तु सहयोगी देशों में मतभेद उभरने के कारण कृषि, टैक्सटाइल, डम्पिंग विरोधी उपाय आदि के कारण यह अवधि लम्बी हो गई। इस गतिविधि को तोड़ने के लिए श्री आर्थर डंकल प्रस्ताव कहा गया और इस दस्तावेज को सदस्य देशों के सामने एक समझौतावादी दस्तावेज के रूप में पेश किया और 15 दिसम्बर 1993 को डंकल प्रस्तावों ने अन्तिम अधिनियम का रूप धारण किया और भारत सहित 117 देशों ने 15 अप्रैल, 1994 को इस संधि पर हस्ताक्षर कर दिये।

वामपंथी दलों, जनता दल और भारतीय जनता पार्टी ने डंकल प्रस्तावों का विरोध किया। इस विरोध में इन दलों का यह तर्क था कि संयुक्त राज्य अमेरिका और बहुराष्ट्रीय निगमों के दबाव में भारत ने अपनी प्रभुसत्ता समर्पित कर दी है, परन्तु भारत सरकार का यह दावा था कि गैट संधि के परिणामस्वरूप हमारे निर्यात में प्रतिवर्ष 200 करोड़ डॉलर की बढ़ोतरी होगी। ऐसा शायद सम्भव नहीं था।

टैरिफ के सम्बन्ध में भारत ने बुनियादी शुल्क (Basic Duty) को 30% से घटाने का वायदा किया। यह कटौती 6 वर्षों के दौरान लागू की जायेगी और कच्चे मालों, अन्तर्वती वस्तुओं और पूँजी वस्तुओं पर लागू होगी परन्तु इसमें कृषि वस्तुएँ, पेट्रोलियम पदार्थ, उर्वरक और अलौह धातुएँ (जस्ता और तांबा) शामिल नहीं की गईं। ये टैरिफ कटौतियाँ भारत में चालू किये गये आर्थिक सुधारों का एक अंग है और इनकी सिफारिश वैलेय्या समिति ने भी की है।

गैट संधि में यह निर्णय लिया गया है कि डम्पिंग विरोधी कार्यवाही समाप्त कर दी जायेगी। यदि किसी देश द्वारा आयात के रूप में डम्प की गई वस्तुओं की मात्रा, उस देश विशेष के घरेलू बाजार के एक प्रतिशत से कम है। इस कण्डिका से भारत को अपने निर्यात को डम्पिंग विरोधी जाँच के विरुद्ध संरक्षण के रूप में सहायता मिलेगी।

निर्यात साहाय्यों (Export Subsidies) की मनाही के सम्बन्ध में गैट संधि में यह निश्चय किया गया है कि भारत जैसे देश जहाँ प्रति व्यक्ति आय 1000 डॉलर से कम है, तो अपने उत्पादों पर अर्द्ध साहाय्य हटाने से छूट होगी। यदि विश्व व्यापार में इसका अंश 3.25% से कम है।

सारणी क्र. 3.31

1999 में गैट संधि के अधीन भारत का निर्यात (मिलियन अमेरिकी डॉलर)

वस्तु	कुल विश्व	भारत	भारत का भाग % में
चावल	8105	1632	20.1
चाय	2979	561	18.8
मसाले	2542	305	2.8
कच्चा लोहा	8367	420	5.0
हीरे जवाहरात	44926	5459	12.2

टिप्पणी

इसका परिणाम यह हुआ कि भारत का भाग चावल, चाय, गरम मसाले, हीरे जवाहरात, कच्चा लोहा और मसाले में अधिक है। इस सारणी को देखने से प्रतीत होता है कि इन सभी मदों में भारत का निर्यात व्यापार 58.9% है अर्थात् लगभग भारत का 60% निर्यात गैट संधि की परिधि में है जबकि 1998 में यह निर्यात 22.8% था। यह परिणाम निर्यात साहाय्यों (Export Subsidies) में कमी करने या पूर्ण समाप्त करने का ही परिणाम है। उदारीकरण की नीति का ही परिणाम है कि भारत के विदेशी मुद्रा भण्डार में पर्याप्त बढ़ोतरी हुई है।

बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (Effects of Intellectual Property Rights on Indian Economy)

कुछ आलोचकों का विचार है कि गैट संधि में शामिल बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों (Intellectual Property Rights) का सर्वनाशी प्रभाव होगा। ऐसा विशेषकर कृषि और औषधि क्षेत्रों में होगा।

बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के अन्तर्गत इसके अधीन औद्योगिक तकनीकी के सभी क्षेत्रों में किसी भी आविष्कार के लिए पेटेण्ट उपलब्ध होंगे। ये पेटेण्ट चाहे उत्पाद के बारे में हों चाहे प्रक्रिया के बारे में।

पेटेण्ट संरक्षण का विस्तार सूक्ष्म जीवों, गैर जैविक और सूक्ष्म जैविक क्रियाओं या पौधों की विभिन्न किस्मों पर किया जा सकता है। इसका अर्थ है कि समग्र औद्यगिक एवं कृषि क्षेत्र और एक हद तक जीव तकनीकी क्षेत्र पेटेण्ट की शर्तों के अधीन आ जायेगा।

पेटेण्ट संरक्षण की सबसे खतरनाक शर्त यह है कि कोई भी वस्तु चाहे वह आयात की जाये या देश में बनायी जाये, बिना किसी भेदभाव के पेटेण्ट के संरक्षण के अधीन होगी। इसका अर्थ यह है कि पेटेण्ट प्रणाली न केवल उत्पादन एकाधिकार स्थापित करेगी वरन् आयात एकाधिकार भी कायम करेगी। ऐसी स्थिति में पेटेण्टधारी आयात ही करेगा और राष्ट्रीय सरकार आयातित वस्तुओं पर किसी प्रकार का कीमत नियन्त्रण नहीं कर सकेगी। यही कारण है कि आज अनेक औषधियाँ और दवाइयाँ पेटण्ट कानून के अन्तर्गत आ गई हैं और इनकी कीमतें साधारण आदमी की पहुँच से बाहर हो गई हैं। आज लगभग 70% दवाइयाँ पेटेण्ट कानून के अधीन हैं, जिससे बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के अन्तर्गत पेटेण्टधारियों को भारी राशी का भुगतान करना होता है। यही कारण है कि भारत की अधिकांश जनसंख्या के लिए जीवनरक्षक दवायें महँगी हो गई हैं।

आज हल्दी और नीम तथा बासमती चावल भी पेटेण्ट हो रहे हैं। भारत में हल्दी के पारम्परिक प्रयोग को 1995 में अमेरिकी कानून के अन्तर्गत अधीन पेटेण्ट कराने के प्रयास किये गये थे परन्तु वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान के निदेशक डॉ. आर.ए. माशेलकर का आभारी होना चाहिए कि संयुक्त राज्य के पेटेण्ट कार्यालय ने अपनी गलती मान ली और हल्दी का पेटेण्ट रद्द हो गया।

एक अमेरिकी कम्पनी को नीम का कीटनाशक के रूप में प्रयोग करने के लिए पेटेण्ट अधिकार दिया गया। इसी प्रकार बासमती जो भारत में चावल की महत्वपूर्ण किस्म

है, कासमती और टैक्समती के रूप में पेटेण्ट किया गया। तुलसी भी खतरे में है। यह ऐसे मामले हैं, जिनकी क्षति की रोकथाम के लिए भारत को दस्तावेज तैयार करने होंगे।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

21. वर्तमान में भारत लगभग कितनी वस्तुओं का निर्यात करता है?
    (अ) 6000 (ब) 7500
    (स) 8000 (द) 1960
22. निम्नलिखित में से किस पदार्थ को भारत आयात भी करता है और निर्यात भी करता है?
    (अ) काजू (ब) मसाले
    (स) लौह अयस्क (द) हीरे जवाहरात
23. निम्नलिखित में से कौन–सा निर्यात संसाधन क्षेत्र नहीं है?
    (अ) नोएडा (ब) कांडला
    (स) विषाखापट्टनम् (द) कोलकत्ता
24. पश्चिमी यूरोप को भारत लगभग कितने प्रतिशत भाग निर्यात करता है?
    (अ) 24% (ब) 17%
    (स) 20% (द) 50%
25. भारत ने GATT संधि पर कब हस्ताक्षर किये?
    (अ) 1992 (ब) 1994
    (स) 1983 (द) 1989

3.6 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1.	(ब)	10.	(अ)	19.	(अ)
2.	(अ)	11.	(ब)	20.	(अ)
3.	(स)	12.	(ब)	21.	(ब)
4.	(अ)	13.	(ब)	22.	(द)
5.	(स)	14.	(स)	23.	(द)
6.	(स)	15.	(अ)	24.	(अ)
7.	(अ)	16.	(अ)	25.	(ब)
8.	(अ)	17.	(अ)		
9.	(अ)	18.	(अ)		

3.7 सारांश (Summary)

इस इकाई में भारत की प्रमुख जनांकीय विशेषता, उनकी वर्तमान स्थिती तथा जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न प्रमुख समस्याओं से अवगत कराना है।

टिप्पणी

3.8 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- जनसंख्या
- वितरण
- लिंगानुपात
- कार्यशील
- अकार्यशील
- आंशिक
- पूर्णकालीन

3.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक बताइए।
2. जनसंख्या की विशेषताएँ बताइए।
3. जनसंख्या विस्फोट पर टिप्पणी लिखिए।
4. जनसंख्या प्रारूप पर एक टिप्पणी लिखिए।
5. जनसंख्या की समस्या पर एक टिप्पणी लिखिए।
6. चावल के उत्पादन के लिए भौगोलिक दशाओं का वर्णन कीजिए।
7. चाय अथवा कहवा उत्पादक क्षेत्रों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
8. गेहूँ की उपज के लिए भौगोलिक दशाओं का वर्णन कीजिए।
9. भारत में गन्ना उत्पादक राज्यों के नाम लिखिए।
10. भारत में जूट उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
11. भारत में तिलहन उत्पादन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
12. भारत में लौह–इस्पात उद्योग के कारखानों के नाम लिखिए।
13. टाटा आयरन स्टील जमशेदपुर अथवा इण्डियन आयरन स्टील बर्दवान का वर्णन कीजिए।
14. राउरकेला अथवा दुर्गापुर इस्पात कारखानों को प्राप्त सुविधाओं का वर्णन कीजिए।
15. भारत के आन्तरिक व्यापार पर एक टिप्पणी लिखिए।
16. पुनर्निर्यात व्यापार पर एक नोट लिखिए।
17. आयात नीति पर एक टिप्पणी लिखिए।
18. निर्यातोन्मुख इकाई अथवा निर्यात संसाधन क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
19. बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा है? वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

टिप्पणी

1. भारत में चावल की कृषि के लिए भौगलिक दशाएँ तथा वृहत उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
2. भारत में गेहूँ की कृषि की भौतिक दशाओं तथा वितरण की व्याख्या कीजिए तथा गेहूँ की उत्पादन प्रकृति का वर्णन कीजिए।
3. भारत में मक्का की खेती का वर्णन कीजिए।
4. भारत में चाय की कृषि के लिए भौगोलिक दशाओं का उल्लेख करते हुए उसका उत्पादन तथा वितरण बताइए।
5. चाय अथवा कॉफी के उत्पादन, वितरण एवं व्यापार पर प्रकाश डालिए।
6. भारत में गन्ना अथवा कपास की खेती को प्रभावित करने वाले भौगलिक कारकों की विवेचना कीजिए तथा उसका उत्पादन तथा विवरण लिखिए।
7. भारत की कृषि समस्याओं का सक्षिप्त विवरण लिखिए तथा इन्हें हल करने की दिशा में हो रहे प्रयासों का वर्णन कीजिए।
8. भारत में तिलहन के उत्पादन एवं वितरण पर प्रकाश डालिए।
9. भारत को कृषि जलवायुविक प्रदेशों में विभाजित कीजिए तथा उनका वर्णन कीजिए।
10. भारत के विभिन्न भागों में जनसंख्या के धनत्व को प्रभावित करने वाले भौगोलिक कारकों की व्याख्या कीजिये।
11. भारत में जनसंख्या के वितरण तथा उसकी असमानता के कारणों की व्याख्या कीजिये।
12. इस मत का विवेचन कीजिये कि भारत में जनसंख्या के धनत्व का सम्बन्ध वर्षा एवं धरातल की बनावट है।
13. "भारत में जनसंख्या धनत्व का वितरण, भोजन संसाधन के वितरण से सम्बन्धित है।" इस कथन पर प्रकाश डालिये।
14. भारत में जनसंख्या के वितरण का वर्णन भौगोलिक कारकों के संन्दर्भ में करते हुए इसमें पाई जाने वाली विषमता की व्याख्या कीजिये।
15. भारत की जनसंख्या समस्या की विवेचना किजिए।
16. भारत के विभिन्न भागों में जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिये।
17. भारत में जनसंख्या की वृद्धि एवं वितरण का वर्णन कीजिए।
18. भारत में जनसंख्या के असमान वितरण के कारण दीजिये।
19. भारत में सूती वस्त्र उद्योग या इस्पात उद्योग के विकास पर एक लेख लिखिए।
20. भारत में सूती वस्त्र उद्योग का वर्णन कीजिए तथा इस उद्योग की आधुनिक प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।
21. भारत में लोहा इस्पात उद्योग के स्थानीयकरण एवं विकास का विश्लेषण कीजिए।
22. भारत में सूती वस्त्र उद्योग के वितरण एवं विकास का वर्णन कीजिए।
23. भारत में चीनी उद्योग के स्थानीयकरण एवं विकास की व्याख्या कीजिए।

टिप्पणी

24. भारत में सीमेण्ट उद्योग पर एक भौगोलिक निबन्ध लिखिए।
25. भारत में सीमेण्ट उद्योग के स्थानीयकरण एवं विकास की व्याख्या कीजिए।
26. भारत के विदेशी व्यापार पर एक लेख लिखिये।
27. भारत के आयात और निर्यात किये जाने वाले प्रमुख पदार्थों का विवरण देते हुए विगत वर्षों में विदेशी व्यापार का विश्लेषण कीजिए।
28. भारत के विदेशी व्यापार के असंतुलन की समीक्षा कीजिये।
29. भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताओं का वर्णन कीजिये।
30. गैट और भारत के विदेशी व्यापार पर एक निबन्ध लिखिए।

3.10 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. बन्सल सुरेश चंद्र 1996 भारत का बृहत् भुगोल, मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ।
2. अहमद ई. 1992 जीओग्राफी ऑफ हिमालया, कल्याणी पब्लिशर्स लुधियाना।
3. चौहान व्ही.एस. एवं गौतम अल्का 2001 भारतवर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ।
4. दत्त रुद्र एवं सुंदरम के.पी.एम. 2005 भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चांद ॲन्ड कम्पनी लिमिटेड न्यू दिल्ली ।
5. गौतम अल्का 2007 भारत का बृहत् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, अलाहाबाद।
6. गील के.एस. 1993 इव्हॉल्यूशन ऑफ द इंडियन इकॉनॉमी एन.सी.आर.टी.ई. न्यू दिल्ली।
7. हुसैन माजिद एवं सिंह. रमेश 2009 भारत का भूगोल, Tata McGraw-Hill Publishing Co. New Delhi
8. कुमार प्रमिला 1996 मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
9. मामोरिया चतुर्भुज 1996 आधुनिक भारत का बृहत् भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन आग्रा।
10. मिश्र जगदिश प्रसाद 1997 भारत का भूगोल, विद्यासागर अलाहाबाद।
11. ओझा शिवसागर 2001 भारत का भूगोल, भौगोलिक अध्ययन संस्था अलाहाबाद
12. पालिवाल कमलेश 2000 इकॉनॉमी जीओग्राफी इंडिया ए किताब महल अलाहाबाद
13. प्रकाश बी.एस. 1990 इंडियाः इकॉनॉमी जीओग्राफी एन.सी.ई. आर.टी न्यू दिल्ली
14. राव बी.पी. 1995 भारतः एक भौगोलिक समिक्षा, वसुंधरा प्रकाशन गोरखपूर।
15. सिंह गोपाल भारत का भूगोल, आत्माराम ॲन्ड सन्स दिल्ली।
16. तिवारी विजय कुमार 1997 भारत का बृहत् भूगोल भाग 1 एवं 2, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, मुंबई।
17. वर्मा रामविलास भारत का भौगोलिक विवेचन, किताब घर कानपूर।
18. गर्व्हमेंट ऑफ इंडिया 2000 नॅषनल पोल्यूशन पॉलिसी 2000, प्लानिंग कमिशन ऑफ इंडिया न्यू दिल्ली।
19. चंदन आ.सी. 1980 इंट्रोडक्शन टू पॉप्यूलेशन जीओग्राफी, कल्याणी पब्लिशर्स न्यू दिल्ली।
20. वर्मा मित्रा वेद 1964, एज्युकेशन इन एशियन इंडिया, आर्या बुक डेपो न्यू दिल्ली।

Annexure – 1

टिप्पणी

QUICK ESTIMATES FOR SELECTED MAJOR COMMODITIES FOR MARCH 2021

TRADE: EXPORT

Sl. No.	Commodities	Valuesin Rs Crore				% Change	
		MAR'20	APR'19-MAR'20	MAR'21	APR'20-MAR'21	MAR'21	APR'20-MAR'21
1	Tea	367.32	5851.11	388.34	5600.54	5.72	-4.28
2	Coffee	587.54	5236.76	709.07	5338.28	20.68	1.94
3	Rice	4967.75	45426.66	8111.00	65013.35	63.27	43.12
4	Other cereals	136.94	1454.71	571.79	4823.49	317.56	231.58
5	Tobacco	550.17	6409.39	622.50	6485.05	13.15	1.18
6	Spices	2079.92	25642.04	3266.71	29627.37	57.06	15.54
7	Cashew	306.74	4018.35	294.38	3110.31	-4.03	-22.60
8	Oil Meals	435.13	5861.35	1407.45	11471.35	223.45	95.71
9	Oil seeds	855.20	9363.13	783.25	9150.90	-8.41	-2.27
10	Fruits & Vegetables	2255.01	16916.72	2736.68	19157.33	21.36	13.24
11	Cereal preparations & miscellaneous processed items	846.30	10821.41	1388.80	13689.98	64.10	26.51
12	Marine Products	2926.66	47618.10	4034.63	44174.43	37.86	-7.23
13	Meat, dairy & poultry products	1677.21	26303.97	2508.87	27048.91	49.59	2.83
14	Iron Ore	1817.58	18606.77	5247.46	36300.58	188.71	95.09
15	Mica, Coal & Other Ores, Minerals including processed minerals	2305.49	27985.77	2963.07	27749.48	28.52	-0.84
16	Leather & leather products	1938.88	32971.08	2313.12	24402.74	19.30	-25.99
17	Ceramic products & glassware	1561.77	20341.17	2346.78	22501.33	50.26	10.62
18	Gems & Jewellery	15012.90	254114.20	26300.13	191905.38	75.18	-24.48
19	Drugs & Pharmaceuticals	11494.65	146750.92	16710.84	181263.65	45.38	23.52
20	Organic & Inorganic Chemicals	11613.14	156441.36	16657.18	164508.02	43.43	5.16
21	Engineering Goods	40413.57	557602.54	67776.04	567108.20	67.71	1.70
22	Electronic Goods	5427.68	82936.01	10201.50	82095.94	87.95	-1.01
23	Cotton Yarn/Fabs./made-ups, Handloom Products etc.	5275.09	71054.43	8039.79	72557.37	52.41	2.12
24	Man-made Yarn/Fabs./made-ups etc.	2603.55	34175.01	3348.59	28061.09	28.62	-17.89
25	RMG of all Textiles	8312.74	109690.58	10377.27	90624.07	24.84	-17.38
26	Jute Mfg. including Floor Covering	161.12	2427.58	323.79	2738.36	100.96	12.80
27	Carpet	615.52	9724.84	1144.05	10999.00	85.87	13.10
28	Handicrafts excl. handmade carpet	917.18	12737.95	1286.27	12617.37	40.24	-0.95
29	Petroleum Products	18719.11	292339.97	24837.06	191458.78	32.68	-34.51
30	Plastic & Linoleum	3652.42	53462.48	5234.91	55263.50	43.33	3.37
	Sub-Total	**149834.31**	**2094286.36**	**231931.32**	**2006846.12**	**54.79**	**-4.18**
	GRAND TOTAL	**159784.62**	**2219854.18**	**250756.40**	**2150325.03**	**56.93**	**-3.13**

Note 1: Grand total is inclusive of component 'Other'.
Note 2: The figures for MAR'21 are provisional.

टिप्पणी

Annexure – 2

QUICK ESTIMATES FOR SELECTED MAJOR COMMODITIES FOR MARCH 2021

TRADE: IMPORT

Sl. No.	Commodities	Values in Rs Crore				% Change	
		MAR'20	APR'19-MAR'20	MAR'21	APR'20-MAR'21	MAR'21	APR'20-MAR'21
1	Cotton Raw & Waste	288.39	9371.21	292.94	2853.58	1.58	-69.55
2	Vegetable Oil	5038.52	68558.16	7792.81	81940.03	54.66	19.52
3	Pulses	667.27	10221.45	562.56	11938.78	-15.69	16.80
4	Fruits & vegetables	1126.37	15756.80	1349.87	16820.80	19.84	6.75
5	Pulp and Waste paper	511.86	8091.25	665.20	6303.50	29.96	-22.09
6	Textile yarn Fabric, made-up articles	645.16	13598.58	1217.19	11082.06	88.67	-18.51
7	Fertilisers, Crude & manufactured	1608.09	52817.29	1486.17	56522.92	-7.58	7.02
8	Sulphur & Unroasted Iron Pyrites	36.67	832.56	202.49	1104.00	452.23	32.60
9	Metaliferrous ores & other minerals	1946.49	35989.44	3284.34	33959.89	68.73	-5.64
10	Coal, Coke & Briquettes, etc.	11965.14	158865.17	12633.38	120402.89	5.58	-24.21
11	Petroleum, Crude & products	74704.86	925167.52	74768.22	608881.25	0.08	-34.19
12	Wood & Wood products	2296.72	39699.49	3834.59	32928.43	66.96	-17.06
13	Leather & leather products	386.21	7176.16	504.81	4291.51	30.71	-40.20
14	Organic & Inorganic Chemicals	10062.50	145863.42	15338.73	147091.25	52.43	0.84
15	Dyeing/tanning/colouring materials	1379.82	20565.19	2799.46	20204.76	102.89	-1.75
16	Artificial resins, plastic materials, etc.	7012.98	103588.71	12508.31	99786.62	78.36	-3.67
17	Chemical material & products	3719.94	54110.64	6653.55	62835.36	78.86	16.12
18	Newsprint	264.39	4952.48	127.68	2199.06	-51.71	-55.60
19	Pearls, precious & Semi-precious stones	10417.54	159066.48	18504.42	138997.41	77.63	-12.62
20	Iron & Steel	6358.60	108654.71	9667.79	89180.74	52.04	-17.92
21	Non-ferrous metals	6076.65	92994.57	10191.98	86603.23	67.72	-6.87
22	Machine tools	1831.08	29665.29	2586.67	23475.13	41.26	-20.87
23	Machinery, electrical & non-electrical	16312.28	266922.82	25575.98	222553.83	56.79	-16.62
24	Transport equipment	19094.06	179479.84	12578.96	101921.51	-34.12	-43.21
25	Project goods	728.93	14354.61	481.16	11088.18	-33.99	-22.76
26	Professional instrument, Optical goods, etc.	2560.10	35590.72	4081.01	33726.47	59.41	-5.24
27	Electronic goods	24624.18	385087.96	42683.48	401709.21	73.34	4.32
28	Medicinal & Pharmaceutical products	3062.04	45727.25	4585.39	52001.68	49.75	13.72
29	Gold	9129.41	199249.74	61827.97	254289.79	577.24	27.62
30	Silver	722.72	19161.79	73.17	5963.35	-89.88	-68.88
	Sub-Total	**224578.96**	**3211181.31**	**338860.28**	**2742657.22**	**50.89**	**-14.59**
	GRAND TOTAL	**233988.47**	**3360954.46**	**352191.21**	**2876918.30**	**50.52**	**-14.40**

Note 1: Grand total is inclusive of component 'Other'.
Note 2: The figures for MAR'21are provisional.

इकाई 4 मध्य प्रदेश – भौतिक स्थिति (Madhya Pradesh – Physical Conditions)

टिप्पणी

संरचना (Structure)

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 भौतिक विभाग एवं संरचना
4.3 अपवाह तन्त्र
4.4 जलवायु
4.5 मृदा
4.6 वनस्पति
4.7 कृषि
4.8 खनिज
4.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
4.10 सारांश
4.11 मुख्य शब्दावली
4.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.13 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय (Introduction)

मध्य प्रदेश राज्य भारत के मध्य में स्थित है। इसका विस्तार 20°–6′ उत्तरी अक्षांश से 26°–54′ उत्तरी अक्षांश तथा 74° पूर्वी देशान्तर से 82°–47′ पूर्वी देशान्तर के मध्य है। इसका क्षेत्रफल 3,08,252 वर्ग किलोमीटर है जो सम्पूर्ण भारत के क्षेत्रफल का 9.38% है। पूर्व से पश्चिम तक इस राज्य की लम्बाई 870 किलोमीटर और उत्तर से दक्षिण तक इसकी चौड़ाई 605 किलोमीटर है। कर्क रेखा लगभग राज्य के मध्य से गुजरती है जो कुछ सीमा तक नर्मदा नदी का अनुसरण करती है। मध्य प्रदेश की सीमा पाँच राज्यों से मिलती है जो उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ हैं। मध्य प्रदेश राज्य उत्तर में उत्तर प्रदेश, उत्तर–पूर्व और पूर्व में छत्तीसगढ़, पश्चिम में राजस्थान और गुजरात तथा दक्षिण में महाराष्ट्र राज्यों से घिरा हुआ है। वर्तमान में मध्य प्रदेश राज्य में 52 जिले हैं।

4.1 उद्देश्य (Objectives)

विद्यार्थियों को मध्य प्रदेश की विशेषताओं से परिचित कराना जिससे उन्हें मध्य प्रदेश से संबंधित समस्त जानकारी उपलब्ध हो सकें।

टिप्पणी



चित्र क्र. 4.1: मध्य प्रदेश राजनैतिक

4.2 भौतिक विभाग एवं संरचना (Physical Divisions and Structure)

मध्य प्रदेश एक पठारी राज्य है। इसमें अनेक निचली पर्वत श्रृंखलाएँ, नुकीली पहाड़ियाँ और पठार स्थित हैं। यह उत्तर में सतलज–गंगा के मैदानी भाग और दक्षिण में प्रायद्वीप भारत के मध्य स्थित है। सतपुड़ा तथा विन्ध्याचल की श्रेणियाँ, मालवा तथा बघेलखण्ड का पठार, नदियों के मैदान तथा घाटियाँ इस राज्य की प्रमुख स्थलाकृतियाँ हैं। भौतिक संरचना के दृष्टिकोण से मध्य प्रदेश को निम्नांकित भागों में बाँटा जा सकता है–

(1) मध्य उच्च प्रदेश।

(अ) मध्य भारत का पठार,

(ब) विन्ध्यन श्रेणी या बुन्देलखण्ड पठार,

(क) रीवा पन्ना पठार,

(ड) मालवा का पठार,

(इ) नर्मदा घाटी

(2) सतपुड़ा मैकाल श्रेणी

(3) पूर्वी पठार या बघेलखण्ड का पठार।

(1) मध्य उच्च प्रदेश –

इसे निम्नलिखित उपभागों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) मध्य भारत का पठार – इसका विस्तार मध्य प्रदेश के उत्तर तथा उत्तर–पश्चिम में 24° उत्तरी अक्षांश से 24°84′ उत्तरी अक्षांश तक तथा 74°5′ पूर्वी

टिप्पणी

देशान्तर से 79°10′ पूर्वी देशान्तर तक है। यह पठार दक्षिण में मालवा के पठार, पश्चिम में राजस्थान की उच्च भूमि, (बूँदी और करौली प्रदेश), उत्तर में यमुना के मैदान और पूर्व में बुन्देलखण्ड के पठारी भाग से धिरा हुआ है। इसके अन्तर्गत **मुरैना** जिले की अम्बाह, पोरसा, मुरैना, जौरा, सबलगढ़, कैलारस, **श्योपुर** की विजयपुर, श्योपुर कला, कराहल, तरसीले, **भिण्ड** की भिण्ड, मेहगाँव, अटेर और गोहद तहसीलें, **ग्वालियर** की ग्वालियर तहसील, **शिवपुरी** की शिवपुरी, पोहरी, कोलारस तहसीलें, गुना की **गुना** व चाचौड़ा तहसीलें तथा **नीमच** की नीमच, मनासा और **मन्दसौर** की मानपुरा तहसीलें सम्मिलित हैं। इस पठारी भाग का क्षेत्रफल 32,896 वर्ग किलोमीटर है जो मध्य प्रदेश के भौगोलिक क्षेत्र का 10.7% है।

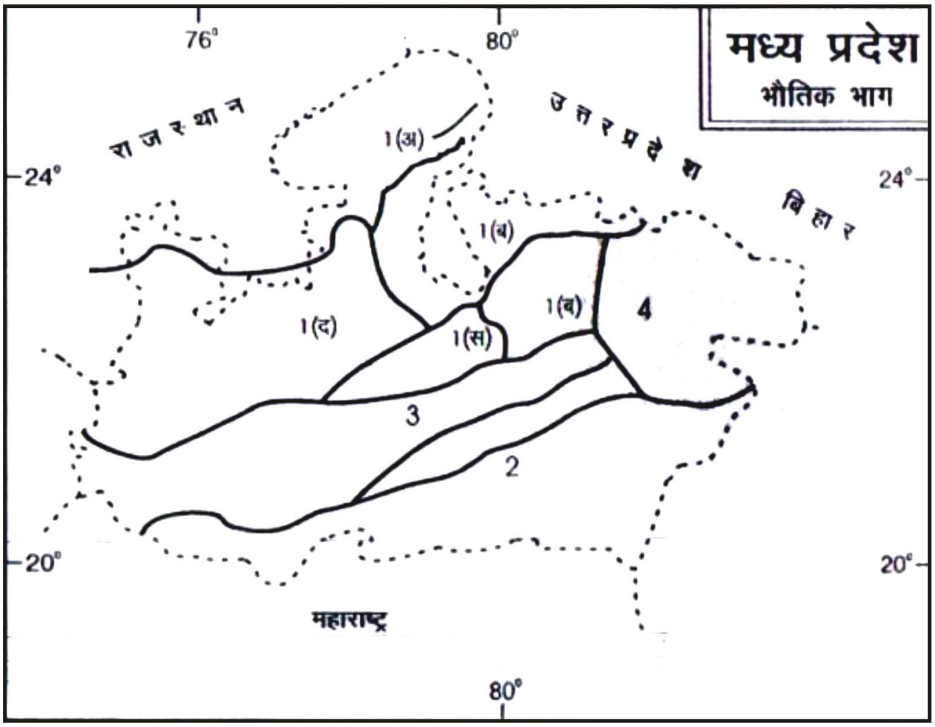
संरचना – पठार का अधिकांश भाग ऊबड़–खाबड़ है। औसतन ऊँचाई 300 से 500 मीटर है। पठार का सामान्य ढाल दक्षिण तथा दक्षिण–पश्चिम से उत्तर तथा उत्तर–पूर्व की ओर है। भू–वैज्ञानिक दृष्टि से यह पठार **कडप्पा, विन्ध्यन, दक्कन ट्रेप** एवं **नवीन शैलों** से निर्मित है। ग्वालियर के दक्षिण से उत्तर पूर्व की ओर सेवढ़ा तक कड़प्पा क्रम की शैलें हैं, जिन्हें विजावर सीरीज कहते हैं। इसमें कायान्तरित शैलें मिलती हैं जिनमें जीवाश्मों का अभाव है। ये क्वार्टजाइट, शैल और चूने के पत्थर से निर्मित हैं। इनमें लावा अन्तर्वेधी शैलों के रुप में अत्याधिक भाग में पाया जाता है। इस पठार में जावद, नीमच, मनासा, मानपुरा तहसीलों के उत्तर में और गुना, पोहरी तहसीलों के पश्चिम में, श्योपुर, विजयपुर और सबलगढ़ के दक्षिण में तथा ग्वालियर और शिवपुरी में विन्ध्यन क्रम की शैलें पांई जाती हैं। जबकि नीमच, मनासा और मानपुरा तहसीलों के दक्षिणी भाग में तथा गुना की चाचौड़ा तहसील में दक्कन ट्रेप की शैलें मिलती हैं। जबकि श्योपुर, विजयपुर, जौरा, सबलगढ़, मुरैना, अम्बाह, भिण्ड, मेहगाँव, गोहद और ग्वालियर तहसीलों में चम्बल, सिंध व उनकी सहायक नदियों के नवीन जमाव क्षेत्र हैं। चम्बल, सिंध, क्वारी, पार्वती, कुनू मुख्य नदियाँ हैं जो इस भाग में प्रवाहित होती हैं।

(ब) विन्ध्यन श्रेणी या बुन्देलखण्ड पठार– यह मध्य प्रदेश राज्य के मध्य–उत्तरी भाग में 24°06′ उत्तरी अक्षांश से 26°22′ उत्तरी अक्षांश तक और 77°51′ पूर्वी देशान्तर से 80°20′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। यह प्रदेश उत्तर–पश्चिम में मध्य भारत का पठार, दक्षिण में मालवा का पठार, दक्षिण–पूर्व में विन्ध्यन (रीवा–पन्ना पठार) प्रदेश, उत्तर–पूर्व में उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड प्रदेश (झाँसी मण्डल) से धिरा हुआ है। मध्य प्रदेश के इस बुन्देलखण्ड प्रदेश में **छतरपुर, टीकमगढ़** और **दतिया** जिले, **शिवपुरी** की पिछोर और करेरा तहसीलें, ग्वालियर की डबरा तहसील, **भिण्ड** की लहार तहसील सम्मिलित है। इस प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 23,733 वर्ग किलोमीटर है जो मध्य प्रदेश का 7.7% भू–भाग है। इस पठारी प्रदेश की सतह लहरदार है। यह नीस और ग्रेनाइट पर विकसित पुरातन अपरदन पृष्ठ है। इस प्रदेश की उत्तर में समुद्रतल से ऊँचाई 155 मीटर है जो दक्षिण में 400 मीटर तक हो गई है। इस प्रदेश की सबसे ऊँची चोटी सिद्धबाबा है जो 1,172 मीटर ऊँची है।

संरचना – बुन्देलखण्ड प्रदेश पूर्व कैम्ब्रियन युग की रवेदार एवं ज्वालामुखी परतदार शैलों से बना है। इन्हें बुन्देलखण्ड ग्रेनाइट, महरोनी शिष्ट, विजावर सीरीज तथा विन्ध्यन शैल समूह कहते हैं।

टिप्पणी

पूर्व कैम्ब्रियन बुन्देलखण्ड ग्रेनाइट शैल समूहों के मध्य महरोनी ग्रुप के अवशेष पाये जाते हैं। यहाँ गुलाबी से लाल भूरी ग्रेनाइट मिलती है, जिनकी संघटन मध्य से मोटे कण वाली है।



चित्र क्र. 4.2: मध्य प्रदेश – भौतिक भाग

यहाँ सिंधु और उसकी सहायक पहुज, बेतवा और उसकी सहायक धसान तथा केन नदियाँ प्रवाहित होती हैं।

(क) रीवा पन्ना पठार – यह प्रदेश मध्य प्रदेश के मध्य–उत्तर में 23°10′ उत्तरी अक्षांश से 25°12′ उत्तरी अक्षांश तक तथा 78°4′ पूर्वी देशान्तर से 82°18′ पूर्वी देशान्तर के मध्य फैला हुआ है। इसके उत्तर में उत्तर प्रदेश का बुन्देलखण्ड का उच्च प्रदेश एवं अवध का मैदान, उत्तर–पूर्व में झारखंड का मैदान, दक्षिण–पश्चिम तथा दक्षिण में नर्मदा घाटी, पूर्व में बघेलखण्ड प्रदेश तथा पश्चिम में मालवा का पठार स्थित है। इस प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 31,955 वर्ग किलोमीटर है जो मध्य प्रदेश का 10.4% भाग है। इस प्रदेश में **रीवा, सतना, पन्ना, दमोह, जिले** और **सागर जिले की रेहली, बण्डा तहसीलें** सम्मिलित हैं इसे विन्ध्यन कगार प्रदेश भी कहते हैं।

यह पठार औसतन 350 मीटर ऊँचा है। कुछ चोटियों की ऊँचाई 640 मीटर से 755 मीटर है। रीवा पठार के पश्चिम में भाण्डेर एक छोटा पठार है, जो रीवा पठार से ऊँचा है। उत्तर–पूर्व की ओर यह कगार प्रदेश विझ के प्रपाती कगार पर समाप्त हो जाता है।

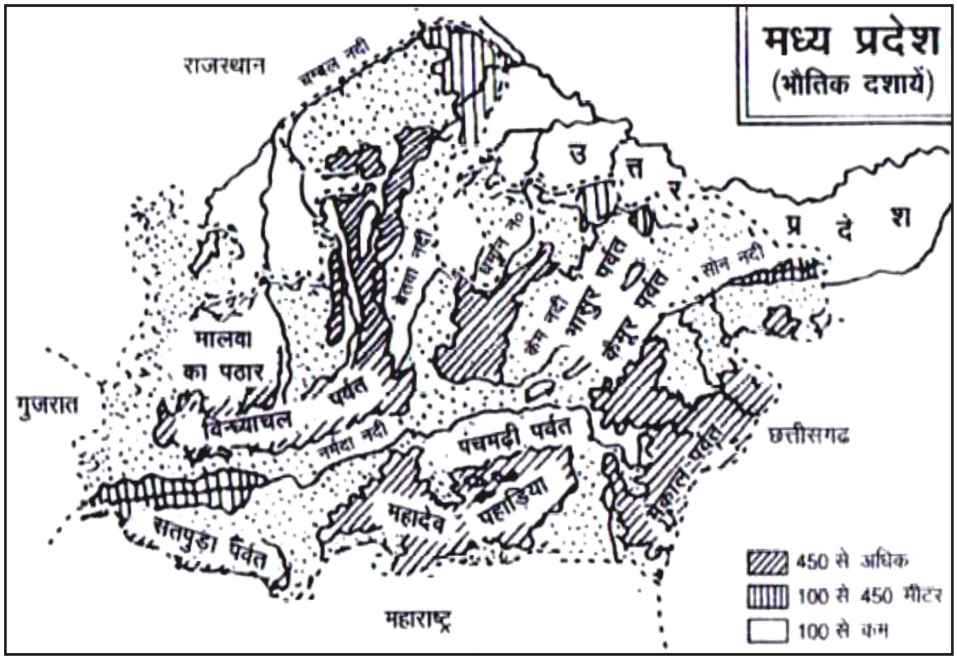
संरचना – इस पठार का निर्माण आद्य महाकल्प की कडप्पा और विन्ध्यन शैलों से हुआ है। इस क्षेत्र में नूतन और अत्यन्त नूतन निक्षेप मिलते हैं। इसमें चूने का पत्थर कार्नब्लैण्ड, बलुआ पत्थर, हेमेटाइट और क्वार्टजाइट की परतें मिलती हैं। पन्ना में इस

समूह की शैलों में विद्यमान ज्वालामुखी विभेदों में हीरा मिलता है। टोंस और फेन यहाँ की मुख्य नदियाँ हैं।

टिप्पणी

(ड) मालवा का पठार – यह मध्य प्रदेश के मध्य पश्चिमी भाग में 21°17′ उत्तरी अक्षांश 25°8′ उत्तरी अक्षांश तक तथा 74°20′ पूर्वी देशान्तर से 79°20′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। राज्य के **गुना, राजगढ़, मन्दसौर, नीमच, रतलाम, झाबुआ, धार, बड़वानी, उज्जैन, देवास, हरदा, सीहोर, इन्दौर, भाजापुर, भोपाल, रायसेन, विदिशा** और **सागर** जिले आते हैं।

मालवा का धरातलीय स्वरूप बड़ा मृदुल है। इसकी सतह समुद्रतल से सामान्यतः 500 मीटर ऊँची है। कहीं–कहीं हल्के उतार–चढ़ाव भी है। जहाँ–तहाँ मेसा के समान छोटी–छोटी गहरी ऋतुक्षरित, चपटे शिखर वाली पहाड़ियाँ भी हैं। इस क्षेत्र का आवरण दक्कन ट्रेप की शैलों से ढका हुआ है। यहाँ काली मिट्टी मिलती है। मालवा के पठार की दक्षिणी सीमा उत्तरी सीमा की अपेक्षा अधिक ऊँची है। मालवा का पठार दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान के अवछिन्न काँप मैदान में विलीन हो जाता है। इसकी मध्य–दक्षिणी सीमा के समीप जहाँ से विन्ध्याचल कगार प्रारम्भ होता है, ऊँचाई 800 मीटर से भी अधिक है। महू के दक्षिण में सिगार चोटी (881 मी), जानापाव (854 मी) व घजारी (810 मी) ऊँची चोटियाँ हैं।



चित्र क्र. 4.3: मध्यप्रदेश – भौतिक दशायें

संरचना – मालवा का सम्पूर्ण पठार बेसाल्ट पत्थर से निर्मित एक के ऊपर एक पर्त मे मोटे आवरण से ढका हुआ है, जिसे सामान्यतः दक्कन ट्रेप भी कहते हैं। इसकी मोटाई 600 से लेकर 1500 मीटर तक है। भूगर्भिक इतिहास के क्रिटेशियस युग के अन्तिम एवं मायोसीन युग के प्रथम चरण में इसका प्रादुर्भाव हुआ। जब भारतीय महाद्वीप अन्तिम आकार ले रहा था तथा टिथिस सागर में उत्तर की ओर से दबाव पड़ने से उभार उत्पन्न हो रहा था उसी समय इस क्षेत्र की अनेक लम्बी गहरी दरारों में से होकर बहुत विशाल पैमाने पर लावा निकल कर दूर दूर तक फैल गया और शीघ्र

टिप्पणी

ही जमकर क्षितिज पर्तों में या पट्टियों के रूप में बेसाल्ट शैल का आवरण बन गया। यह उद्‌गारी क्रिया एक–एक कर कई बार हुई जिसके कारण बेसाल्ट आवरण में अलग–अलग कई पर्तें दिखाई देती हैं। इन्हें ट्रेपियन पर्त कहते हैं, जो चूने और अन्य नरम शैलों से निर्मित हैं।

इस पठार पर अनेक नदियाँ प्रवाहित होती हैं जैसे माही, चम्बल, गम्भीर, क्षिप्रा, पर्वती, छोटी काली, सिन्ध, काली सिन्ध, बरना, तेंदोनी, धसान, बेतवा, बैबस, सोनार आदि।

(इ) नर्मदा घाटी – नर्मदा नदी भारतीय प्रायद्वीप की एक महत्वपूर्ण नदी है जो अमरकंटक की पहाड़ियों से निकल कर भरुच के निकट खम्भात की खाड़ी में गिरती है। नदी 1,310 किमी लम्बी है तथा इसका अपवाह क्षेत्र 98,800 वर्ग किलोमीटर है। यह नदी मध्य प्रदेश में 1,079 किमी बहती है और इसका अपवाह क्षेत्र 86,000 वर्ग किलोमीटर है। नर्मदा बेसिन के कुल क्षेत्र का 89.8% भाग मध्य प्रदेश, 8.5% भाग गुजरात तथा 2.7% भाग महाराष्ट्र राज्य में हैं।

नर्मदा घाटी 22°30′ उत्तरी अक्षांश से 23°45′ उत्तरी अक्षांश तक तथा 74° पूर्वी देशान्तर से 81°30′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। यह नदी राज्य के **मण्डला, जबलपुर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, रायसेन, खण्डवा, खरगौन, देवास** और **बड़वानी** जिलों में प्रवाहित होती है। इस घाटी के उत्तर में मालवा का पठार, उत्तर–पूर्व में रीवा–पन्ना का पठार, पूर्व में बघेलखण्ड प्रदेश, दक्षिण में सतपुड़ा प्रदेश स्थित है। इस घाटी की सामान्यतः ऊँचाई 300 मीटर है। परन्तु मैकाल पठारी क्षेत्र में औसत ऊँचाई 610 मीटर है।

संरचना – नर्मदा बेसिन के पश्चिमी भाग में दक्कन ट्रेप युग की तथा पूर्व की ओर विन्ध्यन, क्रिटेशियस, कड़प्पा, आर्कियन, जुरेसिक, धारवाड़ और प्लीस्टोसीन युग के शैल क्रम पाये जाते हैं। ऊपरी नर्मदा बेसिन जो सतपुड़ा प्रदेश का भाग है, में अविभाजित रवेदार शैल समूह सासर सीरीज की शैलें मिलती है। जबलपुर जिले में धारवाड़ शैल समूह के जलोढकों एवं जुरेसिक शैल समूह से घिरे पूर्व से पश्चिम सँकरी पेटी के रूप में विस्तृत हैं। इसमें कायान्तरित शैलें विशेषकर शिष्ट शैलें पाई जाती है। नर्मदा के दक्षिण में विजावर सीरीज के अनेक छोटे–छोटे दृश्यांश मिलते हैं। गोंडवाना समूह की चट्टानें नर्मदा के दक्षिण में मोरबन्द और सिखरेखा नदियों के बेसिन में विस्तृत है। पचमढ़ी में भी इसी प्रकार की शैलें हैं। नरसिंहपुर तथा होशंगाबाद जिले के मैदान के दक्षिणी सीमान्त पर भी गोंडवाना शैल समूह की चट्टानें मिलती हैं। इनके उत्तर–दक्षिण में सतपुड़ा कोयला क्षेत्र है।

हिरन, तिनदोनी, बारना, चन्द्रकेशर, कानर, मान ऊरी और हथनी दायें तट से तथा बरनाट, बंअर, शेर, शक्कर, दूधी, तवा, छोटी तवा, कुन्दी, देव आदि बायें तट से मिलने वाली नदियाँ हैं।

(2) सतपुड़ा मैकाल श्रेणी – सतपुड़ा श्रेणी नर्मदा घाटी के दक्षिण में पूर्व से पश्चिम तक विस्तृत है। यह प्रदेश 21° उत्तर अक्षांश से 23° उत्तर अक्षांश तक 74°30′ पूर्वी देशान्तर से 80° पूर्वी देशान्तर तक विस्तृत है। इस प्रदेश में बालाघाट, सिवनी, छिन्दवाड़ा, बैतूल, खण्डवा और खरगौन जिलों का अधिकांश भाग सम्मिलित

टिप्पणी

है। सतपुड़ा श्रेणी नर्मदा और ताप्ती नदियों से घिरे एक त्रिभुजाकार रुप में फैली हुई है। इसका आधार पूर्व में स्थित और उत्तर–दक्षिण तक फैली **मैकाल श्रेणी** में है। इसकी औसत ऊँचाई 400 से 600 मीटर है। बैतूल पठार 400 से 600 मीटर ऊँचा है। इसकी कालीभीत पहाड़ियाँ 770 मीटर ऊँची हैं। बड़वानी पहाड़ियाँ 849 मीटर, कालीभीत 770 मीटर और महादेव की पहाड़ियों पर स्थित धूपगढ़ 1350 मीटर ऊँची है।

संरचना – इस प्रदेश में दक्कन–ट्रेप, आर्कियन, धारवाड़, क्रिटेशियस एवं अधिनूतन युग की शैलें मिलती हैं। खरगौन के पश्चिमी भाग तथा बैतूल की भैसदेही तहसीलों में दक्कन ट्रेप छिन्दवाड़ा के मध्य भाग में डोलोराइट लावा चट्टानें मिलती हैं। उत्तर बैतूल से छिन्दवाड़ा, सिवनी तथा बालाघाट में आर्कियन युग की चट्टानें मिलती हैं। इनमें शिष्ट युक्त नीम और ग्रेनाइट मुख्य है। छिन्दवाड़ा जिले की सौरुर तहसील के दक्षिणी भाग में मण्डला में क्रिटेशियस क्रम की शैलें मिलती हैं। क्रिटेशियस क्रम के पश्चिमी भाग में अधिनूतन क्रम की तथा ग्रेवो प्रकार की आग्नेय शैल मिलती हैं। बैतूल और छिन्दवाड़ा में परतदार बालुका पत्थर मिलते हैं।

(3) पूर्वी पठार या बघेलखण्ड का पठार – मध्य प्रदेश के पूर्वी पठार के अन्तर्गत बघेलखंड पठार सम्मलित है। यह पठार मध्य प्रदेश राज्य के उत्तर–पूर्व में स्थित है। इसका विस्तार 23°40′ उत्तरी अक्षांश से 24°35′ उत्तरी अक्षांश तक तथा 80°5′ पूर्वी देशान्तर से 82°47′ पूर्वी देशान्तर तक है। इसके उत्तर में उत्तर प्रदेश, पूर्व में छत्तीसगढ़, दक्षिण तथा पश्चिम में मण्डला एवं जबलपुर जिले स्थित हैं।

बघेलखण्ड एक प्राचीनतम भूखंड का भाग है। इसकी ऊँचाई 600 मीटर से 1000 मीटर तक है। उत्तरी भाग में 610 मीटर ऊँची कैमूर की पहाड़ी तथा दक्षिण में 1000 मीटर ऊँची मैकाल की पहाड़ी है।

संरचना – बघेलखण्ड प्रदेश में तीन शैल समूह मिलते हैं, (1) **गोंडवाना भौल समूह** – यह बेसिन के पूर्व–पश्चिम में स्थित है, (2) **विन्ध्यन भौल समूह** – यह सोन घाटी में विस्तृत है, (3) **आद्य महाकल्पी भौल समूह** – जिसमें धारवाड़ युगीन शैल समूह आती हैं। इनमें ग्रेनाइट, नीस और क्वार्टजाइट शैलों का बाहुल्य है। उत्तरी विन्ध्यन शैल में बलुआ पत्थर निम्न विन्ध्यन शैल में शैल एवं चूने का पत्थर मिलता है। इनमें क्वार्टजाइट एवं कांग्लोमेरिट की शैलें भी मिलती हैं।

यहाँ के शैल समूह ने इस प्रदेश के उच्चावच एवं स्थलाकृति को प्रभावित किया है। दीर्घकालीन अपरदन के कारण इसके स्कार्प तीव्र ढाल वाले एवं स्पष्ट हो गये हैं।

बघेलखण्ड प्रदेश सोन नदी के अपवाह क्षेत्र में आता है। सोन और उसकी सहायक नदियों में छोटी महानदी, जोहिला, गोपद, बनास, रिहन्द तथा कन्हार हैं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. मध्य प्रदेश की सीमा कितने राज्यों से जुड़ी हुई है?
   (अ) 7 (ब) 6
   (स) 5 (द) 4
2. धूपगढ़ कहाँ स्थित है?
   (अ) कैमूर श्रेणी (ब) बघेलखण्ड
   (स) बुन्देलखण्ड (द) सतपुड़ा श्रेणी
3. मालवा पठार की सबसे ऊँची चोटी है–
   (अ) हजारी (ब) गुजशिखर
   (स) सिगार (द) जनापाव
4. बघेलखण्ड पठार मे कितने शैल समूह मिलते है?
   (अ) 4 (ब) 3
   (स) 2 (द) 5
5. बुन्देलखण्ड के पठार की सबसे ऊँची चोटी का नाम है–
   (अ) पंडारी (ब) धूपगढ़
   (स) बारामुला (द) सिद्धबाबा

4.3 अपवाह तन्त्र (Drainage)

मध्य प्रदेश की नदियों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। एक–वे नदियाँ जो वर्षा ऋतु में पानी से भर जाती है और लम्बे समय तक गर्मी में सूखी रहती हैं। दूसरी–वे नदियाँ जिनमें पूरे वर्ष पानी रहता है तथा जिनसे सिंचाई, विद्युत, परिवहन, पर्यटन, मत्स्य पालन आदि में सहायता मिलती है।

प्रदेश की प्रमुख नदियाँ निम्नलिखित है –

(i) नर्मदा, (ii) ताप्ती, (iii) चम्बल, (iv) सोन, (v) काली सिंध, (vi) सिंध, (vii) बेतवा, (viii) पार्वती, (ix) वैनगंगा, (x) केन, (xi) क्षिप्रा, (xii) तवा।

इन नदियों के अतिरिक्त अनेक छोटी–छोटी नदियाँ हैं जो विभिन्न दिशाओं में बहती है।

(i) पश्चिम की ओर बहने वाली नदियाँ– नर्मदा और ताप्ती।

(ii) उत्तर की ओर बहने वाली नदियाँ–चम्बल, बेतवा, सोन, केन, काली, सिन्धु, पर्वती।

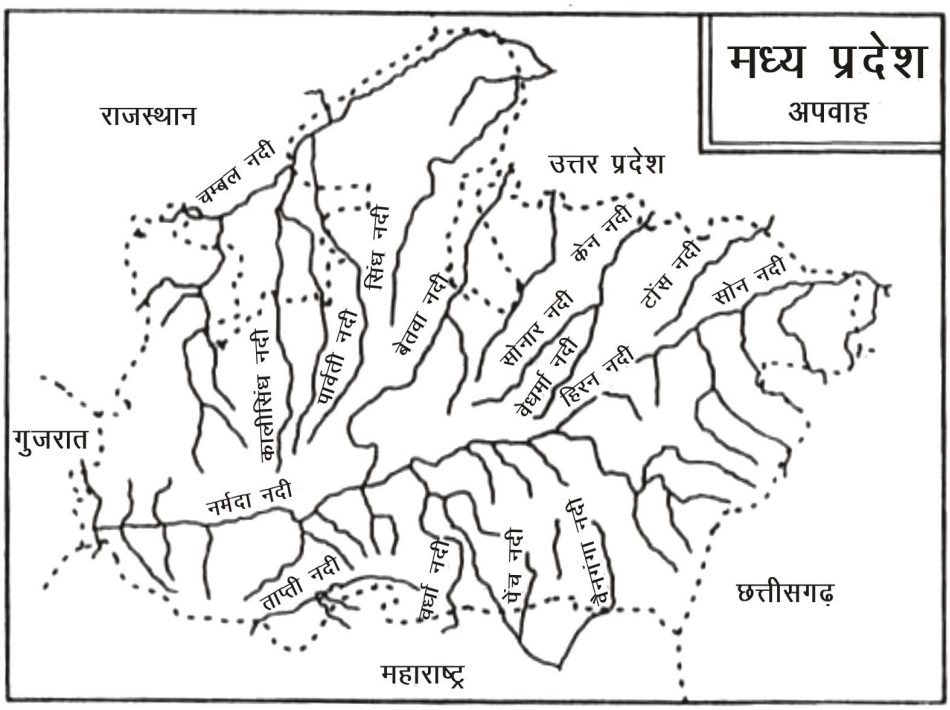
(iii) दक्षिण की ओर बहने वाली नदियाँ–वैनगंगा आदि।

(1) नर्मदा – यह नदी 1,312 किलोमीटर लम्बी है। मध्य प्रदेश में 1,077 किमी बहती है। विन्ध्याचल पर्वत श्रेणियों की मैकाल पर्वतमाला के अमरकंटक (1,057 मीटर की ऊँचाई) से निकलकर एक तंग, गहरी और सीधी घाटी में पश्चिम की ओर बहती

टिप्पणी

है। मण्डला नगर को कुण्डली में घेरते हुए यह उत्तर दिशा की ओर मुड़ जाती है। मण्डला, जबलपुर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, खण्डवा और खरगौन जिलों में बहती हुई गुजरात के भरूच जिले में बहती हुई खंभात की खाड़ी में गिरती है। इस नदी के उद्‌गम से 8 किलोमीटर पर कपिलधारा जलप्रपात तथा 100 किलोमीटर आगे दुग्ध धारा प्रपात है। जबलपुर के समीप यह नदी यहाँ मैदानी भाग में प्रवेश करती है और दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। आगे 2–3 किमी. तक संगमरमर की चट्टान को काट कर बनाई गई कन्दरा है। इसी कन्दरा में जबलपुर जिले में धुँआधार प्रपात (1,500) बनाती है। दूर–दूर तक माण्डेर श्रेणी के समानान्तर बहती है। नरसिंहपुर के निकट एक जलप्रपात (3 किमी) है। यह हंडिया से बडवाह तक पथरीले महाखड्ड में प्रवाहित होती है। प्रपात (मान्धार व दरदी) बनाती है तथा यह प्रपात 12 मी. ऊँचा है। मेश्वर के निकट एक छोटा प्रपात सहस्रधारा (8 मीटर) है। इसका अपवाह क्षेत्र 93,180 वर्ग किमी. है। इसके दायें तट की सहायक नदियाँ हिरन, तिनदोनी, बरना, चन्द्रकेशस कानर, मान, ऊटी एवं हथना है। बायें तट की मुख्य नदियाँ वरनार कजंर, शेर, शक्कर, दूधी, तबा, गंजाल, छोटी तबा, कुन्दी, देव, गोई हैं।

(2) ताप्ती – मध्य प्रदेश के बैतूल जिले में मुल्ताई नगर के पास से सतपुड़ा के दक्षिण में 762 मीटर की ऊँचाई से निकलती है। यह नदी नर्मदा के समानान्तर पूर्व से पश्चिम में बहती हुई खम्भात की खाड़ी में गिरती है। इसकी लम्बाई 724 किमी. है। वार्षिक अपवाह 86,340 लाख घनमीटर है। भैसदेही पठार पर ताप्ती के बीहड़ पाये जाते हैं। भैसदेही की सीमा से दक्षिण–पश्चिम में मुड़कर बुरहानपुर में मध्य से होकर महाराष्ट्र में प्रवेश करती हैं। बुरहानपुर में नदी घाटी चौड़ी हो गई है जिसके दोनों ओर समानान्तर कूट स्थित है। ''पूरणा'' इसकी सहायक नदी है जो बायीं ओर से मिलती है।



चित्र क्र. 4.4: मध्य प्रदेश – अपवाह

टिप्पणी

(3) चम्बल – चम्बल नदी मध्य प्रदेश में मऊ के निकट जानापाव पहाड़ी से निकलती है। यह पहाड़ी समुद्र–तल से 854 मीटर ऊँची है। यह पहले उत्तर–पूरब की मध्य प्रदेश के धार, उज्जैन, रतलाम, मन्दसौर, जिलों में बहती हुई राजस्थान के बूँदी, कोटा और धौलपुर में आती है फिर पूर्व की ओर बहकर इटावा से 38 किमी. दूर यमुना में मिलती है। सिन्ध, कालीसिन्ध, पार्वती एवं बनास इसकी मुख्य सहायक नदियाँ हैं। इस नदी में बहुत बाढ़ आती है। इसकी धारा ने ग्वालियर के निकटवर्ती भागों में बहुत बड़ी और गहरी खाइयाँ बना दीं। इसकी सम्पूर्ण लम्बाई 965 किमी. है। चम्बल बहुमुखी योजना के अन्तर्गत, गाँधी सागर, राणाप्रताप सागर एवं कोटा बाँध बनाये गये हैं जिनसे राजस्थान तथा मध्य प्रदेश राज्यों में जलविद्युत एवं सिंचाई की सुविधा है।

(4) सोन – विन्ध्यालय पर्वत की अमरकंटक की पहाड़ियों से नर्मदा के उद्‌गम स्थान के निकट से निकलती है। शीघ्र ही यह पठार को पार करके नीचे उतरती है। इससे झरने बन जाते हैं। यह नदी गंगा में मिलती है।

(5) महानदी – पूर्वी मध्य प्रदेश की सबसे प्रमुख नदी है। यह रायपुर (छत्तीसगढ़) जिले से सिहावा के निकट 42 मीटर की ऊँचाई से निकलती है और दक्षिण–पूर्व की ओर बहती है। यह मध्य प्रदेश एवं आन्ध्र प्रदेश में बहती हुई उड़ीसा में डेल्टा बनाकर बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

(6) बेतवा – यह नदी मध्य प्रदेश के भोपाल के निकट से निकलती है। बीना और धसाने दाहिनी ओर से तथा सिन्ध बायीं ओर से आकर मिलती हैं। गुना में सिन्ध से मिलने के बाद बेतवा की दिशा उत्तर से उत्तर–पूर्व हो जाती है। बाद में यह नदी हमीरपुर के निकट यमुना में मिल जाती है।

(7) हसदो – यह नदी सरगुजा जिले में कैम्मूरु की पहाड़ी श्रेणियों से निकलकर बिलासपुर (छत्तीसगढ़) जिले में बहती है और महानदी में मिलती है।

(8) इन्द्रावती – यह नदी बस्तर (छत्तीसगढ़) जिले से निकलती है। पूर्व से पश्चिम की ओर बहती हुई चित्रकूट पर जलप्रपात बनाती हुई गोदावरी नदी में मिल जाती है।

(9) तवा – पंचमढ़ी के पास महादेव पर्वत की काली भीत पहाड़ियों से निकलकर उत्तर की ओर बहती है। यह होशंगाबाद की मुख्य नदी है। देनवा, सुखतवा इसकी सहायक नदियाँ हैं। अन्त में यह नर्मदा नदी में मिल जाती है।

(10) क्षिप्रा – यह नदी इन्दौर जिले में स्थित काकरी–विरडी पहाड़ी से निकलती है। यह देवास, उज्जैन जिलों में होती हुई चम्बल में मिल जाती है। उज्जैन का महाकालेश्वर मन्दिर क्षिप्रा नदी के किनारे स्थित है।

(11) काली–सिन्ध – यह नदी देवास के वगालों गाँव के समीप विन्ध्याचल से निकलती है तथा शाजापुर एवं नरसिंहगढ़ जिलों में बहकर राजस्थान में चम्बल नदी में मिलती है।

(12) सिन्ध – यह गुना जिले में सिरोंज के निकट से निकलती है। गुना, शिवपुरी, दतिया एवं भिण्ड में बहती हुई इटावा के पास चम्बल में मिल जाती है।

(13) केन – विन्ध्याचल पर्वत से निकलकर उत्तर की ओर बहती हुई उत्तर प्रदेश में यमुना में मिलती है।

(14) पार्वती – यह नदी विन्ध्यन कगार के उत्तरी ढाल से सिहोर जिले में निकलती है। अन्त में यह चम्बल में मिल जाती है।

(15) कुवारी – यह शिवपुरी पठार से निकली है। सिन्ध की सहायक यह नदी मुरैना पठार के जल विभाजन द्वारा कुनू और चम्बल से अलग होकर पूर्व की ओर चम्बल के समानान्तर बहकर भिण्ड जिले की लाहर तहसील में सिन्ध से मिलती है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

6. चम्बल नदीं का उद्‌गम कहाँ से होता है?
   (अ) मुरैना (ब) धार
   (स) उज्जैन (द) महू
7. निम्नलिखित में से कौन सी नदी धुआँधार जलप्रपात बनाती है?
   (अ) सोत (ब) नर्मदा
   (स) क्षिप्रा (द) ताप्ती
8. _____ नदी शिवपुरी पठार से निकलती है।
   (अ) सिन्ध (ब) कुवाँरी
   (स) पार्वती (द) महानदी

4.4 जलवायु (Climate)

कर्क रेखा मध्य प्रदेश के मध्य से होकर गुजरती है। इस राज्य का विस्तार अधिक होने के कारण विभिन्न स्थानों में जलवायु में भिन्नता मिलती है। ग्रीष्म ऋतु का औसत तापमान 32°C है जबकि जनवरी महीने का औसत तापमान 21°C है। राज्य आन्तरिक भाग में स्थित होने के कारण महाद्वीपीय जलवायु प्रदान करता है। यद्यपि राज्य में ताप परिसर 17°C पाया जाता है, परन्तु मालवा, सतपुड़ा और नर्मदा घाटी की जलवायु अपेक्षाकृत शीतल है तथा ग्रीष्म ऋतु में गर्मी कम पड़ती है।

मध्य प्रदेश की जलवायु निम्न कारकों से प्रभावित होती है –

(i) राज्य का अक्षांशीय विस्तार, (ii) समुद्र से दूरी (iii) धरातलीय स्वरूप, (iv) वायु की दिशा एवं गति। राज्य की विशालता और जलवायु की भिन्नता के आधार पर राज्य को चार भागों मे विभाजित कर सकते हैं –

(1) उत्तर का मैदान – समुद्र से दूर स्थित होने के कारण उत्तर का मैदानी भाग ग्रीष्म ऋतु में अधिक गर्म और शीत ऋतु में अधिक ठण्डा रहता है।

(2) विन्ध्याचल की पहाड़ियाँ – इस भाग में ग्रीष्म ऋतु अधिक गर्म नहीं होती है और शीत ऋतु साधारण ठण्डी होती है। अमरकंटक और पंचमढ़ी इसी क्षेत्र में स्थित हैं।

(3) नर्मदा की घाटी – कर्क रेखा इस घाटी के निकट से गुजरती है। अतः ग्रीष्म ऋतु अत्याधिक गर्म और शीत ऋतु साधारण ठण्डी रहती है।

टिप्पणी

(4) मालवा का पठार – इस पठार की जलवायु साधारणतया सम है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु में न तो अधिक गर्मी पड़ती है और न ही शीत ऋतु अधिक ठण्डी होती है।

वायुदाब – भारत के मध्य में स्थित मध्य प्रदेश की जलवायु मानसूनी प्रकार की है। 21 मार्च के बाद सूर्य उत्तरायण होता है। अतः सूर्य की लंबवत किरणें 21 जून को कर्क रेखा के निकट होती हैं। अतः मध्य प्रदेश के मध्यवर्ती भाग में तापमान अधिक रहता है, जिससे उत्तर पश्चिमी भाग में न्यून दाब का केन्द्र स्थापित हो जाता है, जबकि दक्षिण में अपेक्षाकृत कम तापमान एवं अधिक वायुभार होता है। वायुभार की प्रवणता दक्षिण से पश्चिम की ओर होती है तथा पवन भी इस न्यून वायुदाब वाले केन्द्र की ओर बहती है। अतः समीपवर्ती समुद्रों से स्थल की ओर हवाएँ चलने लगती हैं यह हवाएँ नम होती हैं। अतः मध्य प्रदेश में वर्षा करती हैं।

23 सितम्बर के बाद सूर्य दक्षिणायन होने लगता है। मध्य प्रदेश में तापमान जून की अपेक्षा कम होने लगते हैं। इस समय (सितम्बर में) सूर्य की सीधी किरणें विषुवत् रेखा पर पड़ती है। हिन्द महासागर में भी इस समय अधिक तापमान के कारण न्यून दाब के केन्द्र बन जाते हैं। अतः पवनों की दिशा स्थल से जल की ओर अर्थात् उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम की ओर हो जाती है। यह पवनें शुष्क होती हैं। अतः वर्षा नहीं करती हैं। केवल कुछ स्थानों पर चक्रवातीय वर्षा होती है।

मध्य प्रदेश की जलवायु इसी विशाल मानसूनी व्यवस्था का अंग है तथा जलवायु के समस्त तत्व इसी भारतीय मानसून से निर्देशित होते हैं। जाड़े और गर्मी दोनों में वायुदाब रेखाऐं पूर्व से पश्चिम जाती हैं। जुलाई में 1,000 मिलीबार की समदाब रेखा मध्य प्रदेश के बीच से गुजरती है और पवनों की दिशा पश्चिम व दक्षिण पश्चिम से उत्तर पूर्व की ओर होती है। जनवरी में फिर 1,030 मिलीबार की समदाब रेखा मध्यप्रदेश को काटती हुई जाती है। परन्तु इस समय पवनों की दिशा उत्तर और उत्तर –पश्चिम से दक्षिण–पश्चिम की ओर होती है।

तटीय प्रदेशों से दूर स्थिति के कारण यहां तटीय प्रदेशों की तुलना में वर्षा कम होती है। वार्षिक और दैनिक तापांतर में अंतर मिलता है।

तापमान – मध्य प्रदेश में तापमान का सीधा सम्बन्ध समुद्र से दूरी तथा समुद्र की सतह से ऊँचाई से है। औसत तापमान अवश्य सूर्यताप से निर्धारित होता है।

मार्च में सूर्य के उत्तरायण होते ही सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में तापमान बढ़ने लगता है। परन्तु तापमान का वितरण असमान होता है। सम्पूर्ण उत्तरी मध्य प्रदेश में तापमान 21°C से 25°C के मध्य रहता है (ग्वालियर 23.3°C, इंदौर 24.6°C, नौगांव 24.2°C और होशंगाबाद 26.2°C)। इस समय समताप रेखाएँ पूर्व से पश्चिम की ओर होती हैं। स्थलीय भाग अधिक गर्म नहीं होता है।

मार्च से जून तक तापमान तेजी से बढ़ते हैं। मई–जून में मध्य प्रदेश के उत्तरी भाग में तापमान औसत से अधिक होता है और दक्षिण और दक्षिण–पूर्व की ओर कम हो जाता है। उत्तरी मध्य प्रदेश में यदि मई का औसत तापमान 42°C के आसपास है तो दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्व में स्थित नीमच 31.2°C, सतना 32.9°C, जबलपुर 31.3°C और खण्डवा 31.5°C रहता है। मध्य प्रदेश में मई महीने में औसत तापमान जून महीने से अधिक होता है।

टिप्पणी

जून के महीने में मानसून के आते ही तापमान में अचानक गिरावट आने लगती है। जून की तुलना में जुलाई का तापमान बहुत कम हो जाता है, क्योंकि आर्द्रता एवं मेघाच्छन्न आकाश के कारण तापमान अधिक नहीं बढ़ पाता है। (जुलाई में सागर में 26.6°C, जबलपुर में 26.9°C, सतना में 28.7°C तापमान रहता है।) सितम्बर तक तापमान में अधिक भिन्नता नहीं होती है। परन्तु सितम्बर–अक्टूबर में स्वच्छ आकाश के कारण तापमान में वृद्धि होती है। अक्टूबर से जनवरी तक तापमान निरन्तर गिरता रहता है। जनवरी में ग्वालियर में 15.3°C, होशंगाबाद में 19.6°C तापमान रहता है।

औसत अधिकतम एवं न्यूनतम दैनिक तापान्तर में भी कुछ विशेषताएँ मिलती हैं। दिसम्बर महीने में तापान्तर सबसे कम रहता है। कुछ स्थानों पर जैसे सागर में जनवरी में पाया जाता है। पूरे मध्य प्रदेश में मार्च में सबसे अधिक तापान्तर रहता है।

मध्य प्रदेश में वर्षा जून से सितम्बर तक होती है। वर्षा दक्षिण–पश्चिमी मानसूनी पवनों द्वारा होती है। दिसम्बर और जनवरी में कुछ वर्षा चक्रवातों द्वारा होती है। अन्य महीनों में वर्षा नाम मात्र की होती है। वर्षा अरब सागर वाले मानसून की शाखा एवं बंगाल की खाड़ी वाले मानसून की शाखा से होती है। मध्य प्रदेश के पश्चिमी भाग में जब अरब सागर वाले मानसून की शाखा से वर्षा होती है तो पूर्वी भाग में बंगाल की खाड़ी वाले मानसून की शाखा से वर्षा होती है। इन दोनों ही शाखाओं से उत्तर–पश्चिमी मध्य प्रदेश में कम वर्षा होती है, जैसे भिण्ड में 55 सेंमी.।

मध्य प्रदेश की ओसत वार्षिक वर्षा में स्थानीय भिन्नताएँ अधिक मिलती हैं। यह भिन्नता भौतिक बनावट के कारण है। यही कारण है। यहाँ सम वर्षा रेखाएँ बहुत अधिक मोड़दार हैं। 75 सेमी. की सम वर्षा रेखा मध्य प्रदेश को दो भागों मे बाँटती है। यह सम वर्षा रेखा, सीधी, सिवनी और जबलपुर होती हुई जाती है। इसके पूर्वी भाग में चावल और पश्चिमी भाग में गेहूँ और ज्वार की खेती होती है।

इस पूर्वी भाग में तीन अधिक वर्षा के प्रदेश हैं। मण्डला और बालाघाट को घेरती हुई 139.7 सेमी. वर्षा रेखा जाती है। इसके मध्य 152.4 सेमी. से 165 सेमी. तक वर्षा वाले क्षेत्र हैं। इसी प्रकार सीधी तथा समीपवर्ती वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक वर्षा के क्षेत्र हैं। वैसे मध्य प्रदेश में वर्षा का औसत 100 सेमी. है। वर्षा की मात्रा पूर्व एवं पश्चिमी भागों में भिन्न है। पश्चिमी मध्य प्रदेश में औसत वर्षा 75 सेमीं. होती है। वर्षा की मात्रा उत्तर और पश्चिम की ओर कम होती जाती है। मालवा और बुन्देलखण्ड के पठार पर औसत वर्षा 76 सेमी. से 114 सेमी. के मध्य है जबकि चम्बल की निचली घाटी, ग्वालियर, मुरैना, भिण्ड व शिवपुरी में 62.5 सेमी. से 114.3 सेमी. तक है। पश्चिमी जिलों खरगौन, धार, झाबुआ, रतलाम, नीमच व मन्दसौर में औसत वर्षा 76.2 सेमी. से कम है।

मध्य प्रदेश में भारत के अन्य भागों की तरह तीन ऋतुएँ होती हैं –

(i) ग्रीष्म ऋतु – (मध्य मार्च से मध्य जून तक)

(ii) वर्षा ऋतु – (मध्य जून से मध्य अक्टूबर तक)

(iii) शीत ऋतु – (मध्य अक्टूबर से मध्य मार्च तक)

टिप्पणी

(i) ग्रीष्म ऋतु –

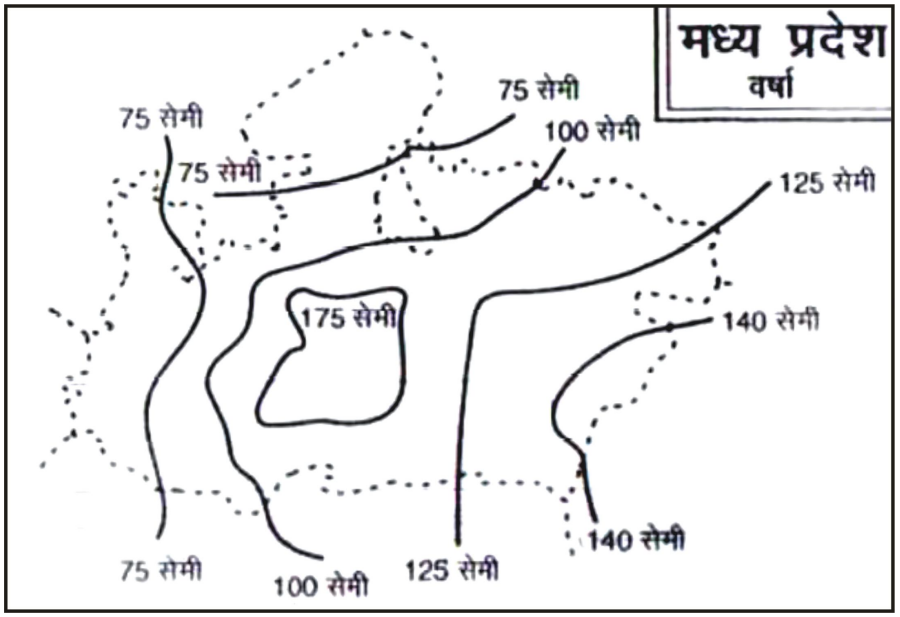
वायुदाब – 21 जून को कर्क रेखा के निकट सूर्य लम्बवत् होता है। कर्क रेखा मध्य प्रदेश के उत्तरी भाग में होती हुई जाती है। अतः तेज धूप के कारण तापमान बढ़ता है तथा उत्तर–पश्चिमी भाग में न्यून वायु भार का केन्द्र स्थापित हो जाता है। वायु भार का ढाल दक्षिण से पश्चिम की ओर होता है। 1008 मिलीबार की वायुदाब रेखा सम्पूर्ण मध्य प्रदेश को घेर लेती है। मई में जब सूर्य की किरणों के कारण वायुदाब अधिक गिरता है और मध्य प्रदेश पर से 999 मिलीबार तथा 1000 मिलीबार की रेखाएँ पश्चिम से पूर्व की ओर गुजरती हैं। 1002 मिलीबार की रेखा बस्तर से गुजरती हुई जाती है। अतएव वायु भार का ढाल उत्तर से दक्षिण तथा उत्तर–पश्चिम की ओर होता है। हवा के बहने की दिशा भी उसी ओर होती है।

तापक्रम – ग्रीष्म ऋतु में मार्च के बाद तापमान में वृद्धि होना शुरु हो जाती है और मई में मध्य प्रदेश का तापमान 30°C से ऊपर रहता है। उत्तर–पश्चिमी मध्य प्रदेश अधिक तापमान का केन्द्र रहती है। ग्वालियर, मुरैना और दतिया को घेरती हुई 42°C की समताप रेखा मिलती है। दक्षिणी बालाघाट एवं पश्चिमी दुर्ग में भी इतना ही तापमान रहता है। पूर्वी जगदलपुर, उत्तरी बिलासपुर, मण्डला, शहडोल, छिंदवाड़ा, बैतूल तथा पश्चिमी मध्य प्रदश के शाजापुर, देवास, इन्दौर, धार, उज्जैन, झाबुआ, रतलाम, मन्दसौर में तापमान 40°C के आस–पास रहता है। अम्बिकापुर और उत्तरी रायगढ़ में इस समय तापमान 37°C के आस–पास रहता है।

वर्षा – सम्पूर्ण पश्चिमी मध्य प्रदेश में अप्रैल–मई के महीने में वर्षा 2.5 सेमी. से अधिक नहीं होती है। पूर्वी मध्य प्रदेश में औसत वर्षा 2.5 सेमी. से 12.5 सेमी. हो जाती है। इस ऋतु में आर्द्रता बहुत कम, आकाश स्वच्छ एवं तेज धूल भरी हवाएँ मुख्य विशेषताएँ हैं।

(ii) वर्षा ऋतु

मध्य प्रदेश में जून के मध्य तक वर्षा ऋतु प्रारंभ हो जाती है।



चित्र क्र. 4.5: वर्षा का वितरण

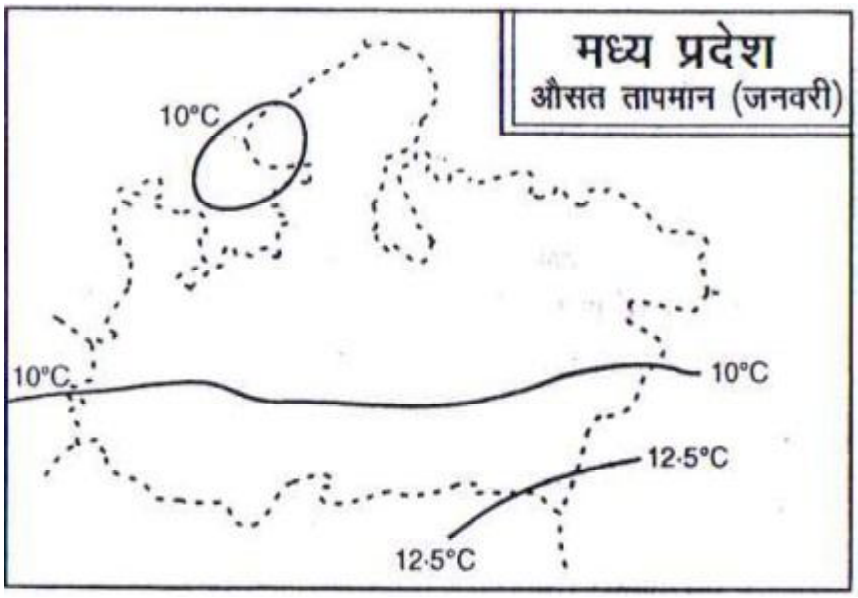
टिप्पणी

जून से वायु में आर्द्रता बढ़ने लगती है, क्योंकि सागर के ऊपर से आने वाली हवाएँ उत्तर–पश्चिमी भारत तथा पाकिस्तान के न्यून दाब की ओर आकर्षित होने लगती है। सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में हवाओं की दिशा पश्चिम व दक्षिण से होती है। ये हवाएँ नर्मदा और ताप्ती की घाटियों एवं दक्षिण में पेच नदी की घाटी में प्रवेश करती हैं जिनसे निकटवर्ती पर्वतीय एवं ऊँचें पठारी प्रदेशों मे अधिक वर्षा होती है।

तापक्रम – वर्षा, तथा आर्द्रता अधिक एवं धूप की कमी के कारण इस ऋतु में तापमान गिरने लगता है तथा जून एवं जुलाई के तापमान में पर्याप्त अन्तर आ जाता है। उत्तरी भागों में तापमान 26°C से 29°C के मध्य एवं दक्षिणी भागों में 22°C से 26°C के मध्य रहता है। यह उत्तर–दक्षिणी भागों में अधिक वर्षा के कारण पाया जाता है। जुलाई के पश्चात् औसत तापमान लगभग, स्थिर–सा रहता है।

वर्षा – जुलाई महीने में सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में 16 सेमी. से अधिक वर्षा हो जाती है। पूर्वी मध्य प्रदेश में कुछ अधिक वर्षा होती है। रायगढ़, बालाघाट एवं जबलपुर में औसत वर्षा 18 सेमी. से अधिक होती है। पश्चिमी भाग में 10–12 सेमी. एवं झाबुआ, धार एवं खरगौन में 6–8 सेमी. तक वर्षा होती है।

वर्षा के वितरण का यही रूप अगस्त एवं सितम्बर में देखने को मिलता है। केवल पठारी एवं पहाड़ी भागों पर ऊँचाई के कारण वर्षा अधिक होती है। जैसे–अम्बिकापुर में 20 सेमी. सतपुड़ा में महादेव एवं तामिया पठारी भाग पर 23 सेमी. के आस–पास वर्षा होती है।

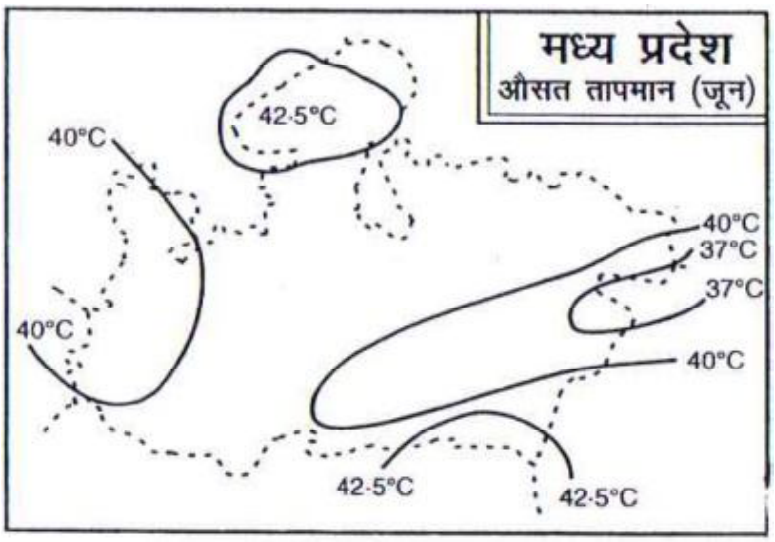


चित्र क्र. 4.6: शीत ऋतु की समताप रेखाएँ

जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर में मध्य प्रदेश में औसतन 112 सेमी. वर्षा होती है। पूर्वी भाग बस्तर, बिलासपुर एवं अम्बिकापुर में 127 सेमी. ग्वालियर, मुरैना, शिवपुरी में 60 सेमी. धार, झाबुआ, खरगौन एवं पश्चिमी मन्दसौर में 50 सेमी. वर्षा होती है।

सितम्बर के अन्त में मानसून का वेग कम होने लगता है तथा स्वच्छ आकाश का समय बढ़ने लगता है। वर्षा की मात्रा घटने लगती है। अक्टूबर में औसत वर्षा कम हो जाती है और तापमान बढ़ने लगता है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 4.7: ग्रीष्म ऋतु की समताप रेखाएँ

(iii) शीत ऋतु –

तापक्रम – सितम्बर में सूर्य के दक्षिणायन होने के साथ–साथ औसत तापमान, वर्षा एवं आर्द्रता में गिरावट आने लगती है। अक्टूबर में सम्पूर्ण मध्य प्रदेश का तापमान 20°C तक रहता है जबकि जनवरी में उत्तरी मध्य प्रदेश का तापमान 15°C से 20°C तक होता है। दक्षिणी भाग का तापमान 18°C से 21°C के मध्य रहता है। ऐसा बालाघाट, बिलासपुर, रायगढ़ और पूर्वी बस्तर में होता है।

वायुदाब – जनवरी में अधिक वायुदाब का केन्द्र राजस्थान और पंजाब पर केन्द्रित हो जाता है। 1018 मिलीबार की वायु मकर रेखा इस अधिक वायुदाब क्षेत्र को घेर लेती है तथा 1017 मिलीबार की वायुभार रेखा दक्षिणी मध्य प्रदेश से गुजरती है। वायु की दिशा पूर्व, दक्षिण–पूर्वी व दक्षिण की होती है।

वर्षा – स्वच्छ आकाश, शुष्क मौसम एवं मन्द हवाएँ शीत ऋतु की मुख्य विशेषताएँ हैं। रात्रि का तापमान गिरने से ऊँचे पठारी एवं पहाड़ी भागों में स्थानीय रूप से पाला व कुहरा पड़ता है। दिसम्बर व जनवरी में उत्तर–पश्चिमी मध्य प्रदेश में हल्की वर्षा चक्रवातों से होती है। ये चक्रवात अधिकतर पश्चिम से आते हैं और उत्तर की अत्यधिक शीत वायु को आकर्षित कर लेती है, इससे शीत लहर भी आती है। इन चक्रवातों से कभी–कभी ओले भी पड़ते हैं। वायु की गति भी अधिक हो जाती है और मौसम परिवर्तित हो जाता है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

9. मध्य प्रदेश की एक मात्र ऋतु वैद्यशाला कहाँ स्थित है?
   (अ) भोपाल (ब) ग्वालियर
   (स) इन्दौर (द) सागर
10. मध्य प्रदेश के किस क्षेत्र में समशीतोष्ण जलवायु पाई जाती है?
   (अ) मालवा का पहाड़ी क्षेत्र (ब) विहयंत का पर्वतीय क्षेत्र
   (स) मध्य प्रदेश का उत्तरी मैदान (द) उपर्युक्त में से कोई नही

4.5 मृदा (Soil)

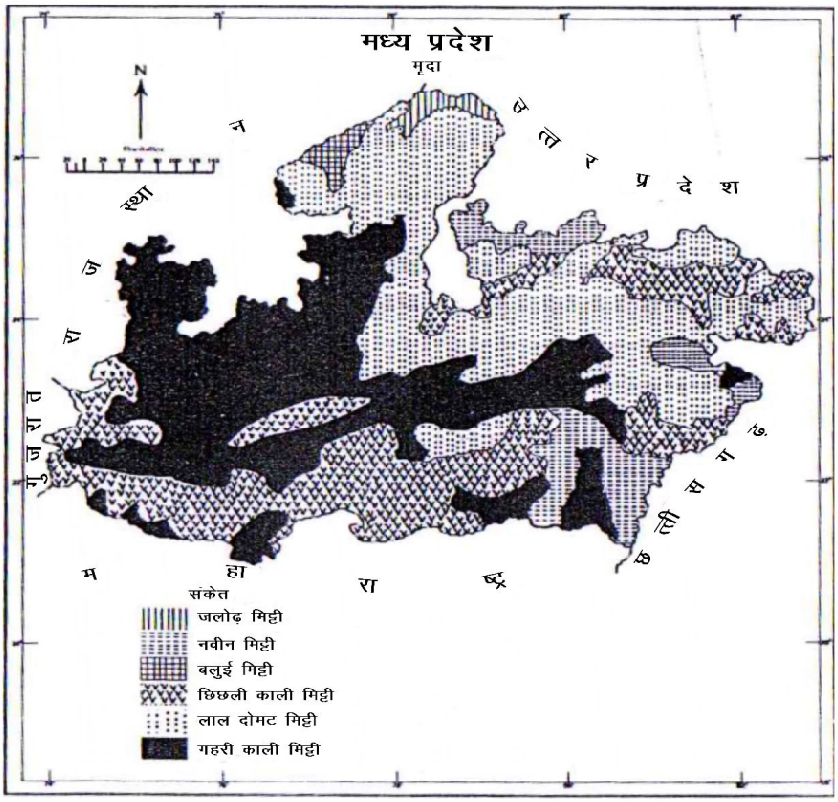
टिप्पणी

साधारण अर्थों में धरातल की ऊपरी परत, जिस पर विभिन्न प्रकार की वनस्पति ऊगती है, मृदा कहलाती है। मृदा मानव के अमूल्य संसाधनों में से एक है क्योंकि धरातल पर पाये जाने वाले समस्त जीव प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से मृदा से ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। मानव की सभी आर्थिक क्रियाएँ मृदा पर आधारित हैं। मृदा की महत्ता को विलकॉक्स ने बताते हुए कहा है कि, ''मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है और प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा मिट्टी से ही प्राप्त होती है।''

"The history of civilization is the history of the soil and the education of the individual begins from the soil" – Wilcox

मृदा का निर्माण प्राकृतिक कारकों व अपक्षय पर निर्भर करता है। यह भूतल का ऐसा आवरण है जो दृढ़ीभूत नहीं हुआ है। इसमें जीवन के अनुपोषण की क्षमता होती है। कृषि के लिये मिट्टी एक ऐसा प्राकृतिक पदार्थ है जो कि भूमि पर विस्तृत सतह के रूप में फैला होता है। इसमें खनिज व कार्बनिक तत्वों का सम्मिश्रण होता है जिसे फसलों को उगाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

प्रसिद्ध अमरिकी मृदा विशेषज्ञ डॉ. बैनेट के अनुसार, ''मिट्टी भू–पृष्ठ पर मिलने वाले असंगठित पदार्थों की वह ऊपरी परत है जो मूल चट्टानों अथवा वनस्पति के योग से बनती है।''



चित्र क्र. 4.8: मध्य प्रदेश – मृदा

टिप्पणी

मृदा का रंग, संरचना, गहराई, प्राकृतिक एवं रासायनिक संगठन उसकी मूल चट्टान से प्रायः भिन्न होता है। इसका प्रमुख कारण मृदा के निर्माण में जलवायु, वनस्पति, विकास की अवधि आदि बाह्य प्राकृतिक तत्वों का प्रभाव पड़ता है। मृदा के प्रमुख दो तत्वों में धातु या खनिज तत्व (Mineral matter) जो पृथ्वी में स्वयं उपस्थित रहते हैं एवं कार्बनिक तत्व (Carbonic matter) जो वनस्पति, जीवधारियों आदि के नष्ट होने से बनता है। पौधों के विकास में इन दोनों तत्वों का मृदा में होना आवश्यक होता है। मृदा के कीटाणु (Bacteria) मृदा को तोड़कर इतना बारीक कर देते हैं कि पौधे आसानी से अपनी खुराक मृदा से ग्रहण कर लेते हैं। अत्याधिक गर्मी मृदा में उपस्थित कीटाणुओं के लिए घातक होती हैं क्योंकि अधिक तापमान पर कीटाणुओं का जीवन नष्ट हो जाता है। यही कारण है कि उच्च तापमान वाले क्षेत्रों में मृदा अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा कम उपजाऊ होती है।

मृदा का वर्गीकरण अनेक भारतीय और विदेशी विद्वानों ने किया है जिनमें भारतीय विद्वान् श्री विश्वनाथ व ऊकील, डॉ. चॅटर्जी, डॉ. वाडिया, डॉ. कृष्णन् और डॉ. मुकर्जी हैं तथा रूस की श्रीमती चोलालस्काया प्रमुख हैं।

भारत में कृषि अनुसंधान संरचना मृदा के सभी प्रकार के परीक्षण एवं अनुसंधान कार्यकर्ता हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान शाला (ICAR) गुणों को ध्यान में रखते हुए मृदा का विभाजन किया है। मध्य प्रदेश राज्य की मृदा सम्पदा का विभाजन भी भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने व भूगोलवेत्ताओं ने अपने आधारों पर करने का प्रयत्न किया है।

चट्टानों के आधार पर मृदा का विभाजन (Classification of Soil Based on Rocks)

मृदा के उपस्थित खनिज तत्व यह बताते हैं कि उस मृदा का निर्माण किस पैतृक चट्टान से हुआ है या कौन सी चट्टान इस प्रकार की मृदा का मूल आधार है। भारत की चट्टानों का अध्ययन करने वाले भूगोल शास्त्रियों ने विभिन्न क्षेत्रों की मृदा का भी अध्ययन किया है। ये मृदा की उत्पत्ति में और उसके वर्गीकरण में चट्टानों को प्रमुख मूल आधार मानते हैं।

अति प्राचीन युग की चट्टानों से निर्मित मृदा – नर्मदा घाटी के पश्चिमी भाग में ऊपरी नर्मदा घाटी जो सतपुड़ा क्षेत्र से लम्बी है उनमें रवेदार शैलें, जबलपुर जिले के पास, रीवा, बालाघाट जिलों में अरावली पहाड़ियों के उत्तर में धारवाड क्रम की चट्टानें मिलती हैं। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में पाये जाने वाली ग्रेनाइट चट्टानों का रंग गुलाबी और लाल होता है। मध्य प्रदेश राज्य के धरातल पर विभिन्न प्रकार की चट्टानें पायी जाती हैं। इनसे निर्मित मृदा भी विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न प्रकार की होती हैं।

कुडप्पा क्रम की चट्टानों से निर्मित मृदा – मध्य प्रदेश के मध्य पठारी भाग, रीवा, पन्ना के पठारी भाग, नर्मदा घाटी के भागों में कुडप्पी क्रम की चट्टानें मिलती हैं। यह अति प्राचीन होने के कारण पूर्णतः परिपक्व चट्टानें हैं। इनसे बनाने वाली मृदा ने अपनी पूर्णावस्था प्राप्त कर ली है और यह उपजाऊ मृदा की श्रेणी में आती है। इन चट्टानों से बनने वाली मृदा बारीक बलुंही और अधिक क्षारीय होती है। कुडप्पा शैलों में जीवाश्म की कमी पायी जाती है।

टिप्पणी

विन्ध्य क्रम की चट्टानों से निर्मित मृदा – विन्ध्य क्रम की चट्टानें भी प्राचीन हैं, यह मध्य भारत के पठार बुन्देलखण्ड के कुछ भागों में, रीवा पठार के भाग में पूर्वी पठारी भाग नर्मदा घाटी और विंध्याचल पर्वत के सहारे फैली हुई है। इन चट्टानों में छिले जलीय विक्षेप पाये जाते हैं।

गोंडवाना क्रम की चट्टानों से निर्मित मृदा – पूर्वी पठारी क्षेत्र के पूर्वी भाग में नर्मदा घाटी के दक्षिण में मोरबन्द और सिखरेवा नदी बेसिन में पंचमढ़ी और इसके उत्तर–दक्षिण में सतपुड़ा कोयला क्षेत्र हैं जहाँ गोंडवाना क्रम की चट्टानें फैली हुई हैं। यह नदियों की घाटियों में पाये जाने वाले जलीय अवशेषों से बनती है। इनसे बनने वाली मृदा रवेदार और अनुपजाऊ होती है।

दक्कन द्वीप अथवा लावा प्रदेश की चट्टानों से निर्मित मृदा – दक्कन द्वीप की चट्टानें मध्य भारत के पठार, बुन्देलखण्ड में परतों के रूप में, मालवा के पठारी भाग में, सतपुड़ा श्रेणी में और नर्मदा घाटी के क्षेत्र में पायी जाती हैं। इसमें लोहे और मैंगनीज के अंश अधिक पाये जाते हैं। इन चट्टानों से बनने वाली मृदा का रंग काला होता है तथा यह अधिक उपजाऊ होती है।

नूतन और अभिनूतन क्रम चट्टानों से निर्मित मृदा – भारत के पठारी भाग में, रीवा, पन्ना के पठारी भाग में, सतपुड़ा की श्रेणी में नूतन और अभिनूतन क्रम की चट्टानें मिलती हैं, जिनमें चूना पत्थर, बलुआ पत्थर, हेमेटाइट और क्वार्टजाइट आदि की चट्टानें मिलती हैं।

अवसादी चट्टानों से निर्मित मृदा – अवसादी चट्टानों से निर्मित अवसादी मृदा अपने मूल चट्टानी क्षेत्र से ही दूर–दूर तक फैली हुई होती हैं। इनके कण महीन होते हैं, इनमें विभिन्न रासायनिक अवयवों का मिश्रण पाया जाता हैं। कुछ क्षेत्रों में ये काफी उपजाऊ होती हैं।

संरचना के आधार पर वर्गीकरण
(Classification based on Structure)

मध्य प्रदेश की भौतिक प्रादेशिक संरचना, भूगर्भिक संरचना के आधार पर सामान्य रूप में मृदा को विभिन्न वर्गों में विभाजित किया गया है – (क) काली मृदा (ख) लाल एवं पीली मृदा (ग) जलोढ़ मृदा (घ) कछारी मृदा (ड) बलुई मृदा (च) मिश्रित मृदा।

काली मृदा (Black Soil)

दक्कन के पठार का वह भाग जो मध्य प्रदेश राज्य में आता है उस क्षेत्र में पायी जाने वाली मृदा वगली है। मध्य प्रदेश के उत्तर पश्चिम का भाग इस मृदा का क्षेत्र है पर अधिकांश मृदा राज्य के पश्चिमी भाग में पायी जाती है। लावा निर्मित चट्टानों से बनने के कारण इस मृदा में लोहे, एल्युमिनियम और चूने की मात्रा पायी जाती है। इसमें फॉस्फेट, नाइट्रोजन तत्वों की कमी होती है। यह मृदा पानी पड़ने पर चिपचिपी हो जाती है। जब सूख जाती है तो इसमें दरारें पड़ जाती है। काली मृदा के रासायनिक संघटन में नाइट्रोजन 0.045, कार्बन 0.049, अमोनियम 0.002, कार्बोनेट 5.0, जलने पर भार में कमी 5.0, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में अघुलनशील तत्व 70.0, ऑक्साइट 6.5, लोहे के ऑक्साइट 4.0, अनुबुझा चूना 2.5, मैग्नेशिया 1.66, पोटैशियम मोनो

टिप्पणी

ऑक्साइड 0.85, फॉस्फोरस पेंटा, ऑक्साइट 0.95, पी.एच. 7.5 प्रतिशत पाया जाता है। इस क्षेत्र में बहने वाली नदियाँ अपने साथ इस मिट्टी को बहाकर ले आती हैं जो काली और लाल मृदा का मिश्रण होता है। यह मृदा मध्य प्रदेश के मंदसौर, रतलाम, सागर, खण्डवा, खरगौन, बड़वानी, हरदा, उज्जैन, सागर, दमोह, जबलपुर, छिन्दवाड़ा, बैतूल, गुना, सिवनी, भोपाल तथा विदिशा में काले रंग की सोनार वेयमी की घाटी में लाल तथा काली मिश्रित मृदा मिलती है। काली मृदा को रंग के आधार पर तीन भागों में विभक्त किया गया है –

(i) गहरी काली मृदा

काली मृदा की गहराई के आधार पर इसका रंग भी अलग–अलग होता है। अधिक गहरी और काली मृदा चट्टानों के अपक्षय से बनती है। इस मृदा की गहराई 2 मीटर तक पाई जाती है। नर्मदा की घाटी के पास और पश्चिमी सतपुड़ा के पहाड़ों पर यह मृदा पाई जाती है। इस मृदा के उपजाऊ होने से इसमें गेहूँ, तिलहन, चना, ज्वार आदि की फसलों का अधिक उत्पादन किया जाता है।

(ii) साधारण काली मृदा

साधारण गहरी काली मृदा का रंग भूरा या हल्का काला होता है। यह मालवा के पठार के अधिकांश क्षेत्रों में पायी जाती है। इन क्षेत्रों में इस मृदा में कपास की कृषि अधिक की जाती है। अधिक उपजाऊ होने के कारण तिलहन, गेहूँ, ज्वार की कृषि भी की जाती है।

(iii) छिछली काली मृदा

छिछली या कम गहरी काली मृदा की गहराई पश्चिमी मध्य प्रदेश के क्षेत्रों में कम होती है। इनमें उपजाऊपन भी कम होता है। जल प्रवाह के साथ मृदा की ऊपरी परत बह जाती है जिससे यह कम गहरी पायी जाती है। इसमें 15 से 30 प्रतिशत भाग चिकनी दोमट मिट्टी मृदा का होता है। कुछ क्षेत्र में यह काली और लाल मिट्टी के मिश्रण से बनती है जो बलुई दोमट है। चिकनी दोमट मृदा छिन्दवाडा बैतूल और सिवनी जिलों में एवं बलुई दोमट मृदा बुन्देलखण्ड के क्षेत्र में पायी जाती है।

लाल और पीली मृदा (Red and Yellow Soil)

लाल और पीले रंग की मृदा मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग में पायी जाती है। लाल रंग मृदा में उपस्थित लोहे के कणों के ऑक्सीकरण के कारण बनता है एवं पीला रंग फेरिक ऑक्साइड के जलयोजन के कारण पाया जाता है। इस में हयुमस तथा नाइट्रोजन की कमी होती है। इसलिए यह उपजाऊ नहीं होती है। लाल और पीली मृदा के रासायनिक संघटन में क्ले की मात्रा 6.3–15.3, नाइट्रोजन 0.04–0.13, कार्बन/नाइट्रोजन का अनुपात 4.8–17.6, एक्सभेजिबल कैल्शियम 9.6–4.40, चिकनी मिट्टी का अनुपात 1.6–2.1 है। इस प्रदेश के बघेलखण्ड का सम्पूर्ण क्षेत्र इस मृदा के अन्तर्गत आता है। सीधी, कटनी, उमरिया और शहडोल जिले में यह मृदा पायी जाती है। चूने की मात्रा अधिक पायी जाती है। विंध्य शैल समूह की चट्टानों से लाल व पीले रंग की मृदा का निर्माण होता है। बलुई मृदा वाली लाल मृदा बघेलखण्ड में पायी जाती है। मालवा के

पठारी क्षेत्रों में भी दक्कण क्षेत्र की काली मृदा का ऋतु क्षरण होने से यह निर्मित मृदा लैटेराइट जैसी ही उपजाऊ बनती है।

टिप्पणी

जलोढ़ मृदा (Alluvium)

मध्य प्रदेश की ऊपरी या उत्तरी भागों में यह मृदा पायी जाती है। गंगा नदी की घाटी का भाग मध्य प्रदेश के उत्तरी भागों में आकर मिलता है। इन्हीं क्षेत्रों में जलोढ़ मृदा पायी जाती है। मध्य प्रदेश के उत्तर में चम्बल नदी की घाटी में निक्षेपित मृदा भी जलोढ़ मृदा है। चम्बल नदी के भिण्ड, मुरैना, ग्वालियर और श्योपुर जिलें के क्षेत्रों में यह मृदा पीलापन लिये हुए कुछ भूरे रंग की होती है। इस क्षेत्र की नदी घाटी में जलोढ़ मृदा नहीं पायी जाती है। कहीं–कहीं इस मृदा का रंग राख जैसा भी होता है। इस मृदा में नाइट्रोजन, और फॉस्फोरस जैसे तत्वों की कमी पाई जाती है। इस मृदा में बालू, सिलट तथा मृत्तिका का अनुपात 50:19:6:29.4 होता है। बालू की अधिकता के कारण इसमें अपरदन अपेक्षाकृत कम होता है। pH उदासीन से क्षरीय तक पाया जाता है।

कछारी मृदा (Alluvial Soil)

मध्य प्रदेश के ऊपरी भाग में बहने वाली चम्बल और उसकी सहायक नदियों में आने वाली बाढ़ से जो मृदा निक्षेपित होकर निर्मित होती है वह कछारी मृदा कहलाती है। यह मृदा भिण्ड, मुरैना, श्योपुर, ग्वालियर क्षेत्रों में नदियों द्वारा लाकर निक्षेपित की जाती है। इस मृदा में गेहूँ, गन्ना, कपास आदि फसलें बड़ी मात्रा में होती है।

लेटेराइट मृदा (Laterite Soil)

यह मृदा मध्य प्रदेश के दक्षिणी भाग में पायी जाती है। इसके अन्तर्गत छिन्दवाड़ा और बालाघाट के छोटे से क्षेत्र आते हैं। इस मृदा का रंग कुछ हल्का लाल होता है।

बलुई मृदा (Sandy Soil)

यह मध्य प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में पायी जाती है। इसमें रेत और बालू की अधिकता होती है।

मिश्रित मृदा (Mixed Soil)

यह मृदा प्रदेश में मिश्रित रूप में मिलती है। इसमें लाल, पीली और काली मृदा का मिश्रण होता है। इस मृदा में नाइट्रोजन, फॉस्फेट और कार्बनिक पदार्थों की कमी पाये जाने के कारण इसकी उर्वरता शक्ति अन्य मृदा की तुलना में कम होती है इसलिए इस प्रकार की मृदा में मोटे अनाज जैसे – ज्वार, मक्का आदि उत्पन्न किये जाते हैं।

भूमि क्षरण की समस्या (Problem of Soil Erosim)

मृदा के ढीले हुए कणों का बृहत् पैमाने में एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर स्थानान्तरित होने की प्रक्रिया **''भूमि क्षरण''** कहलाती है। इसका प्रमुख कारण कृषि

टिप्पणी

के उपरान्त पशु के चारण और वृक्षों की कटाई से मृदा की ऊपरी परत का ढीला होना है। इन ढीले हुए कणों का स्थानान्तरण अपरदन के कारकों द्वारा कर दिया जाता है। फलतः उस स्थान की भूमि की उर्वरा शक्ति नष्ट हो जाती है। मध्य प्रदेश में मृदा अपरदन की समस्या बड़ी विषम् है। भूमि का क्षरण को **''रेंगती हुई मृत्यु''** की संज्ञा दी गई है।

मध्य प्रदेश के क्षेत्रों में भूमि क्षरण कृषि के लिये एक गंभीर समस्या बन गई है। इसके कारण नष्ट हुई मृदा में वनस्पति अथवा कृषि के लिये पोषक तत्वों की कमी हो जाती है और उस क्षेत्र में मृदा की उर्वरता व कृषि का उत्पादन घट जाता है।

मध्य प्रदेश में भूमि क्षरण के प्रकार
(Types of Soil Erosion in Madhya Pradesh)

मिट्टी का अपक्षरण कई प्रकार से हो सकता है। अत्यधिक वर्षा के कारण यदि निर्जन क्षेत्रों की मृदा जल में घुल कर बह जाती है तो उसे भूमि का ''आवरण अपक्षरण'' (Sheet erosion) कहते हैं। मानसूनी वर्षा, मिट्टी के अपक्षरण का प्रमुख कारण है। वर्षा से पूर्व ग्रीष्म ऋतु में मृदा की ऊपरी परत शुष्क होकर भुरभुरी हो जाती है। भुरभुरी या ढीली पड़ चुकी मृदा की परत जब वर्षा का जल तेज बौछारों के रूप में पड़ता है तो मृदा अपनी सतह से उखड़कर जल के साथ बड़े पैमाने पर बहना शुरू कर देती है और निचले व वनस्पति वाले स्थानों पर जा कर निक्षेपित हो जाती है। शुष्क मौसम के पश्चात् की वनस्पति विहीन क्षेत्रों पर वर्षा का जल मृदा के आवरण को नष्ट करने के लिए उत्तरदायी होता है। इन स्थितियों के साथ यदि क्षेत्र का धरातल ढाल वाला होगा तो मृदा का अपक्षरण अधिक मात्रा में होगा। मध्य प्रदेश के पहाड़ी व पठारी ढालु भूमि पर मानसूनी वर्षा इसी प्रकार की मृदा का अपक्षरण करती है।

मध्य प्रदेश के उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों में वर्षा का जल विभिन्न धाराओं में प्रवाहित होता हुआ मिट्टी को अधिक गहराई के साथ काटता है जिससे धरातल पर कई फुट गड्ढे बन जाते हैं। इस प्रकार के अपक्षरण को अवनालिका अपक्षरण (Gully erosion) कहते हैं। इस प्रकार के अपक्षरण से प्रथम अपक्षरण की तुलना में अधिक हानिकारक परिणाम दृष्टिगत हुए हैं। मध्य प्रदेश के उत्तर व उत्तर पश्चिम के जिले श्योपुर, मुरैना, भिण्ड आदि में फैली चम्बल नदी की घाटी का क्षेत्र वीरान बीहड़ों में तब्दील हो गया है। इस क्षेत्र की घाटियों में महीन चिकनी या दोमट मृदा पायी जाती है। यह क्षेत्र राजस्थान के शुष्क क्षेत्र से लगा हुआ है इसलिए इन क्षेत्रों की जलवायु भी अर्द्धशुष्क पायी जाती है और वनस्पति का आवरण भी इन क्षेत्रों में कम है। कृषि और पशुपालन के कारण धीरे–धीरे यह क्षेत्र वनस्पति विहीन होता रहा है। इस क्षेत्र में बहने वाली चम्बल और उसकी सहायक नदियों में जब वर्षा का जल अधिक हो जाता है तब वह अपने किनारों को फैलाती है तथा अपने दोनों किनारों को एक चौड़ी व गहरे खड्डों में परिवर्तित कर देती है जिसमें इस क्षेत्र की भूमि का अधिकांश भाग समाया हुआ है। इस क्षेत्र में बीहड़ों से प्रभावित भूमि का क्षेत्र 112 किलोमीटर लम्बा और 21 किलोमीटर चौड़ा है। लगभग 1,25,000 एकड़ क्षेत्र में 15 से 20 फीट गहरे खड्डे पाये जाते हैं। इन गहरे खड्डों द्वारा इस क्षेत्र की लगभग 15 लाख एकड़ भूमि अपनी मौलिक गुणों को खो चुकी है। इसमें से 6 लाख एकड़ का क्षेत्र भिण्ड, श्योपुर, मुरैना और ग्वालियर जिलों में विस्तृत है।

टिप्पणी

मध्य प्रदेश में नर्मदा नदी की घाटी के किनारों पर भी इसी प्रकार के अपरदन दृष्टिगत होते हैं। इस क्षेत्र में बहने वाली अन्य नदियाँ भी जो ढालु, पठारी व पहाड़ी क्षेत्र से बहकर मैदानी क्षेत्रों तक आती हैं वह भी मृदा को अपरदित करती रहती हैं पर यह कार्य बृहत् पैमाने पर नहीं होता है। उन्हीं क्षेत्रों तक सीमित है जहाँ पर वनस्पति का आवरण होता है।

मध्य प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्रों में ग्रीष्म ऋतु में भुरभुरी हुई मृदा का कुछ मात्रा में अपक्षरण वायु के द्वारा भी किया जाता है। वनस्पति विहीन इन क्षेत्रों में मृदा की पकड़ धरातल पर नहीं होती है जिससे शुष्क ग्रीष्म ऋतु में प्रचण्डता से चलने वाली वायु इस मृदा को अपने साथ उड़ा कर ले जाती है जिसमें मृदा का अपक्षरण होता रहता है। इसके द्वारा मृदा को एक स्थान से काट कर दूसरे स्थान पर ले जाकर निक्षेपित (Deposit) कर दिया जाता है। इसे वायु द्वारा अपक्षरण (Wind erosion) कहते हैं।

भूमि क्षरण रोकने के उपाय (Steps to Stop Soil Erosion)

भूमि के क्षरण को रोकने के लिए निम्नलिखित उपायों को अपनाना चाहिए जिससे मृदा के क्षरण को धीरे–धीरे नियंत्रित किया जा सके –

1. नदियों के किनारों पर वृक्षों को रोपा जाना चाहिए जिससे नदियाँ अपने साथ बाढ़ के समय किनारों की मृदा को काटकर न ले जा सके। वृक्षों की जड़ें मृदा को भूमि से जकड़े रखने में अधिक सहायक होती हैं।
2. जिन क्षेत्रों में मृदा का क्षरण हो रहा है उन क्षेत्रों में वनस्पतियों के आवरण को नष्ट होने से बचाया जाना चाहिए। इसके लिए विभिन्न उपायों को अपनाना होगा, जैसे – उन क्षेत्रों में अत्यधिक पशुचारण पर रोक, वनस्पतियों और वृक्षों की कटाई पर रोक लगाना आदि।
3. वृक्ष विहीन बीहड़ों पर इस प्रकार के वृक्षों व पौधों को रोपा जाना चाहिए जिनकी जड़ें कम जल भूमि से अवशोषण कर भूमि में अधिक गहराई तक अपनी जड़ों को फैलाकर रख सकती है जिससे मृदा ढीली नहीं हो पाएगी।
4. हर साल जिन नदियों में बाढ़ आती है उन नदियों पर जलाशयों का निर्माण कराया जाना चाहिए। इस कार्य को करने से नदियों के जल की प्रवाह गति को धीमा किया जा सकता है और एकत्रित किये गये जल का उपयोग विभिन्न कार्यों के लिए किया जा सकता है।
5. कृषि और मृदा की श्रेष्ठता को बनाए रखने के लिए कृषि में फेर बदल करते रहना चाहिए। कुछ समय के लिए भूमि को कृषि विहीन या परती भी छोड़ा जाना चाहिए जिससे भूमि के पोषक तत्व पुनः उसमें समा सकें। कृषि क्षेत्रों की मृदा वर्षा व वायु से अपरदित न हो, इसके लिए कृषि क्षेत्र में मेड़ों को बनाकर उन मेड़ों के ऊपर वृक्षों को लगाना चाहिए जिसे वायु के मार्ग में वृक्ष बाधक बन कर मृदा को अन्यत्र निक्षेपित होने से रोक सकें और मेड़ों से वर्षा का जल मृदा को बहा न पाए।
6. पशुओं के लिए अलग से पशुचारण की व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे कृषि भूमि पर व्यवस्था पशुओं द्वारा होने वाले अपरदन को रोका जा सके। चारागाहों की व्यवस्था होने पर पशुओं को आसानी से चारा उपलब्ध कराया जा सकेगा।

टिप्पणी

7. भूमि पर अवनालिका अपरदन को रोकने के लिए जल के बहाव से बनने वाली नालियों को अवरोधित कर देना चाहिए जिससे ढाल से बहकर आई हुई मृदा आगे नहीं बह पाएगी और वहीं पर निक्षेपित हो जाएगी, इस उपाय से मिट्टी का कटाव रोका जा सकता है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

11. काली मिट्टी का प्रमुख क्षेत्र है?
    (अ) रीवा–पन्ना पठार (ब) बुन्देलखण्ड पठार
    (स) नर्मदा घाटी (द) मालवा पठार
12. जलोढ़ मिट्टी का निर्माण हुआ –
    (अ) हवा हारा बिछाये गये अवसाद से (ब) ज्वालामुखी प्रवाह से
    (स) चट्टानों के विखण्डन से (द) नदी अवसादों के जमाव से
13. मध्य प्रदेश में सर्वाधिक क्षेत्रफल पर कौन–सी मिट्टी पाई जाती है?
    (अ) जलोढ़ (ब) काली
    (स) लाल पीली (द) मिश्रित

4.6 वनस्पति (Vegetation)

मध्य प्रदेश के भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 29.73% वनों से ढका हुआ है। अर्थात् कुल 1,31,830 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में वन हैं। इसके अतिरिक्त 8.2% भाग पर चरागाह हैं। राज्य में आरक्षित, संरक्षित एवं अवर्गीकृत वन हैं। इनमें मुख्यतः साल, बबूल, सलाई, घवरा, तेंदू, महुआ, टीक और हर्रा के वृक्ष हैं। वनों की दृष्टि से मध्य प्रदेश का भारत में प्रथम स्थान है। यहाँ 81,619 वर्ग किलोमीटर में घने वन 5,041 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में खुले वन हैं। इसके अतिरिक्त 3,853 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में झाड़ियाँ हैं।

सामान्यतः मध्य प्रदेश की वनस्पति उष्ण कटिबन्धीय है, जो निम्न प्रकार की है:

(1) उष्ण कटिबन्धीय पर्णपाती वन – ये वन 50 से 100 सेमी. वर्षा के क्षेत्रों में मिलते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जल की कमी के कारण अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं। इन वनों में उत्तम इमारती लकड़ी पाई जाती है। सागौन, शीशम, नीम, पीपल आदि के वृक्ष मुख्य हैं। ये वन सागर, जबलपुर, छिंदवाड़ा, दमोह, छतरपुर, पन्ना, बैतूल, सिवनी और होशंगाबाद जिलों में मिलते हैं।

(2) उष्ण कटिबन्धीय अर्द्ध–पर्णपाती वन – ये वन 100 से 150 सेमी. वर्षा वाले भागों में मिलते हैं। इनमें साल, सागौन, बाँस, आदि के वृक्ष मिलते हैं। जामुन, महुआ, हर्रा, कसाई, तिन्सा के वृक्ष भी मिलते हैं। मण्डला, बालाघाट, बिलासपुर, रायगढ़, बस्तर, सरगुजा एवं शहडोल जिलों में पाये जाते हैं।

(3) उष्ण कटिबन्धीय शुष्क पर्णपाती वन – ये वन 25 से 75 सेमी. वर्षा वाले क्षेत्रों मे मिलते हैं। इनकी ऊँचाई 8 से 20 मीटर तक होती है। हर्रा, कीकड़, बबूल,

तेन्दू, हल्दू, शीशम, सागौन आदि के वृक्ष मुख्य हैं। श्योपुर, शिवपुरी, रतलाम, मन्दसौर, टीकमगढ़, दतिया, ग्वालियर एवं निमाड़ में यह वृक्ष मिलते हैं।

टिप्पणी



चित्र क्र. 4.9: मध्य प्रदेश – वन

मध्य प्रदेश में निम्नलिखित चार वन पेटियाँ हैं –

अ. विन्ध्य कैमूरु श्रेणी की पेटी – यह पेटी उत्तर में दमोह–सागर के पठार तक फैली हुई है।

ब. मुरैना–शिवपुरी पठार की पेटी – मुरैना–शिवपुरी के क्षेत्र इसके अन्तर्गत हैं।

स. नर्मदा के दक्षिण की पेटी – यह पेटी पूर्वी सीमा से पश्चिमी सीमा तक फैली हुई है। सतपुड़ा–मैकाल श्रेणी, बघेलखण्ड का पठार का पहाड़ी भाग इसी श्रेणी में आता है।

द. दक्षिण में बस्तर की पेटी – इस पेटी का बहुत बड़ा भाग वनों से ढका हुआ है।

मध्य प्रदेश के वनों से प्रतिवर्ष शासन को कराड़ों रुपये की आय होती है। इन वनों से प्राप्त होने वाली सम्पत्तियाँ निम्नलिखित हैं – मुख्य सम्पत्ति तथा गौण सम्पत्ति।

मुख्य सम्पत्ति (Main Assets)

(1) सागौन – मध्य प्रदेश में लगभग 20.04% क्षेत्र में सागौन के वन मिलते हैं। ये वन काली मिट्टी के क्षेत्र में जहाँ जलनिकास पर्याप्त है, वर्षा 75 सेमी. से 125

टिप्पणी

सेमी. होती है। होशंगाबाद की बोरी की घाटी में 3.4 मीटर परिमित के सागौन के वृक्ष हैं। मध्य प्रदेश का सागौन सबसे उत्तम प्रकार का होता है।

(2) साल – साल के वन 24% क्षेत्र में मिलते हैं। ये वन पूर्वी मध्य प्रदेश के उन क्षेत्रों में पाये जाते हैं जहाँ की मिट्टी लाल व पीली है। यहाँ औसत रुप में 125 सेमी. या उससे अधिक वर्षा होती है। ये वन सघन हैं जैसा कि बस्तर में। साल की लकड़ी इमारतों एवं रेलवे की स्लीपरों में काम आती है।

(3) बाँस – मध्य प्रदेश में ''डेन्ड्रोकैलमस स्ट्रिक्ट्स'' (Dendrocalamus Strictus) प्रकार का बाँस मिलता है। ये बैतूल, जबलपुर, सिवनी, मण्डला, सागर, पश्चिमी भोपाल के वनों में नदियों के किनारे मिलता है। यह अधिकतर 75 सेमी. या अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। यह लुग्दी व कागज, अस्थायी मचान, छप्पर, चटाई एवं टोकरी बनाने के काम आता है।

गौण सम्पत्ति (Secondary Assets)

वनों से प्राप्त गौण सम्पत्ति के अन्तर्गत लाख, तेन्दू की पत्ती, कत्था, हर्रा एवं गोंद आदि हैं।

(1) खैर – जबलपुर, सागर, दमोह, उमरिया और होशंगाबाद के वनों में मिलता है। खैर के वृक्ष का प्रयोग कत्था उद्योग में किया जाता है। शिवपुरी एव बानमौर (मुरैना) में कत्था बनाने का एक–एक कारखाना है।

(2) लाख – मध्य प्रदेश में लाख बनाने के अनेक कारखाने हैं। शीड, लाख एवं शेलाख इन्हीं कारखानों से बनता है। ये कारखाने महेन्द्रगढ़, पैड्रा, कथरीरोड, चांपा और शक्ति में हैं। मध्य प्रदेश बिहार के बाद दूसरा बड़ा लाख उत्पादक प्रदेश है। लाख मध्य प्रदेश में मण्डला, जबलपुर, सिवनी, शहडोल, होशंगाबाद जिले के वनों में पाया जाता है।

(3) हर्रा – मध्य प्रदेश में हर्रा निकालने के कई कारखाने हैं। हर्रा फल में 35 से 40% तक चर्मशोधक तत्व होते हैं। हर्रा से चमड़ा साफ करने का लोशन भी बनाया जाता है। यह बालाघाट, मण्डला, श्योपुर एवं शहडोल के वनों से मिलता है।

(4) तेन्दू पत्ता – तेन्दू पत्ता से बीड़ी बनाने का उद्योग मध्य प्रदेश में बहुत है। तेन्दू पत्ता एक सामान्य उपज है जो अधिकांश तया सागर, जबलपुर, शहडोल और रीवा जिलों से प्राप्त होता है। लगभग देश की 60% बीड़ी यहीं बनाई जाती है।

मध्य प्रदेश शासन द्वारा सन् 1988 में तेंदू पत्ते के संदर्भ में नई नीति का अनुपालन किया गया। इससे बिचौलियों के जरिये तेंदू पत्ता तथा अन्य वनोपज संग्रहण की प्रथा समाप्त कर दी गई। इसके कारण राज्य के आदिवासी क्षेत्रों में व्यापारियों द्वारा शोषण समाप्त हो गया।

(5) भिलावा – यह स्याही और पेंट बनाने के काम आता है।

(6) गोंद – यह बबूल, धावड़ा, खैर आदि के वृक्षों से प्राप्त किया जाता है। यह खाने के अतिरिक्त पेन्ट उद्योग, पेपर प्रिंटिंग, दवा उद्योग और कॉस्मेटिक आदि में प्रयोग होता है।

पंचवर्षीय योजनाओं में मध्य प्रदेश के वनों का विकास (Development of Forests in Madhya Pradesh in Five-year Plans)

टिप्पणी

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत मध्य प्रदेश में वनों का विकास निम्नानुसार हुआ है –

(1) प्रथम पंचवर्षीय योजना – प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि 1951–56 थी, इस अवधि में प्रदेश में 5,398 एकड़ भूमि में वनरोपण किया गया तथा 4,960 वर्ग किलोमीटर वनों की चकबन्दी की गई। इस योजना में वन विकास पर 118.54 लाख रुपए व्यय किए गए।

(2) द्वितीय पंचवर्षीय योजना – द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि 1956–61 थी। इस योजनावधि में वन विकास के कार्यों पर 208.27 लाख रुपए व्यय किए गए। प्रदेश की 15,966 एकड़ भूमि पर वनों का रोपण किया गया। 20,664 एकड़ वन्य भूमि का संरक्षण के कार्य किए गए तथा 9,300 एकड़ नष्ट प्रायः वनों का विकास किया गया।

(3) तृतीय पंचवर्षीय योजना – तृतीय पंचवर्षीय योजना की अवधि 1961–66 थी। इस योजना में 2,00,000 एकड़ नष्ट प्रायः वनों का सुधार किया गया। 1,20,000 एकड़ भूमि पर वनों का विकास किया गया। 45,000 एकड़ भूमि पर वनों का रोपण किया गया। 1,35,000 एकड़ वन्य भूमि का संरक्षण किया गया। 2,000 एकड़ भूमि पर चरागाहों हेतु सुधार किया गया। जबलपुर में वन विभाग के लिए एक अनुसन्धान केन्द्र की स्थापना की गई।

(4) चतुर्थ पंचवर्षीय योजना – चतुर्थ पंचवर्षीय योजना की अवधि 1967–74 थी। इस योजना में 700 हेक्टेयर भूमि पर नष्ट प्रायः वनों का विकास किया गया। 22,400 हेक्टेयर भूमि पर वनों का रोपण किया गया। 19,900 हेक्टेयर भूमि पर शीघ्र उगने वाले वृक्ष जैसे – बाँस, सेवान, यूकेलिप्टस आदि लगाए गए।

(5) पाँचवी पंचवर्षीय योजना – पाँचवी पंचवर्षीय योजना की अवधि 1974–79 थी। इस योजना में 30,000 हेक्टेयर भूमि पर नष्ट प्रायः वनों का विकास किया गया। 13,500 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के वन प्रदेश में गाँवों का विस्तार किया गया। 10,000 हेक्टेयर भूमि मे जलाऊ लकड़ी के वृक्ष लगाए गए। 60,000 हेक्टेयर भूमि में आर्थिक दृष्टि से उपयोगी वन लगाए गए। वन्य विकास के शोधों पर अधिक बल दिया गया।

(6) छठीं पंचवर्षीय योजना – इस योजना की अवधि 1980–85 थी। इस योजना में ग्रामीण क्षेत्र के व्यक्तियों हेतु लकड़ी, ईंधन तथा चारे की समस्या हल करने का कार्य किया गया। वन विकास की दर 8.92 प्रतिशत निश्चित की गई, जिसके अन्तर्गत 10,516 हेक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण किया गया। बिगड़े वनों का वनीकरण किया गया, 8 लाख फलदार पौधों का रोपण किया गया। वनों से सम्बन्धित कार्यक्रमों के क्रियान्वयन हेतु 45 करोड़ रु. व्यय करने का प्रावधान किया गया था, किन्तु लगभग 150 करोड़ रु. विभिन्न योजनओं पर व्यय किया गया।

टिप्पणी

(7) सातवीं पंचवर्षीय योजना – प्रदेश की सातवीं पंचवर्षीय योजना में वनों से सम्बन्धित शोध कार्यों पर अधिक जोर दिया गया। वन्य विज्ञान की ट्रेनिंग के भी अधिक प्रयत्न किए गए, इन भावी योजनाओं का सम्मिलित लक्ष्य यह है कि मध्य प्रदेश के वनों से उत्पादन बढ़ सके, वन वैज्ञानिक ढंग से विकसित हों तथा वनों पर आधारित उद्योगों की स्थापना हो।

जबकि आठवीं और नवीं पंचवर्षीय योजना में मध्य प्रदेश में वन विकास पर क्रमशः 375.5 और 447.09 करोड़ रुपया खर्च करने का प्रावधान रखा गया था।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

14. मध्य प्रदेश की प्रमुख वनोपजें हैं –

(अ) सागौन–साल–बांस (ब) बांस–बबूल–आम

(स) तेंदू–हर्रा–खैर (द) बबूल–नीम–खजूर

15. राज्य में सर्वाधिक वन किस जिले में है?

(अ) झाबुआ (ब) अलीराजपुर

(स) बालाघाट (द) शहडोल

16. तृतीय पंचवर्षीय योजना की अवधि थी –

(अ) 1951–55 (ब) 1956–61

(स) 1974–78 (द) 1961–66

4.7 कृषि (Agriculture)

कृषि मध्य प्रदेश के निवासियों का प्रमुख उद्यम है। प्रदेश की कुल जनसंख्या का 74.73% गाँवों में निवास करता है जो कृषि से अपनी आजीविका अर्जित करता है। मध्य प्रदेश में लगभग 20% भाग पर (छत्तीसगढ़ को छोड़कर) कृषि की जाती है। मध्य प्रदेश में पैदा होने वाली फसलों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है –

(1) खाद्यान्न फसलें – इसके अन्तर्गत गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का, चना आदि आते हैं।

(2) व्यापारिक या नगदी फसलें – इसके अन्तर्गत कपास, गन्ना, तम्बाकू, अफीम, सन, अलसी, तिल, तिलहन और सोयाबीन आते हैं।

फसलों के आधार पर मध्य प्रदेश को सात कृषि क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है।

(i) ज्वार का क्षेत्र – इसमें गुना, शिवपुरी, श्योपुर और पश्चिमी मुरैना आते हैं।

(ii) गेहूँ व ज्वार का क्षेत्र – इसके अन्तर्गत बुन्देलखण्ड के पठार और मालवा के मध्य भाग के पश्चिमी मुरैना, ग्वालियर, भिण्ड, पूर्वी शिवपुरी, पूर्वी गुना, विदिशा, भोपाल, रायसेन, सागर, नरसिंहपुर, दमोह, टीकमगढ़, पन्ना, सतना और रीवा आते हैं।

(iii) कपास और गेहूँ का क्षेत्र – इसके अन्तर्गत उज्जैन, मंदसौर, नीमच, शाजापुर, देवास और सीहोर आते हैं।

टिप्पणी

(iv) कपास का क्षेत्र – इसके अन्तर्गत खरगौन, रतलाम, धार, बड़वानी और झाबुआ आते हैं।

(v) चावल व कपास का क्षेत्र – इसमें खण्डवा आता है।

(vi) चावल–कपास व ज्वार क्षेत्र – इसमें बैतूल, छिंदवाड़ा और सिवनी आते हैं।

(vii) चावल का क्षेत्र – इसमें शहडोल, बालाघाट, मण्डला, सीधी, जबलपुर और सिवनी के कुछ क्षेत्र आते हैं।

कृषि विभाग द्वारा मध्य प्रदेश के कृषि प्रदेश (Agricultural Areas of Madhya Pradesh According to Department of Agriculture)

कृषि विभाग द्वारा मध्य प्रदेश को निम्न पाँच भागों में बाँटा गया है –

(i) पश्चिम में काली मिट्टी वाला मालवा का प्रदेश – इसके अन्तर्गत मंदसौर, नीमच, रतलाम, झाबुआ, धार, बड़वानी, देवास, उज्जैन, शाहापुर, इन्दौर, खण्डवा, खरगौन आदि जिले आते हैं।

(ii) उत्तर में ज्वार, गेहूँ का प्रदेश – इसके अन्तर्गत मुरैना, श्योपुर, भिण्ड, ग्वालियर, दतिया, शिवपुरी, गुना, छतरपुर और टीकमगढ़ जिले आते हैं।

(iii) मध्य का गेहूँ का प्रदेश – इसके अन्तर्गत भोपाल, सीहोर, होशंगाबाद, नरसिंहपुर, रायसेन, विदिशा, सागर और दमोह जिले आते हैं।

(iv) चावल, गेहूँ का प्रदेश – इसमें पन्ना, सतना और जबलपुर तथा सिवनी के दक्षिण तक एक पट्टी आती है।

(v) चावल का प्रदेश – इसमें रीवा, सीधी, शहडोल, मण्डला, बालाघाट आदि जिले शामिल हैं।

मध्य प्रदेश की प्रमुख कृषि उपजें : खाद्यान्न फसलें (Main Crops of Madhya Pradesh : Cereal Crops)

चावल – यह अधिक नमी धारण करने वाली फसल है। अतः इसकी खेती उन्हीं स्थानों पर होती है जहाँ वर्षा 100 सेमी. से 125 सेमी. के मध्य होती है और हल्की लाल तथा पीली मिट्टी पाई जाती है। यह वर्षा ऋतु के आरम्भ में बोई जाती है और अक्टूबर–नवम्बर में काटी जाती है। मध्य प्रदेश में चावल की तीन फसलें बोई जाती हैं।

(i) अमन – यह शीतकालीन फसल है और कुल उत्पादन का 70 प्रतिशत यहाँ होता है। **(ii) ओस** – यह शीत ऋतु के उपरांत बोई जाती है। इससे कुल 25% उत्पादन होता है। **(iii) वोरा** – यह ग्रीष्म काल में बोई जाती है। इससे उत्पादन नगण्य मिलता है।

प्रमुख उत्पादक क्षेत्र – मध्य प्रदेश में चावल मुख्य रुप से बालाघाट, मण्डला, सीधी, छिन्दवाडा, बैतूल, रीवा, सतना आदि जिलों में होता है। यहाँ चावल का प्रति

टिप्पणी

हेक्टेयर उत्पादन 853 किग्रा. है तथा 1997–98 का उत्पादन 43.88 लाख मीट्रिक टन रहा।

गेहूँ – चावल के बाद गेहूँ मध्य प्रदेश की दूसरी मुख्य फसल है। गेहूँ मुख्यतः रबी की फसल है एवं पश्चिमी मध्य प्रदेश में जहाँ औसत वर्षा 75.125 सेमी हाती है, इसकी खेती की जाती है। कम वर्षा वाले भागों में सिंचाई की जरूरत पड़ती है। यह अक्टूबर–नवम्बर में बोई जाती है और मार्च–अप्रैल में काटी जाती है। गेहूँ का प्रति हेक्टेयर उत्पादन 1,690 किग्रा. है।

उत्पादक क्षेत्र – मध्य प्रदेश के मैदानी क्षेत्र जैसे ताप्ती और नर्मदा, तवा, गंजल, हिरण आदि नदियों की घाटियों एवं मालवा के पठार के काली मिट्टी के क्षेत्र में सिंचाई द्वारा गेहूँ पैदा किया जाता है। उज्जैन, इन्दौर, रतलाम, देवास, मन्दसौर, झाबुआ, रीवा, सतना, होशंगाबाद, सीहोर, विदिशा, जबलपुर, गुना, सागर, ग्वालियर, निमाड़ आदि में गेहूँ पैदा किया जाता है।

चना – चना मध्य प्रदेश की महत्वपूर्ण फसल है। यह अक्टूबर में बोई जाती है और मार्च अप्रैल में काटी जाती है। इस फसल में फूल आते समय यदि वर्षा हो तो हानिकारक होती है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन 934 किग्रा. है।

उत्पादक क्षेत्र – उज्जैन, मन्दसौर, गुना, विदिशा, इन्दौर, देवास, रतलाम, झाबुआ, नरसिंहपुर, जबलपुर, टीकमगढ़, भिण्ड, मुरैना, ग्वालियर, सीहोर, होशंगाबाद, रायसेन आदि जिलों में इसका उत्पादन होता है।

ज्वार – खरीफ की फसल है। मई–जून में बोई जाती है तथा नवम्बर–दिसम्बर में काटी जाती है। यह गर्म एवं सूखे भागों में जहाँ वर्षा 60 सेमी हो जाती है, बिना सिंचाई के पैदा की जा सकती है। ज्वार उत्पादन में भारत में मध्य प्रदेश का चौथा स्थान है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन 832 किग्रा. है, तथा कुल उत्पादन 7.52 लाख मी. टन है।

उत्पादक क्षेत्र – उज्जैन, रतलाम, राजगढ़, मन्दसौर, शाजापुर, पश्चिमी निमाड़, छिंदवाड़ा, देवास, धार, गुना, सीहोर तथा दक्षिणी मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में ज्वार पैदा की जाती है।

मूँगफली – यह खरीफ की फसल है। इसे तैयार होने में छः माह लगते हैं। परन्तु अब इसकी फसल 90–100 दिनों में तैयार हो जाती है। इसके लिये अधिक तापमान की आवश्यकता होती है। पाला हानिकारक होता है।

उत्पादक क्षेत्र – मालवा के पठार एवं नर्मदा घाटी के निचले हिस्से में होती है। मन्दसौर, पश्चिमी निमाड़ एवं सागर जिले में इसकी खेती के प्रमुख क्षेत्र हैं।

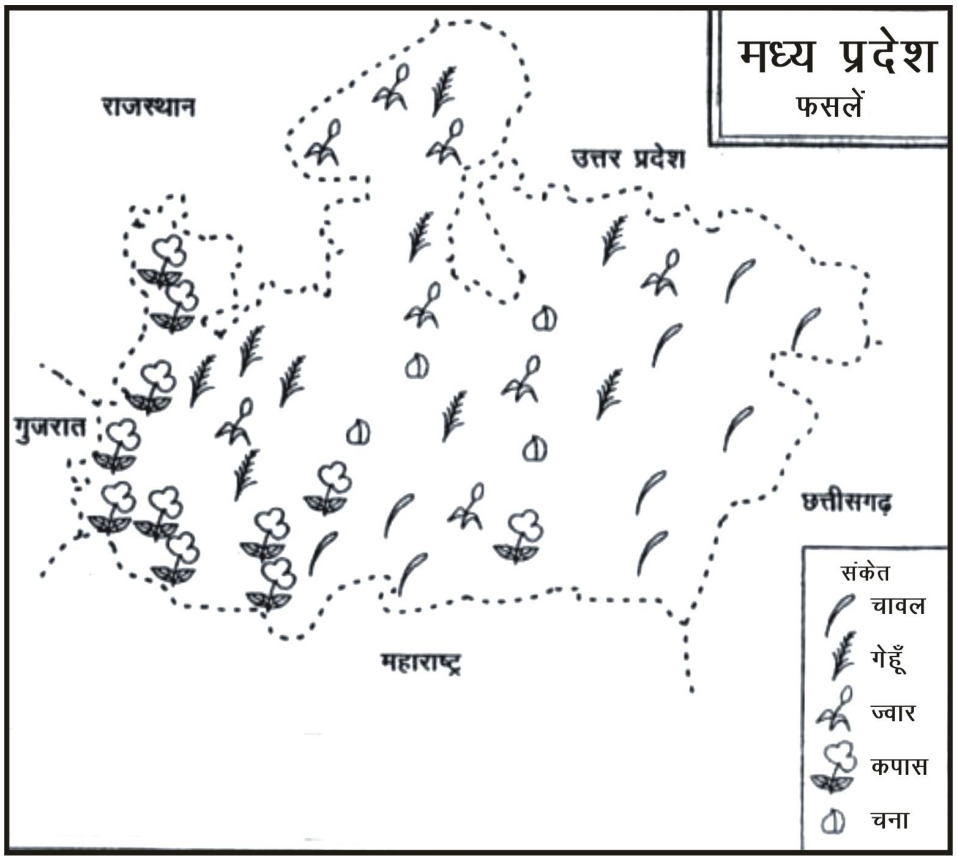
अरहर – यह दालों में प्रमुख है। जुलाई–अगस्त में बोई जाती है, मार्च–अप्रैल में काटी जाती है।

उत्पादक क्षेत्र – मध्य प्रदेश के पूर्वी एवं दक्षिणी हिस्सों में अधिक होती है। छिंदवाड़ा, भिण्ड, मुरैना, ग्वालियर, धार, झाबुआ, सागर, दमोह, छतरपुर, पन्ना, इन्दौर, उज्जैन, टीकमगढ़, देवास, खण्डवा, सतना आदि में इसका उत्पादन होता है।

टिप्पणी

व्यावसायिक फसलें (Commercial Crops)

तिलहन – मध्य प्रदेश में उत्पन्न होने वाले प्रमुख तिलहन सरसों, तिल एवं अलसी है। तिल खरीफ तथा सरसों और अलसी रबी की फसल हैं। भारतवर्ष में सर्वाधिक अलसी मध्य प्रदेश में होती है। यह सभी प्रकार की मिट्टी में जहाँ पर्याप्त नमी होती है, पैदा होती है, जबकि तिल हल्की मिट्टी और कम वर्षा वाले क्षेत्रों में होती है।



चित्र क्र. 4.10: मध्य प्रदेश – फसलें

उत्पादक क्षेत्र – तिल मुख्यतः उत्तर–पश्चिमी मध्य प्रदेश के छतरपुर, होशंगाबाद, शिवपुरी में तथा अलसी दुर्ग, बिलासपुर (छत्तीसगढ़), बालाघाट, सतना, रीवा, होशंगाबाद, रायपुर, झाबुआ, सागर, गुना, पन्ना तथा रायगढ़ में होती है।

कपास – यह एक व्यावसायिक फसल है। कपास उत्पादन में मध्य प्रदेश का पाँचवाँ स्थान है। जून में इसकी बुआई की जाती है, नवम्बर से मार्च तक चुनाई की जाती है। मालवा के पठार तथा नर्मदा–ताप्ती की घाटियों की काली मिट्टी एवं कछारी मिट्टी में इसका उत्पादन होता है। यहाँ छोटे, मध्यम एवं लम्बे रेशे वाली श्रेष्ठ किस्म की कपास का उत्पादन होता है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन 645 किग्रा. है।

उत्पादक क्षेत्र – ग्वालियर, भिण्ड, मुरैना, शिवपुरी, जबलपुर, बैतूल, धार, छिंदवाड़ा, इन्दौर, उज्जैन, भोपाल, उमरा, जरीला, विरनार, मालवीं और इन्दौरी में कपास का उत्पादन होता है।

टिप्पणी

मेस्टा – मेस्टा जूट की कमी को पूरा करने के लिये शुष्क भागों में उगाया गया है। इसका पौधा 3 से 4 मीटर तक ऊँचा होता है तथा बोने के 100 से 180 दिन बाद काटने योग्य हो जाता है।

उत्पादक क्षेत्र – गुना, भिण्ड, रायगढ़, रीवा एवं शिवपुरी जिलों में इसका उत्पादन होता है।

सनई – यह एक सफेद, चमकीला एवं रेशेदार पौधा है। इसके लिये उपजाऊ भूमि की आवश्यकता नहीं होती है।

उत्पादक क्षेत्र – छिंदवाड़ा, सिवनी, मण्डला, पूर्वी और पश्चिमी निमाड़, होशंगाबाद, बैतूल, रायगढ़, धार, राजगढ़, मन्दसौर और छतरपुर जिलों में इसकी खेती होती है।

गन्ना – यह शुष्क तापमान एवं अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में होता है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन 3,787 किग्रा. है। इसकी उपज चिकनी दोमट मिट्टी में होती है। मध्य प्रदेश में चीनी के 11 कारखाने हैं।

उत्पादक क्षेत्र – रायपुर, उज्जैन, सीहोर, बिलासपुर, जावरा, शिवपुरी, मुरैना, शाजापुर, हरसीदमा तथा देवास आदि प्रमुख गन्ना उत्पादक क्षेत्र हैं।

इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश में अफीम, गाँजा भी पैदा किया जाता है।

अपनि प्रगती जाँचिए (Check Your Progress)

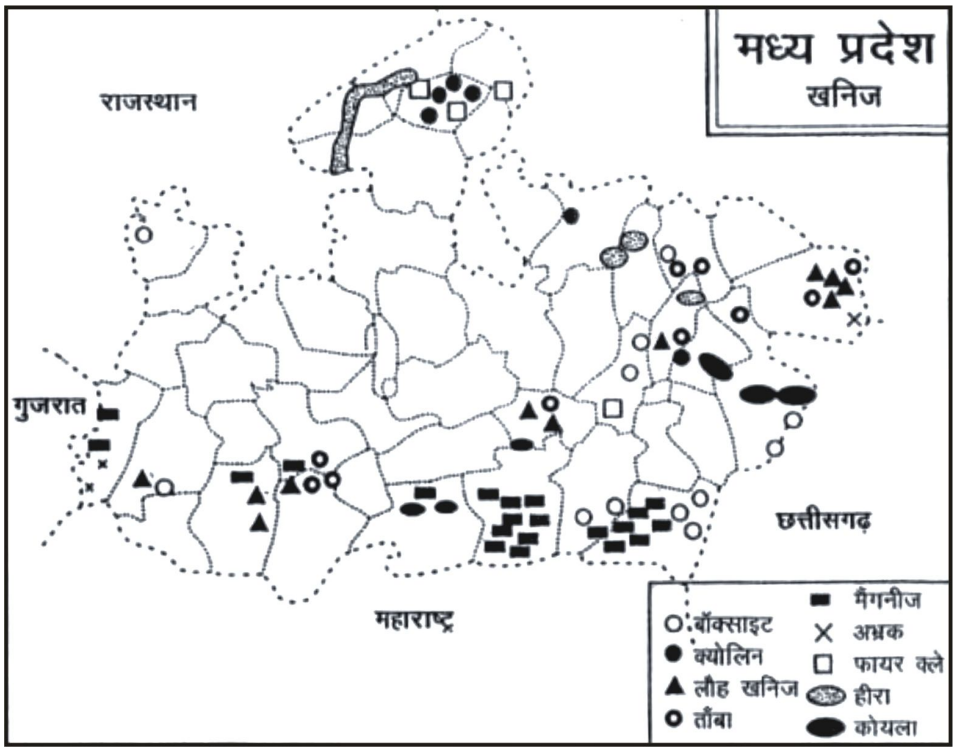
17. चावल के बाद मध्य प्रदेश की दूसरी मुख्य फसल है –
    (अ) चना (ब) गेहूँ
    (स) ज्वार (द) अरहर
18. कृषि विभाग द्वारा मध्य प्रदेश को कितने भागों में बांटा गया है?
    (अ) दस (ब) चार
    (स) पाँच (द) दो
19. मध्य प्रदेश में कपास अनुसंधान केन्द्र कहाँ स्थित है?
    (अ) इन्दौर (ब) जबलपुर
    (स) खरगौन (द) खण्डवा

4.8 खनिज (Minerals)

मध्य प्रदेश खनिज संसाधनों की दृष्टि से भारत का एक सम्पन्न प्रदेश है। खनिज विभाग के अनुसार यहाँ 1997–98 में 23 खनिजों का उत्पादन हुआ। इनमें हीरा और स्लेट के उत्पादन में राज्य को एकाधिकार प्राप्त है तथा अन्य खनिज पायराइट, ताँबा अयस्क, क्वार्टजाइट, लौह अयस्क तथा चूने के पत्थर के उत्पादन में प्रथम स्थान प्राप्त है। प्रदेश में उत्पादित आठ खनिजों में इसे द्वितीय स्थान तथा दो खनिजों में इसे तृतीय स्थान प्राप्त है।

टिप्पणी

मध्य प्रदेश में अधिकांश खनिज पूर्वी मध्य प्रदेश में मिलते हैं, जबकि औद्योगिक केन्द्र पश्चिमी मध्य प्रदेश में है। खनिज सर्वेक्षण के अनुसार 30 लाख टन सीमेण्ट ग्रेड चूना पत्थर के भण्डार सीधी, सतना, सागर, मुरैना, मंदसौर जिले में हैं, 15 करोड़ टन नान कोकिंग कोयले के भण्डार शहडोल और छिंदवाड़ा में 320 लाख टन उच्चकोटि डोलोमाइट मण्डला जिले में, 49 लाख टन उच्चकोटि चूने का पत्थर नरसिंहपुर जिले में, राक फास्फेट खरगौन जिले में हैं।



चित्र क्र. 4.11: मध्य प्रदेश – खनिज

प्रमुख खनिज (Main Minerals)

(1) धात्विक खजिन –

(i) लौह खनिज – लौह अयस्क, मैंगनीज, टंगस्टन, क्रोमाइट।

(ii) अलौह धातुएँ – ताँबा, सीसा, जस्ता, टिन, बॉक्साइट, सोना, चाँदी, इल्मेनाइट आदि।

(2) अधात्विक खनिज – अभ्रक, नमक, जिप्सम, हीरा, धीया पत्थर, संगमरमर, चूना पत्थर, ग्रेनाइट।

(3) अणुशक्ति वाले खनिज – यूरेनियम, थोरियम, बेरिलियम, जिरकन, एण्टीमनी, ग्रेफाइट आदि।

(i) लौह अयस्क – मध्य प्रदेश में लौह अयस्क के विशाल संचित भण्डार हैं। इसमें लोहे की मात्रा 68% तक होती है। उड़ीसा, बिहार, छत्तीसगढ़ और कर्नाटक के बाद लोहे का संचित भण्डार मध्य प्रदेश में हैं। यहाँ मण्डला, बालाघाट जिलो में तथा घौलीपहाड़ी पर ठोस लोहे की पहाड़ियाँ मिलती हैं। यह पहाड़ियाँ अपनी चौरस भूमि की सतह से 730 मीटर तक ऊँची उठ गई है तथा 32 किलोमीटर तक

टिप्पणी

लगातार टेड़े–मेढ़े आकार में फैली हुई हैं। यहाँ लगभग 75 लाख टन लोहे के भण्डार होने का अनुमान है। जबलपुर में पाये जाने वाला अधिकांश भण्डार 45% से 60% लोहांश का हैं, जो अगदिया, जौली, सिलौंदी, गोसालपुर, घोघरा, सिरौनी और कन्नाहड में हैं। जबलपुर और ग्वालियर क्षेत्रों में 45,400 लाख टन लौह आयस्क के संचित भण्डार हैं।

मैंगनीज – इस धातु का उपयोग इस्पात बनाने में किया जाता है। मैंगनीज ठोस एवं रवाहीन होता है। लोहे की भाँति कठोर प्रस्तर में 5% से कम मैंगनीज होता है तो वह लोहा कहलाता है और 5% से अधिक मैंगनीज होता है तो मैंगनीज कहलाता है। जिस प्रस्तर में लोहा और मैंगनीज दोनो ही होते हैं उसे मैंगनीज लौह अयस्क (Manganiferous ore) कहते हैं।

मध्य प्रदेश में देश के लगभग 1020 लाख टन मैंगनीज के अयस्क भण्डार में से 680 लाख टन है। यह देश का लगभग 55% भाग है। मैंगनीज अयस्क में 40.50% तक मैंगनीज पाई जाती है। यहाँ मैंगनीज की मेखला पश्चिमी दिशा में 200 किलोमीटर लम्बी एवं 25 किलोमीटर चौड़ी है। बालाघाट जिले में मैंगनीज खनिज क्वार्ट्जाइट, शिस्ट एवं नौस की चट्टानों से मिलता है। बालाघाट का निक्षेप तीन किलोमीटर लम्बा तथा जमरापानी, तिरोडी, पोनिया निक्षेप 10 किलोमीटर तक फैला हुआ है। बालाघाट में मैंगनीज अयस्क का संचित भण्डार 500 लाख टन है। इसमे से 200 लाख टन उत्तम प्रकार का है, जो बरबली, तिरोडी, बरजासी, जाम, मिरंगपुर, कटेझिरिया, उकवा, भटबेली, नेत्रा, कांटगझीरी, वोटझीरी, काचेवाही, रामरम, सेलवा, चिकपारा, हरेडा, सुकली, सीतापाथर, सिरपुरु, बलवुदा, साओरनी, कंगूर, सेकवा, सोनेगाँव, नन्दगाँव और गर्श आदि में है।

छिंदवाड़ा जिले में गोवरी, वर्धानाऊ, बुटकुम, गोरी, सीतापुर, मच्छीवान में मैंगनीज निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त सिवनी, मण्डला, बस्तर, धार, झाबुआ एवं इन्दौर जिलों में भी मैंगनीज मिलता है। मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के बीच 250 किमी. लम्बी, 16 किमी. चौड़ी और 25 मीटर गहरी पट्टी दक्षिणी मध्य प्रदेश के बालाघाट एवं छिंदवाड़ा जिलों से होती हुई महाराष्ट्र, नागपुर तथा भण्डारा जिलों तक गई है। इसमें 200 से अधिक स्थानों पर मैंगनीज मिलता है।

झाबुआ जिले में मैंगनीज क्वार्ट्जाइट के साथ मिलता है। अधिकतर निक्षेप बांदला तहसील में 10 किमी. लम्बे तथा 6 किमी. चौड़े क्षेत्र में हैं। यहाँ 9 क्षेत्रों में खनिज निक्षेप मिलते हैं।

नवीन खोजों में खरगौन जिले में बरवाहा, नन्दनियाँ एवं अमरवारा में भी मैंगनीज उत्खनन होता है।

टंगस्टन – टंगस्टन का मुख्य खनिज वुलफ्राम है जो टंगस्टन और मैंगनीज की भस्मों का रासायनिक सम्मिलन है। इस खनन को धमन भट्टी में धोकर धातु निकाली जाती है। बुलफ्राम का रंग काला होता है। यह एक ओर अधिक चमकदार होता है। यह अधिक भारी होता है। मध्य प्रदेश मे अगरगाँव में यह खनिज मिलता है। इसका प्रयोग विद्युत यंत्रों, एक्सरे ट्यूब, फ्लूरोसेंट प्रकाश बत्तियाँ, रडार, टेलीविजन यंत्र, रेडिओ, आदि में किया जाता है।

टिप्पणी

सुरमा – जबलपुर जिले में मिलता है।

ग्रेफाइट – बैतूल जिले में पाया जाता है। इसमें कुल ग्रेफाइट की मात्रा 18 से 30% तक होती है। यह खनिज दक्षिण–पूर्वी दण्डकारण्य प्रदेश में सकरी नदी के पास केरलापाल क्षेत्र में पाया जाता है। इसका उपयोग बैट्री, पेन्सिल और पेन्ट में होता है।

बॉक्साइट – बॉक्साइट ऐल्युमिनियम का खनिज अयस्क है। यह अलौह युक्त खनिज है। देश के कुल बॉक्साइट उत्पादन में 44% भाग मध्य प्रदेश से प्राप्त होता है। इसमें 50 से 60% तक ऐल्यूमिनियम का अंश रहता है। मध्य प्रदेश में बॉक्साइट के अनुमानित निक्षेप 20–30 करोड़ टन के आस–पास माने गये हैं। बॉक्साइट के निक्षेप विन्ध्यन युग की बालू शैलों एवं क्वार्ट्ज के ऊपर बिछे पाये जाते है।

जबलपुर, मण्डला, सतना, शहडोल में बॉक्साइट निकाला जाता है।

जबलपुर जिले में कटनी नगर के चारों ओर टिकुरी, टिकरियाँ, मुड़वारा, फ्लेगेस्टाफ हिल आदि क्षेत्रों में बॉक्साइट उत्पन्न होता है। सतना के निक्षेप पारसमनिया और बारोहित में मिलते हैं।

बालाघाट में कुर्सी पहाड़ी के दक्षिण की श्रेणी, बेजलपुर के दक्षिण की श्रेणी, कऊमाट के दक्षिण की श्रेणी, राम महनी, दादर, केसरी दादर, नगझोला दादर आदि में बॉक्साइट के निक्षेप हैं। शहडोल में अमरकंटक खपरीपानी, सरहा के दक्षिण की पहाड़ी, पौढ़ी, बहेड़ा एवं दिवकी वनिया तथा मण्डला में लखेरा रिज, चाँदी पहाड़, काकरा पहाड़ एवं माती ताला में भी बॉक्साइट मिलता है। इसके अतिरिक्त गुना, भोपाल, सीहोर एवं विदिशा में भी बॉक्साइट मिलता है।

सीसा – दुर्ग के विलोची क्षेत्र में मिलता है। 1.5 से 10 मीटर चौड़ा एवं 3 किमी. लम्बाई में यह फैला हुआ है। जबलपुर, रायपुर, होशंगाबाद, दतिया, शिवपुरी एवं झाबुआ जिलों में सीसा मिलता है।

उद्योग एवं व्यापार (Industries and Trade)

उद्योग–धन्धे – मध्य प्रदेश राज्य में अनेक उद्योगों के विकास हेतु नैसर्गिक संसाधन आदि उपलब्ध है जिनमें सीमेण्ट, कागज, इस्पात एवं रासायनिक आदि उल्लेखनीय हैं। सीमेण्ट उत्पादन में आज मध्य प्रदेश का अग्रणी स्थान हैं, क्योंकि यहाँ चूने का पत्थर, कोयला आदि खूब प्राप्त होता है। मध्य प्रदेश के औद्योगिक विकास को गति प्रदान करने के लिये सन् 1990 में 45 जिलों में से 5 को विकसित और 39 को पिछड़े जिले माना गया है। पिछड़े जिलों को पुनः तीन वर्गों में बाँटा गया है। इन तीन वर्गों में ''अ'' के 9, ''ब'' वर्ग के 9 तथा ''स'' वर्ग के 15 जिले हैं जिनका वर्गीकरण निम्न प्रकार है –

विकसित जिले – (1) भोपाल (2) ग्वालियर (3) इन्दौर (4) उज्जैन और (5) जबलपुर।

पिछड़े जिले – ''अ'' वर्ग के (1) देवास (2) होशंगाबाद (3) खण्डवा (4) मंदसौर (5) मुरैना (6) रतलाम (7) शहडोल (8) सतना (9) विदिशा।

टिप्पणी

''ब'' वर्ग के – (1) बालाघाट, (2) बैतूल (3) छिन्दवाड़ा (4) दमोह (5) गुना (6) नरसिंहपुर (7) सागर (8) सीहोर (9) सिवनी।

''स'' वर्ग के – (1) भिण्ड, (2) छतरपुर (3) दतिया (4) धार (5) झाबुआ (6) खरगौन (7) मण्डला (8) पन्ना (9) रायसेन (10) राजगढ़ (11) रीवा (12) शाजापुर (13) शिवपुरी (14) सीधी (15) टीकमगढ़।

मध्य प्रदेश के उद्योग (Industries of Madhya Pradesh)

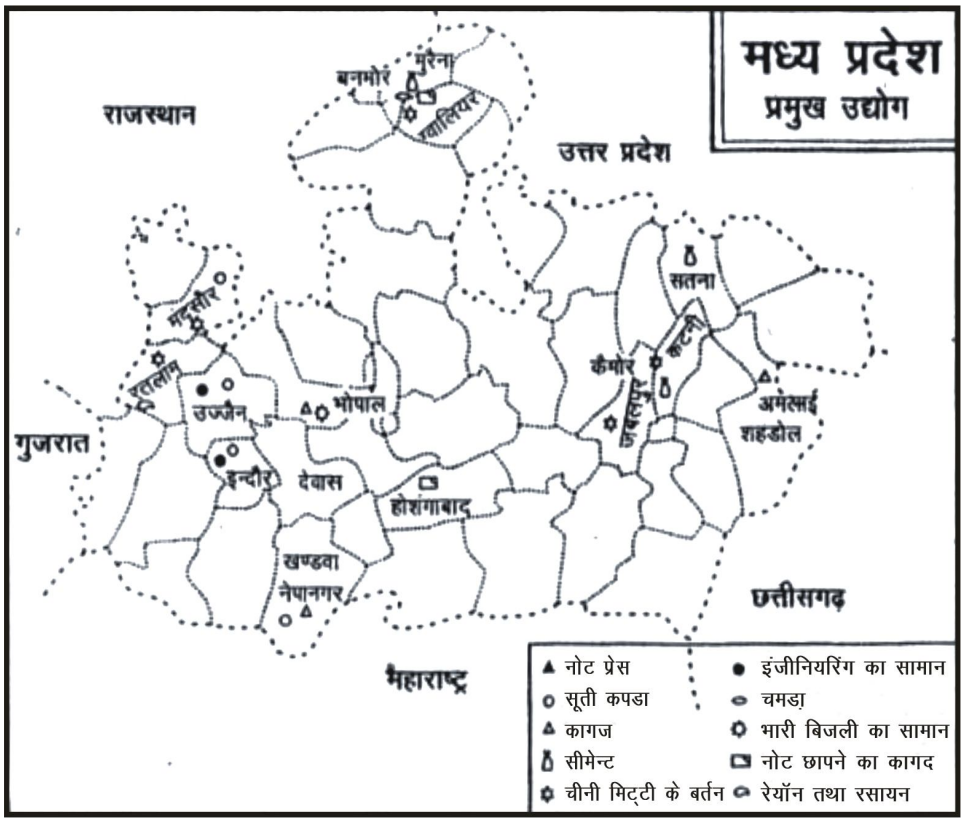
धन्धों को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

(i) खनिज सम्पदा पर आधारित उद्योग,

(ii) वन सम्पदा पर आधारित उद्योग,

(iii) कृषि पर आधारित उद्योग,

(iv) अन्य उद्योग।



चित्र क्र. 4.12: मध्य प्रदेश के प्रमुख उद्योग

1. खनिज सम्पदा पर आधारित उद्योग (Industries Based on Mineral Resources)

(1) सीमेण्ट उद्योग – मध्य प्रदेश में सीमेण्ट के कई कारखाने हैं –

(i) बानमोर सीमेण्ट कारखाना – सन् 1922 में ग्वालियर से 50 किलोमीटर दूर बानमोर स्थान पर स्थापित किया गया। इसकी स्थापना ऐसोसिएटेड सीमेण्ट

कम्पनी के स्वामित्व में हुई। यह कारखाना आर्द्र प्रौद्योगिक विधि द्वारा साधारण पोर्टलैण्ड सीमेण्ट का उत्पादन करता है। इसकी उत्पादन क्षमता 60,000 मीटरी टन से अधिक है।

टिप्पणी

(ii) कैमोर सीमेण्ट कारखाना – इसकी स्थापना एसोसिऐटेड सीमेण्ट कम्पनी के द्वारा सन् 1923 में कटनी के समीप कैमूर में की गई। यहाँ साधारण पोर्टलैण्ड एवं पोज़ोलाना सीमेण्ट का उत्पादन होता है। इसकी उत्पादन क्षमता 0.60 लाख मीटरी टन है।

(iii) सतना सीमेण्ट वर्क्स – बिड़ला जूट मैन्यूफैक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड के स्वामित्व में 1959 में इस कारखाने की स्थापना की गई। इसकी उत्पादन क्षमता 6 लाख मीटरी टन है।

(iv) मैहर कारखाना – 1980–81 में मन्दसौर जिले में स्थापित किया गया था। इसकी उत्पादन क्षमता 75,000 लाख मीटरी टन सीमेण्ट की है।

(v) नीमच फैक्ट्री – 1980–81 में मन्दसौर जिले में स्थापित किया गया था। इसकी उत्पादन क्षमता 4 लाख मीटरी टन है।

(2) चीनी मिट्टी उद्योग – चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने का कारखाना ग्वालियर, जबलपुर और रतलाम में है। फायर क्ले से उरें, जबलपुर, कटनी और निमाड़ में बनती हैं। प्याले, तश्तरी एवं इमरतवान जबलपुर में, चाय और दूध आदि के बर्तन ग्वालियर में बनते हैं। कटनी में मिलने वाले क्ले से पाइप और बेसिन आदि बनते हैं।

(3) भारी विद्युत उपकरण – भारत हैवी इलेक्ट्रीकल्स के नाम से प्रसिद्ध भारी उपकरण का कारखाना सन् 1960 में ब्रिटेन के एक कारखाने के सहयोग से स्थापित किया गया था। यहाँ बिजली का भारी सामान बनता है। यहाँ स्विच, गियर, ट्रान्सफॉमर, केपैसिटर, इलेक्ट्रिक ट्रेक्शन इक्विपमेंट और इण्डस्ट्रीयल मोटर जैसे भारी उपकरण बनाये जाते हैं। यह सामान देश के अनेक भागों जैसे–तमिलनाडु, बिहार, आन्ध्र प्रदेश एवं असम में वितरित होता है। इस कारखाने में एक प्रशिक्षण केन्द्र एवं कार्यशाला भी है।

(4) ऐल्युमिनियम उद्योग – भारत ऐल्युमिनियम कम्पनी लिमिटेड (BALCO) नाम से एक भारी कारखाने की स्थापना कोरबा में की गई। इस कारखाने में सन् 1973 से उत्पादन हो रहा है। इसकी उत्पादन क्षमता 1 लाख टन की है।

2. वनों पर आधारित उद्योग (Industries Based on Forests)

मध्य प्रदेश में कुल क्षेत्रफल का 35% भाग वनों से ढका हुआ है। जिनमें बहुमूल्य लकड़ी के वृक्ष हैं। अतः इन वनों पर कई उद्योग आधारित हैं।

(1) कागज उद्योग – विशाल वन–सम्पत्ति होने के कारण मध्य प्रदेश में कागज उद्योग विकसित हुआ है। 1947 के बाद केन्द्रीय सरकार के नियोजन में 1948–49 में ''नेशनल न्यूजप्रिंट एण्ड पेपर मिल'', नेपानगर (पूर्वी निमाड़ खण्डवा) तथा ''ओरियन्टल पेपर मिल'' (शहडोल) में स्थापित हुए हैं। इसके अतिरिक्त ग्वालियर भोपाल, रतलाम, बिलासपुर में भी कागज बनाने के छोटे कारखाने हैं। इन्दौर में महीन कागज, होशंगाबाद में नोट बनाने का कागज, करेंसी कारखाना देवास में हैं।

टिप्पणी

(2) बीड़ी उद्योग – यह उद्योग तेन्दू पत्ते पर निर्भर है। यह कुटीर उद्योग धन्धे के रुप में विकसित हुआ है। यहाँ बीड़ी के 260 कारखाने हैं।

(3) लकड़ी चीरने का उद्योग – इमारती लकड़ी चीरना प्रदेश का मुख्य उद्योग है। प्रदेश में लकड़ी चीरने के 113 कारखाने हैं। जबलपुर इस उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है। मण्डला में लकड़ी चीरने के कारखाने हैं। इमारती लकड़ी के लट्ठे कारखाने में लाकर चीरे जाते हैं।

(4) अन्य उद्योग – खैर की लकड़ी से कत्था शिवपुरी एवं बानमोर (मुरैना) में बनाया जाता है। इटारसी में चिपबोर्ड, ग्वालियर में दियासलाई के डिब्बों का कारखाना है।

3. कृषि पर आधारित उद्योग
(Industries based on Agriculture)

(1) सूती कपड़ा उद्योग – मध्य प्रदेश का सबसे बड़ा उद्योग है। वर्तमान में सूती कपड़े की मिलें हैं, क्योंकि मध्य प्रदेश में (अ) वर्धा और पूर्णा नदियों की घाटियों में कपास काफी मात्रा में होता है। (ब) आदिवासी जन–जातियों की अधिकता से श्रमिक भी आसानी से मिल जाते हैं। (क) वरोरा की खानों से कोयला, चम्बल से जल विद्युत प्राप्त होती है। इन्दौर, ग्वालियर और उज्जैन प्रमुख केन्द्र हैं, इन्दौर सबसे बड़ा वस्त्र उत्पादक केन्द्र है।

(2) कृत्रिम रेशे के कपड़े का उद्योग – नागदा में इसका एक कारखाना है। इन्दौर, ग्वालियर, उज्जैन एवं देवास अन्य कृत्रिम रेशे के कपड़े उत्पादक केन्द्र हैं। ऊनी वस्त्र के दो कारखाने इन्दौर में हैं।

(3) चीनी उद्योग – भोपाल सुगर मिल्स सीहोर, डबरा सुगर मिल्स, डबरा (ग्वालियर) जीवाजी राव सुगर मिल्स लिमिटेड, दालौदा (मन्दसौर), सेठ गोविन्द राम सुगर मिल्स, महिन्द्रपुर रोड (उज्जैन), जीवर सुगर मिल्स, जावरा (रतलाम) आदि प्रमुख चीनी उद्योग के कारखाने हैं। सारंगपुर, वरलाई और आलौट में भी चीनी के कारखाने हैं।

(4) जूट उद्योग – जूट से रस्सियाँ, सुतली तथा अन्य सामान बनाया जाता है। यह कारखाना रायगढ़ में हैं।

(5) वनस्पति घी – इसके कारखाने इन्दौर, ग्वालियर, खण्डवा, जबलपुर और गंज बासौदा में हैं।

4. अन्य उद्योग (Other Industries)

मध्य प्रदेश में कृषि उद्योग विकास निगम द्वारा स्थापित किये गये अन्य कृषि उद्योग निम्नलिखित हैं –

(i) कीटकनाशक संयंत्र, बीना – यह कारखाना सागर जिले के बीना स्थान पर स्थापित किया गया है। इसमें 10 हजार टन पाउडर और एक लाख लीटर तरल कीटकनाशक औषधियों का निर्माण किया जाता है। वर्तमान में यह संयंत्र 10% बी.एच. सी., 50% डी.डी.टी., 30% डब्ल्यू.डी.पी. मेलाथियम और 50% इ.सी. का उत्पादन करता है।

टिप्पणी

(ii) जीवाणु खाद संयंत्र, भोपाल – निगम द्वारा बायो–फर्टिलाइजर की स्थापना भोपाल में की गई है। इसमें जीवाणु खाद तैयार की जायेगी जो खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करेगी।

(iii) दानेदार मिश्रित खाद संयंत्र, होशंगाबाद – यह रसेलपुर गाँव में स्थापित की गई है। इस कारखाने में 60,000 टन खाद बनती है।

(iv) आयल मिल, मुरैना – निगम द्वारा मुरैना में सरसों का तेल निकालने के लिये एक संयंत्र की स्थापना की गई है। इसमें 25 लाख टन सरसों के तेल की पिराई प्रतिदिन होती है।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

20. मध्य प्रदेश में मैगनीज का सबसे बड़ा स्रोत कहाँ है?
    (अ) बालाघाट (ब) मण्डला
    (स) सतना (द) छिन्दवाड़ा
21. सुरमा किस जिले में पाया जाता है?
    (अ) बैतूल (ब) झाबुआ
    (स) होशंगाबाद (द) जबलपुर
22. मलाजखण्ड किसके उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है?
    (अ) लौह अयस्क (ब) मैंगनीज
    (स) तांबा (द) हीरा
23. मध्य प्रदेश में समाचार कागज बनाने का कारखाना कहाँ है?
    (अ) जबलपुर (ब) भोपाल
    (स) नेपानगर (द) अमलई

4.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1.	(स)	9.	(स)	17.	(ब)
2.	(द)	10.	(अ)	18.	(स)
3.	(द)	11.	(द)	19.	(स)
4.	(ब)	12.	(द)	20.	(अ)
5.	(अ)	13.	(ब)	21.	(द)
6.	(द)	14.	(अ)	22.	(ब)
7.	(ब)	15.	(स)	23.	(स)
8.	(ब)	16.	(द)		

टिप्पणी

4.10 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में विद्यार्थियों के लिए मध्य प्रदेश से सम्बधित मध्य प्रदेश की समस्त जानकारी को सामहित किया गया है।

4.11 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- भौतिक
- संरचना
- जलवायु
- मिट्टी

4.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self-Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. मध्य प्रदेश को भौतिक भागों में बाँटिये तथा किसी एक भौतिक भाग का वर्णन कीजिए।
2. मध्य प्रदेश में वर्षा की भिन्नता पर टिप्पणी लिखिए।
3. मध्य प्रदेश में पाई जाने वाली वनस्पति का वर्णन कीजिए।
4. मध्य प्रदेश के उद्योगों पर एक नोट लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. मध्य प्रदेश के भौतिक विभागों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. मध्य प्रदेश के अपवाह तंत्र पर एक निबन्ध लिखिए।
3. मध्य प्रदेश के वनों से होने वाले लाभों का वर्णन कीजिए।
4. मध्य प्रदेश की कृषि उपजों पर एक संक्षिप्त नोट लिखिए।
7. मध्य प्रदेश की खनिज सम्पदा पर एक निबन्ध लिखिए।
8. शक्ति के साधनों में कोयले का महत्व बताते हुए मध्य प्रदेश के कोयला क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

4.13 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

टिप्पणी

1. बन्सल सुरेश चंद्र 1996 भारत का बृहत् भुगोल, मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ।
2. अहमद ई. 1992 जीओग्राफी ऑफ हिमालया, कल्याणी पब्लिशर्स लुधियाना।
3. चौहान व्ही.एस. एवं गौतम अल्का 2001 भारतवर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ।
4. दत्त रुद्र एवं सुंदरम के.पी.एम. 2005 भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चांद ॲन्ड कम्पनी लिमिटेड न्यू दिल्ली।
5. गौतम अल्का 2007 भारत का बृहत् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, अलाहाबाद।
6. गील के. एस 1993 इव्हॉल्यूशन ऑफ द इंडियन इकॉनॉमी एन.सी.आर.टी. ई. न्यू दिल्ली।
7. हुसैन माजिद एवं सिंह. रमेश 2009 भारत का भूगोल, Tata McGraw-Hill Publishing Co. New Delhi.
8. कुमार प्रमिला 1996 मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
9. मामोरिया चतुर्भुज 1996 आधुनिक भारत का बृहत् भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
10. मिश्र जगदिश प्रसाद 1997 भारत का भूगोल, विद्यासागर अलाहाबाद।
11. ओझा शिवसागर 2001 भारत का भूगोल, भौगोलिक अध्ययन संस्था अलाहाबाद।
12. पालिवाल कमलेश 2000 इकॉनॉमी जीओग्राफी इंडिया ए किताब महल अलाहाबाद।
13. प्रकाश बी.एस. 1990 इंडियाः इकॉनॉमी जीओग्राफी एन.सी.ई.आर.टी. न्यू दिल्ली
14. राव बी.पी. 1995 भारतः एक भौगोलिक समिक्षा, वसुंधरा प्रकाशन गोरखपूर।
15. सिंह गोपाल भारत का भूगोल, आत्माराम ॲन्ड सन्स दिल्ली।
16. तिवारी विजय कुमार 1997 भारत का बृहत् भूगोल भाग 1 एवं 2, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, मुंबई।

टिप्पणी

17. वर्मा रामविलास भारत का भौगोलिक विवेचन, किताब घर कानपूर।

18. गर्व्हमेंट ऑफ इंडिया 2000 नॅशनल पोल्यूशन पॉलिसी 2000, प्लानिंग कमिशन ऑफ इंडिया न्यू दिल्ली।

19. चंदन आ.सी. 1980 इंट्रोडक्शन टू पॉप्यूलेशन जीओग्राफी, कल्याणी पब्लिशर्स न्यू दिल्ली।

20. वर्मा मित्रा वेद 1964, एज्युकेशन इन एषियन इंडिया, आर्या बुक डेपो न्यू दिल्ली।

इकाई 5 मध्य प्रदेश – जनसंख्या (Madhya Pradesh – Population)

टिप्पणी

संरचना (Structure)

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 जनसंख्या संरचना
5.3 लिंगानुपात
5.4 साक्षरता
5.5 ग्रामीण एवं नगरीय प्रवास
5.6 जनजातियाँ
5.7 पर्यटन
5.8 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
5.9 सारांश
5.10 मुख्य शब्दावली
5.11 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.12 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय (Introduction)

किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास में वहाँ कि जनसंख्या का विशेष योगदान होता है, क्योंकि देश के प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग तथा देश की औद्योगिक एवं व्यापारिक उन्नति वहाँ निवास करने वाली जनसंख्या में वितरण, घनत्व एवं उसकी अन्य जनांकिकी विशेषताओं से जुड़ी हाती है, इसलिए किसी प्रदेश का भौगोलिक अध्ययन करते समय वहाँ की जनसंख्या के वितरण घनत्व एवं अन्य विशेषताओं का अध्ययन करना आवश्यक होता है।

5.1 उद्देश्य (Objectives)

विद्यार्थियों को प्रदेश की जनसंख्या, जनसंख्या घनत्व एवं उसकी विशेषताओं से संम्बधित समस्त जानकारी उपलब्ध करना है।

5.2 जनसंख्या संरचना (Population Structure)

मध्य प्रदेश की जनसंख्या – 2011 की अन्तिम जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश की कुल जनसंख्या 17,25,97,565 व्यक्ति है, जो सम्पूर्ण भारत की जनसंख्या का 6% है। मध्य प्रदेश की इस जनसंख्या में 3,76,12,920 पुरुष व 3,49,84,645 महिलाएँ सम्मिलित हैं।

जनसंख्या वितरण की दृष्टि से मध्य प्रदेश भारत का 6वाँ बड़ा राज्य है। इससे अधिक जनसंख्या वाले राज्य उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और आन्ध्र प्रदेश हैं।

टिप्पणी

जनसंख्या के घनत्व की दृष्टि से मध्य प्रदेश का भारत में 17 वाँ स्थान है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 2011 के अनुसार 236 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। 2011 की जनसंख्या के अनुसार मध्य प्रदेश में प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 930 है, जोकि राष्ट्रीय औसत 940 से कम है। 2011 के अन्तिम आँकड़ों के अनुसार मध्य प्रदेश में साक्षरता का प्रतिशत 70.6% है, जिसमें पुरुष साक्षरता 80.5% और महिला साक्षरता 60% है। 2011 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश की जनसंख्या का 27.63% भाग नगरीय अधिवासों और 72.37% भाग ग्रामीण अधिवासों में निवास करता है।

सारणी क्र. 5.1

मध्य प्रदेश : जनसंख्या घनत्व एवं वृद्धि दर (2011)

		जनसंख्या (2011)			
कोड सं.	जिला	कुल व्यक्ति	पुरुष	महिलाएँ	दशकीय वृद्धि दर
	मध्य प्रदेश	**7,25,97,565**	**3,76,12,920**	**3,49,84,645**	**20.3**
1.	श्योपुर	6,87,952	3,61,685	3,26,267	23.0
2.	मुरैना	19,65,137	10,68,364	8,96,773	23.4
3.	भिण्ड	17,03,562	9,26,940	7,76,622	19.3
4.	ग्वालियर	20,30,543	10,90,647	9,39,896	24.4
5.	दतिया	7,86,375	4,19,432	3,66,943	18.4
6.	शिवपुरी	17,25,818	9,19,405	8,06,413	22.7
7.	टीकमगढ़	14,44,920	7,59,891	6,85,029	20.1
8.	छतरपुर	17,62,857	9,35,906	8,26,951	19.5
9.	पन्ना	10,16,028	5,32,866	4,83,162	18.6
10.	सागर	23,78,295	12,54,251	11,24,044	17.6
11.	दमोह	12,63,703	6,60,478	6,03,225	16.6
12.	सतना	22,28,619	11,56,734	10,71,885	19.2
13.	रीवा	23,63,744	12,24,918	1,38,826	19.8
14.	उमरिया	6,43,579	3,29,527	3,14,052	24.7
15.	नीमच	8,25,958	4,21,640	4,04,318	13.8
16.	मन्दसौर	13,39,832	6,81,439	6,58,393	13.2
17.	रतलाम	14,54,483	7,37,365	7,17,118	19.7
18.	उज्जैन	19,86,597	10,16,432	9,70,165	16.1
19.	शाजापुर	15,12,353	7,79,900	7,32,453	17.2
20.	देवास	15,63,107	8,05,212	7,57,895	19.5
21.	धार	21,84,672	11,14,267	10,70,405	25.5
22.	इन्दौर	32,72,335	17,00,483	15,71,852	32.7

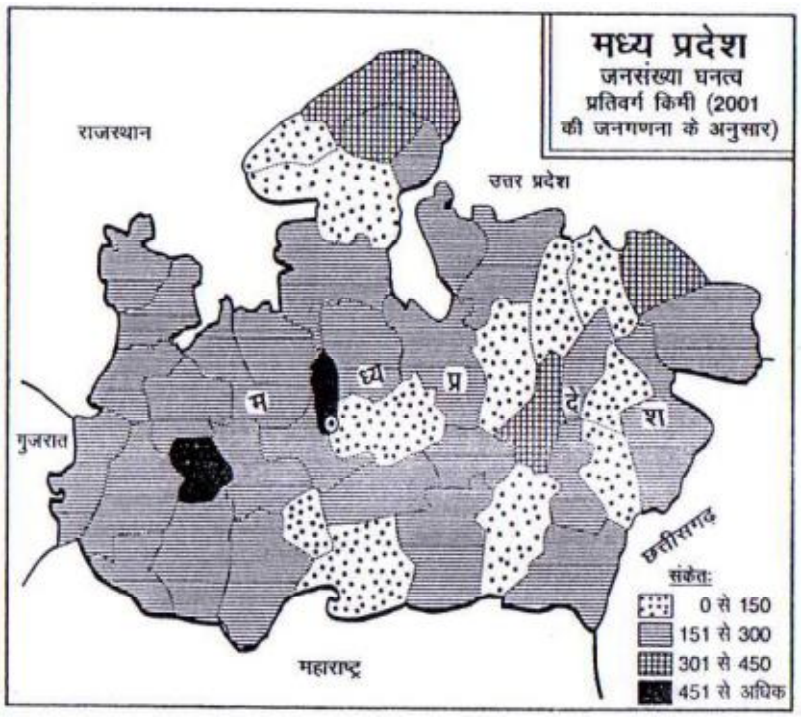
23.	खरगौन पश्चिम निमाड़	18,72,413	9,53,617	9,18,796	22.8
24.	बड़वानी	13,85,659	6,99,578	6,86,081	27.5
25.	राजगढ़	15,46,541	7,91,038	7,55,503	23.3
26.	विदिशा	14,58,212	7,68,799	6,89,413	20.0
27.	भोपाल	23,68,145	12,39,378	11,28,767	28.5
28.	सीहोर	13,11,008	6,83,703	6,27,305	21.5
29.	रायसेन	13,31,699	7,01,114	6,30,585	18.4
30.	बैतूल	15,75,247	7,99,721	7,75,526	12.9
31.	हरदा	5,70,302	2,95,208	2,75,094	20.2
32.	होशंगाबाद	12,40,975	6,48,970	5,92,005	14.5
33.	कटनी	12,91,684	6,63,064	6,28,620	21.4
34.	जबलपुर	24,60,714	12,78,448	11,82,266	14.4
35.	नरसिंगपुर	10,92,141	5,69,618	5,22,523	14.0
36.	डिण्डौरी	7,04,218	3,51,344	3,52,874	21.3
37.	मण्डला	10,53,522	5,25,495	5,28,027	17.8
38.	छिन्दवाड़ा	20,90,306	10,63,302	10,27,004	13.0
39.	सिवनी	13,78,876	6,94,916	6,83,960	18.2
40.	बालाघाट	17,01,156	8,41,794	8,59,362	13.6
41.	गुना	12,40,938	6,49,591	5,91,347	26.9
42.	अशोकनगर	8,44,979	4,44,651	4,00,328	22.6
43.	शहडोल	10,64,989	5,41,208	5,23,781	17.3
44.	अनूपपुर	7,49,521	3,79,496	3,70,025	12.3
45.	सीधी	11,26,515	5,77,091	5,49,424	23.7
46.	सिंगरौली	11,78,132	6,14,885	5,63,247	28.0
47.	झाबुआ	10,24,091	5,14,830	5,09,261	30.6
48.	अलीराजपुर	7,28,677	3,62,748	3,65,929	19.4
49.	खण्डवा पूर्वी निमाड़	13,09,443	6,73,491	6,35,952	21.4
50.	बुरहानपुर	7,56,933	3,88,040	3,68,953	19.2
51.	आगर	4,80,000	—	—	—
52.	निवाड़ी	4,49,027	—	—	—

टिप्पणी

जनसंख्या वृद्धि दर (Population Increment Rate)

जनगणना 2011 में मध्य प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि दर 20.3 प्रतिशत जो 2001 की जनसंख्या वृद्धि दर 24.26 प्रतिशत से 4.0 प्रतिशत कम रही। जबकि दूसरी ओर प्रदेश की यह जनसंख्या वृद्धि दर देश की वृद्धि दर (17.64 प्रतिशत) की तुलना में 2.66 प्रतिशत अधिक है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 5.1: मध्य प्रदेश में जनसंख्या वितरण

भारत में सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि दर इन्दौर में 32.7 प्रतिशत तथा सबसे कम अनूपपुर जिले में 13.3 प्रतिशत है।

जनसंख्या वृद्धि दर के आधार पर प्रदेश के जिलों को तीन वर्गों में रखा जा सकता हैं –

(1) कम जनसंख्या वृद्धि वाले जिले – इस वर्ग में 18 प्रतिशत से कम जनसंख्या वृद्धि दर वाले जिले सम्मिलित हैं यथा सागर, दमोह, नीमच, मन्दसौर, उज्जैन, शाजापुर, बैतूल, होशंगाबाद, जबलपुर, नरसिंहपुर, मण्डला, छिंदवाड़ा, बालाघाट, शहडोल, अनूपपुर आदि। देश की औसत जनसंख्या वृद्धि 17.64 प्रतिशत है तथा मध्य प्रदेश के 13 जिलों दमोह, नीमच, मंदसौर, उज्जैन, शाजापुर, बैतूल, होशंगाबाद, जबलपुर, नरसिंहपुर, छिंदवाड़ा, बालाघाट, अनूपपुर तथा शहडौल में जनसंख्या की वृद्धि इससे कम अंकित हुई है। अनूपपुर राज्य का एक ऐसा जिला है जिसकी जनसंख्या वृद्धि दर सबसे कम 12.3 प्रतिशत है।

(2) मध्यम जनसंख्या वृद्धि वाले जिले – मध्यम वृद्धि दर या 18 से 24 प्रतिशत वृद्धि दर वाले जिलों में श्योपुर, मुरैना, भिण्ड, दतिया, शिवपुरी, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, सतना, रीवा, रतलाम, देवास, प. निमाड़, राजगढ़, विदिशा, सीहोर, रायसेन, हरदा, कटनी, डिंडौरी, अशोकनगर, सीधी, अलीराजपुर, पूर्वी निमाड़ तथा बुरहानपुर आदि हैं।

(3) तीव्र जनसंख्या वृद्धि वाले जिले – तीव्र वृद्धि दर या 24 प्रतिशत से अधिक वृद्धि दर वाले जिले – ग्वालियर, उमरिया, धार, बड़वानी, भोपाल, गुना, झाबुआ, सिंगरौली, इन्दौर हैं। इन्दौर जिले की जनसंख्या वृद्धि दर 32.7 प्रतिशत प्रदेश में सर्वाधिक है।

टिप्पणी

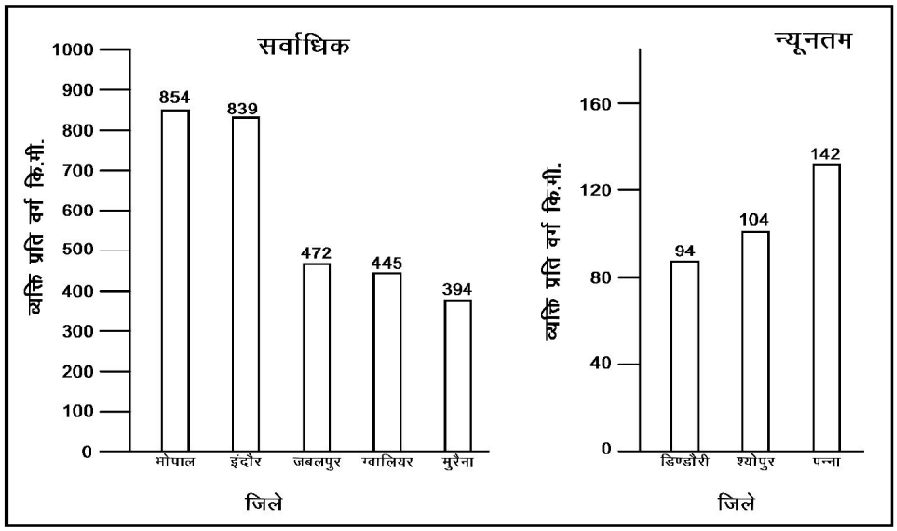
सारणी क्र. 5.2

मध्य प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि

वर्ष	जनसंख्या	वृद्धि (प्रतिशत)
1911	1,94,40,965	—
1921	1,91,71,750	—
1931	2,13,55,657	11.3
1941	2,39,90,608	12.3
1951	2,60,71,637	8.6
1961	3,32,72,408	27.6
1971	4,16,54,119	25.2
1981	5,21,78,844	25.3
1991	6,61,35,862	26.7
2001	6,03,85,118	26.7
2011	7,25,97,565	20.3

जनसंख्या घनत्व (Population Density)

जनसंख्या घनत्व से आशय एक वर्ग किलोमीटर में रह रहे व्यक्तियों की संख्या से है। जनसंख्या घनत्व भूमि पर जनसंख्या के दबाव को सूचित करता है। जनगणना 2011 में मध्य प्रदेश की जनसंख्या घनत्व 236 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी. है, जो देश के जनसंख्या घनत्व 386 से कम है। घनत्व के आधार पर यह राज्य देश का 13 वाँ कम जनसंख्या घनत्व वाला राज्य है।अधिक जनसंख्या वाला घनत्व जहाँ अधिक नगरीकरण की स्थिति दर्शाता है, वहीं कम घनत्व प्रति व्यक्ति ज्यादा क्षेत्रफल इंगित करता है।



चित्र क्र. 5.2: मध्य प्रदेश में जनसंख्या घनत्व (प्रमुख जिले)

टिप्पणी

पिछले एक दशक में मध्य प्रदेश का जनसंख्या घनत्व 16.94 प्रतिशत बढ़ा है, जबकि जनसंख्या वृद्धि दर 20.3 प्रतिशत रही है। जनसंख्या घनत्व की दृष्टि से भोपाल सबसे आगे 854 तथा दूसरे क्रम पर इंदौर 839 है। जबकि डिंडौरी जिले में सबसे कम जनसंख्या घनत्व 94 है। प्रदेश के अन्य अधिक जनसंख्या घनत्व वाले जिले जबलपुर 472, ग्वालियर 445 तथा मुरैना 394 है।

सारणी क्र. 5.3

मध्य प्रदेश : जनसंख्या घनत्व के अनुसार जिलों का क्रम 2011

क्र.	जिला/राज्य	जनसंख्या घनत्व	क्र.	जिला/राज्य	जनसंख्या घनत्व
1.	मध्य प्रदेश	236	27.	नरसिंहपुर	213
2.	भोपाल	854	28.	सिंगरौली	208
3.	इन्दौर	939	29.	छतरपुर	203
4.	जबलपुर	472	30.	अनूपपुर	200
5.	ग्वालियर	445	31.	सीहोर	199
6.	मुरैना	394	32.	विदिशा	198
7.	भिण्ड	382	33.	गुना	194
8.	रीवा	374	34.	नीमच	194
9.	उज्जैन	326	35.	होशंगाबाद	185
10.	रतलाम	299	36.	बालाघाट	184
11.	सतना	297	37.	मण्डला	182
12.	दतिया	292	38.	अशोकनगर	181
13.	टीकमगढ़	286	39.	खण्डवा	178
14.	झाबुआ	285	40.	छिन्दवाड़ा	177
15.	धार	268	41.	दमोह	173
16.	कटनी	261	42.	शहडोल	172
17.	बड़वानी	256	43.	हरदा	171
18.	राजगढ़	251	44.	शिवपुरी	168
19.	शाजापुर	244	45.	उमरिया	158
20.	मन्दसौर	242	46.	सिवनी	157
21.	खरगौन	233	47.	रायसेन	157
22.	सीधी	232	48.	बैतूल	157
23.	सागर	232	49.	पन्ना	142
24.	अलीराजपुर	229	50.	श्योपुर	104
25.	देवास	223	51.	डिण्डौरी	94
26.	बुरहानपुर	221	52.	आगर	—
			53.	निवाड़ी	—

5.3 लिंगानुपात (Sex Ratio)

टिप्पणी

भारत में 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या को लिंगानुपात कहते हैं। मध्य प्रदेश में 1000 पुरुषों पर 919 महिलाएँ है। अर्थात् राज्य का लिंगानुपात 919 है। जबकि सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में लिंगानुपात 930 है जबकी देश में यह अनुपात 933 से बढ़कर 940 हुआ है। सबसे अधिक लिंगानुपात बालाघाट (1021) जबकी सबसे कम 877 भिण्ड जिले में है। प्रदेश के 24 जिलों बालाघाट, सिवनी, छिन्दवाडा, मण्डला, डिण्डोरी, कटनी, बैतूल, पूर्वी निमाड़, बड़वानी, पश्चिमी निमाड़, धार, झाबुआ, उज्जैन, रतलाम, मंदसौर, नीमच, शहडोल, उमरिया, सीधी, अनूपपुर, अलीराजपुर, बुरहानपुर, देवास तथा राजगढ़ में स्त्री–पुरुष अनुपात देश के औसत स्त्री–पुरुष अनुपात 940 से अधिक है।

बालाघाट, अलीराजपुर, मण्डला तथा डिण्डौरी में यह अनुपात एक हजार से अधिक है। अर्थात इन जिलों में स्त्रियों की जनसंख्या पुरुषों से अधिक है तथा स्त्री–पुरुष अनुपात क्रमशः 1021, 1009, 1005 तथा 1004 है।

लिंगानुपात की दृष्टि से मध्य प्रदेश को देश में 18 वाँ स्थान प्राप्त है।

सारणी क्र. 5.4

मध्य प्रदेश में लिंगानुपात (1901–2011)

वर्ष	लिंगानुपात	वर्ष	लिंगानुपात
1901	990	1961	953
1911	986	1971	941
1921	974	1981	941
1931	973	1991	912
1941	977	2001	919
1951	967	2011	930

5.4 साक्षरता (Literacy)

साक्षरता (Literacy)

साक्षरता किसी भी सभ्य समाज के विकास का मापदण्ड है। इसका प्रभाव केवल जनता के मानसिक, शारीरिक व आर्थिक स्थिति पर पड़ता है। वरन् यह क्षेत्र की अर्थव्यवस्था, नगरीकरण, जीवन स्तर, स्त्रियों की दशा, शैक्षणिक सुविधाओं, यातायात एवं परिवहन साधनों, तकनीकी विकास का द्योतक है।

जनगणना 1991 से आयु समूह 0–6 वर्ष के बच्चों को निरक्षर माना जाने लगा है। 7 वर्ष से अधिक उम्र के ऐसे व्यक्तियों को जो कोई भी एक भाषा लिख एवं पढ़ सकते हैं, **'साक्षर'** माना जाता है। जनगणना 2011 के अनुसार भारत में 77,84,54,120 व्यक्ति साक्षर हैं, जिनमें 64,42,03,762 पुरुष तथा 33,42,50,301 स्त्रियाँ हैं, भारत की साक्षरता दर 74 प्रतिशत है तथा पुरुष एवं स्त्रियों की साक्षरता दर क्रमशः 82.1 प्रतिशत तथा 65.5 प्रतिशत है।

टिप्पणी

सारणी क्र. 5.5

मध्य प्रदेश : जिलेवार लिंगानुपात एवं साक्षरता (2011)

क्र.	जिला	कुल जनसंख्या	लिंगानुपात	साक्षरता (प्रतिशत)
	मध्य प्रदेश	**72626809**	**930**	**70.6**
1.	श्योपुर	687861	901	57.4
2.	मुरैना	1965970	840	71.0
3.	भिण्ड	1703005	837	75.3
4.	ग्वालियर	2032036	864	76.7
5.	दतिया	786754	873	72.6
6.	शिवपुरी	1726050	877	62.5
7.	टीकमगढ़	1445166	901	61.4
8.	छतरपुर	1762375	883	63.7
9.	पन्ना	1016520	905	64.8
10.	सागर	2378458	893	76.5
11.	दमोह	1264219	910	69.7
12.	सतना	228935	926	72.3
13.	रीवा	2365106	931	71.6
14.	उमरिया	644758	950	70.8
15.	नीमच	826067	954	70.8
16.	मन्दसौर	1340411	963	71.8
17.	रतलाम	1455069	971	66.8
18.	उज्जैन	1986864	955	72.3
19.	शाजापुर	1512681	938	69.1
20.	देवास	1563715	942	69.3
21.	धार	2185793	964	59.0
22.	इन्दौर	3276697	928	80.9
23.	पश्चिम निमाड़	1873046	965	62.7
24.	बड़वानी	1385881	982	49.1
25.	राजगढ़	1545814	956	61.2
26.	विदिशा	1458875	896	70.5
27.	भोपाल	2371061	918	80.4
28.	सीहोर	1311332	918	70.1
29.	रायसेन	1331597	901	73.0
30.	बैतूल	1575362	971	68.9
31.	हरदा	570465	935	72.5
32.	होशंगाबाद	1241350	914	75.3
33.	कटनी	1292042	952	72.0

टिप्पणी

34.	जबलपुर	2463289	929	81.1
35.	नरसिंहपुर	1091854	920	75.7
36.	डिण्डौरी	704524	1,002	63.9
37.	मण्डला	1054905	1,008	66.9
38.	छिंदवाड़ा	2090922	964	71.2
39.	सिवनी	1379131	982	72.1
40.	बालाघाट	1701698	1,021	77.1
41.	गुना	1241519	912	63.2
42.	अशोकनगर	845071	904	66.4
43.	शहडोल	1066063	974	66.7
44.	अनूपपुर	749237	976	67.9
45.	सीधी	1127033	957	64.4
46.	सिंगरौली	1178273	920	60.4
47.	झाबुआ	1025048	990	43.3
48.	अलीराजपुर	728899	1,011	36.1
49.	पू. निमाड़	1310061	943	66.4
50.	बुरहानपुर	757847	951	64.4
51.	आगर	—	—	—
52.	निवाड़ी	—	—	—

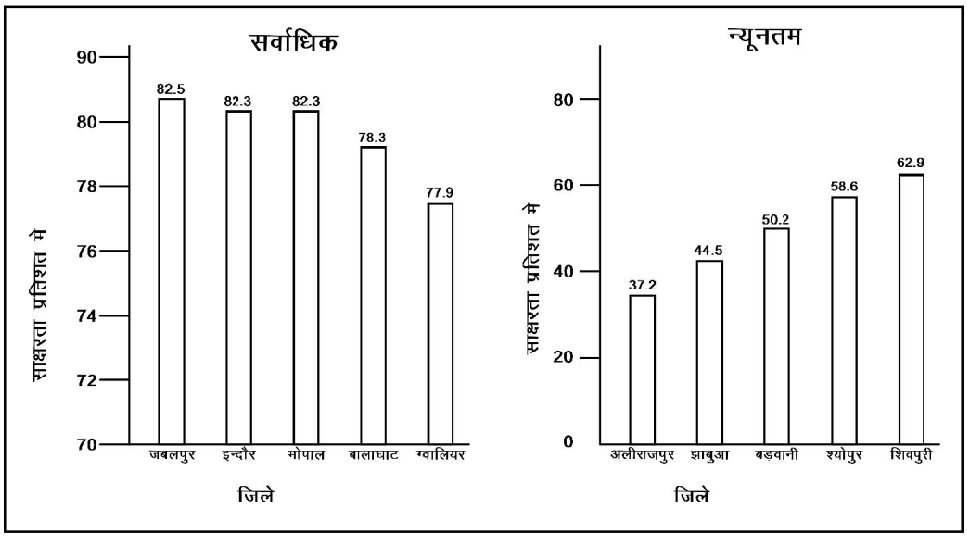
नोटः आगर के आँकड़े भाजापुर जिले में तथा निवाड़ी के आँकड़े टीकमगढ़ जिले में सम्मिलित हैं।

मध्य प्रदेश में जनगणना 2011 के अनुसार कुल 4,38,27,193 व्यक्ति साक्षर हैं जिनमें 2,58,48,137 पुरुष एवं 1,79,79,056 स्त्रियाँ हैं। मध्य प्रदेश में साक्षरता दर 70.6 प्रतिशत है, जबकि पुरुष एवं स्त्रियों की साक्षरता दर क्रमशः 80.5 प्रतिशत एवं 60 प्रतिशत है। साक्षरता के दृष्टिकोण से राज्य का देश में 28 वाँ स्थान है। महिला साक्षरता में भी राज्य को देश में 28 वाँ स्थान प्राप्त है।

प्रदेश में 1951 से 2001 की अवधि में साक्षरता की जो वृद्धि दर रही है, उससे अधिक वृद्धि 2001 से 2011 के दशक में हुई है। आज मध्य प्रदेश की साक्षरता दर 70.6 प्रतिशत है, जबकि 2001 में मध्य प्रदेश की साक्षरता दर 63.7 प्रतिशत थी। प्रदेश में पुरुष साक्षरता 76.1 से बढ़कर 80.5 प्रतिशत तथा स्त्रियों की साक्षरता दर 50.3 से बढ़कर 60 प्रतिशत हो गयी है। राज्य की 65.3 प्रतिशत ग्रामीण एवं 84.1 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या साक्षर है। पुरुष तथा महिला साक्षरता के बीच अन्तर वर्ष 2001 में 25.7 था जो वर्ष 2011 में घटकर 21.5 रह गया है।

मध्य प्रदेश के 8 जिलों की साक्षरता दर देश की औसत साक्षरता दर (74 प्रतिशत) से अधिक है। वर्ष 2011 की जनगणनानुसार जबलपुर प्रदेश का सर्वाधिक साक्षर जिला है जहाँ साक्षरता दर 82.47 प्रतिशत है। पुरुषों की साक्षरता दर की दृष्टि से इन्दौर (89.22 प्रतिशत) तथा महिलाओं की साक्षरता दर की दृष्टि से भोपाल (76.6 प्रतिशत) सर्वाधिक साक्षरता दर वाला जिला है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 5.3: मध्य प्रदेश में साक्षरता (प्रमुख जिले)

सारणी क्र. 5.6

मध्य प्रदेश : सर्वाधिक साक्षरता वाले 5 जिले (2011)

क्र.	राज्य / जिले	साक्षरता दर (% में)	राज्य / जिले	साक्षरता दर (% में)	राज्य / जिले	साक्षरता दर (% में)
	मध्य प्रदेश	70.6	मध्य प्रदेश	80.5	मध्य प्रदेश	60.0
1.	जबलपुर	82.5	इंदौर	89.2	भोपाल	76.6
2.	इंदौर	82.3	जबलपुर	89.1	जबलपुर	75.6
3.	भोपाल	82.3	भोपाल	87.4	इन्दौर	74.9
4.	बालाघाट	78.3	भिण्ड	87.2	बालाघाट	69.7
5.	ग्वालियर	77.9	बालाघाट	87.1	ग्वालियर	68.3

प्रदेश का न्यूनतम साक्षरता वाला जिला अलीराजपुर (37.22 प्रतिशत) है। झाबुआ (44.45 प्रतिशत) प्रदेश का दूसरा सबसे कम साक्षर जिला है।

प्रदेश में सर्वाधिक ग्रामीण जनसंख्या वाला जिला रीवा तथा सर्वाधिक नगरीय जनसंख्या वाला जिला इन्दौर है। ग्रामीण जनसंख्या की वृद्धि–दर 18.4 प्रतिशत तथा नगरीय जनसंख्या की वृद्धि दर 25.6 प्रतिशत है। सर्वाधिक ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि दर वाला जिला झाबुआ (31.2 प्रतिशत) तथा सर्वाधिक नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर वाला जिला रायसेन (46.8 प्रतिशत) है।

प्रदेश के सर्वाधिक नगरीय जनसंख्या वाले जिले क्रमशः इन्दौर – 24.24 लाख (कुल जनसंख्या का 12.1 प्रतिशत), भोपाल – 19.14 लाख (9.5 प्रतिशत), जबलपुर – 14.31 (7.2 प्रतिशत), ग्वालियर – 12.72 लाख (6.3 प्रतिशत), उज्जैन – 7.79 लाख (3.9 प्रतिशत), आदि हैं। दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले कुल 3 महानगर – इन्दौर 16,39,044, भोपाल 14,54,830 तथा जबलपुर 11,17,200 है।

सारणी क्र. 5.7

मध्य प्रदेश : जिलेवार ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या (2011)

क्र.	जिला	कुल	ग्रामीण	नगरीय
	मध्य प्रदेश	**72626809**	**52557404**	**20069405**
1.	श्योपुर	687861	580509	107352
2.	मुरैना	1965970	1495508	470462
3.	भिण्ड	1703005	127083	432922
4.	ग्वालियर	2032036	758244	1273792
5.	दतिया	786754	60472	181982
6.	शिवपुरी	1726050	1430627	295423
7.	टीकमगढ़	1445166	1195293	249873
8.	छतरपुर	1762375	1363359	399016
9.	पन्ना	1016520	891185	125335
10.	सागर	2378458	1669662	708796
11.	दमोह	1264219	1013668	250551
12.	सतना	228935	1754517	474418
13.	रीवा	2365106	1969321	395785
14.	उमरिया	644758	534214	110544
15.	नीमच	826067	580837	245230
16.	मन्दसौर	1340411	1062807	277604
17.	रतलाम	1455069	1020038	435031
18.	उज्जैन	1986864	1207651	779213
19.	शाजापुर	1512681	1219133	293548
20.	देवास	1563715	1111956	451759
21.	धार	2185793	1772572	413221
22.	इन्दौर	3276697	848988	2427709
23.	पश्चिम निमाड़	1873046	1574190	298856
24.	बड़वानी	1385881	1181812	204069
25.	राजगढ़	1545814	1269357	276457
26.	विदिशा	1458875	1119257	339618
27.	भोपाल	2371061	454010	1917051
28.	सीहोर	1311332	1062870	248462
29.	रायसेन	1331597	1028172	303425
30.	बैतूल	1575362	1266211	309151
31.	हरदा	570465	451101	119364
32.	होशंगाबाद	1241350	851364	389986
33.	कटनी	1292042	1028499	263543
34.	जबलपुर	2463289	1023255	1440034

टिप्पणी

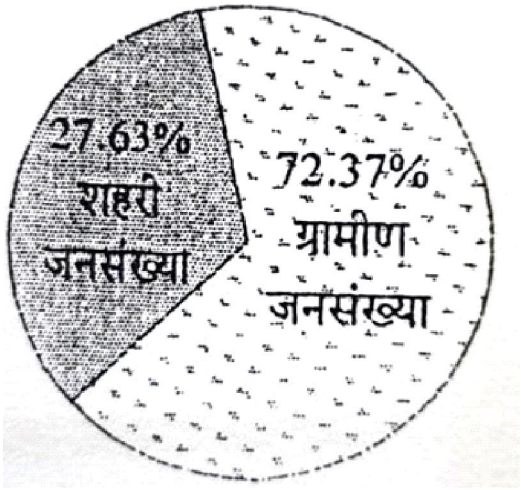
टिप्पणी

35.	नरसिंहपुर	1091854	888314	203540
36.	डिण्डौरी	704524	672206	32318
37.	मण्डला	1054905	924716	130189
38.	छिंदवाड़ा	2090922	1585739	505183
39.	सिवनी	1379131	1215241	163890
40.	बालाघाट	1701698	1456882	244816
41.	गुना	1241519	928844	312675
42.	अशोकनगर	845071	691387	153684
43.	शहडोल	1066063	846463	219600
44.	अनूपपुर	749237	543996	205241
45.	सीधी	1127033	1033912	93121
46.	सिंगरौली	1178273	951487	226786
47.	झाबुआ	1025048	933065	91983
48.	अलीराजपुर	728899	671925	57074
49.	पू. निमाड़	1310061	1050625	259436
50.	बुरहानपुर	757847	497560	260287
51.	आगर	—	—	—
52.	निवाड़ी			

नोटः आगर तथा निवाड़ी जिलों के आँकड़े क्रमशः शाजापुर तथा टीकमगढ़ जिलों में सम्मिलित हैं।

शिशु जनसंख्या (Child Population)

शिशु जनसंख्या से तात्पर्य 0–6 आयु समूह के बच्चों से है। मध्य प्रदेश में जनगणना 2011 के अनुसार कुल शिशु जनसंख्या 1,05,48,295 है। इसमें से 35,16,957 बालक तथा 50,31,338 बालिकाएँ हैं। जो कि क्रमशः कुल जनसंख्या का 14.5 प्रतिशत है पुरुष जनसंख्या का 14.7 प्रतिशत एवं महिला जनसंख्या का 14.4 प्रतिशत है। जबकि भारत में शिशु जनसंख्या, कुल जनसंख्या का 13.12 प्रतिशत है।



शिशु जनसंख्या में जनगणना 2011 के अनुसार मध्य प्रदेश का लिंगानुपात 912 तथा भारत का लिंगानुपात 914 है।

प्रदेश में सर्वाधिक शिशु जनसंख्या वाले प्रमुख जिले झाबुआ (20.3 प्रतिशत), अलीराजपुर (19.8 प्रतिशत), बड़वानी (18.8 प्रतिशत), सिंगरौली (17.3 प्रतिशत) आदि हैं। न्यूनतम शिशु का जनसंख्या जबलपुर जिले में 11.7 है।

मध्य प्रदेश की नई जनसंख्या नीति
(New Population Policy of Madhya Pradesh)

टिप्पणी

जनसंख्या स्थितिकरण स्थायित्व के लिये 12 जनवरी, 2000 को म.प्र. की नई जनसंख्या नीति का अनुमोदन कर दिया गया जिसके प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं :

1. 11 मई, 2000 के बाद विवाह की न्यूनतम आयु से पहले विवाह करने वाले सरकारी नौकरी के अयोग्य घोषित।
2. 11 मई, 2000 के बाद दो से अधिक संतानों वाले व्यक्ति सरकार से भूखण्ड, कर्ज आदि प्राप्त करने लिये अयोग्य घोषित।
3. 11 मई, 2000 के बाद दो से अधिक संतानों वाले व्यक्ति मंडी, सहकारी संस्थाओं, नगर पालिका पंचायत चुनाव लड़ने के अयोग्य घोषित।
4. सन् 2001 तक प्रजनन दर घटाकर 2.1 करने का लक्ष्य।
5. 11 मई को प्रत्येक वर्ष जनसंख्या स्थायीकरण दिवस मनाने का निर्णय।
6. परिवार कल्याण संबंधी भ्रांतियों के निवारण हेतु उपयुक्त संचार रणनीति बनाने का निर्णय।
7. जनसंख्या स्थायित्व में सहयोग हेतु पुरस्कृत करने की घोषणा।
8. जनसंख्या नीति के क्रियान्वयन में उत्कृष्ट कार्य के लिये पंचायतों को प्रोत्साहित करने की योजना।

5.5 ग्रामीण एवं नगरीय प्रवास (Rural and Urban Migration)

मध्य प्रदेश मूलतः ग्राम प्रधान राज्य है। 1961 में यहाँ 80.2 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती थी, किन्तु क्रमशः औद्योगिक विकास होने से नगरीकरण की प्रवृत्ति बढ़ी तथा नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई।

2011 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में 54,903 गाँव हैं जिनमें 5,25,37,899 (72.37 प्रतिशत) जनसंख्या निवास करती है। इस ग्रामीण जनसंख्या में 2,71,42,409 पुरुष तथा 17,53,95,490 महिलाएँ हैं। प्रदेश में नगरों की संख्या 476 तथा नगरीय जनसंख्या 2,00,59,666 (27.63 प्रतिशत) है। नगरीय जनसंख्या के अंतर्गत 1,04,70,511 पुरुष तथा 95,89,155 महिलाएँ हैं।

5.6 जनजातियाँ (Schedule Tribes)

जनजाति से तात्पर्य देश के कुल एवं प्राचीनतम निवासियों से है। प्रारंभ से ही दूरस्थ एवं निर्जन स्थानों में निवास करने के कारण इन पर आधुनिकता और शहरी सभ्यता का बहुत कम प्रभाव पड़ा है। जनजातियों की अपनी विशिष्ट पहचान का कारण भी यही है। **इम्पीरियल गजेटियर (Imperial Gazeteer)** के अनुसार – **"जनजाति अनेक परिवारों या परिवार समूह का ऐसा समुदाय है जिसका एक सामान्य**

नाम होता है, जो एक सामान्य बोली बोलता है, जो एक सामान्य भू–भाग पर रहने का दावा करता है और जो हमेशा अपनी जाति के अंतर्गत ही विवाह करता है''।

टिप्पणी

वर्तमान में देश की कुल आबादी में 8.08 प्रतिशत भाग जनजातियों का है। जनजाति समुदाय इस विकसित समाज की सुख–सुविधाओं से पूर्णतः वंचित होने के कारण **पिछड़ी जनजाति** या **आदिवासी समाज** के रूप में जाना जाता है। जनजातियों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने हेतु भारतीय संविधान में विशेष प्रावधान किये गये है। वस्तुतः अनुसूचित जनजाति वे जनजातियाँ हैं जिन्हें भारतीय संविधान (अनुच्छेद 342) के आधार पर 1950 में सूचीबद्ध किया गया था।

मध्य प्रदेश में जनजातीय संरचना

(Structure of Tribes in Madhya Pradesh)

जनजातीय संरचना की दृष्टि से मध्य प्रदेश महत्वपूर्ण राज्य है। देश की कुल अनुसूचित जनजाति का 22.7 प्रतिशत तथा प्रदेश की कुल जनसंख्या का 23.3 प्रतिशत भाग अकेले मध्य प्रदेश में है। राज्य में जनजातियों की जनसंख्या का सर्वाधिक प्रतिशत झाबुआ जिले में हैं, जहाँ कि 86.85 प्रतिशत जनसंख्या जनजातीय है, जबकि सबसे कम जनजातीय प्रतिशत भिण्ड जिले में है, जो जिले की कुल जनसंख्या का केवल 0.5 प्रतिशत है।

सारणी क्र. 5.8

मध्य प्रदेश में अनुसूचित जनजाति (जनगणना 2011)

क्र.	जिला जनसंख्या अजजा.	कुल	पुरुष	महिलाएँ
	मध्य प्रदेश	**15316784**	**7719404**	**7597380**
1.	श्योपुर	161448	82637	78811
2.	मुरैना	17030	8947	8083
3.	भिण्ड	6131	3283	2848
4.	ग्वालियर	72133	37704	34429
5.	दतिया	15061	7870	7191
6.	शिवपुरी	227802	117111	110691
7.	टीकमगढ़	67857	34923	32934
8.	छतरपुर	73597	38081	35516
9.	पन्ना	170879	87697	83182
10.	सागर	221936	114771	107165
11.	दमोह	166295	84809	81486
12.	सतना	319975	163166	156809
13.	रीवा	311985	161696	150289
14.	उमरिया	300687	151988	148699

15.	नीमच	71441	36738	34703
16.	मन्दसौर	33092	17023	16069
17.	रतलाम	409865	206290	203575
18.	उज्जैन	48730	24925	23805
19.	शाजापुर	37836	19416	18420
20.	देवास	272701	139174	133527
21.	धार	1222814	614619	608195
22.	इन्दौर	217679	112687	104992
23.	खरगौन	730169	366827	363342
24.	बड़वानी	962145	482182	479963
25.	राजगढ़	53751	27477	26274
26.	विदिशा	67603	34993	32610
27.	भोपाल	69429	35966	33463
28.	सीहोर	145512	74391	71121
29.	रायसेन	205006	105627	99379
30.	बैतूल	667018	333166	333852
31.	हरदा	159678	81446	78232
32.	होशंगाबाद	197300	101041	96259
33.	कटनी	317699	159799	157900
34.	जबलपुर	375231	189915	185316
35.	नरसिंगपुर	145879	71427	71752
36.	डिण्डौरी	455789	74127	71752
37.	मण्डला	610528	299918	310610
38.	छिन्दवाड़ा	769778	385885	383993
39.	सिवनी	519856	258121	261735
40.	बालाघाट	383026	186979	196047
41.	गुना	190819	98206	92613
42.	अशोकनगर	82072	42447	39625
43.	शहडोल	476008	236947	239061
44.	अनूपपुर	358543	177977	180566
45.	सीधी	313304	159192	154112
46.	सिंगरौली	383994	196133	187861
47.	झाबुआ	891818	446359	445459
48.	अलीराजपुर	648638	321842	326796
49.	खण्डवा	459122	234867	224255
50.	बुरहानपुर	230095	116420	113675

टिप्पणी

51.	आगर	–	–	–
52.	निवाड़ी	–	–	–

नोटः आगर व निवाड़ी जिलों के आँकड़े क्रमशः शाजापुर तथा टीकमगढ़ जिलों में सम्मिलित हैं।

टिप्पणी

मध्य प्रदेश में जनजातीय समुदाय
(Tribal Communities of Madhya Pradesh)

वर्तमान में मध्य प्रदेश के 52 जिलों में गोंड, कोरकू, सहरिया, निहाल, भील, भिलावा, परधान, अगरिया, परधी, बैगा, परजा, मैना, सउर, मारिया–भूमिया, भूजिया, बियार, बिंझवार, माझी, बिरहोर, मवासी, धनवार, नट, गडाबा, पनिका, पाओ, सौर, सोवर, खैरवार, खडिया कीर, खोंड, मोगिया, कोल, भीलमीना, कोलम, दमोर, गसारिया, झझतार और मीना जनजतायिों के लोग निवास करते हैं। भिण्ड जिले में सबसे कम आदिवासी 3,291 व्यक्ति निवास करते हैं। जनसंख्या प्रतिशत के अनुसार झाबुआ जिला सर्वोपरि है, जहाँ जनसंख्या का 86.85 प्रतिशत भाग आदिवासियों का है अर्थात् यहाँ 9,68,372 लोग आदिवासी हैं।

प्रदेश की जनजातियाँ बहुत–सी उपजनजातियों में विभाजित हैं, जो स्वयं अपने आप में एक जनजाति समूह बनाती हैं। प्रदेश की सभी जनजातियों में मुख्यतः निम्नलिखित सामान्य विशेषताएँ पायी जाती हैं –

1. जनजातियाँ आज भी सभ्य समाज से काफी दूर अविकसित क्षेत्र में रहती हैं। ये लोग दूर–दराज, दुर्गम एवं पहाड़ी प्रदेशों में रहना पसंद करते हैं।
2. ये मुख्यतः नीग्रेटो, ऑस्ट्रेलायड और मंगोल जातियों से बनी है।
3. ये एक ही जनजातीय भाषा बोलती हैं।
4. इन्हें एकांत एवं शांत जीवन अच्छा लगता है।
5. ये प्रेतवाद नामक प्राचीन धर्म को मानती हैं तथा भूतप्रेतों की पूजा पर विशेष बल देती हैं।
6. ये प्राचीन उद्यमों यथा–जंगली फल–फूल, मूलकन्दों को इकट्ठा करना, शिकार करना अथवा मछली मारना जैसे कार्य करती हैं।
7. ये अधिकांशतः माँसाहारी तथा मदिरा प्रेमी हैं।
8. ये भोजन तथा अपने भरण–पोषण के लिए प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर होते हैं।
9. अधिकांश जनजातियाँ नग्न एवं अर्द्ध–नग्न अवस्था में रहती हैं तथा वस्त्रों के स्थान पर वृक्षों की छाल एवं पत्तियों का प्रयोग करती हैं।
10. आदिम जनजातियाँ समाज मे हर दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं जो एक चिंता का विषय है।

टिप्पणी

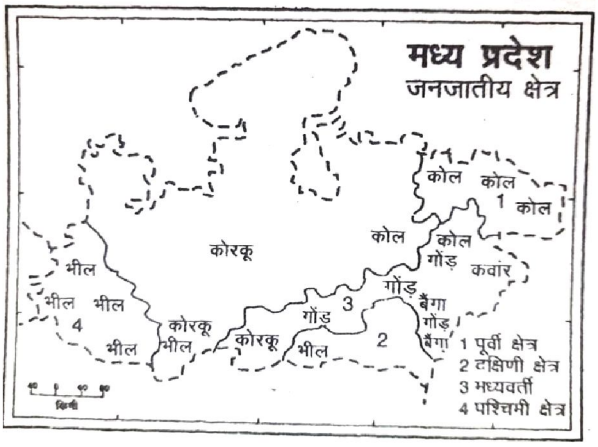
सारणी क्र. 5.9

मध्य प्रदेश की आदिवासी जनजातियाँ

जनजाति	उप–जनजाति	निवास स्थल
1. गोंड	परधान, अगरिया, ओझा	प्रदेश के सभी जिलों में मुख्यतः नर्मदा के नगारची, सोलहास दोनों किनारों पर विन्ध्य और सतपुड़ा अंचल में।
(1. डॉ. शिव कुमार तिवारी एवं डॉ. श्रीकमल शर्मा; म.प्र. की जनजातियाँ, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी)		
2. भील	बरेला, भिलाला, पटलिया	धार, झाबुआ, खण्डवा, खरगौन।
3. बैगा	बिंझतार, नरोतिया, भरोतिया नाहर, रायमैना, कठमैना	मण्डला, बालाघाट, शहडोल, सिंगरौली।
4. कोरकू	मोवसीरुपा, बवारी, बोडोया	खण्डवा, होशंगाबाद, बैतूल, छिन्दवाड़ा, देवास।
5. भारिया	भमिया, भूईहार, पंडो	छिन्दवाड़ा, जबलपुर, मण्डला, शहडोल, पन्ना।
6. कोल	रोतिया, रौटेल	रीवा, सतना, शहडोल, अनूपपुर, सीधी।
7. माड़िया	अबूझमाड़िया, दण्डामी, माड़िया, मेटाकोईतूर	जबलपुर, मण्डला, पन्ना, शहडोल, छिन्दवाड़ा।
8. सहरिया	–	गुना, शिवपुरी, मुरैना, श्योपुर, ग्वालियर, विदिशा, राजगढ़।
9. सउर	–	छतरपुर, पन्ना, टीकमगढ़, सागर, दमोह।
10. अगरिया	–	मण्डला, सीधी, शहडोल।
11. पनिका	–	शहडोल, सीधी।
12. परधान	–	सिवनी, छिन्दवाड़ा, बालाघाट, बैतूल।
13. खैरवार	–	सीधी, शहडोल, पन्ना, छतरपुर।

मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्र (Tribal Regions of Madhya Pradesh)

प्रसिद्ध भूगोलविद् डॉ. श्रीकलम शर्मा ने प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों को चार भागों में विभक्त किया है। ये क्षेत्र हैं – मध्य क्षेत्र, पूर्वी क्षेत्र, पश्चिमी क्षेत्र और दक्षिणी क्षेत्र।



चित्र क्र. 5.4: मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्र

टिप्पणी

(1) मध्य क्षेत्र – इस क्षेत्र में मुख्य रुप से गोंड, कोल, कोरकू और बैगा नामक जन–जातियाँ सबसे अधिक हैं।

(2) पूर्वी क्षेत्र – इस क्षेत्र में बैगा जनजाति के लोग रहते हैं।

(3) पश्चिमी क्षेत्र – इस क्षेत्र में झाबुआ, धार, खण्डवा जिले आते हैं। यहाँ भील जाति के लोग रहते हैं।

(4) दक्षिणी क्षेत्र – इस क्षेत्र में मण्डला, शहडोल आदि आदिवासी बाहुल्य वाले जिले आते हैं। इसमें झरिया, माड़िया, हल्वा जाति के लोग रहते हैं।

मध्य प्रदेश में विभिन्न अनुसूचित जनजातियों में गोंड (माड़िया और मुरिया इसी में शामिल है।) जन–जातियों के लोग सबसे अधिक हैं। इसके बाद भील और भिलाला जाति की संख्या दूसरे नम्बर पर है। कोल, कोरकू, सहरिया और बैगा प्रदेश की अन्य प्रमुख जन–जातियाँ हैं।

राज्य की कुल जनसंख्या में जनजातियों के प्रतिशत की दृष्टि से झाबुआ प्रथम स्थान पर तथा द्वितीय स्थान मण्डला का है।

भारत सरकार ने मध्य प्रदेश के 3 जनजातीय समूहों को विशेष पिछड़ी जनजाति समूहों के रुप में मान्यता दी है। ये हैं–

(1) मण्डला जिले के बैगाचक क्षेत्र के बैगा।

(2) छिंदवाड़ा जिले के पातालकोट क्षेत्र के भारिया।

(3) ग्वालियर संभाग के सहरिया।

प्रमुख जनजातियों का संक्षिप्त विवरण (Brief Description of Main Tribes)

(1) गोंड – जनसंख्या की दृष्टि से मध्य प्रदेश की ही नहीं, बल्कि गोंड सम्पूर्ण भारत की सबसे बड़ी जनजाति है। यद्यपि यह जनजाति मध्य प्रदेश के सभी जिलों में निवास करती है, लेकिन इसका मुख्य क्षेत्र नर्मदा के दोनों ओर विन्ध्य और सतपुड़ा के पहाड़ी क्षेत्रों में है। इनकी उपजातियाँ – परधान, अगरिया, ओझा, नगारची, सोलहास आदि मुख्य हैं।

गोंड शब्द की उत्पत्ति तेलगू के कोंड शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है पहाड़, चूँकि ये लोग पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करते हैं, अतः इन्हें गोंड की संज्ञा दी जाती है।

नृतत्वशास्त्रियों के अनुसार वर्तमान के गोंड शुद्ध नहीं हैं, इनमें हिन्दुओं का रक्त मिश्रण हो चुका है। सामान्यतः गोंडों के शरीर की त्वचा काली होती है और बाल काले और रुखे होते हैं, दाढ़ी और मूछों में बाल बहुत कम होते हैं, इनकी नाक बड़ी और फैली हुई होती है। शारीरिक गठन सन्तुलित होता है, लेकिन देखने में सुन्दर नहीं होते हैं। गोंडों की स्त्रियाँ पुरुषों की तुलना में कद में छोटी, शरीर सुगठित एवं सुन्दर रंग, पुरुषों की तुलना में कुछ कम काला, होंठ मोटे, आँखें काली और बाल लम्बे होते हैं।

टिप्पणी



चित्र क्र. 5.5: मध्य प्रदेश जनजातियाँ

गोंड जनजाति कृषि व शिकार से अपना जीविकोपार्जन करते हैं। शिकार के अतिरिक्त फल–फूल, कन्द आदि को भी जंगलों से एकत्र कर जीविका चलाते हैं। ये लोग अपने भोजन में आम, आँवला, जामुन, महुआ, मछलियाँ, चावल तथा कन्दमूल का प्रयोग करते हैं। ये वस्त्रों का प्रयोग कम करते हैं। पुरुष छोटा–सा कपड़ा टाँगों को ढकने के लिए पहनते हैं। कभी–कभी सिर पर भी एक टुकड़ा बाँध लेते हैं। कुछ लोग पेट और पीठ के लिए बन्डी भी पहनते हैं। स्त्रियाँ चोली आदि नहीं पहनती हैं उनकी छाती का भाग खुला होता है। कभी–कभी ये मोर के पंख या जानवरों के सींग भी लगाते हैं। स्त्रियाँ शरीर पर अनेक जेवर पहनती हैं। अधिकांश गोंड झोपड़ियों में रहते हैं। इनकी झोपड़ियाँ घास–फूस और बाँस की खपच्चियों से बनी होती हैं। इनकी दीवारें मिट्टी और गोबर से लीप ली जाती हैं।

गोंड में संयुक्त परिवार और वैयक्तिक परिवार दोनों का ही प्रचलन है। विवाह कई प्रकार के होते हैं। गोंडों में भाई का लड़का और बहन की लड़की अथवा भाई की लड़की और बहन के लड़के का विवाह प्रचलित है। इसे **'दूध लौटावा'** कहते हैं। कभी–कभी अपहरण क्रिया द्वारा भी विवाह सम्पन्न होते हैं। गोंडों में विधवा विवाह का प्रचलन है। इनका धर्म आत्मावाद और जादुई क्रियाओं के चारों ओर केन्द्रित है।

(2) भील – यह भारत की तृतीय और मध्य प्रदेश की दूसरी बड़ी जन–जाति है। इनका निवास क्षेत्र मध्य प्रदेश में धार, झाबुआ और पश्चिमी निमाड़ में है। 1981 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में इनकी कुल संख्या 25,05,888 व्यक्ति है।

भील शब्द तमिल भाषा के विल्लुवर शब्द से बना है, जिसका अर्थ होता है–धनुष, चूँकि ये लोग धनुर्धारी होते हैं, अतः इन्हें भील कहा जाता है। भील की प्रमुख उपजातियों में बरेला, भिलाला, पटालिया आदि हैं।

भील सामान्यतः औसत मनुष्य की तुलना में ठिगने होते हैं। इनका रंग तांबे के समान होता है। देखने में सुन्दर प्रतीत होते हैं। भील लोगों के रक्त मिश्रण का मुख्य

कारण राजपूत लोगों का भील स्त्रियों से बेहिचक शादी सम्बन्ध स्थापित करना रहा है।

टिप्पणी

ये लोग भीली भाषा बोलते हैं, जो राजस्थानी, गुजराती और मराठी का मिश्रित रुप है। भीली भाषा का उद्‌भव संस्कृत और कुछ अन्य भाषाओं के सम्मिश्रण से हुआ है। ये लोग आधी बाँहों की कमीज, सिर पर साफा और धोती धारण करते हैं। इनकी स्त्रियाँ मारवाड़ी औरतों की भाँति बड़ा घाघरा पहनती हैं। कुछ भील पुरुष धोती के स्थान पर लँगोटी पहनते हैं।

भील प्रायः कृषक् होते हैं। कुछ भील लकड़हारे और श्रमिकों का भी कार्य करते हैं। आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण कुछ भील चोरी–डकैती भी करके उदरपूर्ति करते हैं। भील छोटे–छोटे गाँवों में रहते हैं। इनके परिवारों में संयुक्त परिवार प्रथा होती है। भीलों में नियमित, गन्धर्व और अपहरण आदि विवाहों का प्रचलन होता है। इन्हें विवाह में कन्या का मूल्य चुकाना पड़ता है। तलाक भी इनमें प्रचलित है।

ये हिन्दू धर्म को मानते हैं और महादेव, राम, गणेश, हनुमान आदि देवताओं की पूजा करते हैं। होली, दीपावली और दशहरा आदि त्यौहार मनाते हैं। होली बड़े उत्साह से मनाई जाती है। होली के अवसर पर 'गोल गधेड़ा' उत्सव विशेष धूम–धाम से मनाया जाता है।

(3) मारिया – मारिया जनजाति मध्य प्रदेश के छिंदवाड़ा और जबलपुर जिलों में रहती है। 1981 के अनुसार इनकी कुल संख्या 1,95,490 है। इस जनजाति की प्रमुख उपजातियाँ भूमियाँ, भुईहार और पांडो है।

मारिया जनजाति अधिकांश पहाड़ी भागों में निवास करती हैं। कुछ मारिया मैदानों में रहते हैं। मैदानी मारिया की बस्तियाँ अधिकांशतः नदी की घाटियों और समतल भूमि पर अव्यवस्थित हैं और कृषि करते हैं। इनके शरीर की रचना गोंड जनजाति के समान है।

धार्मिक दृष्टि से मारिया हिन्दू प्रतीत होते हैं। ये हिन्दू देवी–देवताओं को, वृक्षों को सर्प, बाघ आदि को भी पूजते है। इनका प्रमुख देवता भीमसेन है।

इनका सामाजिक संगठन वनिस्वत है, जो प्रजातान्त्रिक है। इनमें संयुक्त और वैयक्तिक दोनों प्रकार के परिवार मिलते हैं। इन परिवारों में स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों के लिए स्पष्ट कार्य विभाजन रहता है।

(4) कोल – मध्य प्रदेश के रीवा सम्भाग और जबलपुर जिले में कोल जनजाति निवास करती है। 1981 की जनगणनानुसार इनकी जनसंख्या 1,23,811 व्यक्ति है। इनको कोलोरियन और मुण्डारी जनजाति भी कहते हैं। इनकी उपजातियों में रोहिया व रोठैल हैं।

कोल जनजाति पूर्णतः हिन्दू रीति–रिवाज से जीवनयापन करती है और देवी–देवताओं की उपासना करते हैं। इनके प्रमुख देवी–देवताओं में दूल्हा देव, बैरम एवं बड़े देव हैं। ये लोग भूत–प्रेत में भी विश्वास करते हैं। जादू–टोना में भी इनका विश्वास रहा है।

कोल जनजाति का मुख्य पेशा कृषि है। ये कृषक श्रमिक के रुप में अपना जीवन यापन करते हैं। कृषि के अतिरिक्त पशुपालन भी इनका पेशा है। इनमें अपनी पंचायत होती है, जिसे गोहिया कहते हैं। अन्य जन–जातियों की तुलना में इनमें राजनीतिक चेतना कहीं अधिक है।

टिप्पणी

(5) कोरकू – कोरकू जनजाति मध्य प्रदेश में पूर्व निमाड़, होशंगाबाद, बैतूल, छिंदवाड़ा आदि जिलों में निवास करती है। यह भी मुण्डा या कोलेरियन जनजाति की एक शाखा है। 1981 में इनकी जनसंख्या मध्य प्रदेश में 66,781 व्यक्ति थी। मोवासी, बवारी, रुमा, नहाला, बोडोया आदि इसकी प्रमुख उपजातियाँ हैं।

कोरकू जनजाति कृषक और कृषि श्रमिक के रूप में अपना जीवनयापन करती है। इसके अतिरिक्त ये वनोपज एकत्रित कर और वनों में मजदूरी कर अपना पेट पालते हैं। कोरकू जनजाति में भूस्वामी कृषकों को राजकोरकू और शेष लोगों को **पोथरिया कोरकू** कहते हैं।

कोरकू जनजाति हिन्दू देवी–देवताओं की ही पूजा करते हैं। दीपावली, दशहरा और होली आदि उत्सवों को बड़े उत्साह से मनाते हैं। इनमें विवाह सम्बन्धों में कन्या का मूल्य चुकाना पड़ता है। तलाक व विधवा–विवाह का भी प्रचलन है। गाँवों में पंचायत होती है और मुखिया के निर्देशों का पालन होता है।

(6) बैगा – इस जनजाति के लोग मुख्यतः मध्य प्रदेश में मण्डला, शहडोल एवं बालाघाट में निवास करते हैं। स्मिथ एवं हीरालाल इन्हें छोटा नागपुर की आदिम जनजाति भुईयाँ की मध्य प्रदेशीय शाखा मानते हैं, जिन्हें बाद में बैगा कहा जाने लगा है। भुईयाँ (भुई, पृथ्वी) और भूमिज (भूमि, पृथ्वी) समानार्थी हैं तथा भूमि से सम्बन्धित बोध कराते हैं। मध्य प्रदेश के इन लोगों को बाद में आये हुए गोंडों ने बैगा कहा। बैगाओं ने पहले छत्तीसगढ़ में प्रवेश किया तथा कालान्तर में मण्डला एवं बालाघाट के दुर्गम वनों में खदेड़ दिया गया। पियर्सन के अनुसार पहले बैगा छत्तीसगढ़ में फैले थे जो वहाँ के हैहयवंशी राजपूतों द्वारा दुर्गम क्षेत्रों में भगा दिये गये। भूमियाँ लोगों के सम्बन्ध भी बैगाओं से हैं अतः मण्डला के बैगा यत्र–तत्र भूमियाँ भी कहलाते हैं।

शारीरिक लक्षण – बैगा आदिवासियों की शाखाएँ बिंझवार, भरोतिया, नरोतिया, राममैना, कठमैना, कोडमान या कंडी या गोंडमैना आदि हैं। बैगा लोगों की त्वचा का रंग काला होता है तथा इनका शरीर रुक्ष होता है, ये लोग सिर के बाल नहीं कटवाते हैं।

भोजन – बैगा लोग प्रायः माँस, मोटे अनाज, फल एवं कन्दमूल खाते हैं। विभिन्न अवसरों पर सुअरों की बलि दी जाती है। सुअरों को मारने का तरीका विचित्र है। पहले एक गड्ढे में गरम पानी डाला जाता है। इसके बाद उसमें सुअर डाल देते हैं। जब वह चिल्लाता–चीखता है तब बैगाओं की स्त्रियाँ गीत गाती हैं। जब उसका चिल्लाना बन्द हो जाता है, तो कुल्हाड़ी से उसे मार दिया जाता है। जंगली जानवरों का शिकार करके उनका माँस खाते हैं। अनाजों में ज्वार–बाजरा, मक्का, राई तथा रमतिला इनकी प्रमुख उपजें हैं जिन्हें भोजन के रुप में प्रयोग में लाते हैं। मेहमानों के लिए पेज आवश्यक रुप से तैयार की जाती है, पेज को मक्का चावल तथा कुटकी एवं कोदों के घोल द्वारा तैयार किया जाता है, इसमें नमक मिलाया जाता है। ये लोग धूम्रपान भी करते हैं। अधिक उन्नत बैगा गाय का माँस नहीं खाते हैं।

टिप्पणी

वस्त्राभूषण – बैगा जनजाति के पुरुष कम वस्त्रों का प्रयोग करते हैं, ये लोग अपनी कमर में लंगोटी पहनते हैं। स्त्रियाँ एक छोटी धोती पहनती हैं जो कमर के सहारे घुटनों तक नीचे लटकी रहती हैं, इसका एक भाग सीने के ऊपर डाल लेती हैं। यह धोती कपची कहलाती हैं। इन लोगों को आभूषण पहनने का भी शौक हैं, स्त्रियाँ गहने किसी भी सस्ती धातु के पहनती हैं। गले में सुतिया तथा हमेल पहने जाते हैं तथा पैरों में घुँघरु तथा पैर की उँगलियों में चुटकी पहनी जाती है। स्त्रियाँ विवाह के समय खड़ाऊँनुमा वस्त्र पहनती है। ये सिर के बालों पर फुंदरों का प्रयोग करती हैं। इनकी नाक में किसी प्रकार के आभूषण का प्रयोग नहीं किया जाता है। पुरुष हाथ में कड़े पहनते हैं।

मकान – बैगा लोगों के मकानों की दीवारें बाँस की बनी होती हैं। इन पर मिट्टी का लेप कर दिया जाता है। मकानों में खिड़कियाँ नहीं होती हैं। इनमें खपरैल की जगह घासफूँस का प्रयोग किया जाता है। मकानों में दरवाजा बहुत छोटा होता है जिसमें झुककर प्रवेश करना पड़ता है। इनका रसोईघर इतना बड़ा होता है कि वह शयनकक्ष का भी काम देता है। गाँव के समस्त संयुक्त अधिवासों को चारों ओर से बाँस या केतकी की बाड़ी से घेर दिया जाता है, गाँव की सीमा को साफ रखा जाता है। मरघट और इसके समीप टोने–टोटके का स्थान गाँव की सीमा के बाहर रखा जाता है।

अर्थव्यवस्था – इनकी अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। ये लोग प्रमुखतः झूमिंग कृषि करते हैं। वनों की समतल भूमि के वृक्षों को गिरा दिया जाता है तथा सूखने पर आग लगा दी जाती है। जब आग बुझ जाती है, तो राख में कोदों, कुटकी, चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का तथा अन्य मोटे अनाज बो दिए जाते हैं। ये लोग उन्हें खेती में बैलों का प्रयोग नहीं करते हैं। अतः अधिकांश कार्य स्त्रियों को करना पड़ता है। कुछ बैगा लोग बैलों का प्रयोग करते हैं। अतः बैलों को बैलवासों से ले लिया जाता है तथा उनके बदले में कृषि उपज का आधा भाग देना पड़ता है। यह प्रथा पोदा कहलाती है।

बैगा लोग कुशल शिकारी होते है, क्योंकि ये सधन वनों में रहते हैं। जंगली पशु–पक्षियों का शिकार धनुष–बाण से करते हैं। शिकार के लिए सभी बैगा लोग जंगलों में टोलियों में बँट जाते हैं तथा झाड़ियों में छिप जाते हैं, ताकि जानवर उन्हें देख न सकें। शिकार को तीर से निशाना लगाकर घायल करते हैं एवं उनका पीछा करते रहते हैं, जब तक थककर जानवर गिरता नहीं हैं तब तक उसका पीछा नहीं छोड़ते हैं।

ये लोग अपने तीरों को विष से बुझा लेते हैं, जिससे जानवर जल्दी मर जाता है। जानवरों को मारने के लिए फन्दों का भी प्रयोग किया जाता है। चिड़ियों तथा पक्षियों को मारने के लिए कई प्रकार के साधन अपनाते हैं। ये लोग वृक्षों की पत्तियों एवं टहनियों पर ऊसर और बड़ के दूध का लेप कर देते हैं, जिससे पक्षी के वहाँ बैठने पर उसके पंजे चिपचिपे पदार्थ से चिपक जाते हैं। ऐसी स्थिति में पक्षी आसानी से उड़ नहीं सकता है और असहाय अवस्था में बैगा लोग उन्हें मार लेते हैं। ये लोग जिस फन्दे का प्रयोग करते हैं, वह मलन्दा कहलाता है। इसे वृक्ष की टहनी से बनाया जाता है। यह इतना मजबूत होता है कि बड़े जानवर भी इसमें फँसकर आसानी से नहीं छूट पाते हैं।

टिप्पणी

सामाजिक व्यवस्था – बैगा लोगों का जीवन सादा होता है। विवाह के अवसर पर हाथी पर बैठना सभी बैगा लोग पसन्द करते हैं, किन्तु उनकी दरिद्रता उन्हें हाथी उपलब्ध नहीं करा पाती है। अतः वे चारपाई का हाथी बनाकर सन्तोष कर लेते हैं। साल का वृक्ष पूज्य होता है। यदि पूजा के समय साल के पत्ते उनके हाथ में दे दिये जायें और कोई बात पूछी जाय, तो ये सच ही बतायेंगे। साल वृक्ष में बड़े देव का निवास माना जाता है। इनके बागेश्वरी और नागवंशी देवता एक बोतल दारु तथा सुअर से प्रसन्न हो जाते हैं। दूल्हादेव और बड़ादेव एक मुर्गा और एक बोतल दारु से प्रसन्न हो जाते है। भवानी माता पूरा एक बकरा एवं एक बोतल दारू मिलने पर ही खुश होती है। देवी–देवताओं की पूजा पुरुष ही करते हैं, बैगा लोग गुनिया के गुणों के प्रति प्रभावित होते हैं। ये लोग झाड़–फूँककर बीमारियों एवं सर्पदंश को ठीक कर लेते हैं।

(7) कमार – शहडोल, डिंडोरी आदि जिलें में पायी जाने वाली जनजाति कमार है। ये अपनी उत्पत्ति महाभारत के कौरवों से बताते हैं। इनमें अनेक उपवर्ग हैं, जिनमें एक उपवर्ग तंवर है जो साधारणतः तोमर राजपूत होते हैं।

ये लोग टोकरियाँ अधिक बनाते हैं तथा मुश्किल से अपना जीवन–यापन करते हैं। ये लोग फौज में कार्य करना अपना परम्परागत कार्य मानते हैं, किन्तु कृषक् तथा मजदूर भी हैं। इनमें स्थानान्तरित कृषि का प्रचलन है। ये लोग आखेट, पशुपालन तथा संचयन भी करते हैं।

कमार जनजाति गणचिन्ह गोत्रों में विभाजित है। अधिकतर गणचिन्ह पशुओं तथा आसपास की वस्तुओं के नाम पर मिलते हैं।

ये लोग सगोत्रीय विवाह नहीं करते हैं। इनमें ममेरे, मौसेरे, भाई–बहनों से भी विवाह नहीं होता है। इनमें विवाह वयस्क होने पर ही होता है तथा विवाह का प्रस्ताव लड़के वाले की तरफ से आता है।

इनके कार्य हिन्दुओं से मिलते–जुलते हैं। ये लोग मृत शरीर को अधिकतर दफनाते हैं। किन्तु सम्पन्न परिवार दाह संस्कार करते हैं। इन लोगों में जमीन का बँटवारा हिन्दुओं के समान होता है, किन्तु बड़े लड़के को कुछ अधिक भाग दिया जाता है। इनमें पंचायत व्यवस्था को विशेष महत्व दिया जाता है जो झगड़ों का निपटारा करती है तथा दण्ड भी देती है। कमार लोग देवी–देवताओं की पूजा करते हैं तथा जादू–टोने में भी विश्वास करते हैं।

(8) पारधी – यह जनजाति विशिष्ट उद्योग–धन्धा करने वाली है। यह जनजाति विभिन्न क्षेत्रों में मिलती है, किन्तु सर्वाधिक मात्रा में सीहोर व रायसेन में है। ये वन्य पशुओं के शिकार तथा उन्हें पकड़ने में अन्य जनजातियों की तुलना में बहुत सिद्धहस्त हैं।

पारधी मराठी शब्द 'पारध' का तद्भव रूप है जिसका अर्थ आखेट होता है। सामान्यतः बहेलियों को भी इनमें सम्मिलित कर लिया जाता है। गोसाई पारधी, चीता पारधी, भील पारधी, लंगोटी पारधी, ताकनकार व ताकिया पारधी, बन्दर वाले पारधी, शीशी का तेल वाले पारधी तथा फांस पारधी आदि पारधियों के उपभेद हैं। इनके गोत्र राजपूतों से मिलते है, यथा सिसोदिया, सोलंकी, चौहान, राठौर आदि।

टिप्पणी

चीता पारधी चीता पकड़ने में बहुत सिद्धहस्त हैं। ये चीता को उसकी शैशवावस्था में ही पकड़ लेते हैं तथा उसे प्रशिक्षण देते हैं तथा शिकार कराने में सहायता लेते हैं। शीशी के तेल वाले पारधी मगर का शिकार करते हैं जिससे चर्बी प्राप्त होती है। चर्बी को साफ करके बोतलों में भर लिया जाता है। यह तेल की तरह प्रयुक्त होती है, पारधी बाज की सहायता से भी चिड़ियों का शिकार करते हैं। बाज चिड़ियों का शिकार नहीं करता अपितु उन्हें रोकने का ही कार्य करता है। फांस पारधी फंदे की सहायता से शिकार करते हैं। पारधी समाज में महिलाओं को शिकार की अनुमति नहीं है।

(9) अगरिया – अगरिया गोंडों की उपजनजाति है। यह जनजाति मध्य प्रदेश के मण्डला तथा शहडोल जिलों में पाये जाते हैं।

अगरिया जनजाति के लोग लौह–अयस्क को साफ कर लौह धातु के निर्माण में लगे हैं। ये लोग लौह–अयस्क का अपनी भाषा में नामकरण करते हैं तथा मण्डला जिले के लौह अयस्क को छावरिया, पोडी, कतर्रा, चरकी और जाक कहते है। इनके प्रमुख देवता लोहा सूर हैं जिनका निवास धधकती भट्टी में माना जाता है। ये अपने देवता को प्रसन्न रखने के लिए काली मुर्गी की भेंट चढ़ाते हैं। इनका भोजन मोटे अनाज और सभी प्रकार के माँस हैं। सुअर का माँस बड़े चाव से खाया जाता है। विवाह में वधू मूल्य चुकाने की प्रथा है।

समाज में विधवा विवाह की स्वीकृति है। उड़द की दाल को पवित्र माना जाता है। अतः विवाह में इसका प्रयोग शुभ माना जाता है।

5.7 पर्यटन (Tourism)

सामान्यतः ऐच्छिक रुप से किसी स्थान का भ्रमण करना 'पर्यटन' कहलाता है। पर्यटन अंग्रेजी शब्द Tourism का हिन्दी रुपान्तर है। Tourism शब्द Tour से लिया गया है, जिसका अर्थ 'यात्रा' है। Tour लैटिन भाषा के Toornos से बना है, जिसकी उत्पत्ति यहाँ की एक गोलाकार औजार से जुड़ा है। ज्वतदवे का हिन्दी रुपान्तरण 'यात्रा–चक्र' है।

कोई भी यात्रा पर्यटन हो सकती है, यदि वे निम्न शर्तें पूरी करती हों –

(1) यात्रा अस्थायी हो,

(2) यात्रा ऐच्छिक हो,

(3) यात्रा किसी प्रकार का पारिश्रमिक अर्जित करना नहीं होना चाहिए।

पर्यटन का अर्थ अपने निवास स्थान को छोड़कर बाहर जाना है। निर्वासित स्थान को मानव मुख्यतः तीन कारणों से छोड़ता है –

(1) पर्यटन – आराम, मनोरंजन, ज्ञान आदि के लिए यात्रा करना।

(2) देशाटन – देश एवं विदेश में ही आर्थिक लाभ के लिए यात्रा करना।

(3) तीर्थाटन – धार्मिक कारणों से यात्रा करना।

स्वीट्जरलैण्ड के प्रो. टुन्जीकर एवं क्राफ्ट के अनुसार 'पर्यटन' उन प्रवृत्तियों एवं संबंधों का गठजोड़ है जो यात्रा एवं प्रवासी को ठहरने से उत्पन्न होती है। इससे स्थाई

निवास की क्रिया का जन्म नहीं होता है तथा यह किसी धन अर्जन करने की क्रिया से संबंधित नहीं है।'' (पर्यटन एवं यात्रा के सिद्धान्त – डॉ. जनमोहन नेगी)।

टिप्पणी

पर्यटन के प्रमुख आधार (Main Basis of Tourism)

(1) यात्रा स्वैच्छिक होनी चाहिए एवं पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए।

(2) यात्रा शिक्षा के लिए की जाती है।

(3) बाहरी घटनाओं की जानकारी की जिज्ञासा होनी चाहिए।

(4) रहन–सहन का स्तर जितना उच्च होगा, पर्यटन उतना ही विकसित होगा।

(5) परिवहन नीति भी पर्यटन का प्रमुख आधार है।

पर्यटन को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Affecting Tourism)

(1) पर्यटन स्थल की जलवायु सुन्दर होनी चाहिए।

(2) क्षेत्रीय आकर्षण अर्थात् सौन्दर्यता प्रमुख कारक है।

(3) प्राकृतिक एवं मानवकृत सुविधाएं भी पर्यटन को प्रभावित करती हैं।

(4) ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक कारणों से भी पर्यटन होता है।

(5) पहुँच, नजदीकी एवं आवास सुविधा पर्यटन को प्रभावित करते हैं।

(6) शान्ति, सुरक्षा भी पर्यटन को प्रभावित करता है।

मध्य प्रदेश में पर्यटन (Tourism in Madhya Pradesh)

पर्यटन मध्य प्रदेश में भी काफी विकसित हुआ है एवं अनेक शासकीय सहायता भी प्राप्त होती रही है। पिछले दशक तक इस क्षेत्र में अधिक ध्यान नहीं दिया गया एवं अमीर लोगों के ही मनोरंजन का एक साधन रहा, लेकिन अब परिस्थितियाँ बदल चुकी हैं और आम व्यक्ति भी पर्यटन से जुड़ रहा है।

मध्य प्रदेश में पर्यटन की कई नई नीतियाँ घोषित की गई हैं जो बिन्दुवार इस प्रकार हैं–

(1) 50 लाख ₹ के ऊपर की लागत वाली योजना को मनोरंजन कर आदि में 10 प्रतिशत की छूट प्रदान की है।

(2) मध्य प्रदेश में सायंकाल में मनोरंजन प्रदान करने का प्रस्ताव किया है।

(3) मध्य प्रदेश के सांस्कृतिक पर्यटन हेतु भोपाल, खजुराहो, माण्डू, सांची, ग्वालियर, दतिया, ओरछा, बुरहानपुर का विकास किया जाना।

(4) वन्य प्राणी के लिए कान्हा, बांधवगढ़, पेंचवली, सतपुड़ा आदि राष्ट्रीय उद्यान को और अधिक विकसित करना है।

(5) रोमांचकारी पर्यटन के लिए पन्ना, तिमरा झील, ग्वालियर, बड़ा तालाब, अमरकंटक, गांधी सागर, मंदसौर, भोपाल को चुना गया।

(6) आमोद–प्रमोद एवं व्यवसायिक पर्यटन के लिए पचमढ़ी, जबलपुर, इन्दौर, ग्वालियर, भोपाल, तामिया, खजुराहो को और विकास के लिए मान्यता मिली है।

(7) धार्मिक पर्यटन क्षेत्र में अमरकंटक, ओरछा, ओंकारेश्वर, चित्रकूट, महेश्वर, उज्जैन, सतना (मैहर) आदि को प्रधानता दी गई है।

टिप्पणी

मध्य प्रदेश के पर्यटन स्थलों का वर्गीकरण
(Classification of Tourist Spots of Madhya Pradesh)

(1) प्राकृतिक रमणीय स्थल

(2) राष्ट्रीय उद्यान

(3) गुफाएं

(4) प्राचीन धरोहर स्मारक – ऐतिहासिक दुर्ग, राजसी महल, समाधि, मकबरे।

(5) धार्मिक तीर्थस्थल

1. प्राकृतिक स्थल (Natural Spot)

(1) पचमढ़ी – होशंगाबाद जिले में इलाहाबाद–इटारसी मुख्य रेल मार्ग पर पिपरिया स्टेशन से 47 किलोमीटर दूरी पर पाँच मठों का समूह पचमढ़ी, मध्य प्रदेश का प्रमुख पर्यटन स्थल है। मध्य प्रदेश की ग्रीष्मकालीन राजधानी प्राकृतिक वैभव से परिपूर्ण है। इस अंचल में 20 जलाशय, 5 जलप्रपात तथा छोटे–छोटे 70 दर्शनीय स्थल हैं। सौन्दर्यपूर्ण शिखरों में महादेव, चौरागढ़, धूपगढ़ आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त जटाशंकर, अप्सरा विहार, पांडव गुफाएँ आदि भी अन्य दर्शनीय स्थल हैं।



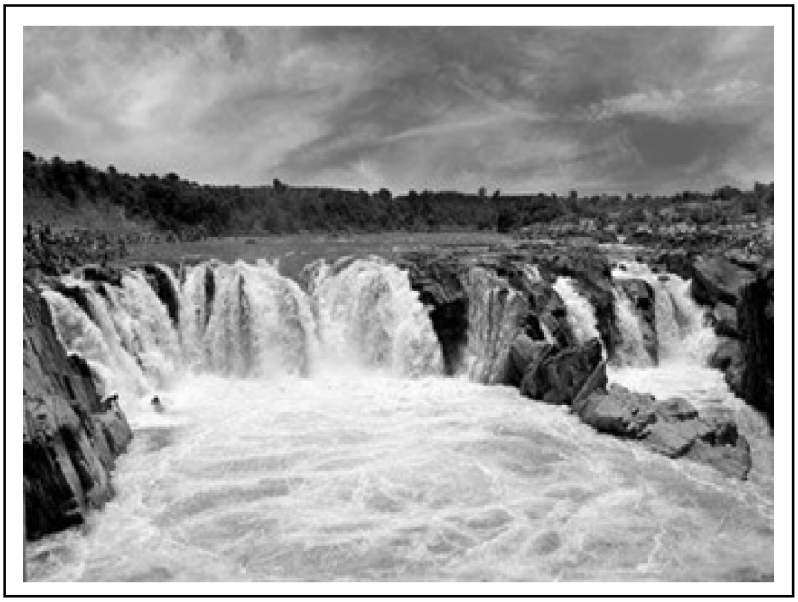
चित्र क्र. 5.6: जलप्रपात पचमढ़ी

(2) चचाई जलप्रपात – रीवा से लगभग 45 किलोमीटर की दूरी पर यह रमणीय स्थल है। यह जलप्रपात बीहड़ नदी पर चचाई नामक स्थान पर है। यह नदी

130 मीटर की ऊँचाई से जलप्रपात बनाती हुई अत्यन्त आकर्षक दिखती है। इसके नजदीक ही केवटी एवं बहुटी जलप्रपात भी देखने योग्य है।

टिप्पणी

(3) धुँआधार जलप्रपात – इटारसी–इलाहाबाद मुख्य रेलवे लाइन पर जबलपुर स्टेशन से यह प्राकृतिक रमणीय स्थल 21 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह जलप्रपात मध्य प्रदेश की प्रमुख नदी नर्मदा बनाती है। संगमरगर चट्टानों के बीच प्रवाहित वेगपूर्ण नर्मदा नदी का जल 18 मीटर की ऊँचाई से घोर गर्जना करते हुए गिरता है। तीव्रता के कारण जलकण धुँएं के समान दिखाई देते हैं, इसी कारण इसका नाम धुँआधार पड़ा। इसी स्थान के नजदीक बंदरकूदनी भी है, जहाँ नदी की चौड़ाई कम एवं घाटी गहरी है।



चित्र क्र. 5.7: धुँआधार जलप्रपात

(4) कपलिव दुग्ध धारा – अमरकंटक में नर्मदा नदी कुण्ड से आगे बढ़कर कपिल धारा जलप्रपात का निर्माण करती है। यह कुण्ड से 6 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। जलप्रपात की ऊँचाई 15 मीटर है। कपिल धारा से कुछ ही दूरी पर नर्मदा नदी दुग्ध धारा जलप्रपात का निर्माण करती है। यह जलप्रपात कपिल धारा से छोटा है।

मध्य प्रदेश : प्रमुख जलप्रपात

क्रमांक	नाम	स्थल
1.	बिलौही जलप्रपात	रीवा (गोरमा)
2.	बहुतह जलप्रपात	रीवा (ओड्डा)
3.	केवटी जलप्रपात	रीवा (बीहड़)
4.	चचाई जलप्रपात	रीवा (बीहड़)
5.	दुग्ध धारा जलप्रपात	अनूपपूर (नर्मदा)
6.	कपिलधारा जलप्रपात	अनूपपूर (नर्मदा)
7.	धुँआधार जलप्रपात	भेड़ाघाट (नर्मदा)

टिप्पणी

(5) तामियां पातालकोट – छिन्दवाड़ा जिले में तामियां–सतपुड़ा पहाड़ियों के मध्य स्थान हैं। यहाँ भी अनेक छोटे–छोटे प्राकृतिक रमणीय स्थल है। छोटा महादेव का प्रपात प्रमुख आकर्षण का केन्द्र है। तामियां से लगभग 16 किलोमीटर की दूरी भारिया जनजाति का निवास क्षेत्र पातालकोट है। यह चारों ओर से सतपुड़ा पहाड़ियों से घिरा एक कटोरे के समान दृष्टिगोचर होता है।

2. राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य
(National Parks and Santuaries)

मध्य प्रदेश में 09 राष्ट्रीय उद्यान हैं एवं 25 अभ्यारण्य हैं।

मध्य प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यान

क्र.	नाम	क्षेत्रफल (वर्ग कि.मी.)	जिला	मुख्य वन्य प्राणी
1	बांधवगढ़	437	उमरिया	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, गौर, नीलगाय, मुंजक, हिरण आदि
2	फॉसिल (जीवाश्म)	27	मण्डला	पादप, जीवाश्म
3	कान्हा	940	मण्डला	बाघ, तेन्दुआ, बारहसिंगा, गौर, सांभर, कृष्णमृग, मातृक मृग, जंगली कुत्ता, चीतल, शेर, बायसन आदि
4	माधव	337	शिवपुरी	तेन्दुआ, सांभर, चीतल, नीलगाय, चिंकारा, जंगली सुअर, प्रवासी पक्षी, मगर आदि
5	पन्ना	543	पन्ना/छतरपुर	बाघ, तेंन्दुआ, सांभर, चीतल, चिंकारा, भालू
6	पेंच	293	सिवनी/छिन्दवाड़ा	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, गौर, मुंजक, हिरण, नीलगाय, जंगली सुअर
7	सतपुड़ा	525	होशंगाबाद	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, गौर, मुंजक, हिरण, नीलगाय
8	वन विहार	4.45	भोपाल	मध्य प्रदेश के सभी वन्य प्राणी
9	संजय	497.309	सीधी	बाघ, तेन्दुआ, चीतल

मध्य प्रदेश के अभ्यारण्य

क्र.	नाम	क्षेत्रफल	जिला	मुख्य वन्य प्राणी
1.	बोरी	518	होशंगाबाद	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, गौर, मुंजक हिरण, नीलगाय
2.	सैलाना फ्लोरिकन	12.96	रतलाम	खरमोर

टिप्पणी

3.	सरदारपुर	348.12	धार	खरमोर
4.	सोन	209	सीधी / शहडोल	घड़ियाल, मगर, कछुआ, प्रवासी पक्षी
5.	सिंधारी	287.91	रायसेन	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, नीलगाय, चिंकारा, कृष्णमृग
6.	रातापानी	688.79	रायसेन	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर
7.	पेंच	449.39	सिवनी / छिन्दवाडा	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, गौर, नीलगाय, जुगली मुर्गी
8.	पालपुर (कुनो)	345	मुरैना	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, नीलगाय, चिंकारा, कृष्णमृग
9.	पनपथा	245.84	शहडोल	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, मुंजक हिरण, नीलगाय, चौसिंगा, भालू
10.	पंचमढ़ी	461.85	होशंगाबाद	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, नीलगाय, भालू, गौर
11.	नौरादेही	1034.52	सागर	चीतल, सांभर, नीलगाय, चिंकारा, कृष्णमृग, भालू, जंगली कुत्ता
12.	राष्ट्रीय चम्बल	3.902	मुरैना	घड़ियाल, मगर, कछुए, ऊदबिलाव, डाल्फिन, प्रवासी पक्षी
13.	नरसिंहगढ़	57.16	राजगढ़	तेन्दुआ, चीतल, सांभर, नीलगाय, मोर, धुवर, धनेष
14.	सिवनी	122.70	देवास / सीहोर	तेन्दुआ, चीतल, सांभर, नीलगाय
15.	केन	45	छतरपुर / पन्ना	घड़ियाल, मगर
16.	करेस	202.21	शिवपुरी	सोन चिड़िया, चिंकारा, कृष्णमृग, नीलगाय
17.	घाटीगांव	512	ग्वालियर	सोन चिड़िया, चिंकारा, कृष्णमृग, नीलगाय
18.	गांधीसागर	368.62	मंदसौर	तेन्दुआ, चिंकारा, नीलगाय
19.	फैन	110.74	मण्डला	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, मुंजक हिरण
20.	बगदरा	478.9	सीधी	तेन्दुआ, चिंकारा नीलगाय
21.	रालामण्डल	234.55	इन्दौर	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर, भालू, गौर
22.	ओरछा	45	टीकमगढ़	चीतल, नीलगाय
23.	संजय प्रदुबरी	364.29	सीधी	शेखर, तेन्दुआ, सांभर, चितल, नीलगाय, चिंकारा।
24.	गंगऊ	68.14	ग्वालियर	बाघ, तेन्दुआ, चीतल, सांभर
25.	वीरांगना दुर्गावती	23.97	दमोह	चीतल, सांभर, नीलगाय

टिप्पणी

3. गुफाएँ (Caves)

1. भर्तुहरी गुफाएँ – उज्जैन से 13 किलोमीटर की दूरी पर कालियादाह महल की ओर कुल 9 गुफाएँ हैं, इनमें से 4 लगभग नष्ट हो चुकी हैं, 5 गुफाएँ शेष बची हैं। 11 वीं शताब्दी में राजा भर्तुहरि की याद में परमारवंश के राजाओं ने इनका निर्माण कराया था। प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का पर्याय उज्जैन में गुफाओं के अन्दर रंगीन चित्र देखने को मिलते है।

2. उदयगिरी की गुफाएँ – विदिशा जिले में भेलसा के पास 20 गुफाएँ हैं। उदयगिरी के पूर्वी ढाल को तराश कर इन गुफाओं का निर्माण कराया गया है। गुप्त वंश की अद्‌भुत निर्माण कला ईसा के बाद चौथी पांचवी शताब्दी की है।

3. बांध की गुफाएँ – कलापूर्ण भित्ती चित्रों से युक्त ये गुफाएँ विंध्याचल की पहाड़ी में इन्दौर से लगभग 155 किलोमीटर की दूरी पर स्थित बौद्ध चित्रों 5वीं से 7वीं शताब्दी के मध्य अनुमानित हैं। पहाड़ियों को काटकर नौ गुफाओं का निर्माण किया गया था, जिनके अभी 5 गुफाएं ही शेष रह गये हैं।

4. भीमबेटका की गुफाएँ – पाषाणयुगीन ये गुफाएँ भोपाल से 45 किलोमीटर की दूरी पर हैं। 'यूनेस्को' ने इन गुफाओं को विश्व धरोहर की सूची में शामिल किया है। यहाँ 500 गुफाओं का समूह है। यहाँ के शैल चित्र तात्कालीन मानव की कला एवं जीवनशैली को बताते हैं।



चित्र क्र. 5.8: शैल चित्र भीमबेटका

4. प्राचीन धरोहर (Ancient Heritage)

(क) ऐतिहासिक दुर्ग

मध्य प्रदेश में अनेक दुर्ग हैं, लेकिन कुछ महत्वपूर्ण दुर्ग का वर्णन यहाँ किया जा रहा है –

टिप्पणी

1. ग्वालियर दुर्ग – 'किलों का रत्न' या 'भारत के दुर्ग का सिरमौर' से जानने वाले इस किले का निर्माण 525 ईस्वी में राजा सूरजसेन ने करवाया था। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में इसका विशेष महत्व है।



चित्र क्र. 5.9: मन मंदिर किला ग्वालियर

2. चंदेरी का किला – बीना–कोटा रेल मार्ग पर मुगावली स्टेशन से 38 किलोमीटर दूर बेतवा नदी के किनारे 11वीं शताब्दी में प्रतिहार नरेश कीर्तिपाल ने कराया था।

3. बांधोगढ़ – 14वीं शताब्दी में निर्मित यह किला दक्षिण–पूर्व रेलमार्ग के कटनी–बिलासपुर मार्ग में उमरिया से 30 किलोमीटर दूर है। यह विंध्याचल पर्वत के घने जंगल में 900 मीटर की ऊँचाई पर बना है।

4. ओरछा दुर्ग – मानिकपुर–झांसी रेलमार्ग पर बेतवा नदी पर ओरछा स्टेशन के नजदीक यह विशाल किला है। इसका निर्माण बुन्देला नरेश ने करवाया था। इसके अन्दर अनेक मंदिर हैं।

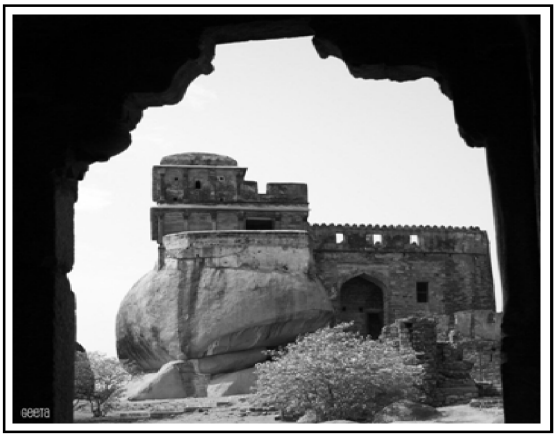


चित्र क्र. 5.10: ओरछा दुर्ग

5. मण्डला किला – जबलपुर से 96 किलोमीटर दूर मण्डला में बंजर व नर्मदा नदी के संगम पर यह दुर्ग बना है।

6. मदन महल – 1200 ईस्वी में राजा मदनशाह द्वारा बनवाया गया यह किला गोंड कला का नमूना एवं पुरातत्व की धरोहर है। यह दुर्ग गोंड राजाओं की राजधानी हुआ करती थी। इस किले से मण्डला तक लगभग 90 किलोमीटर एक सुरंग थी जो दोनों किलों को जोड़ती थी।

टिप्पणी



चित्र क्र. 5.11: मदन महल

इसके अतिरिक्त कटनी का विजय राघवगढ़, धार का किला, असीरगढ़ का किला, चिन्नोरगढ़, रायसेन का दुर्ग, मन्दसौर का किला, नरवर का किला, दतिया का किला आदि प्रमुख हैं।

14 नवम्बर 2005 को राज्य सरकार ने पुराने विधानसभा भवन को 'मिन्टो हॉल ट्रेड सेंटर' में बदलने हेतु 72 करोड़ रुपये की लागत योजना को मंजूरी दी है।

(ख) राजसी महल

1. गूजरी महल – ग्वालियर के इस महल का निर्माण राजा मानसिंह ने अपनी प्रेमिका 'मृगनयनी' के लिए करवाया था।

2. मोती महल – ग्वालियर में ही तत्कालीन राजा जीवाजी राव ने सुन्दर कलात्मक महल का निर्माण कराया था।

3. मोती महल (मण्डला) – मण्डला से 16 किलोमीटर की दूरी पर रामनगर में 25 मी. की ऊँचाई पर आयताकार तीन मंजिला महल का निर्माण गोंड नरेश उदयशाह ने करवाया था।

4. बप्पेलिन महल – मण्डला में ही नर्मदा के किनारे पर्यटकों का केन्द्र बिन्दु यह महल मोती महल से 3 किलोमीटर पूर्व में बना है।

5. खरबूजा महल – जीर्ण–शीर्ण स्थिति में धार जिले में यह महल है।

6. हवा महल – चंदेरी नरेश कीर्तिमान ने 11वीं सदी में इसका निर्माण कराया था।

7. दाई का महल – मांडू में तालाब के किनारे इस महल का निर्माण अकबर ने करवाया था।

इनके अतिरिक्त जय विलास (ग्वालियर), बादल महल (रायसेन), इत्रदार महल (रायसेन), नौरण्डा महल (चंदेरी), राजमंदिर (ओरछा), राजा आमन महल, असरफी महल (माण्डू), रुपमारी महल (माण्डू) आदि प्रमुख हैं।

(ग) समाधि/मकबरें

1. महारानी सांख्यराजे सिंधिया की समाधि – शिवपुरी में सांख्यराजे सिंधिया के पुत्र माधवराज सिंधिया ने करवाया था।

टिप्पणी

2. मो. गौस का मकबरा – ग्वालियर के बाहर बाबर और अकबर के गुरु मो. गौस का मकबरा मुगलकालीन प्रारंभिक काल में बना है।

3. तानसेन का मकबरा – सम्राट अकबर के राज दरबार के नवरत्नों में एक संगीत सम्राट् तानसेन का मकबरा ग्वालियर में है।

4. रानी दुर्गावती की समाधि – जबलपुर से 17 किलोमीटर दूर मण्डला रोड पर गौर तिराहे से लगभग 9 किलोमीटर की दूरी पर बारहा नामक गांव के पास दुर्गावती की समाधि है।

5. रानी अवंतीबाई की समाधि – 1857 की क्रान्ति में महिष्मति (मण्डला का पूर्व नाम) पराजित रानी ने रामगढ़ (मण्डला) में आत्महत्या की, वहीं उनकी समाधि बनी हुई है।

6. तात्या टोपे समाधि – शिवपुरी के समीप जाधव सागर के नजदीक महान् स्वतंत्रता संग्राम सेनानी तात्या टोपे की समाधि है।

5. धार्मिक तीर्थस्थल

मध्य प्रदेश में अनेक पौराणिक मंदिर एवं तीर्थस्थल हैं, उनमें मुख्य निम्न हैं –

(1) चित्रकूट – उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश की सीमा पर झांसी–मानिकपुर रेल मार्ग पर स्थित मध्य प्रदेश का प्रमुख धार्मिक स्थल है। कथाओं के अनुसार यह पवित्र भूमि ब्रह्मा, विष्णू, महेश की बाल अवतार भूमि श्रीराम वनवास के समय ऋषि अत्रि एवं अनुसूया के अतिथि तुलसीदास की शान्ति भूमि आदि के लिए प्रसिद्ध है।

(2) उज्जैन – प्राचीन पौराणिक अवन्ती इन्दौर से 52 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। अनेक मंदिरों के अलावा महाकालेश्वर मंदिर प्रसिद्ध है। क्षिप्रा नदी के तट पर बसा यह शहर कुंभ के मेले (12 वर्ष में एक बार) के लिए भी प्रसिद्ध है। सम्राट अशोक के वायसरॉय की राजधानी विक्रमादित्य का राज्य संस्कृत के महाकवि कालिदास की जन्मस्थली के कारण प्रसिद्ध है।



चित्र क्र. 5.12: महाकाल के मंदिर का ज्योतिर्लिंग

(3) अमरकंटक – अनूपपुर जिले के दक्षिण–पूर्व में नर्मदा नदियों का उद्गम स्थल मैकाल श्रेणी का क्षेत्र है। यह समुद्र सतह से 3500 मी. की ऊँचाई पर स्थित मध्य प्रदेश का पवित्र स्थल माना जाता है। पहले यह मैकाल प्रदेश था जिसकी राजधानी मैकाल थी। यहाँ अनेक मंदिर देखने को मिलते हैं। हिन्दुओं का प्रमुख तीर्थस्थल है।

टिप्पणी



चित्र क्र. 5.13: नर्मदा नदी का उद्‌गम स्थल अमरकंटक

(4) ओंकारेश्वर – इन्दौर से 75 किलोमीटर की दूरी पर नर्मदा नदी के तट पर यह स्थान है। देश के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक यहाँ की सिद्धनाथ, गौरी सोमनाथ, शंकराचार्य की गुफाएँ आदि दर्शनीय स्थल हैं।

(5) महिष्मति – इस प्राचीन नाम को वर्तमान में माहेश्वर नगर के नाम से जानते हैं। इन्दौर से 90 किलोमीटर दूर नर्मदा नदी के तट पर बसा है। 19वीं सदी में महारानी अहिल्याबाई ने इसे अपनी राजधानी बनायी।

(6) खजुराहो मंदिर – छतरपुर जिले में इस विश्व विख्यात् मंदिर का निर्माण 950–1050 ईस्वी के मध्य चंदेल राजाओं ने कराया था। यहाँ कुछ 85 मंदिर थे, जिनमें अभी 25 मंदिर शेष बचे हैं। तात्कालिक शिल्पियों की अद्‌भुत कला का नमूना यहाँ दिखता है।



कधांरिया मंदिर



विश्वनाथ मंदिर



चित्रगुप्त मंदिर

चित्र क्र. 5.14: खजुराहो मंदिर

टिप्पणी

(7) सांची – इटारसी रेल मार्ग पर भोपाल से 75 किलोमीटर दूर बौद्धों का विश्व प्रसिद्ध तीर्थस्थल है। यहाँ तीन स्तूप हैं – बड़ा 36.5 मीटर व्यास का जो प्राचीन है, दो 16.4 फीट ऊँचाई वाले एक ईसा पूर्व दूसरी सदी तथा दूसरा ईस्वी पूर्व 150 के दौरान निर्मित हुआ है।

इसके अतिरिक्त मुक्तिगिरि (बैतूल), बावनगजा (बड़वानी), नोहटा (दमोह, जैन तीर्थस्थल), पशुपतिनाथ मंदिर (राजगढ़), सोनागिरी मंदिर (दतिया), माण्डू (धार), मेवसा (विदिशा), पीताम्बरपीठ (दतिया), मैहर (सतना) आदि अनेक तीर्थस्थल हैं जो धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के साथ प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक विरासत के धनी हैं और पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।



चित्र क्र. 5.15: सांची का स्तूप

6. प्रमुख संग्रहालय

मध्य प्रदेश में ऐतिहासिक अवशेषों को सुरक्षित रखने के प्रयास में अनेक भवनों का निर्माण किया गया और उनमें पुरातत्व महत्व की सामग्री सुसज्जित की गई है, उनमें प्रमुख हैं –

1. शासकीय संग्रहालय, भोपाल – इसकी स्थापना 1887 में की गई। प्रागैतिहासिक गैलरी यहाँ पर है। यहाँ महिषासुर मर्दनी, अलक्ष्मी, कृष्ण जन्म, बुद्ध, पंचमुखी गणेश आदि पाषाण प्रतिमाओं का अच्छा संग्रह है। 2 नवम्बर 2005 में भोपाल में ही पुरातत्व संग्रहालय का शुभारम्भ हुआ। यहाँ थीम, जीवाश्म, उत्खनन, प्रतिमा, मुद्रा, पेंटिंग, छायाचित्र, पाण्डुलिपि, धातु, स्वतंत्रता संग्राम आदि की कला दीर्घाएँ बनाकर प्रदर्शित किया गया है।

2. केंन्द्रीय पुरातत्व संग्रहालय, इन्दौर – यह 1931 में स्थापित हुआ। यहाँ ईसा से पाँच हजार वर्ष पूर्व के उपकरण, लगभग 500 पाषाण प्रतिमाएँ 10वीं सदी से 18वीं सदी की धातु, मुद्राएँ, अभिलेख एवं 2500 से भी अधिक सिक्कों का संग्रह है।

3. केन्द्रीय पुरातत्व संग्रहालय, ग्वालियर – यह गूजरी महल के मृदमाण्डों के टुकड़े, क्षेत्रीय लेख, गरुड़ स्तंभ पाषाण प्रतिमा, बौद्ध स्तूप की वेदिका, जैन तीर्थंकर इन्द्राणी एवं अन्य 680 पाषाण प्रतिमाएँ हैं।

टिप्पणी

4. पुरातत्व संग्रहालय, खजुराहो – छतरपुर जिले में चन्देलकाल से संबंधित 10–12वीं सदी की पूर्ण एवं खंडित पाषाण प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं।

5. जिला संग्रहालय, शिवपुरी – इसकी स्थापना 1930 में हुई। यहाँ जैन पाषाण प्रतिमाओं का अच्छा संग्रह है। 580 पाषाण प्रतिमाएँ यहाँ देखी जा सकती हैं।

6. रानी दुर्गावती पुरातत्व संग्रहालय, जबलपुर – जबलपुर जिले में कल्चुरी एवं गोंड काल से संबंधित 10–12वीं सदी की पूर्ण एवं खंडित पाषाण प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं। यहाँ ईसा से पाँच हजार वर्ष पूर्व के उपकरण, लगभग 400 से अधिक पाषाण प्रतिमाएँ 10वीं सदी से 18वीं सदी की धातु मुद्राएँ, अभिलेख एवं 2500 से भी अधिक सिक्कों का संग्रह है।

इसके अतिरिक्त

शासकीय संग्रहालय बुलेवा (नौगांव, छतरपुर),

पुरातत्व संग्रहालय (सांची, रायसेन), एवं

शासकीय जिला पुरातत्व संग्रहालय, विदिशा, आदि भी प्रसिद्ध हैं।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. धुँआधार जल प्रपात कहाँ है?

   (अ) भोपाल में (ब) जबलपुर में

   (स) नरसिंहपुर में (द) बैतूल में

2. 2001 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में जनसंख्या का घनत्व कितना है?

   (अ) 190 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर (ब) 192 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर

   (स) 196 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर (द) 162 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर

3. 2001 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में साक्षरता दर कितनी है?

   (अ) 63.7% (ब) 68%

   (स) 75% (द) 60%

4. 2001 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत कितना है?

   (अ) 20% (ब) 26%

   (स) 25% (द) 30%

5.8 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (ब)
2. (स)
3. (स)
4. (ब)

5.9 सारांश (Summary)

इस इकाई में मध्य प्रदेश की जनजातियों का वर्णन किया गया है। जिसमें विद्यार्थी इसके संस्कृति, त्यौहार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें।

टिप्पणी

5.10 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- जनजातियाँ
- जलवायु
- मिट्टी

5.11 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self-Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. इन्दिरा सागर परियोजना अथवा चम्बल घाटी परियोजना का वर्णन कीजिए।
2.. पर्यटन के प्रमुख आधारों का वर्णन कीजिए।
3. पर्यटन को प्रमाणित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
4. पर्यटन विकास के आवश्यक तत्वों का वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. मध्य प्रदेश में बैगा जनजाति का वर्णन कीजिए।
2. मध्य प्रदेश की जनजातियों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. मध्य प्रदेश में सिंचाई संसाधन पर एक निबन्ध लिखिए।
4. मध्य प्रदेश के प्रमुख पर्यटन केंद्रों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
5. मध्य प्रदेश के ऐतिहासिक पर्यटन स्थल लिखिए।
6. मध्य प्रदेश के प्रमुख उद्यानों की व्याख्या कीजिए।
7. अभ्यारण्य और उद्यान में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

5.13 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. बन्सल सुरेश चंद्र 1996 भारत का बृहत् भूगोल, मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ।
2. अहमद ई. 1992 जीओग्राफी ऑफ हिमालया, कल्याणी पब्लिशर्स लुधियाना।
3. चौहान व्ही.एस. एवं गौतम अल्का 2001 भारतवर्ष का विस्तृत भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ।
4. दत्त रुद्र एवं सुंदरम के.पी.एम. 2005 भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चांद ॲन्ड कम्पनी लिमिटेड न्यू दिल्ली।

टिप्पणी

5. गौतम अल्का 2007 भारत का बृहत् भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, अलाहाबाद।
6. गील के. एस. 1993 इव्हॉल्यूशन ऑफ द इंडियन इकॉनॉमी एन.सी.आर.टी.ई. न्यू दिल्ली।
7. हुसैन माजिद एवं सिंह. रमेश 2009 भारत का भूगोल, Tata McGraw-Hill Publishing Co. New Delhi.
8. कुमार प्रमिला 1996 मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
9. मामोरिया चतुर्भुज 1996 आधुनिक भारत का बृहत् भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन आग्रा।
10. मिश्र जगदिश प्रसाद 1997 भारत का भूगोल, विद्यासागर अलाहाबाद।
11. ओझा शिवसागर 2001 भारत का भूगोल, भौगोलिक अध्ययन संस्था अलाहाबाद।
12. पालिवाल कमलेश 2000 इकॉनॉमी जीओग्राफी इंडिया ए किताब महल अलाहाबाद।
13. प्रकाश बी.एस. 1990 इंडियाः इकॉनॉमी जीओग्राफी एन.सी.ई.आर.टी. न्यू दिल्ली
14. राव बी.पी. 1995 भारतः एक भौगोलिक समीक्षा, वसुंधरा प्रकाशन गोरखपुर।
15. सिंह गोपाल भारत का भूगोल, आत्माराम ॲन्ड सन्स दिल्ली।
16. तिवारी विजय कुमार 1997 भारत का बृहत् भूगोल भाग 1 एवं 2, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, मुंबई।
17. वर्मा रामविलास भारत का भौगोलिक विवेचन, किताब घर कानपुर।
18. गर्व्हमेंट ऑफ इंडिया 2000 नॅशनल पोल्यूशन पॉलिसी 2000, प्लानिंग कमिशन ऑफ इंडिया न्यू दिल्ली।
19. चंदन आ.सी. 1980 इंट्रोडक्शन टू पॉप्यूलेशन जीओग्राफी, कल्याणी पब्लिशर्स न्यू दिल्ली।
20. वर्मा मित्रा वेद 1964, एज्युकेशन इन एशियन इंडिया, आर्या बुक डेपो न्यू दिल्ली।